अमेरिका में प्रजातंत्र

("Democracy in America" by Alexis de Tocqueville)

मूल लेखक

अलेक्सिस डि टोकवील



पर्ल पब्लिकेशन्स प्राइवेट लिमिटेड, बम्बई-१

मूल्य : ७५ नये पैसे

मूल पुस्तक का प्रथम हिंदी अनुवाद

प्रथम संस्करण : १९५८

प्रकाशक : जी. एल. मीरचंदानी, पर्ल पब्लिकेशन्स प्राइवेट लिमिटेड, १२, वाटरलू मेन्शन (रीगल सिनेमा के सामने), महात्मा गांधी रोड, बम्बई-१.

मुद्रक : वि. पु. भागवत, मौज प्रिंटिंग ब्यूरो, खटाववाड़ी, गिरगाम, बम्बई-४.

विषय-सूची

उपोद्घात

लेक्सिस डि टोकवील मई, १८३१ ई. में संयुक्त राज्य अमरीका में आया था, और केवल नौ महीने बाद फरवरी, १८३२ में पुनः स्वदेश (फ्रांस) लौट गया था। फिर भी उसकी पुस्तक 'अमेरिका में प्रजातंत्र' एक शताब्दी से बहुत अधिक समय तक अपने पाठकों को अमरीकी जीवन के लगभग प्रत्येक पहलू के विषय में वर्णन, विवेचना और भविष्यवाणी की अतुलनीय प्रचुरता प्रदान करती रही है।

इस नवयुवक फ्रांसीसी की उत्कृष्ट समीक्षा के प्रथम भाग में, संक्षेप में, नयी दुनिया के भौतिक विस्तार, आंग्ल-अमरीकियों की उत्पत्ति तथा अमरीका की सर्वप्रधान विशिष्टता, प्रजातंत्र और जनता की अबाध सार्वभौमता का वर्णन किया गया है। तत्पश्चात् अमरीकी सरकार की कार्य पद्धतियों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है, जो कुछ अंशों तक पुराना पड़ गया है और इसके बाद पुस्तक के प्रधान विषय, संयुक्त राज्य अमरीका में बहुमत की नृशंसता की विवेचना की गयी है।

'अमेरिका में प्रजातंत्र' के द्वितीय भाग में अमरीकी समाज के स्वरूप और गतिशीलता पर, अमरीकियों के विचार, अनुभव और कार्यपद्धति पर, हमारी स्वतंत्रताओं के सारभूत स्वरूप पर, प्रजातंत्र अथवा बहुमत के शासन के प्रभाव का वर्णन किया गया है। वास्तव में यही टोकवील ने समसामयिक विचार में अपना अत्यन्त अभूतपूर्व और भावी सत्यों से पूर्ण योग प्रदान किया है; क्योंकि टोकवील स्वतंत्रता और प्रजातंत्र दोनों के विकास एवं अस्तित्व रक्षा के लिए जितना चिन्तित था, उतना वह अन्य किसी बात के लिए चिन्तित न हुआ, और आज बीसवीं शताब्दी के मध्य में अमरीकियों के लिए तथा प्रत्येक स्थान की स्वतंत्र जनता के लिए निश्चय ही इतना अर्थगम्भीर अथवा इतना महत्वपूर्ण दूसरा कोई विषय नहीं है।

सन् १८३५ ई. और सन् १८४० में प्रथम बार प्रकाशित 'अमेरिका में प्रजातंत्र' हमारे युग के लिए एक महत्वपूर्ण पुस्तक है।

I

सन् १८२० और सन् १८३० के दशकों में जैक्सनवादी प्रजातंत्र के उदय के बाद से ही अमरीका की राजनीतिक विचारधारा पर जिस अयथार्थ

बात का व्यापकतम आधिपत्य रहा है, वह यह है कि हम अज्ञानपूर्वक और गलत ढंग से समानता और स्वाधीनता को, प्रजातंत्र (बहुमत-शासन) और स्वतंत्रता को समान समझते रहे हैं। यह ठीक है कि जैक्सन के युग के बहुत पहले थामस जेफर्सन ने स्वतंत्रता के घोषणा-पत्र के दार्शनिक आधार के रूप में यह सिद्धान्त निर्धारित किया था कि 'सभी मनुष्य समान उत्पन्न हुए हैं' और तथाकथित १८००ई. की क्रान्ति के समय ही अमरीका में बहुमत-शासन की विजय हो गयी थी, जब बहुसंख्यक जेफर्सनवादी डेमोक्रेटों ने 'धनी और अभिजात' व्यक्तियों के अल्पसंख्यक दल 'फेडरलिस्ट पार्टी' को सदा के लिए राष्ट्रीय सत्ता के पद से च्युत कर दिया था। फिर भी हमारे प्रारम्भिक नेताओं का, यहाँ तक कि जेफर्सनवादियों का दृष्टिकोण भी वास्तविक समानतावादी दृष्टिकोण से बहुत पीछे था। वे जनता की और जनता के लिए सरकार में तो विश्वास करते थे, किन्तु जनता द्वारा शासन में उनका विश्वास नहीं था, और इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात यह थी कि व्यक्तिगत स्वतंत्रता और स्वाधीनता के सिद्धान्तों ने उनके मन में इतनी गहरी जड़ जमा ली थी कि वे कभी आवश्यक और अपरिवर्तनीय रूप से समानता और प्रजातंत्र के साथ उनका समीकरण नहीं कर सकते थे।

इस प्रकार जैक्सन के समय से पूर्व समानतावाद, जिसमें बहुमत का शासन सर्वाधिक सुविधाजनक तथा अत्यन्त व्यावहारिक माना जाता था, अमरीकी जीवन का सर्वोपरि विषय नहीं बन पाया था। तब अमरीकी राजनीतिक विचारधारा और संस्थाओं के रूप में अत्यन्त व्यापक परिवर्तन हुआ, क्योंकि राजनीतिक नियंत्रण तीव्र गति से शिक्षा, स्थिति और सम्पत्ति के एक प्राचीनतर कुलीनतंत्र के हाथों से 'साधारण जन' औसत अमरीकी के हाथों में जा रहा था। बहुमत के निर्बाध शासन के लिए मताधिकार पर लगाये गये प्रतिबन्धों को हटा दिया गया, पद के लिए सम्पत्ति विषयक अर्हताओं को समाप्त कर दिया गया, पद की अवधियों को सीमित कर दिया गया तथा नियुक्ति-मूलक अथवा अनिर्वाचनात्मक पदों की संख्या में अत्यधिक कमी कर दी गयी। सारांश यह है कि शीघ्र ही 'बहुसंख्या' सर्वोच्च शासक बन गयी और बहुमत शासन की धारणा में जन-भावना का लगभग पूर्णरूप से समावेश हो गया।

सार्वजनिक पदों के विषय में नये समानतावाद का अर्थ यह था कि सारतः समस्त व्यक्तियों में समान प्रतिभा होती है। प्रत्येक अमरीकी किसी भी सरकारी पद पर आरूढ़ होने की क्षमता रखता है तथा प्रजातंत्र के लिए

आवश्यक है कि पदारूढ व्यक्तियों में परिवर्तन होता रहे, जिससे एक अस्पृश्य नौकरशाही उच्चवर्ग अथवा कुलीनतंत्र के विकास को रोका जा सके। जिन पदाधिकारियों की पार्टी परास्त हो गयी थी, उनके स्थान पर उन व्यक्तियों की, जिन्हें स्पष्टता के साथ 'जनता ने चुना' था, नियुक्ति करने के लिए इस सरल प्रजातांत्रिक अंतःप्रेरणा की सर्वाधिक स्पष्ट अभिव्यक्ति इस सिद्धान्त के रूप में हुई कि 'लूट का माल विजेताओं का होता है'। एण्ड्र्यू जैक्सन के राष्ट्रपति बनने के उपलक्ष्य में आयोजित स्वागत-समारोह में सुरापात्रों से टकराता, शीशों को तोड़ता, श्वेत भवन की मेजों और कुर्सियों को कीचड़ से सने हुए बूटों से रौंदता हुआ जो जनसमूह उमड़ पड़ा था, उसने इस बात को अत्यधिक स्पष्ट कर दिया था कि अंततोगत्वा समता अमरीकी जीवन का प्रधान अंग बन गयी है।

प्रजातंत्र और समानता की इसी उपद्रवात्मक प्रारम्भिक अशांति के बीच अलेक्सिस डि टोकवील ने संयुक्त-राज्य अमरीका की अपनी महान यात्रा की थी और निश्चय ही अन्य किसी निरीक्षक ने आज व्यापक रूप से स्वीकृत अमरीकी जीवन के युगल विषयों को कभी इतनी बारीकी से नहीं देखा या इतनी खूबी से उनका वर्णन नहीं किया। वस्तुतः 'अमेरिका में प्रजातंत्र' के उपोद्घात में ही टोकवील ने लिखा था कि—

संयुक्त-राज्य अमरीका में लोगों मे पायी जाने वाली परिस्थिति की सामान्य समानता से बढ़कर अन्य किसी विलक्षण वस्तु ने मेरा ध्यान इतना अधिक आकर्षित नहीं किया। अमरीकी समाज का जितना ही अधिक मैंने अध्ययन किया, उतना ही मुझे स्पष्टतः ज्ञात हुआ कि परिस्थिति की समानता मूलभूत तत्व है, जिससे अन्य बातों का उद्भव दिखायी पड़ता है......।

प्रजातंत्र (या बहुमत-शासन) के सम्बन्ध मे इस युवक फ्रांसीसी ने अपनी पुस्तक में आगे चल कर लिखा कि 'अमरीकी राजनीतिक जगत में प्रजा उसी तरह शासन करती है, जैसे ईश्वर जगत पर शासन करता है।'

फिर भी, टोकवील ने जो कुछ लिखा, वह रिपोर्ट के रूप में था, स्वीकृत सिद्धान्त के रूप में नहीं। 'अमेरिका में प्रजातंत्र' में समानतावाद और बहुमत-शासन के गुणों की स्तुति नहीं है। इसके विपरीत यह शास्त्रीय ग्रन्थ अमरीका के एक शताब्दी से अधिक पुरानी स्वतंत्रता के साथ समानता की और स्वाधीनता के साथ प्रजातंत्र की चमत्कारिक सम्यता को अस्वीकार करता है और इसी तथ्य के कारण आज वह हमारे लिए इतना उत्तेजक

और मूल्यवान है। कोई भी इस बात से इन्कार नहीं करेगा कि जैक्सन के युग में अमरीकियों ने बड़ी निर्दयता से विशेषाधिकारों और सिद्धियों के बन्धनों को छीन लिया था और अल्पसंख्यक के शासन के स्थान पर बहुमत के शासन को स्थापित किया था। परन्तु क्या समानतावाद और बहुमत शासन विशुद्ध वरदान सिद्ध हुए हैं! टोक्वील के विचार से नहीं। वस्तुतः राष्ट्रीय जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में व्याप्त समानतावादी सिद्धान्त का जो कुछ रूप उसने देखा, उससे उसके मन में शंका पैदा हुई कि क्या अमरीकियों की स्वाधीनता, व्यक्तिगत मतभेद और स्वतंत्रता सम्बन्धी उनकी प्राचीन अभिरुचि, समानता और प्रजातंत्र के लिए अपने नये झुकाव को वस्तुतः दीर्घकाल तक जीवित रख सकेगी। क्योंकि परिस्थिति ज्यों-ज्यों समान होती गयी, त्यों-त्यों अमरीकी अपने व्यक्तित्व, व्यक्तिगत स्वाधीनता और अपनी स्वतंत्रता के स्थान पर अपनी एकरूपता में अधिकाधिक गौरव अनुभव करने लगे। इसी कारण टोकवील ने लिखा—"प्रत्येक नागरिक शेष लोगों के साथ घुलमिल जाता है, भीड़ में खो जाता है और कोई भी विशिष्टता दिखायी नहीं देती, अतिरिक्त इसके कि लोगों की महान और प्रभावशाली प्रतिच्छाया चारों ओर घूमती हुई दिखायी पड़ती है।"

इस प्रकार अमरीकियों ने व्यक्ति की स्वाधीनता और स्वतंत्रता के प्रति अपनी अभिरुचि को, अधिकाधिक बहुमत के प्रति अपने नये आदर या उसके प्रति भय के आश्रित कर दिया है जो लोगों की महान् और प्रभावशाली स्वतंत्र प्रतिच्छाया है। यह स्पष्टतः प्रतीत होता था कि समानता और प्रजातंत्र ने स्वाधीनता और स्वतंत्रता के साथ साथ चलने के स्थान पर बहुमत के पवित्र नाम पर, मनुष्यों के मस्तिष्क पर इतना दमनकारी और भयंकर अत्याचार किया, जिसकी तुलना इतिहास के किसी भी अत्याचार से की जा सकती है और इसी कारण टोकवील को यह लिखना पड़ा–"मैं अमरीका को छोड़कर ऐसे किसी देश से परिचित नहीं हूँ, जहाँ मस्तिष्क की स्वाधीनता और विचारों की वास्तविक स्वतंत्रता इतनी कम हो।"

* * *

अलेक्सिस चार्ल्स हेनरी क्लेरेल डि टोकवील का अमरीकी प्रजातंत्र का इतना कटु आलोचक होना कि वह उसकी मूलभूत धारणाओं पर इतनी उग्रता से प्रहार करने लगे—हर प्रकार से उपयुक्त था। इसका कारण यह था कि वह बुद्धिजीवी फ्रांसीसी हर दृष्टि से कुलीन था। वह संभ्रान्त परिवार, पुरातनवाद

और बौद्धिक पृथकत्व और व्यक्तिवाद की विशिष्ट परम्परा का, जिसका उस उग्र समानतावाद से कोई सादृश्य नहीं था, उत्तराधिकारी था, जो 'जैक्सोनियन' अमरीका का विशिष्ट लक्षण माना जाता है।

टोकवील का जन्म २९ जुलाई, १८०५ को एक सम्मानित पुराने नार्मन परिवार में हुआ था, जिसकी गणना अनेक पीढ़ियों तक सामान्य कुलीनों में होती रही थी। इस प्रकार प्राचीन शासन की क्रूरताओं ने बिना विशेष परिश्रम के टोकवील को प्रारम्भ में ही बहुमत-शासन के प्रति अविश्वासी बना दिया था। फ्रांस की राज्यक्रांति के समानतावादी सिद्धान्त ने पहले से ही उसके स्वयं के परिवार और मित्र-मण्डली के अनेक सदस्यों का सफाया कर दिया था। क्रांति के समय उस के माता-पिता को जेल की यातनाएँ सहनी पड़ीं और उसके नाना को 'स्वाधीनता, समानता और भ्रातृत्व' के नाम पर फाँसी दे दी गयी थी। यद्यपि नेपोलियन के पतन के बाद उसके पिता को वही पुरानी श्रेणी और पद प्राप्त हो गया था, परन्तु टोकवील के बाल्यकाल को, इन प्रारम्भिक बहुमत के अत्याचारों की स्मृतियों ने आक्रान्त कर दिया था। इस प्रकार अमरीका में प्रजातंत्र के विरोधी आलोचक का पार्ट अदा करने के लिए वह जन्म और परिस्थिति दोनों से आदर्श रूप से योग्य था।

फिर भी टोकवील की अमरीका की प्रसिद्ध यात्रा की तैयारी के विषय में सब कुछ इतना ही नहीं कहा जा सकता, क्योंकि यदि इतना ही सही हो, तो हम उसकी आलोचना के अधिकांश भाग को व्यक्तिगत रोष और प्रतिशोध का वास्तविक परिणाम मानने के लिए विवश हो जायँगे। परन्तु हमारा यह फ्रांसीसी युवक वस्तुतः प्रतिक्रियावादी कुलीन नहीं था और न केवल उस अनाश्रित कुलीन की तरह ही था, जो प्राचीन व्यवस्था से बुरी तरह चिपट कर रहता है और शीघ्रता से फैलने वाली नयी प्रजातांत्रिक भावना का निरादर करने की व्यर्थ इच्छा रखता है। वस्तुतः हमें यह पता चलता है कि यद्यपि टोकवील ने कभी उनका, जिन्हें वह अपनी कुलीन परम्परा के श्रेष्ठ आदर्श और गरिमाएँ समझता था, परित्याग नहीं किया, फिर भी उसकी ईमानदारी और न्याय की कोमल भावना ने प्रजातांत्रिक आदर्शों के प्रति उसमें अत्यन्त सहानुभूति जाग्रत कर दी थी। उसने गहरा अध्ययन किया और प्रजातंत्र की अनिवार्य प्रगति के अर्थपूर्ण संकेतों से वह बहुत ही प्रभावित हुआ।

स्वयं फ्रांस में सन् १८३० ई० की राज्य-क्रान्ति ने उसे इस बात का और विश्वास दिला दिया कि उसके युग की सारी भावना अधिक समान और

लोकतान्त्रिक परिस्थितियों और संस्थाओं की ओर झुकती जा रही है। ऐसी स्थिति में टोकवील का कार्य लोकतंत्र की निन्दा करने का नहीं, प्रत्युत इस आन्दोलन की, जो भविष्य में अत्यन्त प्रभावशाली बन जाने की सम्भावनाओं से ओत-प्रोत था, दुर्बलताओं और शक्तियों को खोज निकालना था। उन दुर्बलताओं और शक्तियों को खोज निकालने के पश्चात् टोकवील सम्भवतः उनका मेल प्राचीन व्यवस्था के सर्वोत्तम पहलुओं के साथ बैठाता। टोकवील ने लिखा कि हमारे युग की महान् राजनीतिक समस्या विनाश की नहीं, अपितु ईसाइयत में लोकतंत्र के संगठन और स्थापना की है। अमरीकियों ने निश्चय ही इस समस्या का समाधान नहीं किया है, परन्तु उन लोगों के लिए, जो उसे हल करना चाहते हैं, उपयोगी तथ्य प्रस्तुत किये हैं।

टोकवील और उसका साथी गुस्ताव डि ब्यूमोंट प्रत्यक्षतः अमरिका में मई, सन् १८३१ में यहाँ की जेल-व्यवस्था का अध्ययन करने के लिए ही आये थे। दोनों कुलीन युवक मजिस्ट्रेट थे, और अन्ततोगत्वा जेल-सर्वेक्षण ने उन्हें नयी दुनिया देखने का पर्याप्त अवसर प्रदान किया। फिर भी, वास्तविकता यह थी कि टोकवील और ब्यूमोंट के आने का मुख्य कारण यह था कि वे लोकतंत्र का प्रत्यक्षतः अध्ययन करने और समानतावादी लोकतान्त्रिक सिद्धान्तों की वास्तविक कार्यपद्धति को, जो फ्रांस में भी निश्चित रूप से प्रचलित होनेवाली थी, स्वयं देखने के लिए बहुत ही उत्सुक थे। लोकतंत्र अनिवार्यतः उनके प्रिय फ्रांस और विश्व के अन्य भागों में आनेवाला था, परन्तु यदि वे दोनों युवक अमरीका में लोकतंत्र के दोषों और त्रुटियों का पता लगा सकते, तो कम-से-कम वे अपने देश में इस अनिवार्यता के लिए पर्याप्त सुरक्षा कर पाते। स्वयं टोकवील ने लिखा है कि—

> मैंने अपनी केवल सहज जिज्ञासा को शान्त करने के लिए ही अमरीका की जाँच-पड़ताल नहीं की है, मेरी इच्छा वहाँ की उन अच्छाइयों को ढूँढ़ने की थी जिससे हम लोग लाभ उठा सकें। ...... मैं स्वीकार करता हूँ कि अमरीका जो कुछ है उससे अधिक मैंने अमरीका में देखा। मैंने वहाँ स्वयं लोकतंत्र की प्रतिच्छाया को, उसकी प्रवृत्तियों, उसकी प्रकृति, उसके पूर्वाग्रहों और उसकी भावनाओं को ढूँढ़ने की कोशिश की, जिससे हम यह सीख सकें कि हमें उसकी प्रगति से कितना भयभीत होना चाहिए, अथवा उससे कितनी आशा करनी चाहिए।

और जार्ज डब्ल्यू पियर्सन ने अपनी अत्यधिक अध्ययन-पूर्ण पुस्तक 'अमेरिका में टोकवील और ब्यूमोंट' में इन कुलीन युवकों की अमरीका-यात्रा के

उद्देश्य के विषय मे लिखा है कि 'ये लोकतंत्र को विश्व के लिए सुरक्षित रखेंगे।'

II

इस बात में लेशमात्र भी सन्देह नही है कि अमरीका में लोकतंत्र के सामान्य सिद्धान्तो को ढूँढ़ने और उन्हे अपने देश फ्रांस में लागू करने के सम्बन्ध मे टोकवील में जो एकाग्रचित्तता थी, उसने उसके अध्ययन एवं परिशीलन को एक ऐसी चिरंतनता और दार्शनिकता प्रदान की, जिसका महत्व हमारे युग के लिए भी उतना ही अधिक है जितना उसके युग के लिए था। यहाँ पाठक को एक शताब्दी से अधिक पूर्व के अमरीकी जीवन से सम्बन्धित असंख्य असम्बद्ध तथ्यों के जंजाल मे कदाचित् ही फँसना पड़ता है। इसके बदले वह एक सुवर्णित सामान्यीकरण से दूसरे सामान्यीकरण तक लगातार पहुँचता रहता है और जो सामान्यीकरण उसके निजी हितो के निकटतम होते है, उनका और अधिक अनुसंधान करने के लिए स्वतंत्र रहता है। टोकवील ने जो चित्र प्रस्तुत किया है वह अपने पूर्व रूप से सुसम्बद्ध, सुसगठित और अर्थपूर्ण है।

फिर भी चूँकि टोकवील अपने मस्तिष्क मे इस प्रकार का एक निश्चित उद्देश्य लेकर अमरीका आया था, इसीलिए वह एक बुनियादी पद्धतिवादी जाल में फँस गया। वह जिसे 'प्रजातन्त्र की प्रतिच्छाया' कहता था, 'जिससे हम यह सीख सकें कि उसकी प्रगति से हमें कितना भय और कितनी आशा है' उसका सामान्यीकरण करने की उत्सुकता के वशीभूत होकर टोकवील बहुधा अभद्र प्रकार की पूर्वाग्रह-पूर्ण तर्क पद्धति का आश्रय ले लिया करता था। अमरीका के लिए नया होने तथा उसकी रीति-नीतियों एवं संस्थाओं से अपरिचित होने के कारण टोकवील अल्पतम ठोस प्रमाणों के आधार पर ही अवास्तविक सिद्धान्त गढ लिया करता था और तब वह अपने आगे के पर्यवेक्षणो का उपयोग और अधिक यथार्थवादी निष्कर्षों के आधार के रूप मे नही, प्रत्युत अपने इन कुछ-कुछ स्वान्तः स्फुरणात्मक सामान्यीकरणों के प्रमाण के रूप में ही करता था। अमरीकी घटनाक्रम के एक ब्रिटिश समीक्षक लार्ड ब्राइस ने, जिन्होने टोकवील के आधी शताब्दी पश्चात् सुचारु रूप से 'अमरीकी राष्ट्रमण्डल' का निरीक्षण किया था, शिकायत की कि यद्यपि फ्रांस-निवासी टोकवील ने जान-बूझ कर कभी ऐसे तथ्य की उपेक्षा नहीं की जिससे उसके सिद्धान्तो का खण्डन होता, तथापि उसके मस्तिष्क पर

'तथ्यों का प्रभाव उसी प्रकार नहीं पड़ता, जिस प्रकार अक्षत भूमि पर बीजों के गिरने का प्रभाव नहीं पड़ता।'

निश्चय ही टोकवील की समीक्षा की सामान्य उत्कृष्टता को कुछ अश तक कम कर देनेवाली अन्य सीमाएँ भी थीं। कभी-कभी वह अपनी अन्तर्मुखी प्रवृत्ति तथा अमरीका मे प्रजातंत्र के व्यापक परिणामों के प्रति अत्यन्त उत्कण्ठा के कारण उसकी सूक्ष्मताओं को सही-सही रूप में और स्पष्टतापूर्वक नहीं देख पाता था तथा मूलतः शुद्ध प्रजातांत्रिक विचार एवं कार्य-पद्धतियों और केवल निरन्तर सीमान्त अनुभव तथा अग्रेजी उत्तराधिकार से उत्पन्न विचार एवं कार्य पद्धतियों में भेद नहीं कर पाता था। कभी कभी टोकवील सामान्यीकरण के प्रति अपने अत्यधिक झुकाव के कारण उन अनेक मूलभूत परिवर्तनों को भी नहीं देख पाता था, जो उसके लिखने के समय भी अमरीकी जीवन मे घटित होने लगे थे। इस प्रकार टोकवील को अमरीकी राष्ट्रपति का पद एक अधिकारहीन पद के रूप में प्रतीत हुआ। उसने उन शक्तियों का बड़ा लम्बा-चौड़ा वर्णन किया है, जिन्होंने प्रधान शासनाधिकारी को निर्बल बना दिया था तथा उसके प्रभाव को गम्भीर रूप से सीमित बना दिया था। और इस बात के प्रति उपेक्षा प्रदर्शित की कि भविष्य में कोई राष्ट्रपति निडरता और नेतृत्व की शक्ति ग्रहण कर सकता है। परन्तु यह सब ठीक उस समय हुआ, जब अत्यन्त कठोर वृद्ध एण्ड्यू जैक्सन व्हाइट-हाउस में बैठकर सर्वोच्च न्यायालय को चुनौती दे रहा था, कांग्रेस से अपनी इच्छाओं को बलपूर्वक मनवा रहा था तथा राष्ट्रपति के सुदृढ़ नेतृत्व के एक युग की स्थापना कर रहा था, जिसका अनुगमन अन्ततः थियोडोर रूजवेल्ट, वुडरो विल्सन और फ्रैंकलिन डी. रूजवेल्ट ने किया था।

एक और भी बड़ा महत्त्वपूर्ण क्षेत्र था, जिसमें अमरीकी जीवन के महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों को टोकवील नहीं पहिचान सका। इसका कारण यह था कि वह विभिन्न राज्यों की शक्ति से और राष्ट्रीय सरकार की स्वाभाविक प्रतीत होने वाली निर्बलता से बहुत ही अधिक प्रभावित था। उसने सोचा कि एक समय ऐसा आयेगा जब ४० राज्यों में लगभग दस करोड़ अमरीकी हो जायेंगे और ऐसे विकास एवं विस्तार के विघटनकारी और विकेन्द्रीकारक प्रभावों का परिणाम यह होगा कि संघ के बन्धन और अधिक शिथिल हो जायँगे। चूँकि राष्ट्रीय सरकार सामान्य नागरिक से और भी अधिक दूर हो जायगी, इसलिए राष्ट्रीय आस्था पूर्णतः टूट जायगी और उसका स्थान पृथक् पृथक् राज्यों के प्रति या

अधिक-से-अधिक राज्यों के प्रादेशिक मण्डलों के प्रति आस्था ग्रहण कर लेगी। टोकवील ने संयुक्त-राज्य अमरीका की यात्रा निश्चय ही ठीक उसी समय की थी जब कि सामुदायिकता का उदय हो रहा था और दक्षिण 'राज्यों के अधिकारों' की माँग कर रहा था। वह उस समय आया जब कि पूर्व और पश्चिम तथा उत्तर और दक्षिण के बीच विरोध के भाव विशेष रूप से कटु और स्पष्ट हो गये थे। अतः टोकवील के लिए यह कल्पना करना स्वाभाविक ही था कि राष्ट्रीय सरकार की शक्ति और प्रतिष्ठा में और अधिक कमी हो जायगी तथा राज्य एवं वर्ग के प्रति वफ़ादारी निरन्तर बढ़ती रहेगी।

फिर भी सामान्यीकरण सम्बन्धी अपनी इस खोज में टोकवील ने संगठन और राष्ट्रीयता की भावना को प्रोत्साहित करने वाली उन अनेक शक्तियों पर ध्यान नहीं दिया, जो अन्ततोगत्वा एक समस्त महाद्वीप मे फैले हुए ४८ राज्यों में १६ करोड़ अमरीकियों को भी एकता के सूत्र मे आबद्ध करने वाली थी औद्योगिक क्रान्ति, दूर तक फैली हुई फैक्ट्रियों, विस्तृत अन्तरमहाद्वीपीय रेलवे-प्रणाली, अनन्त राजमार्ग, सामूहिक संचार साधन, अमरीकी भोजन, वस्त्र, घर तथा विचारों के भी प्रतिमानीकरण इन सबने टोकवील के समय की अपेक्षा अमरीकियों को और अधिक दृढ़ता से एकता के सूत्र में बाँध रखा है। हमारा संघ बृहद् राष्ट्रीय अधिकारों की निरन्तर वृद्धि तथा राज्यीय एवं प्रादेशिक निष्ठाओं के उल्लेखनीय ह्रास से वस्तुतः शक्तिशाली बना है, न कि उसका विघटन हुआ है अथवा वह निर्बल बन गया है। टोकवील ने यह अनुभव किया कि गृहयुद्ध में संघ का पतन आवश्यक है, परन्तु १८६१ से १८६५ तक के गृहयुद्ध की प्रचण्ड अग्नि से वह सही सलामत निकला और सदा की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली हो गया।

इसके अतिरिक्त, जैसा कि लार्ड ब्राइस ने कहा था कि 'जो लोग किसी राष्ट्र की राजनीतिक एवं सामाजिक विशिष्ट घटनाओं के मूल तक पहुँचना सरल कार्य समझते हैं, उनके लिए यह तथ्य एक स्वस्थ चेतावनी के समान है कि टोकवील जैसा एक सूक्ष्मदर्शी और परिश्रमी पर्यवेक्षक भी, जिसने अमरीकी राजनीति की अनेक छोटी-छोटी बातों को अप्रतिम तीव्रता से ग्रहण किया है और पूर्ण कलात्मक रूप से उनका वर्णन किया है, अनेक ऐसी बातों को नहीं देख सका, जिन्होंने उसके समय में पहले से ही सिर उठाना प्रारम्भ कर दिया था और जो उसके बाद सर्वाधिक महत्वपूर्ण बन गयी हैं।'

ब्राइस ने ऐसी बातों में राजनीति में धन के बढ़ते हुए प्रभाव, पार्टी-प्रतिद्वन्द्विता के व्यवस्थित और संगठित रूप और सुधार-आन्दोलन के उदय को सम्मिलित किया है (यद्यपि टोकवील और ब्यूमोट यहाँ के जेल सुधारों का अध्ययन करने के कथित उद्देश्य से ही आये थे।)

'अमेरिका में प्रजातंत्र' और भी कई दृष्टियों से दोषपूर्ण है। उसमें अनेक बातें छूट गयी हैं और अनेक बातों की गलत व्याख्या की गयी है, जिसका प्रत्यक्ष कारण यह है कि लेखक अत्यन्त सरलतापूर्वक धारणाएँ बना लिया करता था तथा वह घटनाओं का वर्णन करने की अपेक्षा संक्षिप्तीकरण, व्याख्या और सामान्यीकरण के लिए अधिक उत्सुक था।

III

टोकवील की समस्त प्रत्यक्ष अपर्याप्तताओं और उसके अन्तर्मुखी दृष्टिकोण के बावजूद, जो बहुधा क्षोभकारी था, प्रजातांत्रिक अमरीका में राजनीति, धर्म, सरकार, कला और यहाँ तक कि साहित्य के विषय में भी उसके अनेक सामान्यीकरण वस्तुतः आश्चर्यजनक रूप से चतुरतापूर्ण और पर्यवेक्षणपूर्ण हैं। इसी गुण के कारण 'अमेरिका में प्रजातंत्र' एक महान् पुस्तक है। उन विषयों में भी, जहाँ समकालीन घटनाचक्र का विवरण प्रस्तुत करते समय उसके निरीक्षण स्थूलरूप से विश्वसनीय और सही नहीं ठहरे हैं, टोकवील आज भी सिद्धहस्त भविष्यवक्ता और राजनीतिक वैज्ञानिक की श्रेणी में गिना जाता है। १९वीं शताब्दी के प्रजातांत्रिक जीवन की गतिशीलता के विषय में उसके अनेक कुशाग्र सूक्ष्म निरीक्षण हमारे युग के लिए भी सही ठहरते हैं। इतिहास उसके अनेक अत्यन्त पूर्णार्थक अनुमानों का जिस ढंग से समर्थन करता है, उससे हरेक को बार-बार आश्चर्य होता है।

उदाहरणार्थ, यह स्पष्ट है कि टोकवील ने अमरीकी राष्ट्राध्यक्ष की तात्कालिक शक्ति और महत्ता का गलत अनुमान लगाया था। फिर भी, उसी समय इस फ्रांसीसी ने कुशलता से यह सही अनुमान लगा लिया था कि अमरीकी जीवन के वे कौन से तत्त्व हैं जो अन्ततोगत्वा राष्ट्राध्यक्ष के प्रभाव और शक्ति में जैक्सन की गहन आशाओं से भी बढ़कर वृद्धि कर देंगे। टोकवील ने लिखा था—"किसी राष्ट्र की कार्यकारिणी सत्ता को मुख्यतः उसके वैदेशिक सम्बन्धों में ही अपने कौशल और अपनी शक्ति को काम में लाने का सुअवसर उपलब्ध होता है"। परन्तु स्वयं उसके समय में सभी व्यावहारिक दृष्टियों से अमरीका लगभग पृथक् था, और उसके कोई वैदेशिक

सम्बन्ध नहीं थे। महासागरों से अमरीका शेष जगत् से पृथक् होने के कारण विदेशी आक्रमणों से सुरक्षित था। उस समय विदेशों में उसके हित तुलनात्मक रूप से कम और महत्वहीन थे; दूसरे राष्ट्रों के साथ उसके व्यवहार प्रायः नहीं के बराबर थे। यद्यपि राष्ट्राध्यक्ष के हाथों में ऐसे विशेषाधिकार थे जो 'प्रायः शाही विशेषाधिकारों' का रूप धारण कर सकते थे, तथापि उस समय भौतिक पृथक्करण और वैदेशिक सम्बन्धों के अभाव ने इन परमाधिकारों को व्यवहार में लाने के लिए कार्यकारिणी के अवसरों को पूर्णतः सीमित कर दिया।

इस प्रकार कानून अथवा संविधान ने नहीं, प्रत्युत केवल परिस्थिति ने राष्ट्राध्यक्ष के अधिकारों को निर्बल बना दिया था, और एक विवेचक एवं भविष्यवक्ता के रूप में टोकवील को इस बात का श्रेय है कि उसने स्पष्टतः अनुमान लगा लिया था कि भविष्य में ऐसी कौन-सी नयी परिस्थितियाँ होंगी जो निश्चय ही कार्यपालिका के प्रभाव में क्रांतिकारी परिवर्तन कर देंगी। यदि अमरीका को विश्व की महान् शक्ति का केन्द्र बनना है और उसके पूर्व समय की पृथक्ता को भूत की बात बनना है तो शासकीय सत्ता का विभाजन बहुत कुछ भिन्न होगा। 'यदि संघ का अस्तित्व निरंतर खतरे में बना रहेगा, यदि उसके मुख्य हितों का दैनिक सम्बन्ध अन्य शक्तिशाली राष्ट्रों के साथ रहेगा,' तो कार्यपालिका-सरकार से जिन कार्यों की आशा की जायगी और जो कार्य वह करेगी, उससे उन्हीं के अनुपात में उसका महत्व भी बढ़ जायगा। आज केवल थोड़े-से अमरीकियों को इस बात में सन्देह होगा कि हमारे राष्ट्रपति के हाथों में स्वयं अत्यधिक अधिकारों के केन्द्रित हो जाने का परिणाम यह हुआ कि प्रथम विश्व-युद्ध के बाद के वर्षों में अमरीका कम-से-कम अधिकांश रूप में एक महान् विश्व-शक्ति के रूप में प्रकट हुआ है। बीसवीं शताब्दी के मध्य में हमारे यहाँ वैदेशिक सम्बन्धों में विस्तार और महत्व की दृष्टि से अपार वृद्धि हुई है। हमारी कार्यपालिका को अपनी कुशलता और शक्ति के प्रदर्शन का पर्याप्त अवसर मिलता है। परिणामतः राष्ट्राध्यक्ष के 'प्रायः राजकीय परमाधिकार' अब व्यापक रूप से महसूस किये गये है, जो टोकवील की भविष्यवाणी से बहुत-कुछ मिलते हैं।

टोकवील ने अमरीका के आर्थिक अनुसन्धानों में भी—अमरीकियों के धन के प्रति प्रगाढ़ प्रेम के विषय में, कृषि की अपेक्षा वाणिज्य और उद्योग के लिए उनकी बढ़ती हुई अभिमान्यता, तथा उनकी विशाल भौतिक सफलता की भावी सम्भावनाओं के विषय में—अनेक बुद्धिमत्तापूर्ण निरीक्षण किये हैं। उसने

लिखा कि अमरीकी अपनी अत्यधिक महत्वाकांक्षा और लाभकारी प्रवृत्तियों के प्रति प्रायः अपनी एकमात्र आस्था के कारण ही उद्योग में प्रगति करते हैं। इसके अलावा अभी तो विशाल समृद्धि बाकी है। टोकवील ने नृशंस औद्योगिक कुलीनतंत्र अर्थात, १९वीं शताब्दि के उत्तरार्द्ध में 'राबर बैरन्स' के उदय का अनुमान कर लिया था। फिर भी, यहाँ टोकवील ने अमरीकी आर्थिक जीवन की मूलभूत असंगतियों का पता पा लिया था, जिनको बाद के मार्क्सवादी आलोचक कभी वस्तुतः ग्रहण नहीं कर सके थे—वह यह कि 'उत्पादक वर्ग की कुलीनता, जो हमारी आँखों के सामने वृद्धि कर रही है, इतनी कठोर है कि ऐसी विश्व में अब तक स्थापित नहीं हुई है—साथ-ही-साथ वह अत्यन्त परिसीमित और कम-से-कम खतरनाक है।' इसका कारण यह था कि उसकी सम्पत्ति पर एकाधिपत्य नहीं था और उसकी सफलता के साथ न तो व्यापक दरिद्रता की उग्रता, और न समाज का, केवल बहुत अमीर और बहुत गरीब, इन दोनों वर्गों में ध्रुवीकरण हुआ था।

टोकवील ने एक असाधारण विचारपूर्ण परिच्छेद 'महान क्रान्तियाँ क्यों अधिक दुर्लभ हो जायेंगी' में यह लिखा है कि क्रान्तियाँ प्राकृतिक असमानताओं को नष्ट करने के लिए होती है और यह स्वीकार किया है कि प्रजातांत्रिक अमरीका में व्यवसाय और सम्पत्ति का प्रेम कुछ ही बड़े अमीरों को जन्म देगा, परन्तु ऐसे लोगों की भी संख्या कम होगी, जो अत्यन्त गरीब होंगे और ऐसे लोगों का, जो न अधिक अमीर और न अधिक गरीब होंगे, विशाल बहुमत हमेशा उनके बीच संतुलन रखेगा।

अमरीका में अमीर लोग एक स्थान पर केन्द्रित न होकर चारों ओर फैले हुए हैं और अमरीकी वर्ग प्रणाली की विशेषता—जिसे मार्क्सवादी कभी देख अथवा स्वीकार नहीं कर सकते—स्तरीकरण नहीं, अस्थिरता है। ऐसे वर्ग में 'न तो वस्तुतः अमीर ही होते हैं और न गरीब,' इसलिए अधिकांश पुरुषों के पास 'जीवनयापन की इच्छापूर्ति के लिए पर्याप्त सम्पत्ति है, परन्तु वह ईर्ष्या उभाड़ने के लिए पर्याप्त नहीं है। इस प्रकार के मनुष्य हिंसक आन्दोलनों के स्वाभाविक शत्रु होते हैं, उनकी शान्ति उनके नीचे और ऊपर की सब वस्तुओं को प्रशांत रखती है और समाज के स्वरूप का सन्तुलन बनाये रखती है।' ऐसे देश में सब कल्याण से पोषित रूढ़िवाद में वस्तुतः क्रान्ति की सम्भावना नहीं रहेगी।

* * *

अमरीकियों की कतिपय मूलभूत चरित्र-सम्बन्धी विशेषताएँ और सामाजिक आदर्श टोकवील की दृष्टि में नहीं आये थे, जैसे—अमरीकियों की सैद्धान्तिक विज्ञान की अपेक्षा व्यावहारिक-विज्ञान की ओर आसक्ति, उनका उन्नत और पूर्ण के स्थान पर शीघ्र और उपयोगी ('वे स्वभावतः सुन्दरता की अपेक्षा उपयोगिता को महत्व देंगे और चाहेंगे कि सुन्दर उपयोगी हो') कार्यों के प्रति आग्रह, और उनकी स्वाभाविक व्यग्रता और आकांक्षा, उनकी पारस्परिकता और अनवरत शीघ्रगामी क्रियाशीलता (अमरीकियों का सारा जीवन संयोग के खेल, क्रान्तिमय संघर्ष या युद्ध की तरह व्यतीत होता है) और साधनों तथा छोटे मार्गों को ढूंढने के लिए उनकी अनन्त खोज (वह व्यक्ति जो केवल सांसारिक कल्याण की ओर प्रवृत्त होता है, वह हमेशा घबराहट में रहता है, क्योंकि उस तक पहुँचने के लिए, उसे ग्राह्य करने के लिए और उसका उपभोग करने के लिए उसके पास सीमित समय रहता है)।

टोकवील ने विशेष रूप से द्वितीय भाग में बुद्धि, प्रथाओं और भावनाओं पर प्रजातंत्र या समानता के पड़ने वाले प्रभावों की एक लम्बी तालिका दी थी, जो आज करीब-करीब यथार्थ प्रतीत होती है। ऐसा प्रतीत होता है कि टोकवील को खुद के समय के सर्वातिशय सिद्धान्तवादी सर्वथा दृष्टिगोचर नहीं हुए, परन्तु अमरीकी प्रजातंत्र में साहित्य के भविष्य के विषय में वह पूर्णतः निश्चित था, और बहुत कुछ सही था। प्रजातंत्र के व्यापार और व्यवसायकी भावना साहित्य में कैसे प्रविष्ट होगी, इस पर अपने विचार व्यक्त करते हुए टोकवील ने भविष्यवाणी की कि उसके व्यावसायिक लोगों की पहुँच अधिकाधिक लोगों तक हो जायगी। उच्च योग्यताओं के कुछ ही लेखक अपनी कुशाग्रता और कला-प्रतिभा रख पायेंगे। अधिकांश लेखक स्वयं व्यापारी हो जायेंगे।

शैली प्रायः काल्पनिक, असत्य, बोझिल और शिथिल हो जायगी—प्रायः लगातार उग्र और अशिष्ट रहेगी। लेखक सूक्ष्मताओं की पूर्णता के स्थान पर शीघ्रता से कार्य पूर्ण करने पर ध्यान देंगे...पाण्डित्य-प्रदर्शन के स्थान पर कल्पना-शक्ति का बाहुल्य होगा; गम्भीरता की अपेक्षा कल्पना अधिक होगी, और साहित्यिक अनुष्ठानों में विचारों की अपरिष्कृत और अपरिपुष्ट मानसिक शक्ति के लक्षण दिखायी पड़ेंगे। लेखकों का ध्येय आनन्द की उपलब्धि के स्थान पर आश्चर्यान्वित कर देना और अभिरुचि को मोहित करने के स्थान पर भावों को उत्तेजित कर देना रह जायगा।

साहित्य में जैसा कि अन्य कलाओं की उन्नति में हुआ है, तथाकथित प्रजातांत्रिक युग के कौशल ने गुणों के स्थान पर परिमाण को, पूर्णता के स्थान पर लाभ को महत्व दिया है।

धर्म पर भी प्रजातंत्र का प्रभाव पड़ना चाहिए। उसका रूप और उसके बन्धनों की कठोरता कम हो जाती है, यद्यपि उन लोगों के लिए वह विश्वास और आत्मज्ञान के आधारभूत तत्व अनवरत रूप से प्रदान करता रहता है, जिनकी कृत्रिम राजनीतिक स्वतंत्रता अन्यथा उनके जीवन और विचारों को असह्य रूप से अत्यन्त सूक्ष्म और क्षीण बना देगी। यहाँ तक कि प्रजातांत्रिक प्रवृत्तियों का, जो किसी संयोग या अकेले महापुरुषों और नेताओं के एकमात्र कार्यों और सफलताओं को महत्त्व देने के बदले जन-आन्दोलनों और सामान्य हितों पर जोर देती हैं, प्रभाव इतिहास पर भी पड़ना चाहिए। निश्चय ही अमरीकी इतिहास-लेखन-कला ने जिस पर टोकवील के समय से दीर्घ काल तक एक अथवा दूसरे प्रकार के नियतिवादियों का, जो सभी समाज का निर्माण करने वाले व्यक्तियों की अपेक्षा समाज की दिशा में परिवर्तन करने वाली प्रचण्ड शक्तियों से अधिक सम्बन्धित थे, पर्याप्त रूप से प्रमाणित कर दिया है कि यह कथन कितना दूरदर्शितापूर्ण था।

टोकवील ने इसके अलावा प्रजातांत्रिक अमरीका के अनेक अन्य विषयों का उसी कुशलता के साथ वर्णन किया है और तत्सम्बधी भविष्यवाणियाँ भी की हैं। उसने कानूनी व्यवसाय, विशेषतः न्यायपालिका, स्वतंत्र प्रेस की शक्ति और निन्दा करने की क्षमता तथा सामान्यतः प्रजातांत्रिक आचरणों की अतिशयता की विशिष्ट महत्ता पर प्रकाश डाला है। उसने अमरीका के राजनीतिक हितों की अवाधना और गहनता पर विचार प्रकट किये हैं। ('वह आपसे ऐसे बोलता है, जैसे वह किसी सभा में भाषण कर रहा है और यदि उसे वादविवाद में तेजी लाने का अवसर मिले, तो वह उस व्यक्ति को जिसके साथ वह बातचीत कर रहा होगा, सम्बोधित करेगा, भद्र पुरुषों!') उसने युद्ध के विषय में दीर्घकाल से अभिव्यक्त घृणा और उसके लिए की जाने वाली धीमी तैयारी और फिर भी अन्ततः राष्ट्र को पूर्ण तथा, विजय-मंडित युद्ध में जुटाने की योग्यता और हब्शियों तथा श्वेतांगों के मध्य स्वामी-दास सम्बन्धों में अन्तर्निहित गृह-युद्ध के खतरों का भी वर्णन किया है और उनके सम्बन्ध में भविष्यवाणियाँ की है।

युवक फ्रांसीसी ने सार्वजनिक संस्थाओं के बाहुल्य की ओर ध्यान खींच कर, विशेषतः सारगर्भित अमरीकी सिद्धान्त का पिष्टपेषण भी किया है ('सभी आयु, सभी स्थितियों और सभी मनोवृत्तियों के ये अमरीकी, मनोरंजन प्रदान करने के लिए, स्कूलों की स्थापना करने के लिए, धर्मशालाओं और चर्चों का

निर्माण करने के लिए, शिक्षा का प्रसार करने के लिए, पादरियों को विरोधी स्थानों पर भेजने के लिए धार्मिक, नैतिक, गम्भीर, निरर्थक, सामान्य या संकुचित, विशाल और लघु सभी प्रकार के असोसियेशनों का निरन्तर निर्माण करते हैं।') इस प्रकार वे निजी समूह के व्यक्तियों को शक्ति और छोटी छोटी बातों में सहायता देते हैं और विस्तृत उत्तरदायित्वों का बोझा उठाने के लिए तैयार करते हैं और ऐसे कार्यों को करते हैं, जो अन्यथा सरकार द्वारा किये जाते।

अन्त मे निश्चय ही टोकवील की भविष्यवाणियों में सबसे अधिक सही उसका वह सूक्ष्म अनुमान था, जो उसने एक अन्य शक्तिशाली राष्ट्र के साथ अमरीका के भावी सम्बन्ध के विषय मे लगाया था।

विश्व में इस समय दो महान् राष्ट्र हैं जो विभिन्न दिशाओं से उठे परन्तु जो एक ही उद्देश्य की ओर बढ़ते हुए दिखायी पड़ते हैं। रूसियों और अमरीकियों का मैंने प्रकारान्तर से उल्लेख किया है, दोनों का एकाएक विकास हुआ है, जब मानवता का ध्यान अन्य दिशा की ओर केन्द्रित था, उन्होंने राष्ट्रों के बीच एकाएक अपने को प्रथम श्रेणी में प्रतिष्ठित कर दिया और विश्व को उनके अस्तित्व और उनकी महानता का ज्ञान एक साथ ही हुआ।

अन्य राष्ट्रों की अपनी प्राकृतिक सीमाएँ प्रायः निश्चित हो चुकी है और अब उन्हें केवल अपनी शक्ति को बनाये रखना है, परन्तु इन राष्ट्रों का विकास अब तक गतिशील है। अन्य सबका विकास अवरुद्ध हो चुका है या वे अत्यन्त कठिनाई के साथ आगे बढ रहे हैं; परन्तु ये दोनों अकेले उस पथ की ओर सरलता और वेग के साथ अग्रसर हो रहे हैं जिसकी कोई सीमा दिखायी नहीं दे सकती। अमरीकी अपने प्राकृतिक अवरोधों से संघर्ष कर रहा है, परन्तु रूसी के मार्ग में रुकावटें डालने वाले शत्रु भी मनुष्य हैं। अमरीका जंगली और असभ्य जीवन से लड़ रहा है और रूस को अपने सारे शस्त्रों से सभ्यता के साथ लड़ना पड़ रहा है। इसलिए अमरीकियों की विजय हलों के द्वारा प्राप्त होती है और रूसियों की तलवार के द्वारा। आंग्ल-अमरीकी अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिये व्यक्तिगत हितों पर विश्वास करता है और लोगों की-अनिर्देशित शक्ति और साधारण बुद्धि को स्वतंत्रता प्रदान करता है; किन्तु रूसी, समाज की सारी सत्ता, एक व्यक्ति के हाथों में केन्द्रित करता है। अमरीका का मुख्य अस्त्र स्वतंत्रता है और रूस के लिए दासता। उस दोनों का मूल स्रोत और दोनों का मार्ग भिन्न है; फिर भी

उनमें से प्रत्येक के हाथों में दुनिया की आधी जनसंख्या का भाग्य ईश्वरीय इच्छा से सुरक्षित लगता है।

हम देख चुके हैं कि अलेक्सिस डि टोकवील ने अमरीकी जीवन के प्रायः प्रत्येक विषय के प्रति अभिरुचि प्रकट की थी। फिर भी, स्वयं उसी के अनुमान से एक विषय—अन्यों की अपेक्षा विशेष रूप से प्रमुख था। वह विषय था बहुमत का बढ़ता हुआ अत्याचार, विचार-स्वातंत्र्य के मार्ग में उत्पन्न की गयी निरन्तर बढ़ती हुई और अत्यन्त शक्तिशाली बाधाएँ, जिनके परिणामस्वरूप अमरीकी विचारधारा में भयानक एकरूपता आ गयी, असामान्यता का तथा रूपवैविध्य का अभाव हो गया। टोकवील ने कहा कि 'अमरीका में जब तक बहुमत की सार्वभौमता अपने मार्ग को निश्चित नहीं कर लेगी, तब तक वहाँ बुद्धि की पूर्ण स्वतंत्रता का अस्तित्व बना रहेगा; परंतु जब बहुमत अन्तिम रूप से निश्चय कर लेगा, तब समस्त विरोधी विचार और मतभेद समाप्त हो जायेंगे। यह कार्य मृत्यु या शारीरिक-यातना के खतरे द्वारा न होकर, बहिष्कार, अपने साथियों द्वारा परित्याग तथा समाज द्वारा अस्वीकृत किये जाने की सूक्ष्म एवं अधिक असह्य प्रक्रिया द्वारा होगा।'

सारे इतिहास में ऐसा उदाहरण कहीं नहीं मिलता, जब सम्राटों और राजाओं ने विचारों को नियंत्रित करने में, जो सब शक्तियों में अत्यन्त गतिमान और अदृश्य है, सफलता प्राप्त कर ली हो। फिर भी जहाँ निरंकुश राजतंत्र असफल रहा, वहाँ प्रजातंत्र ने सफलता प्राप्त कर ली। इसका कारण यह है कि बहुमत की शक्ति असीमित और सर्वव्यापक है और समानता तथा बहुमतशासन के सिद्धान्तों ने बहुमत के ऊपर अल्पमत के अत्याचार का स्थान, अल्पमत के ऊपर बहुमत के अत्याचार को, जो अपेक्षाकृत अधिक पूर्ण, अभेद्य और व्यापक रूप से मान्य है, प्रदान कर दिया।

टोकवील ने पूर्वकालीन अमरीकी समाज के व्यक्तिवाद के विपरीत समरूपता, अनुरूपता और समानता को वर्तमान प्रजातंत्र का लक्षण बताया है। मूल रूप से मनुष्य ने पुराने राजतंत्रों और कुलीनतंत्रों द्वारा निर्मित असमानता की क्रूर शृंखलाओं को तोड़ने के लिए स्वतंत्रता अर्जित की थी; परन्तु 'जब समाज में मनुष्यों की परिस्थितियाँ समान बनती हैं, व्यक्ति का महत्व कम हो जाता है और समाज का महत्व बढ़ जाता है,' तब धीरे-धीरे प्रजातंत्र में मनुष्य विभिन्नता के स्थान पर समानता और समरूपता पर अधिक बल देने लगते हैं और वही स्वतंत्रता भिन्न होकर असह्य हो जाती है। इसके अतिरिक्त समतावादी

प्रजातंत्र में मनुष्य अपने सहप्राणियो की भीड में खो जाने के लिए उद्यत हो जाते हैं, वे अपने स्वयं की स्वतंत्रता और व्यक्तित्व का सम्मान खो बैठते है और इसलिए वे अन्य सभी की ओर से व्यक्तिगत विचार, अभिरुचि और इच्छा की स्वतंत्र अभिव्यक्ति के प्रति अत्यन्त उदासीन हो जाते है। संक्षेप में, प्रजातंत्र और समानता सबको एक स्तर पर लाने वाले महान् तत्व हैं। इस प्रकार वे एक व्यक्ति या कुछ व्यक्तियो द्वारा अनेको का दमन किया जाना असम्भव कर देते हैं। परन्तु इसके विपरीत, समान रूप से वे अनेकों के अत्याचार से एक व्यक्ति के लिए मुक्ति पाना भी असम्भव कर देते हैं। परिणामतः प्रजातांत्रिक बहुमत सबसे अधिक शक्तिशाली और अत्यन्त निरंकुश बन सकता है।

* * *

टोकवील ने बहुमत के बढ़ते हुए अत्याचार के सम्बंध में जो चिन्ता प्रकट की थी, वह आज निश्चित रूप से विशेष बल के साथ परिलक्षित होती है। यह सही है कि 'अमेरीका में प्रजातंत्र' के पहली बार प्रकट होने के अर्द्धशताब्दी पश्चात् लार्ड ब्राइस ने लिखा था कि टोकवील की "बहुमत की निरंकुशता आज के अमरीका मे एक गम्भीर बुराई के रूप मे परिलक्षित नही होती। राजनीति, धर्म या सामाजिक पहलुओं मे जिस विचारभिन्नता की असह्यता का उल्लेख उसने बढ़ा-चढ़ा कर किया है, उसके जो चिह्न रह गये हैं वे अत्यन्त क्षीण हैं। परन्तु लार्ड ब्राइस की आलोचना का मूल्यांकन करते समय कोई भी यह संदेह कर सकता है कि चूँकि उसमे टोकवील जैसी प्रखर और दूरदर्शी दृष्टि नही थी, इसलिए वह फ्रांसीसी के अनुमान की गहनता तक नहीं पहुँच पाया। इसके साथ जैसा कि स्वयं ब्राइस ने सन् १८८७ में लिखा था, पूर्णतः बहुमत द्वारा परिपुष्ट प्रजातंत्र ने, जिसकी कल्पना टोकवील ने की थी, और जिसे आज हम अपनी आँखों के सामने देख रहे है, वस्तुतः अभी तक अमरीकी जीवन के धरातल को नही छुआ था। आज यद्यपि उसने और आधुनिक, सीमारहित, औद्योगिक अमरीका ने अपनी फैक्ट्री से निर्मित, प्रतिमानित भोजन, वस्त्रों, घरों और संचार-साधनों और यहाँ तक कि मनोरंजनो के साथ समानता और अधीनस्थ व्यक्तिवाद को अधिक महत्व प्रदान किया है और उसे परिपूर्णता प्रदान की है, जिसे समकालीन समाज शास्त्रियों ने विशेष रूप से 'समानुरूपता के युग' के नाम से पुकारा है। एक अपेक्षाकृत विशिष्ट 'उद्देश्य साम्य' की दिशा में कार्यरत शीत और उष्ण युद्धों के समस्त तनावों के साथ राजनीतिक तद्रूपता समाप्त हो गयी सी प्रतीत होती है; और सामान्यतः कहा जा सकता

है कि आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक विषमताएँ जो वाशिंग्टन और जेफर्सन के समय विशेष रूप से प्रमुख थीं, हमारे युग के जन प्रजातंत्र में अधिकांशतः लुप्त हो गयी लगती हैं।

टोकवील की भयानक भविष्यवाणियाँ हमारे युग मे इतनी यथार्थ हो जायेंगी, यह जानकर किसी भी प्रकार का आश्चर्य नहीं होता, यहाँ तक कि बढ़ती हुई निरंकुशता को शान्त करने वाले उन तथ्यों के प्रकाश में भी, जिनकी कि कल्पना उसे हुई थी; क्योंकि टोकवील ने अमरीकियों के दैनिक जीवन मे सरकार के हस्तक्षेप के प्रायः पूर्ण अभाव में इस प्रकार का एक तथ्य देखा था। सन् १८३० के दशक में उसने लिखा कि 'संयुक्त-राज्य अमरीका में यूरोपीय यात्री को अत्यधिक आश्चर्य इस बात पर होगा कि जिसे हम सरकार कहते है, उसका यहाँ अभाव है।' फिर भी आज हमे सरकार की छाप हर स्थान पर दिखायी पड़ती है।

टोकवील ने केन्द्रित सरकार और केन्द्रित प्रशासन के मध्य के अन्तर को भी प्रकट किया है। केन्द्रित सरकार जिसके द्वारा राष्ट्र की सर्वोपरि नीति का निर्धारण होता है, आवश्यक और वस्तुतः अनिवार्य है; परन्तु प्रशासन ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा इस प्रकार की सर्वोपरि नीति का क्रियान्वय किया जाता है, जिसका टोकवील के समय पृथक् और विकेन्द्रित अस्तित्व था, जिसका अधिकार मुख्यतः राज्य और उन स्थानीय अभिकरणों में निहित था, जो व्यक्तिगत व्यवहारों का निर्णय करते थे। फिर भी टोकवील ने सुझाव प्रस्तुत किया था कि यदि केन्द्रित सत्ता सरकार के सामान्य सिद्धान्तों की स्थापना करने के पश्चात उनके प्रयोग की विस्तृत बातों का प्रतिपादन करे और यदि देश के महान् हितों को नियमित करने के पश्चात् व्यक्तियों के हितों के क्षेत्रो मे पदार्पण करने लगे तो नयी दुनिया से शीघ्र ही स्वतंत्रता का लोप हो जायगा। आज इस बात से कौन इन्कार कर सकता है कि पिछली अर्द्ध शताब्दी से अधिक समय से हमारी संघीय सरकार ने न केवल सरकार के सामान्य सिद्धान्तों का निरूपण किया है, प्रत्युत उनके प्रयोग के विस्तारों में भी प्रवेश किया है, उसने न केवल देश के महान् हितों को नियमित किया है, अपितु व्यक्तिगत हितों के क्षेत्र में भी प्रवेश किया है?

उस समय भी जब टोकवील ने आगे चल कर बहुमत के अत्याचार को, जिसके प्रति उसने भय प्रकट किया था, कम करनेवाली अमरीकी शक्तियों पर प्रकाश डाला, तब उसने जान-बूझ कर प्रेस की स्वतंत्रता को, जिस सरलता से कोई भी अपना समाचार-पत्र प्रारम्भ कर सकता है, तथा केन्द्रित प्रेस-मत के नितान्त अभाव को बिल्कुल अलग रखा। फिर भी, आज अमरीकी प्रेस की

विशिष्टता यह है कि अनेक स्वतंत्र प्रकाशनों का निरन्तर लोप हो रहा है, बड़े-बड़े पत्रों की शृंखलाओं के उदय और सामान्यतः सार्वजनिक आदान-प्रदान के विभिन्न साधनों के माध्यम द्वारा जनमत निर्माण पर साधारणतया आकर्षक बल से स्वतंत्र प्रकाशनो की संख्या निरन्तर घटती जा रही है।

टोकवील के समय स्वतंत्रता की स्वाभाविक भौतिक बुनियाद के अतिरिक्त स्वतंत्र व्यक्तियो के लिए आर्थिक अवसरों की जो खुली सीमाएँ और व्यापक क्षेत्र था, उनका हमारे युग में लगभग पूर्ण लोप हो चुका है। और यह पूर्ण रूप से स्पष्ट है कि हमारे भौतिक वातावरण मे भी, विचारों का स्वतंत्र विनिमय टोकवील के समय की भाँति, अब तक अपनी जड़ो को गहराई तक नहीं जमा सका है। परिणामतः 'अमेरिका मे प्रजातंत्र' में जो समस्याएँ खड़ी हो गयी हैं, वे आज अधिक दबाव जानने वाली और चुनौती देने वाली हैं, बनिस्बत उस समय के जब टोकवील और ब्यूमोंट अमरीका मे 'प्रजातंत्र की वास्तविक प्रतिमूर्ति को, उसकी प्रवृत्तियों, लक्षणो, पूर्वाग्रहों और उसके आवेगो सहित,' ढूंढ़ने के लिए आये थे, 'ताकि वे यह सीख सके कि उसकी प्रगति से हम कितना भय या आशा रखे।'

* * *

यह सही है कि अलेक्सिस डि टोकवील की यह महान् पुस्तक तब तक पूर्ण रूप से समझ में नहीं आ सकती, जब तक कोई यह महसूस न कर ले कि यह फ्रांसीसी युवक अमरीका में फैले प्रजातंत्र से वस्तुतः कभी निराश नही हुआ, यद्यपि उसने बहुमत की निरन्तर बढ़ती हुई निरंकुशता का अनुभव किया था। उसने अमरीकी सभ्यता के अनेक तथ्यों का दृढ़ता और बारीकी से विश्लेषण किया, जो उसे स्वतंत्र लोकतांत्रिक समाज की समरूपता और दबाव की ओर उन्मुख कर रहे थे और उसे इस बात का निश्चय हुआ कि यदि अमरीकियों को उनके स्वयं के साधनो पर आश्रित कर दिया गया, तो वे सहज ही अपने पूर्वजों के व्यक्तिवाद को शिथिल कर देंगे। फिर भी, यदि समरूपता प्रजातांत्रिक युग मे मनुष्यों का नैसर्गिक भाग्य निर्दिष्ट करती हुई प्रतीत होती है, तो टोकवील उसके बदले में व्यक्तिवाद, स्वाधीनता और व्यक्तिगत स्वतंत्रता को 'कला' की उपज मानेगा। यदि अमरीका के लिए भविष्य स्वतंत्रता के प्राकृतिक आधारों को समाप्त कर देनेवाला प्रतीत होता है, तो टोकवील उतना ही कृतसंकल्प था कि उनके स्थान पर नये आधारों का निर्माण कर दिया जाय।

उसने लिखा कि निश्चय ही किसी को यह धारणा एकदम नहीं बना लेनी चाहिए कि प्रजातंत्र में स्वतंत्रता खुले क्षेत्र की भौतिक परिस्थिति पर पूर्णतः निर्भर है—

यदि वे राष्ट्र, जिनकी सामाजिक स्थिति प्रजातांत्रिक है, केवल उसी दशा में स्वतंत्र रह सकते है जब वे बंजर क्षेत्रों में बसेंगे तो हमें मानव जाति के भविष्य के सम्बन्ध में निराश होना पड़ेगा; क्योंकि प्रजातंत्र निरन्तर अधिक विस्तृत क्षेत्रों में तेजी से फैल रहा है और जंगली क्षेत्र भी लोगों द्वारा धीरे-धीरे बसाये जा रहे है।

कोई भी उचित ढंग से प्रजातंत्र का परित्याग नहीं कर सकता, उसकी सीमाओं में स्वतंत्रता की आशा नहीं छोड़ सकता और उसके बदले में समाज और सरकार के अधिक कुलीनवादी स्वरूप को नहीं अपना सकता, जिनमें स्वतंत्रता परम्परानुगत अधिक सुरक्षित रही है ('इस प्रकार प्रश्न यह नहीं है कि कुलीन समाज को किस प्रकार पुनर्संगठित किया जाय, अपितु समाज की उस प्रजातांत्रिक स्थिति में, जिसे ईश्वर ने हमें प्रदान किया है, स्वाधीनता को किस प्रकार आगे बढ़ाया जाय')। स्वतंत्रता और प्रजातंत्र मनुष्य के भावी उद्देश्य होने चाहिए और उस मार्ग मे चाहे जितनी भयङ्कर बाधाएँ उपस्थित क्यों न हों, मनुष्य का कौशल आज भी स्वतंत्रता के साथ समानता और स्वाधीनता के साथ प्रजातंत्र (या बहुमत का शासन) के विचारशून्य और अपेक्षाकृत चमत्कारपूर्ण समीकरण को सार्थक बना सकता है। टोकवील का ऐसा ही दृढ़ विश्वास था, क्योंकि उसने लिखा कि यदि ऐसा न होता:

...तो मुझे यह पुस्तक नही लिखनी चाहिए थी, अपितु अपने आपको मानवता के भाग्य पर मन-ही-मन आँसू बहाने तक सीमित कर देना चाहिए था। समानता के सिद्धान्त से मानव की स्वाधीनता के लिए जो खतरे उत्पन्न हुए है, उन्हें सामने रखने के लिए मैंने प्रयत्न किया है, क्योंकि मेरा यह दृढ विश्वास है कि ये खतरे अत्यन्त प्रबल हैं और भविष्य के गर्भ मे जो खतरे छिपे है, उन सबकी अपेक्षा इन्हें बहुत कम देखा जाता है, किन्तु मैं ऐसा नही सोचता कि वे अजेय है।

इसलिए टोक्वील ने अनुभव किया कि—'प्रजातांत्रिक सरकार का सार बहुमत की निरंकुश सार्वभौमता में निहित है। फिर भी उस फ्रांसीसी की दृष्टि मे ऐसी व्यवस्था थी, जिसके द्वारा प्रजातांत्रिक देश, उन खतरों पर जो बहुमत में अन्तर्निहित हैं, विजय पा सकते हैं। उसने ऐसे उपकरणों का पता लगाया जिनका निर्माण स्वतंत्र मनुष्य अपनी प्राचीन स्वतंत्रता को सशक्त बनाने के लिए कुशलता से कर सकते हैं और हमारे स्वयं के समानुरूपता के युग में टोक्वील ने स्वतंत्रता के लिए जिस किलेबन्दी का सुझाव दिया है, उसका और भी अधिक महत्त्व है।

प्रेस की स्वतंत्रता अकेली ही व्यक्ति को ऐसी आवाज प्रदान करती है जिसके माध्यम से वह बलात्कार के विरुद्ध सारे राष्ट्र या सम्पूर्ण मानवता से अपील कर सकता है।

विकेन्द्रीकरण निरंकुश अधिकार को उस सीमा तक घटा देता है जहाँ तक सम्भव है।...और स्थानीय स्वशासन तथा अन्य सामाजिक, आर्थिक और बौद्धिक संगठन या समूह स्वतंत्र व्यक्तियों को अपने समाज में रहने के लिए एक कुंजी प्रदान करते हैं, उत्तरदायित्व और आत्मसम्मान की भावना जगाते हैं और वह भावना उन्हें भीड़ में नहीं खोने देती और अपनी स्वाधीनता के प्रति उन्हें अधिक ईर्ष्यालु बना देती है।

आदर्श, आचरण और परम्पराएँ, जिन्हें मनुष्य प्रजातान्त्रिक युग में अवमान की दृष्टि से देखते हैं किन्तु जो हमारी स्वतंत्रता के लिए सुरक्षापूर्ण दीवार की रचना करती हैं, यहाँ तक कि उस युग में वे और भी सशक्त हो जाती हैं, जब बहुमत की इच्छा हिंसा का रूप धारण कर लेती है। इसी कारण कानूनी व्यवसाय और न्याय-व्यवस्था सीधे तौर से इन आदर्शों को बनाये रखने, पोषण करने और उनकी सुरक्षा करने का कार्य करती हैं।

नागरिकों के संगठनों का निर्माण हमेशा अपने सहप्राणियों के अधिकारों और हितों की सुरक्षा करने के लिए होता है और वे निरन्तर इस बात से सजग रहते हैं कि उनकी स्वतंत्रता उस सीमा तक ही सुरक्षित है, जहाँ तक वे अपने अन्य नागरिकों की सुरक्षा करेंगे।

ये हैं कुछ उपाय जिनका निर्माण स्वतंत्र मनुष्य स्वयं कर सकते हैं और जिनके द्वारा वे अनवरत अपनी स्वाधीनता और स्वतत्रता को बहुमत की निरंकुशता से बचाये रख सकते हैं। हमारे प्रजातान्त्रिक युग में इस प्रकार की निरंकुशता के विरोध में यथासम्भव प्रबल अभियान का खड़ा होना अनिवार्य है, परन्तु उसके सामने झुकना नहीं। पोको और प्राचीन मानववादियों की भाँति टोकवील ने मनुष्य के भाग्य में अपने ही भाग्य को देख लिया था और उसका भविष्य स्वयं उसके निर्माण के लिए रुका रहा।

मैं इस बात से अवगत हूँ कि मेरे बहुत-से समकालीन व्यक्तियों का यह विचार है कि राष्ट्र कभी भी स्वयं अपने निर्माता नहीं रहे हैं और वे अनिवार्य रूप से पूर्ववर्ती घटनाओं से अपनी जाति से या अपने देश की भूमि और जलवायु से उत्पन्न किसी अजेय और अगोचर शक्ति की आज्ञा का पालन करते हैं। ऐसे सिद्धान्त मिथ्या और भीरुतापूर्ण होते हैं; ऐसे सिद्धान्त दुर्बल व्यक्तियों और दीन राष्ट्रों के सिवाय कुछ भी उत्पन्न नहीं कर सकते। ईश्वर

ने मानव जाति को पूर्णतः स्वाधीन या पूर्णतः स्वतंत्र उत्पन्न नहीं किया है। यह सही है कि प्रत्येक मनुष्य के चारों ओर एक घातक वृत्त खींचा हुआ है जिसे वह लाँघ नहीं सकता, परन्तु वह उस वृत्त की विस्तृत सीमा के भीतर शक्तिशाली और स्वतंत्र रहता है। यह बात मनुष्यों की भाँति समुदायों के लिए भी लागू होती है। हमारे युग के राष्ट्र मनुष्यों की परिस्थिति को समान होने से नहीं रोक सकते, परन्तु समानता का सिद्धान्त उन्हें किस ओर प्रवृत्त करता है– दासता या स्वतंत्रता की ओर, ज्ञान अथवा असभ्यता की ओर, समृद्धि या दीनता की ओर, यह स्वयं उन्हीं पर निर्भर है।

इसलिए मनुष्य स्वतंत्र इच्छा और बुद्धिमत्ता की सहायता से, लोकतांत्रिक युग ने उनके सामने जो अन्धकूप फैलाये हैं, उन्हें देख सकते हैं। और, इस प्रकार वे इन अन्धकूपों में, जिनमें अत्यन्त खतरनाक बहुमत की निरंकुशता द्वारा स्वतंत्रता का विनाश निहित है, गिरने की अपेक्षा बुद्धिमत्तापूर्ण मार्ग को, जो स्वतंत्रता और प्रजातंत्र का मार्ग है, चुन सकते हैं।

× × ×

'अमेरिका में प्रजातंत्र' की दो बड़ी जिल्दों का संक्षिप्तीकरण करते समय टोकवील की इस शास्त्रीय पुस्तक की न केवल भावना या उसके वास्तविक अभिप्राय को बनाये रखने का हर प्रकार से प्रयत्न किया गया है, अपितु उसके अत्यन्त महत्वपूर्ण वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक अंशों को भी उद्धृत किया गया है। सामान्य और साथ-ही-साथ बौद्धिक वर्ग की आवश्यकताओं और उद्देश्यों को प्रथमतः दृष्टि में रखकर सभी कालों में इस पुस्तक के कुछ अंश छोड़ दिये गये थे या उनमें परिवर्तन कर दिये गये थे। तदनन्तर ही उसके सस्ते कागज की जिल्द में संस्करण निकालने के लिए उसके आवश्यक कलेवर पर विचार किया गया। अतः यद्यपि राजनीतिक और सामाजिक साहित्य की हमारी इस महान् उत्कृष्ट कृति में काँट-छाँट करना और उसे घटाना सरल कार्य नहीं था, फिर भी उसके उत्कृष्ट अंश कुछ हेर-फेर के साथ, हेनरी रीव के मूल अनुवाद में से जिसका परिशोधन, फ्रांसिस बोवेन द्वारा किया गया, यहाँ दिये जा रहे हैं।

अलेक्सिस डि टोक्वील और उसके ग्रन्थों का अत्यन्त गहन और विद्वत्तापूर्ण अध्ययन करने के लिए पाठक को उत्साह से जार्ज पियर्सन की पुस्तक 'अमरीका में टोकवील और ब्यूमेंट' का नामोल्लेख किया जाता है।

न्यूयार्क सिटी
अमेरिका

रिचार्ड डी. हेफनर

लेखक की प्रस्तावना

संयुक्त-राज्य अमरीका में मेरे प्रवास के समय जिन नयी वस्तुओं ने मेरा ध्यान आकृष्ट किया, उनमें जनता की स्थिति की सामान्य समानता ने मुझे सर्वाधिक रूप से प्रभावित किया। इस मूल तथ्य का समाज की समस्त गतिविधियों पर जो विलक्षण प्रभाव पड़ता है, उसकी जानकारी मुझे शीघ्र ही हो गयी। यह जनमत के लिए विशिष्ट मार्ग-निर्देश करता है और कानूनों के लिए विशिष्ट आशय निर्धारित करता है। यह शासन करने वाले अधिकारियों के लिए नये उद्देश्य और शासित के लिए विचित्र आदतों की रचना करता है।

मैंने शीघ्र ही देख लिया कि इस तथ्य का प्रभाव राजनीतिक स्वरूप और देश के कानूनों से परे अत्यन्त व्यापक हो गया है, और उसका जितना प्रभाव सरकार पर है उससे तनिक भी कम नागरिक समाज पर नहीं है। यह जनमत का निर्माण करता है, नये भाव उद्रेक करता है नयी रीतियाँ चलाता है और जिन बातों की सृष्टि नहीं कर सकता, उनमें परिवर्तन करता है। अमरीकी समाज का अध्ययन मैंने जितनी गहराई से किया, उतना ही मुझे अधिक ज्ञान हुआ कि परिस्थितियों की यह समानता वह मौलिक तत्व है, जिससे, प्रतीत होता है कि अन्य बातों का उद्भव हुआ है और यह एक ऐसा केन्द्र बिन्दु है जिसके चारों ओर अन्य बाते परिभ्रमण करती हुई दिखलायी पड़ रही हैं।

जब मैं स्वयं अपने गोलार्द्ध की ओर अपने विचारों को केंद्रित करता हूँ, तो वहाँ भी नयी दुनिया से कुछ मिलती जुलती परिस्थिति दृष्टिगोचर होती है। प्रतीत होता है कि परिस्थिति की समानता यद्यपि उस उच्च सीमा तक नहीं पहुँची है, जो संयुक्त-राज्य अमरीका में दिखायी पड़ती है, फिर भी उस सीमा तक पहुँचने के लिए निरंतर गतिशील है। और इसी के साथ प्रजातन्त्र, जो अमरीकी समाज को पूर्ण नियंत्रित किये हुए है, यूरोप में भी बड़ी शक्ति से उठता हुआ प्रतीत होता है। अतः इन्हीं बातों से मैं यह पुस्तक, जो इस समय पाठक के सामने है, लिखने के लिए प्रेरित हुआ हूँ।

सबको यह समान रूप से ज्ञात है कि हमारे बीच एक प्रजातांत्रिक क्रान्ति का उदय हो चुका है, परन्तु सभी लोग उसको समान दृष्टि से नहीं देखते। कुछ लोगों को यह क्रान्ति एक विलक्षण परन्तु आकस्मिक घटना प्रतीत होती है और इसलिए वे ऐसा विश्वास करते हैं कि भविष्य में उसे नियंत्रित किया

जा सकेगा। दूसरो की दृष्टि में यह चूँकि अत्यन्त एकरूप, अत्यन्त प्राचीन और इतिहास में पायी जाने वाली अत्यन्त स्थायी प्रवृत्ति है, इसलिए यह अदम्य है।

मैं फ्रांस की सात सौ वर्ष पुरानी परिस्थिति पर क्षण भर के लिए विचार करता हूँ, जब उसका समस्त क्षेत्र परिवारों की एक छोटी सी संख्या में बंटा हुआ था, जो देश के मालिक और उसके निवासियों के शासक थे। उनके शासन का यह अधिकार पारिवारिक उत्तराधिकार के साथ पीढ़ी दर-पीढ़ी चलता रहा। बल ही केवल ऐसा माध्यम था, जिससे एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति पर प्रभुत्व रख सकता था। इस बल का एक मात्र स्रोत भू सम्पत्ति थी। इसके उपरान्त शीघ्र ही पादरियों की राजनीतिक शक्ति का प्रादुर्भाव हुआ और वह निरन्तर वृद्धि करने लगी और उन पादरियों ने अपनी श्रेणियों को गरीब और अमीर, रैयत और लार्ड सभी वर्गों के लिये खोल दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि चर्च के माध्यम से समानता ने शासन मे प्रवेश किया और शाश्वत बन्धनों में जकड़े दासों ने भी उच्च व्यक्तियों के समक्ष पादरी का स्थान ग्रहण किया और बहुधा राजाओं के ऊपर अपने को प्रतिष्ठित किया।

आगे चलकर, समाज ज्यों-ज्यो अधिक स्थायी और सुसभ्य होता गया, मनुष्यों के पारस्परिक विभिन्न सम्बन्ध अधिक जटिल और विभिन्न रूपवाले होते गये। इसीलिए नागरिक कानूनों की आवश्यकता महसूस की गयी और विधि के नियन्ता विशिष्ट पोशाके धारण किये हुए सामन्ती लार्डों के साथ सम्राट के दरबार में उपस्थित होने के लिए अनिश्चित न्यायाधिकरणों और अपने अव्यवस्थित कार्यालयों से शीघ्र ही बाहर निकल कर आये। उस समय जबकि नरेश अपने साहसिक कार्यों मे अपनी बर्बादी कर रहे थे और सामन्त निजी संघर्षों मे अपने साधनों का अपव्यय कर रहे थे, निम्न श्रेणी के लोग व्यापार द्वारा अपने को समृद्ध बना रहे थे। राज्य के मामलों में धन का प्रभाव दिखायी पड़ने लगा। व्यापार के कारोबार ने सत्ता के लिए एक नया मार्ग प्रशस्त कर दिया और महाजन राजनीतिक प्रभाव के दायरे में प्रतिष्ठित हो गये, जहाँ कभी उनसे चापलूसी के साथ घृणा भी की जाती थी।

धीरे-धीरे बुद्धि का विकास हुआ और साहित्य और कला के प्रति अभिरुचि मे वृद्धि हुई, जिसका परिणाम यह हुआ कि ज्ञान और प्रतिभा सरकार के लिए आवश्यक माध्यम बन गये। मानसिक योग्यता ने सामाजिक शक्ति का निर्माण किया और साहित्यिक मनीषियों ने राज्य के कार्यों में भाग लिया। शक्ति के नये साधनों की जितनी तेजी से खोज की गयी, उतनी ही

तेजी से उच्च कुल के जन्म को दी जाने वाली महत्ता कम हो गयी। ग्यारहवीं शताब्दी में कुलीनता अमूल्य थी और तेरहवी शताब्दी में उसका मोल किया जा सकता था। सन् १२७० ई० में कुलीनता उपहारस्वरूप पहली बार प्रदान की गयी और इस प्रकार शासन में समानता का प्रवेश स्वयं कुलीन-तंत्र के हाथों हुआ।

इन सात सौ वर्षों मे कभी-कभी ऐसा हुआ कि सामन्तों ने राजा की शक्ति का प्रतिरोध करने के लिए या अपने प्रतिद्वन्द्वियों की शक्ति को घटाने के लिए सामान्य लोगो को कुछ राजनीतिक अधिकार सौंप दिये। अथवा बहुधा ऐसा भी हुआ कि कुलीनतंत्र का दमन करने के उद्देश्य से राजा ने निम्नश्रेणी के लोगों को शासन में भाग लेने की अनुमति प्रदान की। फ्रांस में राजा सर्वदा समाज के भेद मिटाने में अत्यन्त सजग और क्रियाशील रहे हैं। जब वे शक्तिशाली और महत्वाकांक्षी थे, तब उन्होने सामान्य व्यक्तियों को कुलीन व्यक्तियो के स्तर तक उठाने मे कोई कसर नही बाकी रखी थी और जब वे शिथिल और कमजोर थे, तब लोगों को उन्होंने अपने से भी ऊँचा उठने के लिए अनुमति दे दी। कुछ ने अपनी प्रतिभा से और दूसरों ने अपने पापों से प्रजातंत्र की सहायता की। लुई ग्यारहवे और लुई चौदहवे ने सिंहासन के नीचे समस्त श्रेणियों को पराधीनता के समान स्तर तक पहुँचा दिया था और अंत में लुई पन्द्रहवाँ अपने दरबारियों सहित नीचे उतरकर धूल में मिल गया।

जैसे ही भू-स्वामित्व सामन्तो के हाथो से निकलकर अन्य किसी भी व्यक्ति के हाथों में आने लगा और उसके स्थान पर निजी सम्पत्ति अपना प्रभाव और प्रभुत्व जमाने मे समर्थ हुई, वैसे ही कला के क्षेत्र में होनेवाले प्रत्येक अनुसन्धान ने और व्यवसाय और उत्पादन में होनेवाले हर विकास ने मनुष्यों में समानता के अनेक नये तत्वो का निर्माण किया। इसके बाद प्रत्येक नया आविष्कार उसकी प्रासंगिकता से उत्पन्न होने वाली हर नयी आकांक्षा और सन्तुष्ट होने के लिए उत्कंठित हर इच्छा सामान्य समानता की दिशा में उठाया गया प्रगति का नया चरण था। भोग-विलास की अभिलाषा, युद्ध का प्रेम, फैशन का प्रभुत्व और मानव-हृदय के अत्यन्त प्रगाढ़ और साथ-ही-साथ अत्यन्त गहन भावों ने मानो गरीबों को धनी और अमीरों को निर्धन बनाने के लिये संयुक्त रूप से योगदान दिया।

जब बुद्धि का प्रयोग शक्ति और धन की प्राप्ति का स्रोत बना, उसी समय से हम देखते हैं कि विज्ञान के क्षेत्र में की गयी प्रत्येक नयी खोज, प्रत्येक नये सत्य, प्रत्येक नये विचार ने उस शक्ति के मूल को जन्म दिया, जो सामान्य लोगों के बीच प्रतिष्ठित की गयी। काव्य, भाषण और स्मृति, बुद्धि का स्वाभाविक गुण, कल्पना की लौ, विचारों की गहराई और वे सभी स्वाभाविक गुण जो ईश्वर द्वारा बिना किसी उद्देश्य से सब लोगों में बिखेर दिये गये, संयुक्त रूप से प्रजातंत्र के हित के अनुकूल हो गये। यहाँ तक कि उसकी प्रतिकूलताओं से युक्त होने के उपरान्त भी उन्होंने मनुष्य की स्वाभाविक महानता को बन्धनों से मुक्त कर उसके हित की रक्षा की। इसलिए सभ्यता और ज्ञान के साथ उसकी विजय का विस्तार हुआ और साहित्य का शस्त्रागार सभी लोगों के लिये खुल गया; जहाँ प्रतिदिन गरीब और निर्बल व्यक्ति अपने शस्त्रों को प्राप्त करने के लिए आश्रय लेने लगे।

अपने इतिहास के सात सौ वर्ष के पृष्ठों को उलटने पर, हमें एक भी ऐसी महान् घटना देखने को नहीं मिलती, जिसने परिस्थिति की समानता का प्रतिपादन न किया हो। जेहादों और आंग्ल-युद्धों ने सामन्तों को बड़ी क्षति पहुँचायी और उनकी सम्पत्ति को विभाजित कर दिया। नगर-निगमों ने सामन्ती निरंकुशता के अन्तरतम में स्वाधीनता का प्रवेश किया; हथियारों के आविष्कार ने दासों और कुलीनों को युद्धभूमि पर समान कर दिया; मुद्रण की कला ने सभी वर्गों के ज्ञान की वृद्धि के लिए समान अवसर प्रदान किया; पोस्ट आफिसों ने झोपड़ी और महल के द्वारों पर एक ही प्रकार से ज्ञान की सृष्टि की और प्रोटेस्टेंट मत ने उद्घोषित किया कि स्वर्ग तक जाने के मार्ग की खोज करने के लिए सभी व्यक्ति समान रूप से योग्य हैं। अमरीका की खोज ने भाग्य के सैकड़ों नये मार्गों को प्रशस्त कर दिया और निम्नवर्ग के साहसिक व्यक्तियों को धन और शक्ति अर्जित करने के लिए प्रोत्साहित किया

यदि हम ग्यारहवीं शताब्दी के प्रारम्भ से इस बात का परीक्षण करें कि फ्रांस में एक अर्द्धशताब्दी से लेकर दूसरी अर्द्धशताब्दी तक क्या घटित हुआ, तो हमें यह अवश्य ज्ञात होगा कि ऐसे हर युग के अन्त में समाज की स्थिति में द्विमुखी क्रांति हुई। कुलीन लोग सामाजिक स्थिति से नीचे गिरे और सामान्य लोग ऊँचे उठे—एक ऊँचा उठा, तो दूसरा नीचे गिरा। प्रत्येक अर्द्धशताब्दी दोनों को निकट ले आती है और एक दिन उन दोनों का मिलाप शीघ्र ही हो जायेगा।

यह प्रवृत्ति केवल फ्रांस के लिए ही विशिष्ट प्रकार की हो, यह बात नहीं है। जिस ओर भी हम दृष्टि उठाते हैं, ईसाई जगत मे सर्वत्र इसी क्रान्ति के दर्शन होते हैं। राष्ट्रीय अस्तित्व की अनेक घटनाओं से सर्वत्र प्रजातंत्र के अनुकूल परिस्थितियों का निर्माण हुआ। उन सभी लोगो ने जिन्होंने उसके हित के लिए स्वेच्छा से श्रम किया और उन लोगो ने जिन्होंने अज्ञान से उसकी सहायता की – दोनो ने अपने अथक प्रयत्नों से उसकी सेवा की। जिन्होंने उसके लिए संघर्ष किया और जिन्होने अपने को उसका विरोधी उद्घोषित किया, सभी एक ही मार्ग की ओर बढ़े और सभी ने एक ही उद्देश्य के लिए श्रम किया – कुछ ने अज्ञान से और कुछ ने अनिच्छा से। सभी ईश्वर के हाथों मे बुद्धिहीन कठपुतली की तरह रह गये।

इसलिए समानता के सिद्धान्त का उत्तरोत्तर विकास दैविक घटना है। उसमें इस प्रकार के तथ्यो के सभी मुख्य लक्षण देखने को मिलते हैं। वह सर्व-व्यापक है, वह चिरस्थायी है, और समस्त मानवीय हस्तक्षेप से सर्वदा मुक्त रहता है और सभी घटनाएँ एवं सभी मनुष्य उसकी प्रगति में अपना योगदान देते हैं।

तब फिर क्या इस प्रकार की कल्पना करना बुद्धिमत्ता होगी कि सामाजिक गतिविधि को, जिसका कारण इतना सुदूर रहस्य में छिपा है, एक पीढ़ी द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है? क्या यह विश्वास किया जा सकता है कि प्रजातंत्र, जिसने सामंतशाही को उतार फेंका और राजाओं को लुप्त कर दिया, व्यापारियों और पूँजीपतियों के सामने हार जायगा? क्या उसके इतने शक्तिशाली हो जाने के बाद और उसके विरोधी तत्वो के इतने निर्बल हो जाने के बाद उसकी गति अवरुद्ध हो जायगी? तब क्या हम उसे आघात पहुँचाना चाहते हैं? कोई कुछ भी नहीं कह सकता; क्योंकि तुलनात्मक अध्ययन करने में हम पहले ही असफल हो चुके हैं। ईसाई देशों में या विश्व के किसी भाग में इस समय मनुष्यों की परिस्थितियों की समानता पूर्व काल की अपेक्षा अधिक समान है – इसलिए जो कुछ हो चुका है, वह इतना वृहद् है कि हम उससे इस बात की कल्पना नहीं कर सकते कि अभी कितना होना शेष है। यह सारी पुस्तक, जो जनता के सामने प्रस्तुत है, लेखक के मस्तिष्क मे उत्पन्न एक प्रकार के धार्मिक आतंक की अभिव्यक्ति से लिखी गयी है। यह आतंक लेखक के मस्तिष्क मे उस अदम्य क्रान्ति के विचार से, जो शताब्दियो से हर कठिनाई का सामना करते हुए आगे बढ़ी है और आज भी जो अपने द्वारा किये गये विध्वंस के

बीच निरन्तर आगे बढ़ रही है, पैदा हुआ था। यह आवश्यक नहीं कि ईश्वर स्वयं सम्भाषण करे, जिससे हम उसकी इच्छा के असंदिग्ध लक्षणों को ज्ञात कर सकें। प्रकृति की स्वाभाविक गति और घटनाओं की स्थिर मनोवृत्ति क्या है—इतना मालूम करना पर्याप्त होगा। विशिष्ट अलौकिक शक्ति के बिना, मैं यह जानता हूँ कि ग्रह, ईश्वर के हाथों निर्धारित, अपने पथ में परिभ्रमण करते हैं।

यदि हमारे युग के मनुष्य सतर्क निरीक्षण और निष्कपट गूढ़ विचार से सहमत हो जाँय कि सामाजिक समानता का क्रमिक और प्रगतिशील विकास उनके इतिहास का एक साथ ही भूत और भविष्य है, तो एकमात्र यही अनुसंधान परिवर्तन को ईश्वरीय आदेश का पवित्र स्वरूप प्रदान कर देगा। उस स्थिति में प्रजातंत्र को नियंत्रित करने का प्रयत्न ईश्वरीय इच्छा का विरोध करना होगा और तब राष्ट्र ईश्वर द्वारा निर्धारित सामाजिक भाग्य को सर्वश्रेष्ठ बनाने के लिए विवश हो जायेंगे।

मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे युग के ईसाई राष्ट्र अत्यन्त भयावह अधिदृश्य उपस्थित करते हैं। उन्हें प्रोत्साहित करनेवाली क्रिया पहले से ही इतनी सशक्त है कि उसे रोका नहीं जा सकता—परन्तु फिर भी वह अब तक इतनी तीव्रगामी नहीं हुई है कि उसका मार्गदर्शन न किया जा सके। अभी तक भाग्य उन्हीं के हाथों में है, परन्तु है थोड़े समय के लिए ही—और जो अब और अधिक उनके पास सम्भवतः नहीं रह सकेगा।

वर्तमान समय में उन लोगों का, जो हमारे कार्यों का निर्देशन करते हैं, यह प्रथम कर्त्तव्य हो जाता है कि वे प्रजातंत्र को शिक्षित करें, यदि सम्भव हो तो उसके धार्मिक विश्वास को फिर से जाग्रत करें, उसके नैतिक आचरण को शुद्ध करें, उसकी गतिविधियों को नियमित करें, उसकी अनभिज्ञता को कार्य-व्यापार के ज्ञान की उत्तरोत्तर वृद्धि से और उसके अन्धविश्वासों को उसके वास्तविक हितों की जानकारी से प्रतिस्थापित करें; और समय तथा स्थान के अनुकूल अपनी सरकार का निर्माण करें और युग की घटनाओं और व्यक्तियों के अनुरूप उसका रूप निर्धारित करें। अतः नये विश्व के लिये एक नये राजनीतिक विज्ञान की आवश्यकता है।

तथापि हम इन्हीं बातों पर बहुत कम सोचते हैं। गति के तीव्र प्रवाह में बहते हुए हम अपनी दृष्टि बड़े हठपूर्वक उन अवशेषों पर गड़ाये रखते हैं, जिन्हें

सम्भवतः हम अपने पीछे सुदूर किनारों पर छोड़ आये हैं—जबकि धारा बड़ी तेजी से बहाते हुए हमें गहरे भवर में पीछे की ओर खींच कर ले जाती है।

यूरोप के किसी भी देश में ऐसी महान् सामाजिक क्रान्ति ने, जिसका मैंने अभी अभी वर्णन किया है, इतनी द्रुतगति से प्रगति नहीं की, जितनी कि फ्रांस में; परन्तु उसका विकास बिना किसी मार्गदर्शन के हुआ है। राज्य के प्रमुखों ने इसके लिए किसी प्रकार की तैयारी नहीं की और इसने बिना उनकी सहमति और बिना उनके ज्ञान के प्रगति की है। राष्ट्र की अत्यन्त शक्तिशाली, अत्यन्त बौद्धिक और अत्यन्त नैतिक जातियों ने कभी उसका मार्गदर्शन करने के उद्देश्य से उस पर नियंत्रण नहीं रखा। इसका परिणाम यह हुआ कि प्रजातंत्र को उसकी उग्र अन्तः प्रवृत्तियों के ऊपर छोड़ दिया गया और उसका विकास उन बच्चों की भाँति हुआ जिन्हें माता-पिता का मार्गदर्शन नहीं मिलता, जो सार्वजनिक गलियों में अपनी शिक्षा प्राप्त करते हैं और जो केवल समाज के अवगुणों और बुराइयों से परिचित हैं। उसका अस्तित्व प्रत्यक्षतः अज्ञात था, जब उसने एकाएक उच्च क्षमता प्राप्त कर ली। तब हरेक ने उसकी इच्छाओं के सम्मुख अपने को समर्पित कर दिया और शक्ति के देवता के रूप में उसकी पूजा की गयी। तत्पश्चात् जब अपनी ही ज्यादतियों से क्षीण होगयी तो विधायकों ने उसको सुधारने और उसकी बुराइयों का निराकरण करने के स्थान पर उसका विनाश करने के लिये अधीरता से कदम उठाया। उसको शासन के योग्य बनाने का प्रयत्न कभी नहीं किया गया, परन्तु सभी उसको सरकार से बाहर रखने पर तुले हुए थे।

इसका परिणाम यह हुआ है कि कानूनों, विचारों, रीतियों और आचारों में, परिवर्तन के बिना ही, जो इस प्रकार की क्रान्ति को लाभदायक बनाने के लिए आवश्यक था, समाज में प्रजातांत्रिक क्रान्ति घटित हो गयी है। अतः हमारे समाज में ऐसे प्रजातंत्र की स्थापना हुई जिसमें न तो उसकी बुराइयों का दमन हुआ, और न उसके स्वाभाविक गुणों का प्रादुर्भाव और यद्यपि हम उसकी बुराइयों से परिचित हैं, तथापि उससे हमें जो लाभ मिलते है, उससे हम अनभिज्ञ हैं।

जिस समय यूरोप के राष्ट्रों पर कुलीनतंत्र द्वारा समर्थित राज-सत्ता शान्तिपूर्वक शासन कर रही थी, समाज के पास, उसकी दारुण दशा में, सुख के ऐसे अनेक स्रोत थे, जिनकी कल्पना अथवा सराहना अब, मुश्किल से की जाती है। राजा की प्रजा के एक भाग की शक्ति उसके अत्याचार के विरुद्ध एक अलंघ्य दीवार के तुल्य थी और राजा को, जो उस स्वरूप का अनुभव करता था, जो

जनता की दृष्टि में प्रायः दैवी स्वरूप था, जिस सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था, उसी के कारण वह अपनी सत्ता का न्यायोचित प्रयोग करता था। कुलीन व्यक्ति, जो जनसाधारण के ऊपर प्रतिष्ठित थे, उन लोगों के प्रति स्थिर और कल्याणकारी अभिरुचि प्रकट करने के लिए बाध्य थे, जिस प्रकार कोई गड़रिया अपनी भेड़ों के प्रति रुचि महसूस करता है। ये लोग गरीबों को अपने समकक्ष रखे बिना उनके भाग्यों की चिन्ता अवश्य करते थे; क्योंकि उनकी धारणा थी कि ईश्वर ने उनके कल्याण की देख-रेख का कार्य उन्हें सौंप रखा है। लोग स्वयं अपनी सामाजिक स्थिति से भिन्न किसी अन्य सामाजिक स्थिति की कल्पना किये बिना, नेताओं के समकक्ष होने की आशा रखे बिना तथा अपने अधिकारों की चर्चा किये बिना उनसे लाभ प्राप्त करते थे। वे उन पर आसक्त हो गये जब वे विनम्र और न्यायी थे और उन्होंने बिना प्रतिरोध या दासता के अपने अधिकारों को समर्पित कर दिया जैसे कि वे ईश्वर को अनिवार्य रूप से प्रसाद चढ़ाते हैं। इसके अलावा युग की रीति और रिवाजों ने भी अन्यायपूर्ण कार्यों के लिए कतिपय सीमाएँ निश्चित कर दी और हिंसा पर एक प्रकार का कानूनी प्रतिबन्ध निर्धारित कर दिया।

चूँकि कुलीन व्यक्ति को कभी भी यह आशंका नहीं हुई कि कोई भी व्यक्ति उसे विशेषाधिकारों से, जिन्हें वह वैधानिक समझता है, वंचित कर सकता है और चूँकि गुलाम ने अपनी खुद की हीनता को हमेशा प्रकृति की अपरिवर्तनीय व्यवस्था के परिणाम के रूप में स्वीकार किया; अतः यह सहज ही कल्पना की जा सकती है कि दोनों वर्गों के मध्य कुछ पारस्परिक सद्भाव का विनिमय भाग्य द्वारा प्रदान किये गुणों के आधार पर विभिन्न रूप से कैसे हुआ। तब समाज में असमानता और दुराचारिता देखने को मिली, परन्तु किसी भी श्रेणी के मनुष्यों की आत्माओं का पतन नहीं हुआ। मनुष्य शक्ति के प्रयोग से भ्रष्ट नहीं होते और न वे आज्ञाकारिता के स्वभाव से पतित; परन्तु ऐसा तभी होता है जब वे ऐसी शक्ति का प्रयोग करते है और उस शासन की आज्ञा मानते हैं, जिन्हें वे शोषक और उत्पीड़क समझते हैं।

एक ओर धन, शक्ति और अवकाश के साथ विलास की परिष्कृति, रुचि का लालित्य, विनोद का आनन्द और कलाओं की संस्कृति थी और दूसरी ओर श्रम, मूर्खता और अज्ञान था। परन्तु इस अशिष्ट और अज्ञानी जनसमूह में भी सशक्त उद्वेगों, उदार विचारों, गहरे धार्मिक विश्वासों और प्रखर गुणों का मिलना असामान्य नहीं था।

इस प्रकार संघठित सामाजिक स्थिति अपने स्थायित्व, अपनी शक्ति और इन सबसे ऊपर अपने गौरव का दावा कर सकती थी।

परन्तु अब स्थिति बदल चुकी है। धीरे-धीरे श्रेणियों के भेद समाप्त हो गये है। वे दीवारें, जिन्होंने कभी मनुष्यों को एक दूसरे से अलग किया था, ढह रही हैं; सम्पत्ति विभाजित हो गयी है; शक्ति अनेकों में बंटी है; बुद्धि की ज्योति फैली है और सभी श्रेणियों की योग्यताएँ समान रूप से निर्मित हुई हैं। राज्य प्रजातांत्रिक हुए हैं और प्रजातंत्र के साम्राज्य ने धीरे-धीरे और शान्ति के साथ संस्थाओं और राष्ट्र की रीतियों और आचारों मे प्रवेश पा लिया है।

मै ऐसे समाज की कल्पना कर सकता हूँ, जहाँ सारे व्यक्ति कानूनों के प्रति स्वयं को उनका रचियता समझकर एक-सा प्रेम और आदर समर्पित करेंगे, जिसमे सरकार की सत्ता के प्रति सम्मान का भाव आवश्यकता के बतौर प्रकट किया जायगा न कि दैविक रूप में, जिसमे मुख्य मैजिस्ट्रेट के प्रति प्रजा की राज्यभक्ति कोई उत्तेजक उद्वेग न होकर शांत और विवेकपूर्ण समझौता होगा। हर व्यक्ति के पास उसके अधिकार रहेंगे, जिन्हे यथापूर्ण बनाये रखने की उसमें आस्था होगी और सभी वर्गों के बीच एक प्रकार का मानवीय विश्वास और पारस्परिक सद्व्यवहार बना रहेगा तथा इसी प्रकार वे अहमन्यता और समान रूप से दासता से मुक्त रहेंगे। लोग अपने खुद के वास्तविक हितों से पूर्ण परिचित होंगे और उन्हे इस बात का ज्ञान होगा कि समाज की सुविधाओं से लाभ उठाने के लिए उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति करना आवश्यक है। तब ऐसे समाज में नागरिकों के स्वैच्छिक संगठन कुलीन व्यक्तियों के निजी प्रयत्नों का स्थान ग्रहण कर लेंगे और उसी प्रकार समाज की निरंकुशता और क्रूरता से रक्षा की जायगी।

मैं स्वीकार करता हूँ कि इस प्रकार निर्मित प्रजातांत्रिक राज्य में समाज की गति स्थिर नहीं होगी, परन्तु सामाजिक संघटन की अन्तःप्रेरणा को नियमित किया जा सकेगा और उसे प्रगतिशील बनाया जा सकेगा। यदि ऐसे समाज में कुलीनतंत्र जैसी तड़क-भड़क नहीं मिलेगी, तो उसकी तुलना में अवसाद भी कम होंगे, आनन्दोपभोग कम हो सकते है, परन्तु आराम के आनन्द अधिक सामान्य होंगे, विज्ञान अपूर्ण रूप से विकसित होंगे, परन्तु अज्ञान भी कम देखने को मिलेगा, भावनाओं की तीव्रता का दमन होगा और राष्ट्र की प्रवृत्ति कोमल हो जायगी। ऐसे समाज में पाप अधिक होंगे, परन्तु महान अपराध कम होंगे

उत्साह और दृढविश्वास के अभाव में किसी राष्ट्रमण्डल के सदस्यो से, उनकी बुद्धि और उनके अनुभवो को अपील करके, महान् त्याग प्राप्त किये जा सकते हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपनी निर्बलता की सुरक्षा के लिए अपने सहयोगियों के साथ मिलकर संघ निर्माण करने की एक सी आवश्यकता महसूस करेगा और चूँकि वह समझता है कि औरों की सहायता केवल इसी शर्त पर उसे मिल सकती है, जब वह खुद सबको सहायता देना स्वीकार कर ले। इसलिए वह शीघ्र ही समस्त समाज के हितों के साथ अपने निजी हितो को मिला देने के लिए तत्पर हो जायगा। यद्यपि समाज समष्टि रूपसे कम प्रतिभाशाली, कम गौरवपूर्ण, और सम्भवतः कम शक्तिशाली होगा, परन्तु नागरिकों का बहुमत अधिक मात्रा में समृद्धि का उपभोग करेगा और लोग शान्त रहेंगे। इसलिए नहीं कि अच्छी स्थिति के लिए होने वाले परिवर्तन के प्रति वे निराश है, परन्तु इसलिए कि उन्हें इस बात की चेतना है कि वे पहले से ही सम्पन्न है। यदि ऐसी स्थिति के सारे परिणाम अच्छे या उपयोगी नही होते हैं, तो कम से कम समाज उन सब को, जो अच्छे और उपयोगी होंगे, उपयुक्त बना लेगा। एक बार और अन्तिम रूप से कुलीनतंत्र की सामाजिक उपयोगिताओं का त्याग करने पर मानवता उन समस्त लाभो से, जो प्रजातंत्र से प्राप्त हो सकते हैं, मुक्त हो जायेगी।

परन्तु यहाँ यह प्रश्न किया जा सकता है कि हमारे पूर्वजों की उन संस्थाओ, उन विचारों और उन रीति-रिवाजो के स्थान पर, जिनका हमने परित्याग कर दिया है, हमने नया क्या अपनाया है! राजा के प्रति जो लगाव था, वह अब नहीं रहा, परन्तु उसके स्थान पर कानूनों में शाहीपन नहीं आया है। लोगो ने उस राजशाही सत्ता का तिरस्कार करना तो सीख लिया है, परन्तु उसका भय उन्हें अब भी है और यह भय, पूर्व में आदर और प्रेम से जितना दिया जाता था, उससे अधिक बलात् छीन लेता है। मेरा ऐसा विचार है कि हमने उस वैयक्तिक शक्ति को नष्ट कर दिया है, जो अकेली ही स्वेच्छाचारिता का सामना करने के लिए पर्याप्त थी; परन्तु परिवारों, निगमो और व्यक्तियो को जिन विशेषाधिकारों से वंचित किया गया है वे अब सरकार में सन्निहित है। थोड़े-से व्यक्तियों की सत्ता का, जो कभी-कभी दमनकारी होते हुए भी बहुधा पुरातनवादी थी, स्थान समस्त समुदाय की निर्बलता ने ग्रहण कर लिया है।

सम्पत्ति के विभाजन ने अमीरों और गरीबों की पारस्परिक दूरी को कम कर दिया है, परन्तु ऐसा प्रतीत होगा कि दोनो को एक दूसरे के जितना अधिक निकट लायेगे, उतनी ही अधिक घृणा एक दूसरे के प्रति होगी और वे

अधिक उग्रता से एक दूसरे से ईर्ष्या करेंगे और अधिक भयानकता से शक्ति प्राप्ति के अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करेंगे। अधिकार की कल्पना दोनों में से किसी पक्ष के लिए नहीं है और शक्ति दोनों को वर्तमान के लिए केवल तर्क और भविष्य के लिए केवल आश्वासन प्रदान करती है।

गरीब व्यक्ति अपने पूर्वजों के पूर्वाग्रहों को बिना उनके विश्वास के और अज्ञान को बिना उनके गुणों को अंगीकार किये, बनाये रखता है। उसने कार्यों का निरूपण करने के लिए व्यक्तिगत स्वार्थों के सिद्धान्त को, बिना उसकी उपयोगिता के विज्ञान को समझे, अंगीकार कर लिया है। उसकी स्वार्थपरता उतनी ही अंधी है, जितनी पूर्व में दूसरों के प्रति उसकी भक्ति। यदि समाज में शान्ति है, तो वह इसलिए नहीं कि वह अपनी शक्ति और अपने कल्याण के लिए सजग है, परन्तु इसलिए कि वह अपनी दुर्बलताओं और क्षीणताओं से भयभीत है और इस बात को जानता है कि उसका एक प्रयत्न ही समूचे जीवन को नष्ट कर सकता है। प्रत्येक को इस दुर्बलता का ज्ञान है, परन्तु किसी के पास इसे दूर करने का साहस या पर्याप्त शक्ति नहीं है। वर्तमान समय की अभिलाषाएँ असन्तोष, दुःख और आनन्द कोई प्रत्यक्ष या स्थायी परिणाम प्रदान नहीं करते, जैसे वृद्ध पुरुषों की कामुकता, जो नपुंसकता में परिणत हो जाती है।

इसलिए हमने पुरानी परिस्थितियों से प्राप्त समस्त लाभों का अपनी वर्तमान स्थिति से कुछ भी क्षतिपूर्ति पाये बिना परित्याग कर दिया है। हमने कुलीनतंत्र को नष्ट कर दिया है और लगता है, जैसे हम बड़ी प्रसन्नता से उसके अवशेषों का सर्वेक्षण करने और उनके बीच अपना झण्डा गाड़ने के लिए आतुर हैं।

बौद्धिक जगत जो असाधारण चित्र प्रस्तुत करता है, वह कम शोचनीय नहीं है। फ्रांस के प्रजातंत्र ने, जिसके मार्ग में बाधा उपस्थित की गयी या जिसे अराजक भावनाओं के सम्मुख परित्यक्त कर दिया गया, अपने मार्ग में आनेवाली सभी वस्तुओं को फेंक दिया और उसने जिसका विनाश नहीं किया, उसको हिला दिया। उसके साम्राज्य की धीरे-धीरे या शान्तिपूर्वक स्थापना नहीं हुई, परन्तु अव्यवस्थाओं और संघर्षमय आन्दोलनोंके मध्य उसका अविरत विकास हुआ। संघर्ष की उत्तेजना में प्रत्येक पक्षावलम्बी अपने विरोधियों के सिद्धान्तों और ज्यादतियों द्वारा अपने विचारों की स्वाभाविक सीमाओं से परे चला जाता है और अन्त में अपने प्रयत्नों के उद्देश्यों का भी परित्याग कर देता है और ऐसी भाषा धारण करता है, जो उसकी

वास्तविक भावना या गुप्त अन्तःप्रेरणाओ को अभिव्यक्त नहीं करती। अतः विचित्र गड़बड़ी पैदा हो जाती है और विवश होकर हमे उसको देखना पड़ता है।

हमारी दृष्टि के सम्मुख जो घटनाएँ घटित हो रही हैं, उनसे बढ़कर कोई दुःखद और दयनीय उदाहरण हमारे इतिहास मे है, ऐसा मुझे याद नही पड़ता। इन घटनाओं से ऐसा लगता है मानो वे स्वाभाविक बन्धन, जो मनुष्य के विचारों को उसकी अभिरुचि के साथ और उसके कार्यों को उसके सिद्धान्तों के साथ जोड़ते हैं, अब टूट चुके हैं, वह सहानुभूति, जो सर्वदा मानवता की भावनाओं और विचारों के बीच दिखायी पड़ती थी, समाप्त हो गयी है और समस्त नैतिक कानूनों की समरूपता समाप्त कर दी गयी है।

कुछ उत्साही ईसाई लोग आज भी हमारे बीच मौजूद हैं, जिनके मस्तिष्क भावी जीवन सम्बन्धी विचारो का पोषण करते हैं, और जो तत्परता से यह स्वीकार करते है, कि मानव स्वाधीनता का मूल ही समस्त नैतिक महानता का स्रोत है। ईसाई धर्म, जिसने उद्घोषित किया कि सारे मनुष्य ईश्वर की दृष्टि में समान हैं, यह मानने से इनकार नहीं करेगा कि सारे नागरिक, कानून के समक्ष बराबर हैं; परन्तु घटनाओ के विचित्र सयोग से, यह सिद्ध हो चुका है कि धर्म कुछ समय के लिए, प्रजातंत्र द्वारा निन्दनीय ठहरायी गयी संस्थाओं में फँसा रहा और उसके द्वारा निरन्तर उस समानता का निषेध किया गया, जिसके प्रति उसका प्रेम था। यही नहीं, उसने शत्रु की तरह स्वाधीनता के मूल पर प्रहार किया, जिसे वह परम पूजनीय मानता था।

इन धार्मिक मनुष्यो के साथ ही मैंने कुछ ऐसे लोगों को देखा, जिनकी दृष्टि स्वर्ग की अपेक्षा इस पृथ्वी की ओर रहती है। ये लोग स्वाधीनता के समर्थक हैं, जो यह मानते हैं कि स्वाधीनता न केवल उच्च गुणों का स्रोत है, परन्तु अधिक विशेष रूप से समस्त ठोस गुणों की जड़ है और वे लोग उसके अधिकारों को सुरक्षित रखने की तथा मानव समाज को उसकी अनुकम्पा प्रकट करने की सदिच्छा रखते हैं। यह स्वाभाविक है कि ये धर्म की सहायता माँगने के लिए उत्प्रेरित हो जायेंगे, क्योंकि उन्हें इस बात का ज्ञान होना चाहिए कि बिना नैतिकता के स्वाधीनता की और बिना विश्वास के नैतिकता की स्थापना नहीं हो सकती। परन्तु उनकी दृष्टि में धर्म, विरोधियों के हाथों में रहा है और इसलिए ये और आगे जाँच न करके मौन रह जाते

है। उनमें से कुछ उस पर खुले रूप से प्रहार करते हैं और शेष उसकी रक्षा करने से भयभीत हैं।

पुराने समय मे दासता का समर्थन नीच और दास मनोवृत्ति के लोगों द्वारा किया जाता था, जब कि स्वतंत्र और दयालु लोग मानवता की स्वाधीनता की रक्षा करने के लिए बिना किसी आशा के निरन्तर संघर्ष करते रहे। परन्तु आज भी ऐसे उच्च और उदार चरित्र के व्यक्ति मिलते हैं जिनके विचार उनकी अभिरुचि से भिन्न हैं और जो दास-प्रथा की सराहना करते हैं, जिससे स्वयं उनको कभी वास्ता नहीं पड़ा। इसके विपरीत दूसरे लोग स्वाधीनता की बाते करते है, मानो वे इसकी पवित्रता और इसकी महानता का अनुभव करने मे समर्थ हो गये हों और पुरजोर शब्दों मे मानवता के लिए उन अधिकारों की माँग करते हैं, जिनको मान्यता देने से उन्होने हमेशा इन्कार किया है।

कुछ लोग गुणी और शान्त स्वभाव वाले होते है, जिनकी शुद्ध नैतिकता, शांत स्वभाव, ऐश्वर्य और प्रतिभा उन्हे आस-पास की जनसंख्या का नेतृत्व करने के योग्य बनाती है। देश के प्रति उनका प्रेम निष्कपट होता है और वे उसके कल्याण के लिए बड़े-से-बड़ा उत्सर्ग करने के लिए तैयार रहते हैं, परन्तु सभ्यता उन्हे हमेशा अपने विरोधियों के बीच पाती है। ये लोग उसकी बुरी बातों को उसकी अच्छाइयो के साथ मिला देते है और उनके मस्तिष्क में यह बात जमी रहती है कि बुराई को उसकी विशिष्टता से विलग नहीं किया जा सकता। इन्ही लोगो के निकट मैं ऐसे लोगों को देखता हूँ, जिनका उद्देश्य मानवता को सार्थक करना, बिना यह देखे कि क्या न्यायोचित है, लाभ उठाने के लिए प्रयत्न करना, बिना विश्वास के ज्ञान प्राप्त करना और गुणों के बिना समृद्धि पाना है। ये लोग अपने को आधुनिक सभ्यता के सिरमौर समझते हैं, अपने को उद्-ण्डता से उसका अगुआ बना लेते हैं, और ऐसे स्थान पर अपना अधिकार कर लेते है जिसके लिए वे पूर्णतः अयोग्य हैं।

तब हम कहाँ हैं?

धार्मिक लोग स्वाधीनता के शत्रु है और स्वाधीनता के मित्र धर्म पर प्रहार करते है, बुद्धिमान और कुलीन व्यक्ति पराधीनता का समर्थन करते हैं और अत्यन्त निकृष्ट और नीच व्यक्ति स्वतंत्रता का उपदेश देते हैं, ईमानदार और जागरूक नागरिक प्रगति के विरुद्ध हैं, जब कि बिना देशभक्ति और सिद्धान्तो वाले पुरुष अपने को सभ्यता और बुद्धि का देवदूत मानते हैं। क्या हमारी पिछली शताब्दियो में यही स्थिति थी? और क्या मनुष्य हमेशा वर्तमान की

भाँति ऐसे संसार में ही रहे हैं, जहाँ सारी वस्तुओं के स्वाभाविक सम्बन्ध छिन्न-भिन्न हैं, जहाँ बिना प्रतिभा के गुण है और बिना आदर के प्रतिभा है, जहाँ व्यवस्थित जीवन का प्रेम दमन की प्रवृत्ति से और स्वतंत्रता के पवित्र सिद्धान्त कानून के अपमान से मिल गये हैं, जहाँ मानव-क्रियाओं पर विवेक द्वारा डाला जाने वाला प्रकाश मंद है और जहाँ कभी यह मालूम नहीं होता कि क्या निषिद्ध या अनिषिद्ध है, क्या आदरणीय या लज्जाजनक है, क्या सत्य या झूठ है।

मैं ऐसा विश्वास नहीं कर सकता कि ईश्वर ने मनुष्य की रचना उन मानसिक पीड़ाओं से, जो हमें घेरे हुई है, अविराम संघर्ष करने के लिए की है। ईश्वर ने यूरोप के समुदायों के लिए शांत और अधिक निश्चित भविष्य बनाया है। मैं उसकी मंशा से अनभिज्ञ हूँ; परन्तु चूँकि मैं उसकी गहराई तक नहीं जा सकता इसलिए उस पर विश्वास न करूँ, ऐसा नहीं होगा। मैंने उसके न्याय की अपेक्षा स्वयं अपनी योग्यता पर अविश्वास किया है।

विश्व में एक ऐसा देश है, जहाँ ऐसा प्रतीत होता है कि महान सामाजिक क्रांति, जिसके सम्बन्ध में मैं चर्चा कर रहा हूँ, अपनी स्वाभाविक सीमाओं तक पहुँच चुकी है। वह सरलता और शान्ति के साथ कार्यान्वित की गयी है अथवा कहना यह चाहिए कि देश बिना निजी क्रान्ति के ही उस प्रजातांत्रिक क्रान्ति का जिसके मध्य से होकर हम गुजर रहे हैं, फल काट रहा है।

सत्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में अमरीका के तटों पर उपनिवेश बसाने वाले उत्प्रवासियों ने किसी तरह प्रजातांत्रिक सिद्धान्त को उन समस्त सिद्धान्तों से, जिन्हें अपनाकर यूरोप के प्राचीन समुदायों से उन्हें टक्कर लेनी पड़ी थी, विलग करके उसका बीजारोपण केवल नयी दुनिया में किया। इसी कारण वहीं पर यह सिद्धान्त पूर्ण स्वतंत्रता के साथ फैल सका और शांति के साथ देश के रीति-रिवाजों को प्रभावित कर वहाँ के कानूनों को नया रूप दे सकने में समर्थ रहा।

मुझे यह बात असन्दिग्ध प्रतीत होती है कि किसी-न-किसी समय अमरीकियों की भाँति हम लोग प्रायः पूर्णतः परिस्थिति की समानता प्राप्त कर लेंगे; परन्तु इससे मेरा तात्पर्य यह नहीं है कि हमें भी आवश्यक रूप से उन्हीं राजनीतिक परिणामों को प्राप्त करना होगा जो अमरीकियों ने समान सामाजिक संघटन से प्राप्त किये हैं। मैं यह नहीं मानता कि उन्होंने जिस प्रकार की शासन-पद्धति को चुना है, वह प्रजातंत्र की एक मात्र शासन-पद्धति है, परन्तु चूँकि दोनों देशों

के कानूनों और रीति-रिवाजों का मूल स्रोत एक ही है, इसलिए हमारे लिए यह ज्ञात करना कि दोनों देशों ने क्या परिणाम निकाले है, अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

इसलिए यह बात नहीं है कि मैंने केवल स्वाभाविक जिज्ञासा को शांत करने के निमित्त ही अमरीका का अध्ययन किया है, परन्तु मेरी इच्छा वहाँ की शिक्षापूर्ण बातों की जानकारी प्राप्त कर लेने की रही है, जिससे हम स्वयं लाभ उठा सकें। जो कोई यह कल्पना करेगा कि मैंने प्रशंसा करने के उद्देश्य से लिखा है, वह असाधारण रूप से गलती करेगा और यह पुस्तक पढ़ने पर उसे मालूम होगा कि इस प्रकार का उद्देश्य मेरा नहीं था। और न मेरा उद्देश्य किसी प्रकार की शासन-पद्धति का विशेषतः समर्थन करना रहा है, क्योंकि मेरा यह मत है कि नितान्त श्रेष्ठता शायद ही कानूनों की किसी पद्धति में देखने को मिल सकती है। यह सामाजिक क्रान्ति, जिसे मैं अवश्यंभावी समझता हूँ, मानवता के लिए लाभदायक है या हानिकारक, यह बताने तक का मैंने प्रयत्न नहीं किया। मैंने इस क्रान्ति को उस तथ्य के रूप में, जो पहले से पूर्ण हो चुका है या पूर्ण होने को है, मान्यता प्रदान की है और मैंने उन देशों में से जहाँ यह क्रांति हो चुकी है, उस देश का चुनाव किया है, जहाँ यह अत्यन्त शान्ति और अत्यन्त परिपूर्णता से हुई है, ताकि हम उसके स्वाभाविक परिणामों को स्पष्टतया समझ सकें और यदि सम्भव हो तो उन साधनों को ढूँढ़ सकें, जो मानवता के लिए लाभकारी सिद्ध हों। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि अमरीका में, मैंने अमरीका से अधिक देखा है, मैंने प्रजातंत्र की साक्षात् प्रतिमूर्ति को उसकी प्रवृत्तियों, उसके लक्षण, उसके पूर्वाग्रहों और उसके भावावेगों के साथ ढूँढ़ने का प्रयत्न किया है, जिससे हम यह सीख सकें कि हमें उसकी प्रगति से कितना भय या कितनी आशा रखनी है।

इस पुस्तक के प्रथम भाग में अमरीका के प्रजातंत्र द्वारा, जिसे बिना किसी नियंत्रण के उसकी अन्तर्निहित प्रवृत्तियों के सम्मुख छोड़ दिया गया है, कानूनों को प्रदान की गयी दिशा को, उस मार्ग को, जो वह सरकार के लिए निर्देशित करता है तथा कार्यों पर उसके प्रभाव को दिखाने का मैंने प्रयत्न किया है। मैंने यह भी ढूँढ़ने का प्रयत्न किया है कि उससे क्या हानि और लाभ हैं। अमरीकियों द्वारा उसका मार्ग निर्देशन करने के लिए जो सतर्कता रखी जाती है और जिन बातों की ओर ध्यान नहीं दिया जाता है, उसका मैंने परीक्षण किया है मैंने उन कारणों पर भी प्रकाश डाला है, जो प्रजातंत्र को समाज पर शासन करने के लिए समर्थ बनाते हैं। मैं यह नहीं जानता कि

अमरीका मे मैंने जो कुछ देखा, उसे पूर्ण रूप से स्पष्ट करने में सफल रहा हूँ, परन्तु मुझे पूर्ण निश्चय है कि यही मेरी सद्भावना रही है और जानबूझ कर मैंने विचारों को तथ्यों में परिणत करने के स्थान पर तथ्यों को विचारों में बदलने का प्रयत्न नहीं किया है।

जब कभी किसी विषय का प्रतिपादन लिखित दस्तावेज द्वारा हो सकता था, मैंने मूल पुस्तक और अत्यन्त विश्वसनीय और स्वीकृत ग्रन्थों की सहायता ली। जब कभी उस देश के विचारों, राजनीतिक प्रथाओं या रीति रिवाजों के सम्बन्ध में प्रकाश डालने की आवश्यकता हुई, मैंने इस सम्बन्ध में मिलनेवालों मे अत्यन्त जागरूक लोगों से विचार-विमर्श करने का प्रयत्न किया। यदि किसी समस्या का पहलू महत्वपूर्ण या संदेहात्मक हुआ, तो मुझे एक प्रमाण से संतोष नहीं हुआ, बल्कि अनेक साक्षियों के विचारों के आधार पर मैंने अपना मत बनाया। यहाँ पाठक को अनिवार्यतः मेरे शब्दों पर विश्वास करना चाहिए। जो कुछ मैंने कहा है उसके प्रमाण के रूप में मैं ऐसे लोगों का नाम प्रायः उद्धृत कर सकता था, जो उससे परिचित हैं या जिनसे परिचित होना वांछनीय है, परन्तु मैं बड़ी सतर्कता से इस प्रणाली से दूर रहा हूँ। नवागन्तुक प्रायः अपने आतिथेय (मेजबान) के पास बैठकर उन महत्वपूर्ण घटनाओं को सुनता है, जिन्हें सम्भवतः वह मेजबान अपने साथियों से छिपाकर रखता है। मेजबान को अतिथि के संयमित मौन से बड़ी तसल्ली होती है और चूँकि नवागन्तुक थोड़े दिनों के लिए ही रहता है, इसलिए उसे अपने अविवेक का सारा भय जाता रहता है। मैंने बड़े ध्यान से इस प्रकार के वार्तालाप को तत्काल लिख लिया, परन्तु ये नोट मेरे संग्रह से बाहर कभी नहीं आयेंगे। मैं उन नवागन्तुकों की तालिका मे, जो उदार आतिथ्य-सत्कार का बदला उससे उत्पन्न मानसिक वेदना और क्रोध से चुकाते हैं, नाम लिखाने की अपेक्षा अपने वक्तव्यों की सफलता को हानि पहुँचाना अधिक पसन्द करूँगा।

मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि मेरे द्वारा हर प्रकार की सतर्कता रखे जाने पर भी, यदि कोई इस पुस्तक की आलोचना करना चाहेगा, तो उसके लिए इससे सरल कोई बात नहीं होगी।

मैं समझता हूँ कि इस पुस्तक का सूक्ष्म अध्ययन करने वाले पाठक सारी पुस्तक मे एक मुख्य विचार पायेंगे, जो उसके अनेक भागों को एक श्रृंखला में बाँधता है। परन्तु विषयों की विभिन्नता, जिन पर मुझे विचार करना पड़ा है, बहुत ज्यादा है और मै जिन तथ्यों का उद्धरण देता हूँ, उनमें से

एक असम्बद्ध तथ्य को अथवा मेरे द्वारा प्रस्तुत किये गये विचारो मे से एक सम्बद्ध विचार का विरोध करना कठिन नहीं होगा।

मुझे आशा है कि जिस भावना से मैंने श्रम किया है उसी भावना से यह पुस्तक पढ़ी जायगी और सामान्य दृष्टि से उसका मूल्यांकन किया जायगा; क्योंकि मैंने स्वयं अपना मत किसी एक विशेष कारण के आधार पर नहीं, परन्तु सामान्य प्रमाणो के आधार पर बनाया है।

यह नहीं भूल जाना चाहिए कि जो लेखक यह चाहता है कि उसे ठीक तरह से समझा जाय, वह अपने विचारों को उच्चतम सैद्धान्तिक परिणामो की ओर ढकेल देता है और प्रायः उन्हें असत्य और अव्यावहारिक सीमा पर लाकर छोड़ देता है; क्योंकि कभी-कभी कार्य मे तर्क के नियमों का उल्लंघन करना पड़ता है। सम्भाषण में ऐसा नहीं होता और मनुष्य के लिए अपनी भाषा के प्रतिकूल रहना उतना ही कठिन है, जैसे अपने आचरण के अनुकूल रहना।

उपसंहार में, मै स्वयं अपने उस दृष्टिकोण को प्रकट कर देना चाहता हूँ जिसे अधिकांश पाठक इस पुस्तक का मुख्य दोष बतायेंगे। यह पुस्तक किसी भी विशेष दृष्टिकोण के पक्ष में नही लिखी गयी है और न इस पुस्तक के लिखने का उद्देश्य किसी दल की सेवा या उस पर आक्रमण करने का रहा है। मैंने इस कार्य का बीड़ा दूसरों से भिन्न अपना मत बनाने के लिए नही, परन्तु उन लोगों से कुछ और आगे की ओर विचार करने के लिए उठाया है। जबकि वे लोग केवल आनेवाले कल के कार्यों में व्यस्त है, मैंने सारे भविष्य का विचार किया है।

प्रथम भाग

१. आंग्ल अमरीकियों का मूल

जन्म लेने के बाद मनुष्य के प्रारम्भिक वर्ष अव्यक्त रूप से बाल्यकाल की चेष्टाओं और आनंद मे बीत जाते है। ज्यों-ज्यों वह बड़ा होता है, त्यों-त्यों उसकी सांसारिकता बढ़ती है, उसमे पुरुषोचित प्रौढ़ता आती है और वह अपने हमजोलियो के सम्पर्क मे आने लगता है। उसी समय पहली बार हमारा ध्यान उसकी ओर आकर्षित होता है और अनुमान किया जाने लगता है कि अब उसमे परिपक्व अवस्था के दुर्गुणों और सद्गुणों का समावेश होने लगा है। मेरे ख्याल से यह बहुत बड़ी भूल है। हमें यह कार्य बहुत पहले शुरू कर देना चाहिए। हमें बच्चे की ओर तभी से ध्यान देने लगना चाहिए जब वह अपनी माँ की गोद में पल रहा हो। उसके मस्तिष्क के धुंधले दर्पण पर पड़नेवाले बाहरी दुनिया के प्रारम्भिक प्रतिबिम्बों और घटनाओं का हमें अवलोकन करना चाहिए। उसके विचारों की सुप्त शक्ति को जाग्रत करनेवाले प्रथम बोलों को सुनना चाहिए और उसकी प्रारम्भिक क्रियाओं को निकट से समझना चाहिए। इस प्रकार हम उसके जीवन को अनुशासित करनेवाले पूर्वाग्रह, स्वभाव और आसक्तियों को समझ सकेंगे। कहने का तात्पर्य यह है कि समूचे मनुष्य को जानने के लिए 'पूत के पाँव पालने' में ही देखने चाहिए।

राष्ट्रों का विकास भी लगभग इसी प्रकार होता है। उन सब पर उनके मूल उद्‌भव की कुछ-न-कुछ छाप रहती है। जो परिस्थितियाँ उनके जन्म के समय *विद्यमान रहती हैं और उनके विकास में योग प्रदान करती हैं*, वे उनके सम्पूर्ण काल को प्रभावित करती हैं। यदि हम राज्यों के मूल तत्त्वों का ज्ञान प्राप्त करने और उनके इतिहास के प्राचीनतम स्मारकों का परीक्षण कर लेने में समर्थ हों, तो मुझे कोई संदेह नहीं कि हम उनके पूर्वाग्रह, स्वभाव तथा प्रबल आसक्तियों

का मूल कारण ढूँढ लेंगे—अर्थात् उन समस्त तत्वों को खोज निकालेंगे जिनसे राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण होता है। तभी ऐसे कतिपय रीतिरिवाजों का, जो आज के व्यवहारों से मेल नहीं खाते, ऐसे नियमों का, जो मान्य सिद्धान्तों के प्रतिकूल हैं और किसी टूटी हुई शृंखला के उन टुकड़ों की तरह, जो किसी प्राचीन प्रासाद के गुम्बद से बेमानी लटकते हुए कभी-कभी दिखायी देते हैं, तथा समाज में यत्र-तत्र बिखरे हुए असम्बद्ध मन्तव्यों का हमें स्पष्टीकरण मिल जायगा। इससे कुछ राष्ट्रों के भवितव्य का ज्ञान भी हो सकेगा, जो किसी अज्ञात शक्ति से प्रेरित होकर ऐसे लक्ष्यों की ओर अग्रसर होते हैं, जिनका उन्हें स्वयं कुछ पता नहीं होता। परन्तु अभी तक इस प्रकार की गवेषणाओं के लिए तथ्यों का सर्वथा अभाव रहा है और जन-समुदाय में शोध की भावना का उदय काफी बाद में हुआ और अन्ततोगत्वा जब लोगों ने अपने मूल उद्‌भव के बारे में विचार करना प्रारम्भ किया तब पता चला कि काल-प्रवाह ने उसे पहले ही धुंधला कर दिया है अथवा अज्ञान और अहंकार ने सत्य पर पर्दा डालने वाली गाथाओं से उसे अलंकृत कर दिया है।

अमरीका ही एकमात्र ऐसा देश है, जहाँ समाज के स्वाभाविक और सुस्थिर विकास का प्रत्यक्ष दर्शन सम्भव हो सकता है और जहाँ राज्यों की भावी स्थिति पर उनके मूल उद्‌भव के प्रभाव को स्पष्टतः पहचाना जा सकता है। परिणामतः अमरीका में उस वैशिष्ट्य के दर्शन स्पष्ट रूप से मिलते हैं, जिसे अन्य स्थानों पर पूर्ववर्ती काल के अज्ञान और असंस्कार ने हमारी गवेषणाओं से अब तक छिपा रखा है। जिस समय अमरीकी राज्यों की स्थापना हुई थी, उस समय से पर्याप्त निकट होने के कारण, जिससे उनके मूल तत्त्वों का सही-सही ज्ञान प्राप्त होता है और उस अवधि से पर्याप्त दूर होने के कारण, जिससे उनके कतिपय परिणामों के विषय में निर्णय किया जा सकता है, ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे युग के व्यक्ति मानवीय घटनाओं की शृंखलाओं को अपने पूर्वजों की अपेक्षा अधिक दूर तक देख सकेंगे। दैव कृपा से हमें एक ऐसी मशाल मिली है जो हमारे पूर्वजों को नसीब नहीं थी। इस प्रकार हमें विश्व-इतिहास के आधारभूत कारणों को, जिन्हें पूर्ववर्ती काल ने धुंधला बना दिया है, दीर्घ दृष्टि से देखने का अवसर प्राप्त हुआ है। यदि हम अमरीका के इतिहास का अध्ययन कर लेने के पश्चात् उसकी सामाजिक और राजनीतिक स्थिति का ध्यानपूर्वक पर्यवेक्षण करें तो हमें इस बात का पूर्ण विश्वास हो जायगा कि वहाँ कोई ऐसी धारणा, प्रथा और कानून नहीं

हैं, बल्कि मैं तो यहाँ तक कहूँगा कि कोई ऐसी अभिलिखित घटना भी नहीं है, जिसका स्पष्टीकरण वहाँ की जनता के मूल उद्भव द्वारा न किया जा सकता हो। इस पुस्तक के पाठक प्रस्तुत अध्याय मे उन सभी बातो का, जिनका आगे उल्लेख आयेगा, साराश और लगभग पूरी पुस्तक की कुंजी पा सकेंगे।

वे प्रवासी, जो समय-समय पर उस क्षेत्र मे बसने के लिए आये और जो अब अमरीकी संघ में हैं, अनेक बातों मे एक दूसरे से भिन्न थे, उनके उद्देश्य एक जैसे नही थे और वे भिन्न-भिन्न सिद्धान्तो के माननेवाले थे। फिर भी उन लोगो की कई बातें समान थीं और उन्हे एक जैसी परिस्थिति में रहना पड़ा था। भाषा का बन्धन सम्भवतः सबसे अधिक शक्तिशाली और स्थायी है, जो मानवजाति को एक सूत्र में आबद्ध रख सकता है। सभी प्रवासी एक ही भाषा बोलते थे। वे एक ही जाति के लोगों की सन्तान थे। वे उस देश में पैदा हुए थे, जो शताब्दियों से गुटों के संघर्षों से आन्दोलित था और अन्त में सभी दल स्वतः नियमो के अधीन रहने के लिए बाध्य हुए थे। उनकी राजनीतिक शिक्षा-दीक्षा वैसी ही असंस्कारी शाला मे हुई थी और वे अधिकार की अवधारणा और वास्तविक स्वाधीनता के सिद्धान्तों से अपने अधिकाश समकालीन यूरोप निवासियों की अपेक्षा अधिक परिचित थे। प्रथम निष्क्रमण के समय ही नगर निर्माण-पद्धति तथा स्वतंत्र संस्थाओ का फलदायक अंकुर अंग्रेजों के स्वभाव मे गहराई तक पैठ चुका था और उसी के साथ जन-सार्वभौमता का सिद्धान्त ट्यूडर राजवंश के मानस मे अपना घर कर चुका था।

दूसरी बात, जिसका उल्लेख बाद मे अनेक बार किया जायगा, न केवल अंग्रेजों पर, अपितु उन सभी यूरोप-निवासियों पर लागू होती है जो नयी दुनिया में एक के बाद दूसरे बसते गये। इन सभी यूरोपीय उपनिवेशों में संपूर्ण लोकतंत्र के तत्व विद्यमान थे—भले ही तब तक उनका विकास न हुआ हो। इसके दो कारण थे। सामान्यतः यह कहा जा सकता है कि अपनी मातृभूमि छोड़ने पर प्रवासियों में एक दूसरे से श्रेष्ठ होने की भावना सामान्यतः नहीं रही थी। सुखी और शक्तिशाली लोगो को निर्वासन का दण्ड भोगना नहीं पड़ता और मनुष्यों के मध्य समानता स्थापित करने के लिए गरीबी तथा दुर्भाग्य से बढ़कर अन्य कोई वस्तु नहीं होती। फिर भी अनेक अवसरों पर उच्च श्रेणी के लोगों को राजनीतिक और धार्मिक संघर्षों का शिकार होकर अमरीका आना पड़ा। तब श्रेणियों की क्रमबद्धता के लिए कानून बने, परन्तु शीघ्र ही अनुभव

किया गया कि अमरीका प्रादेशिक कुलीनतंत्रता के लिए उपयुक्त नहीं है। उस ऊसर भूमि को कृषि-योग्य बनाने के लिए स्वयं भूस्वामी के अथक और अभिरुचिपूर्ण श्रम की आवश्यकता थी और जब भूमि तैयार हुई तो उसकी उपज एक साथ ही भूस्वामी और कृषक दोनो को समृद्ध बनाने के लिए अपर्याप्त सिद्ध हुई। तब भूमि, सहज ही छोटे-छोटे खण्डों में विभाजित हो गयी, जिस पर भूस्वामी स्वयं खेती करता था। भूमि ही कुलीनतंत्र का आधार है, जिसकी जड़ें उस मिट्टी से चिपटी रहती है, जो उसका पोषण करती है; क्योंकि कुलीनतंत्र का निर्माण न तो विशेषाधिकार से और न जन्म से, बल्कि भू-संपदा के पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तान्तरित होने से ही होता है। किसी राष्ट्र में अपरिमित सम्पदा और दरिद्रता हो सकती है, परन्तु सम्पत्ति जब तक भूसम्पत्ति नहीं होगी, तब तक वास्तविक कुलीनता नहीं हो सकती; बल्कि उसे केवल अमीरो और गरीबों के दो वर्ग कह सकते हैं।

जिस समय ब्रिटिश उपनिवेश बसे, उस समय उन सब में अत्यधिक पारिवारिक एकरूपता थी। प्रारम्भ से ही ऐसा प्रतीत होता था कि उनमे उनकी मातृभूमि की कुलीनतांत्रिक स्वतंत्रता का नही, प्रत्युत मध्यम और निम्नतर वर्गों की उस स्वतंत्रता का विकास होने वाला है, जिसका पूर्ण उदाहरण अभी तक विश्व के इतिहास मे नहीं मिलता। फिर भी उस सामान्य समरूपता में अनेक महत्त्वपूर्ण भेद सुस्पष्ट थे, जिन्हें बता देना आवश्यक है। उस महान आंग्ल अमरीकी परिवार में दो शाखाऍं देखी जा सकती हैं, जो अब तक आपस में पूरी तरह से मिश्रित हुए बिना पनपती रही है; उनमें से एक दक्षिण में है और दूसरी उत्तर में।

वर्जीनिया में अंग्रेजों का प्रथम उपनिवेश बसा, जिस पर १६०७ मे प्रवासियो ने अधिकार जमाया। सोने और चाँदी की खाने राष्ट्रीय सम्पत्ति के स्रोत है, ऐसी धारणा उस समय व्यापक रूप से सारे यूरोप मे फैली हुई थी। यह भ्रांति बड़ी घातक थी। यूरोप के वे देश, जिन्होंने इस भ्रांति को प्रश्रय दिया, तबाह हो गये और उससे अमरीका में जितनी जन-हानि हुई उतनी युद्ध और बुरे कानूनों के कारण भी न हुई होगी। जिन लोगों को वर्जीनिया भेजा गया था, वे लोग स्वर्ण की खोज करने वाले, साधन और चरित्र से हीन, केवल दुष्कर कार्यों मे रुचि रखनेवाले थे, जिनकी फसादी और अशान्त मनोवृत्ति ने नवजात उपनिवेश के लिए खतरा उत्पन्न कर दिया और उसकी प्रगति को अनिश्चित बना दिया। शिल्पकार और किसान बाद में आये। यद्यपि वे

अधिक सदाचारी और व्यवस्थित जाति के लोग थे, परन्तु वे किसी भी दशा में इंग्लैण्ड की निम्न जातियों से बढ़-चढ़ कर नहीं थे। इन नयी बस्तियों की स्थापना के पीछे न तो ऊँचे आदर्श थे, न आध्यात्मिक भावना थी। उपनिवेश अभी पूरी तरह से जम भी नहीं पाया था कि दास-प्रथा प्रारम्भ हो गयी। यह मुख्य तथ्य आचरण, कानूनों और दक्षिण के सम्पूर्ण भविष्य को अत्यन्त गहरे रूप से प्रभावित करने वाला था। दासता ... श्रम का निरादर है। इससे समाज में आलस्य फैलता है और आलस्य के साथ-साथ अज्ञान, अहमन्यता, विलासिता और क्लेश पनपते हैं। इसीसे मानसिक शक्ति का ह्रास होता है और लोगों की क्रियाशीलता सुन्न हो जाती है। आंग्ल आचरण से संयुक्त इस दास प्रथा के प्रभाव से ही दक्षिणी राज्यों की रीतियों और सामाजिक परिस्थितियों का पता चलता है।

उत्तर में इसी आंग्ल चरित्र ने नितान्त भिन्न स्वरूप ग्रहण किया। वर्तमान संयुक्त-राज्य अमरीका की सामाजिक व्यवस्था के मूल में जो दो या तीन मुख्य विचार हैं, उनका सम्मिलन सर्वप्रथम यहीं हुआ था। अब उनका प्रभाव समस्त अमरीकी जगत में व्याप्त हो गया है। न्यू इंग्लैण्ड की सभ्यता पहाड़ी पर प्रज्ज्वलित उस प्रकाशस्तम्भ के समान रही है, जो तुरन्त ही अपने आसपास उष्णता फैलाने के साथ-साथ सुदूरवर्ती क्षितिज को भी अपने प्रकाश से आलोकित कर देता है।

न्यू इंग्लैण्डके किनारों पर बसने वाले लोग अपने देश के अधिक स्वाधीन वर्गों में से थे। अमरीका की भूमि पर उनके मिलन से समाज के एक नये रूप का उद्भव हुआ। उस समाज में न तो लार्ड थे और न साधारण जन; बल्कि हम यों भी कह सकते हैं कि उस समाज में न तो अमीर थे और न गरीब। आज के किसी भी यूरोपीय राष्ट्र के निवासियों की अपेक्षा उन लोगों में अपनी जन-संख्या के अनुपात में बुद्धि की मात्रा अधिक थी। सभी लोगों ने प्रायः बिना किसी अपवाद के, अच्छी शिक्षा-दीक्षा ग्रहण की थी। उनमें से अनेक अपनी प्रतिभा और गुणों के कारण यूरोप में प्रसिद्ध हो चुके थे। अन्य उपनिवेशों की स्थापना बिना परिवारवाले साहसिक लोगों द्वारा की गयी थी। न्यू इंग्लैण्ड के प्रवासी अपने साथ व्यवस्था और सदाचार के उच्च तत्वों को ले कर आये थे। वे अपनी पत्नियों और बाल-बच्चों सहित निर्जन तट पर उतरे थे, किन्तु अन्य सभी प्रवासियों और उनके मध्य जो विशेष अन्तर था, वह था, अपने कार्य में निहित

उनका उद्देश्य। किसी आवश्यकता से देश छोड़ने के लिए वे विवश नहीं हुए थे। उन्होंने जिस सामाजिक स्थिति का परित्याग किया, वह एक दुःख की बात थी और उनके जीविकोपार्जन के साधन निश्चित थे। निर्वासन की अवश्यम्भावी आपदाओं को सहन करने में उनका लक्ष्य यही था कि वे किसी आदर्श की पूर्ति करना चाहते थे।

प्रवासी, जो अपने-आप को तीर्थयात्री कहा करते थे और जो उचित भी था, अंग्रेजों के उस वर्ग के व्यक्ति थे, जिन्हें अपने सिद्धान्तों की कड़ी नैतिकता के कारण 'प्यूरिटन' (विशुद्धतावादी) की संज्ञा प्राप्त हो गयी थी। यह 'प्यूरिटनवाद' एक धार्मिक सिद्धान्त मात्र नहीं था, प्रत्युत वह अनेक बातों में परिपूर्ण लोकतंत्र और गणतन्त्र के सिद्धान्तों से मेल खाता था। उसके प्रचण्डतम शत्रु उसकी इसी प्रवृत्ति के कारण उत्पन्न हुए थे। स्वदेश की सरकार द्वारा प्रपीड़ित किये जाने और समाज की आदतों से, जिनकी वे अपने सिद्धान्तों की कठोरता द्वारा निन्दा करते थे, संत्रस्त होने के कारण 'प्यूरिटन' विश्व के किसी उजाड़ और निर्जन स्थान की खोज में चले, जहाँ वे अपने विचारों के अनुकूल जीवन निर्वाह कर सकें और स्वतंत्रता के साथ भगवान की आराधना कर सकें। 'प्यूरिटनवाद' धार्मिक सिद्धान्त से तनिक भी कम राजनीतिक सिद्धान्त नहीं था। प्रवासी ज्योंही किसी निर्जन तट पर उतरते, उसी क्षण निम्न-प्रतिज्ञा के साथ समाज निर्माण करना उनका मुख्य कर्तव्य हो जाता......

"हम ईश्वर को साक्षी करते हैं, एवमस्तु! हम निम्नांकित लोग शक्तिशाली सार्वभौम लार्ड सम्राट जेम्स, आदि–आदि की राजभक्त प्रजा हैं। ईश्वर के गौरव तथा ईसाई मत की उन्नति के लिए और सम्राट तथा राष्ट्र के सम्मान के लिए वर्जीनिया के उत्तरी भागों में प्रथम उपनिवेश बसाने के उद्देश्य से हमने यह यात्रा की है। ईश्वर तथा एक-दूसरे की साक्षी में हम उपस्थित लोग पवित्र भाव से और मिलजुलकर अपनी उन्नति और सुरक्षा के लिए तथा उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए एक नागरिक–राजनीतिक संघटन का निर्माण करते हैं। इसी हेतु हम समय–समय पर ऐसे उचित और समान कानूनों, अध्यादेशों, अधिनियमों, संविधानों और पदों का निर्देश, निर्माण और रचना करते हैं, जिन्हें सामान्य हित के लिए, जिसके प्रति पूर्ण रूप से आज्ञाकारी बने रहने का हम वचन देते हैं, अत्यन्त उपयुक्त और सुविधाजनक समझा जायगा।"

यह घटना १६२० में हुई। तब से यह प्रवास निरन्तर चलता रहा। चार्ल्स प्रथम के सम्पूर्ण शासनकाल में जिन धार्मिक और राजनीतिक उन्मादों ने ब्रिटिश साम्राज्य को उजाड़ बना दिया था, उनके कारण अमरीका के तट पर प्रति वर्ष सम्प्रदायों के नये-नये समुदाय आने लगे। इंग्लैण्ड में मध्यम वर्गों पर 'प्यूरिटनवाद' का गहरा प्रभाव निरन्तर बना रहा। अधिकांशतः प्रवासी इन्हीं मध्यम वर्गों से से आये थे। न्यू इंग्लैण्ड की जनसंख्या में तीव्रगति से वृद्धि हुई और जब कि स्वदेश के निवासियों को पद की महत्तशाहीने मनमाने ढंग से वर्गो में "विभाजित" कर दिया था, उपनिवेश के सभी भागों में अधिकाधिक सर्वांगीण एकरूपता का नूतन दृश्य दिखायी देने लगा। प्राचीन सामान्तवादी समाज के मध्य से एक ऐसे पूर्ण प्रजातंत्र का प्रारम्भ हुआ, जिसकी कल्पना प्राचीन व्यवस्था ने स्वप्न में भी करने का साहस नहीं किया था।

अंग्रेजी सरकार नये उपद्रवों और भावी क्रान्तियों के तत्वों को दूर करने वाले इस विशाल देशान्तरवास से अप्रसन्न नहीं थी। इसके विपरीत उसने इसको हर तरह से बढ़ावा दिया। ऐसा जान पड़ता था कि उस के कानूनों के शिकंजो से मुक्त होकर अमरीका की भूमि पर बसने वालों के सम्बन्ध में उसे कोई परेशानी नहीं थी। न्यू इंग्लैण्ड मानो कल्पनाओं के स्वप्नों का देश और नयी खोज करने वालों के अपरिमित प्रयोगों का स्थल बन चुका था। ब्रिटिश उपनिवेशों ने हमेशा अन्य राष्ट्रों के उपनिवेशों की अपेक्षा अधिक आन्तरिक स्वाधीनता और अधिक राजनीतिक स्वतन्त्रता का उपभोग किया था और यही उनकी समृद्धि का एक प्रमुख कारण था। स्वाधीनता के इस सिद्धान्त को न्यू इंग्लैण्ड के राज्यों मे जितने व्यापक रूप से व्यवहार में लाया गया, उतना अन्यत्र कहीं भी नहीं।

इन नये उपनिवेशों में लोगों को बसाने के लिए ब्रिटिश शासन द्वारा विभिन्न पद्धतियों से काम लिया गया। कभी सम्राट अपनी पसन्द का गवर्नर नियुक्त कर देता था, जो नयी दुनिया के किसी एक भाग पर सम्राट के नाम से और उस के तात्कालिक आदेशों के अन्तर्गत प्रशासन करता था। यह औपनिवेशिक पद्धति यूरोप के अन्य राष्ट्रों द्वारा भी अपनायी गयी। दूसरा तरीका यह भी था कि सम्राट द्वारा कोई विस्तृत भूखण्ड किसी एक व्यक्ति को या किसी कम्पनी को सुपुर्द कर दिया जाता था। ऐसी स्थिति मे समस्त दीवानी और राजनीतिक अधिकार एक या एक से अधिक व्यक्तियों के हाथों में रहते थे, जो सम्राट

के निरीक्षण और नियंत्रण के अधीन भूमि का विक्रय करते और शासन चलाते थे। अन्त में एक तीसरी पद्धति यह थी कि प्रवासियों को निश्चित जनसंख्या को स्वदेश के संरक्षण के अधीन किसी राजनीतिक संस्था का निर्माण करने और स्वदेश के कानूनों के अनुसार अपना शासन-संचालन स्वयं करने की अनुमति दे दी जाती थी। उपनिवेश की यह पद्धति, जो स्वाधीनता के लिए अत्यन्त अनुकूल थी, केवल न्यू इंग्लैण्ड में अपनायी गयी।

सन् १६२८ में इस प्रकार का अधिकार पत्र चार्ल्स प्रथम द्वारा उन उत्प्रवासियोंको दिया गया था, जो मैसाचुसेट्सका उपनिवेश बसाने के लिए गये थे; परन्तु सामान्यतः न्यू इंग्लैण्ड के उपनिवेशों को नहीं दिये गये थे, जब तक उनके अस्तित्व को आम तौर से मान नहीं लिया गया। प्लीमाउथ, प्रोवीडेन्स, न्यू हेवन, कनेक्टीकट और रोड द्वीप मातृभूमि की सहायता के बिना और प्रायः उसकी जानकारी के बिना ही स्थापित किये गये थे। उन उपनिवेशों में नये-नये बसने वाले लोगों ने साम्राज्य के प्रधान से अपने अधिकारों को हासिल नहीं किया था, यद्यपि उन्होंने उसकी सर्वोच्चता को मानने से इनकार नहीं किया। उन्होंने अपने-आप को एक समाज के रूप में संगठित किया और उसके तीस या चालीस वर्षों के बाद चार्ल्स द्वितीय के समय में उनके अस्तित्व को राजकीय अधिकारपत्र द्वारा वैधानिक मान्यता दी गयी।

न्यू इंग्लैण्ड के अत्यन्त प्रारम्भिक समय के ऐतिहासिक एवं विधान सम्बन्धी अभिलेखों का अध्ययन करने में इससे उस कड़ी को ढूंढने में बहुधा कठिनाई होती है, जो उत्प्रवासियों का सम्बन्ध उनके पूर्वजों की भूमि के साथ जोड़ती थी। उन्होंने निरन्तर सार्वभौमिकता के अधिकारों का प्रयोग किया, अपने मजिस्ट्रेटों को नियुक्त किया, शान्ति स्थापित की या लड़ाई की घोषणा की, पुलिस-व्यवस्था के नियम बनाये और कानून लागू किये, मानो उनकी वफादारी केवल ईश्वर के प्रति ही थी। इस समय के विधान से अधिक विलक्षण और साथ-ही-साथ अधिक शिक्षापूर्ण और कोई वस्तु नहीं हो सकती। उसी में उस महान सामाजिक समस्या का, जिसे संयुक्त-राज्य अमरीका ने अब विश्व के सामने पेश किया है, हल निहित है।

विधायकों का मुख्य कार्य समाज में सुव्यवस्थित व्यवहार और सदाचरण को बनाये रखने का था। इस प्रकार हम देखते हैं कि उन्होंने निरन्तर उन क्षेत्रों में हस्तक्षेप किया, जिनका सम्बन्ध अन्तःकरण से था और

वहाँ कोई भी ऐसा अपराध नहीं था, जो मजिस्ट्रेट की निंदा का विषय नहीं रहा हो। इन कानूनों द्वारा बलात्कार और पर-स्त्री गमन के अपराधों के लिए जिस कठोरता के साथ सजा दी जाती थी, उससे पाठक परिचित हैं। इसी प्रकार की कठोरता अविवाहित व्यक्तियों के सहवास को रोकने के लिए बरती जाती थी। न्यायाधीश को कुकृत्य करनेवालों को अर्थदण्ड या कोड़े मारने की सजा देने अथवा उनमें शादी करवा देने की आज्ञा देने का अधिकार था और यदि न्यू हैवन की प्राचीन अदालतों के अभिलेखों पर विश्वास किया जाय तो यह मानना पड़ेगा कि इस प्रकार के अभियोग कम नहीं होते थे। हमें एक फैसले का पता चलता है, जो १ मई, १६६० को सुनाया गया था, जिसमें एक औरत को अश्लील भाषा का प्रयोग करने पर और अपने चुम्बन की अनुमति देने पर जुर्माने और ताड़ने की सजा दी गयी थी। १६५० की संहिता रोकथाम के अधिनियमों [redacted] परिपूर्ण है। इसके द्वारा आवारों और पियक्कड़ों को कड़ी सजा देने की व्यवस्था की गयी है। सराय-मालिकों पर प्रत्येक ग्राहक के लिए निश्चित मात्रा से अधिक शराब न पिलाने का प्रतिबन्ध लगाया गया है और साधारण झूठ को रोकने के लिए, जो हानिकारक सिद्ध हो, जुर्माने और कोड़े की सजा दी गयी है। अन्य स्थानों में विधायक धार्मिक सहिष्णुता के महान सिद्धान्त को पूर्णतया भूल कर, जिसके लिए उसने स्वयं यूरोप में माँग की थी, ईश्वरपूजा सब के लिए अनिवार्य कर देता है। यही नहीं, वह इससे भी आगे बढ़कर उन ईसाईयों को, जो उसकी धार्मिक पद्धति से भिन्न रूप में ईश्वरपूजा पसन्द करते हैं, कड़ी सजा देने और यहाँ तक कि मौत की सजा देने के लिए भी उतारू हो जाता है। कभी-कभी वस्तुतः नियम बनाने की व्यग्रता में वह अत्यन्त निरर्थक विस्तार में चला जाता है। इस प्रकार एक कानून उसी संहिता में पाया जाता है, जो तम्बाकू का प्रयोग निषेध करता है। यह नहीं भूलना चाहिए कि ये काल्पनिक और उत्तेजनात्मक कानून अधिकार द्वारा लागू नहीं हुए थे, परन्तु उन [redacted] अभिरुचि रखने वाले सभी लोगों के स्वतंत्र मतदान से उन्हें लागू किया गया था और समाज का आचरण कानूनों की अपेक्षा अधिक कठोर और कट्टर था।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस प्रकार की गलतियाँ मानवीय बुद्धि के लिए अश्रेयस्कर होती हैं, उनसे हमारी प्रकृति की लघुता प्रमाणित होती है, जो इस बात का दृढ़तापूर्वक निश्चय नहीं कर सकती कि सत्य क्या है और

न्यायोचित क्या है और बहुधा दो अतियों के विकल्प पर उतर आती है। इस दण्ड-विधान के ठीक-ठीक सिलसिले मे, जिसमे संकीर्ण साम्प्रदायिक भावनाओं और उन धार्मिक उद्वेगों के उल्लेखनीय लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं, जो अत्याचारों से प्रोत्साहित हुए थे और जो अब भी जनता के मध्य उबल रहे है, ऐसे राजनीतिक कानून मिलते हैं, जो यद्यपि दो सौ वर्ष पूर्व लिखे गये थे, तथापि जो अब भी हमारे युग की स्वतंत्रताओं से आगे है, राजनीतिक कानूनों का एक ढाँचा देखने को मिलता है। यद्यपि यह ढाँचा दो सौ वर्ष पूर्व का है, तथापि हमारे युग की स्वाधीनता से यह बहुत आगे है।

न्यू इंग्लैण्ड के कानूनों द्वारा उन समस्त सामान्य सिद्धान्तों को, जो आधुनिक संविधानो के आधारस्वरूप हैं, उन सिद्धान्तों को जो सत्रहवीं शताब्दी में अपूर्ण रूप से ज्ञात थे और ग्रेट ब्रिटेन में भी जिनकी पूर्ण रूप से विजय नहीं हुई थी, मान्य और प्रतिष्ठित कर दिया गया। कार्यों में जनता का हस्तक्षेप, करों के विषय में स्वतंत्र मतदान, शासन के अभिकर्ताओं का उत्तरदायित्व, व्यक्तिगत स्वतंत्रता और जूरी द्वारा न्याय, ये सब सिद्धान्त बिना विवाद के स्थापित किये गये।

न्यू इंग्लैण्ड के कानूनों मे हमें नगरों की स्वतंत्रता का बीज और उनका क्रमिक विकास देखने को मिलता है, जो इस समय अमरीकी स्वाधीनता का प्राण और मूलस्रोत हैं। यूरोप के अधिकांश देशो के राजनीतिक अस्तित्व का प्रादुर्भाव समाज की उच्च श्रेणियों में हुआ और फिर धीरे-धीरे तथा अपरिपूर्ण रूप से वह समाज के विभिन्न सदस्यों के पास पहुँचा। इसके विपरीत अमरीका में यह कहा जा सकता है कि वहाँ काउण्टी के पूर्व नगर का, राज्य के पूर्व काउण्टी का और संघ के पूर्व राज्य का संगठन हुआ।

न्यू इंग्लैण्ड मे बहुत पहिले सन् १६५० में नगरों का निर्माण परिपूर्णतः और निश्चित रूप से हो चुका था। नगर की स्वतंत्रता वह मध्य बिन्दु थी, जिसके चारों ओर स्थानीय हित, भावनाएँ, अधिकार और कर्तव्य एकत्र और लिपटे थे। उस स्वतंत्रता ने वास्तविक राजनीतिक जीवन की, जो पूर्णतः प्रजातांत्रिक और गणतांत्रिक था, गतिविधि को व्यापकता प्रदान की। उपनिवेश अब भी मातृभूमि की सर्वोच्चता को मानते थे, राजतंत्र अब भी राज्य का कानून माना जाता था, परन्तु प्रत्येक जिले में गणराज्य पहिले से ही स्थापित हो गया था। जिलों ने अपने सब प्रकार के मजिस्ट्रेटों को नियुक्त किया। उन्होंने स्वयं मूल्य निर्धारण किया और स्वयं अपने कर

लगाये। न्यू इंग्लैण्ड के नगर में प्रतिनिधित्व का कानून लागू नहीं हुआ था, परन्तु समाज के कार्यों पर विचार-विमर्श एथेन्स की तरह साधारण सभा द्वारा बाजार में हुआ करता था।

अमरीकी गणतंत्रों के इस प्रारम्भिक युग में लागू किये गये कानूनों का अध्ययन करते समय शासन-विधान एवं विधान-निर्माण के प्रगतिशील सिद्धान्त की उल्लेखनीय जानकारी से प्रभावित हुए बिना रहना असम्भव है। वहाँ समाज के सदस्यों के प्रति समाज के कर्तव्यों के सम्बन्ध में जो धारणाएँ बनायी गयी थीं, वे स्पष्टतः उस समय के यूरोपीय विधायकों की अपेक्षा अधिक ऊँची और अधिक व्यापक हैं। वहाँ समाज पर ऐसे उत्तरदायित्व लाद दिये गये थे, जिनका वह अन्य स्थानों पर उपहास करता था। न्यू इंग्लैण्ड के राज्यों में प्रारम्भ से ही गरीबों की स्थिति सुधारने के लिए व्यवस्था की गयी थी। उनकी देखरेख के लिए कड़े अधिनियम लागू किये गये थे। प्रत्येक नगर में अभिलेख रखे जाने की व्यवस्था की गयी, जिसमें सार्वजनिक विचारों और नागरिकों के जन्म, मृत्यु और विवाह को दर्ज किया जाता था। कर्मचारियों को उन अभिलेखों को रखने का आदेश दिया गया था। लावारिस पैतृक सम्पत्ति और सीमा-सम्बन्धी झगड़ों की मध्यस्थता और बहुत से दूसरे विभागों का प्रशासन अधिकारियों के हाथों सौंपा गया, जिनका मुख्य कर्तव्य समाज में सार्वजनिक व्यवस्था बनाये रखना था। अनेक सामाजिक अभावों का, जिनका अनुभव फ्रांस में आज भी अत्यन्त अपर्याप्त रूप से किया जाता है, पता लगाने और उन अभावों की पूर्ति करने के लिए विभिन्न प्रकार की हजारों छोटी-छोटी बातों के विषय में कानून बनाये गये।

परन्तु अमरीकी सभ्यता के मूल स्वरूप के स्पष्ट दर्शन सार्वजनिक शिक्षण सम्बन्धी समादेशों से प्राप्त होते हैं। कानून में घोषणा की गयी है..."मनुष्यों को अशिक्षित रखकर, भाषा के प्रयोग से अलग रखकर बाइबिल के ज्ञान से वंचित रखना-यह उस दुष्ट छली शैतान का एक कार्य रहा है, परन्तु ज्ञान हमारे पूर्वजों की कब्रों में गड़कर न रह जाय, इस उद्देश्य से चर्च और कामनवेल्थ में ईश्वर हमारे प्रयत्नों को योगदान देता है।" यहीं से प्रत्येक जिले में पाठशालाएँ खोलने और उनकी सहायता के लिए इस नियम का उल्लंघन करने पर निवासियों पर भारी जुर्माना लगाने की धाराएँ निकलती हैं। उच्च श्रेणी के स्कूल इसी तरीके से अधिक जनसंख्यावाले जिलों में खोले गये। म्यूनिसिपल संस्थाओं द्वारा अभिभावकों के लिए अपने बच्चों को स्कूल में भेजना अनिवार्य था। इस नियम का

उल्लंघन करनेवाले सब लोगों पर जुर्माना लगाने का उन्हें अधिकार था और निरन्तर प्रतिरोध किये जाने पर समाज अभिभावक का स्थान ग्रहण कर बच्चे पर अधिकार कर लेता था तथा वह पिता से उन प्राकृतिक अधिकारों को छीन लेता था, जिनका प्रयोग वह ऐसे बुरे उद्देश्य के लिए करता था। पाठक इन कानूनों की प्रस्तावना के रूप मे अवश्य ही कहेगा कि अमरीका में धर्मज्ञान का मार्ग है और धार्मिक कानूनों का पालन करने से मानव राजनीतिक स्वतंत्रता की ओर अग्रसर होता है।

१६५० में अमरीकी समाज की जो स्थिति थी, उस पर सरसरी निगाह दौड़ाने के बाद यदि हम उस समय की यूरोप की स्थिति पर और अधिक विशेषता से महाद्वीप की स्थिति पर विचार करें, तो हमे आश्चर्य हुए बिना नहीं रह सकता। यूरोप के महाद्वीप पर सत्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में निरंकुश राजतंत्र ने प्रत्येक स्थान में मध्यकुलीन और सामंती स्वाधीनता के अवशेषों पर आधिपत्य कर लिया था। यूरोप की शान-शौकत और साहित्य के मध्य अधिकार की भावना की जितनी पूर्ण रूप से उपेक्षा की गयी, उतनी अधिक उपेक्षा शायद कभी नहीं की गयी थी। जनता के मध्य इतनी कम राजनीतिक गतिविधि कभी देखने मे नहीं आयी, वास्तविक स्वतंत्रता के सिद्धान्तों को इतने कम व्यापक रूप से कभी प्रचारित नहीं किया गया और ठीक उसी समय यूरोप के राष्ट्र जिन सिद्धान्तों से घृणा करते थे अथवा जिन सिद्धान्तो से वे अपरिचित थे, वे सिद्धान्त नयी दुनिया के मरुस्थलो में एक महान जनता के भावी धर्म के रूप में घोषित और मान्य किये गये। मानव-मस्तिष्क के अत्यन्त साहसपूर्ण सिद्धान्तों को एक इतने तुच्छ समुदाय ने कार्यरूप में परिणत किया कि किसी भी राजनेता ने उनकी ओर ध्यान देने का कष्ट नहीं किया और मनुष्यों की कल्पनाओं की नैसर्गिक मौलिकता ने विधान-निर्माण की एक अभूतपूर्व प्रणाली की सृष्टि की।

आंग्ल अमरीकी सभ्यता के यथार्थ स्वरूप पर प्रकाश डालने के लिए मैं काफी कह चुका हूँ। वह दो भिन्न तत्वो का परिणाम है (और यह बात हमेशा ध्यान में रहनी चाहिए) जिनके बीच अन्य स्थानों पर बहुधा शत्रुता बनी रही है, परन्तु जो अमरीका में सराहनीय रूप से एक दूसरे के साथ सम्बद्ध और संयुक्त कर दिये गये हैं। अब मैं धर्म-भावना और स्वतंत्रता की भावना का प्रकारान्तर से उल्लेख करता हूँ।

न्यू इंग्लैण्ड में बसनेवाले लोग साथ-ही-साथ कट्टर सम्प्रदायवादी और नयी रीति-नीतियों को प्रारम्भ करनेवाले साहसिक व्यक्ति थे। यद्यपि उनके कतिपय धार्मिक विचारों की सीमाएँ संकीर्ण थीं, तथापि वे समस्त राजनीतिक पूर्वाग्रहों से मुक्त थे। फलस्वरूप दो प्रवृत्तियाँ उत्पन्न हुईं, जो देश के आचरणों और कानूनों में सर्वत्र दिखायी देती है। ये प्रवृत्तियाँ एक दूसरे से पृथक तो थीं, किन्तु एक दूसरे की विरोधिनी नहीं थीं।

कोई भी व्यक्ति यह सोच सकता है कि जिन व्यक्तियों ने एक धार्मिक विश्वास के लिए अपने मित्रों का, अपने परिवार का और अपनी मूल भूमि का परित्याग कर दिया था, वे उस कोष के अनुसंधान में ही पूर्णतया लगे रहेंगे, जिसे उन्होंने इतने ऊँचे मूल्य पर खरीदा था। फिर भी हम देखते हैं कि वे समान उत्साह के साथ, धरती पर कल्याण और स्वतंत्रता लाने के लिए और स्वर्ग में मुक्ति पाने के लिए भौतिक सम्पदा और नैतिक आचरण, इन दोनों की प्राप्ति में जुटे हैं। उन्होंने स्वेच्छा से सभी राजनीतिक सिद्धान्तों, सभी मानवीय कानूनों तथा संस्थाओं का रूपान्तरण और परिवर्तन किया। उन्होंने समाज की उन सीमाओं को तोड़ दिया, जिनमें उन्होंने जन्म लिया था। उन्होंने उन पुराने सिद्धान्तों की, जिन्होंने कई युगों तक विश्व का नियंत्रण किया था, अवज्ञा कर दी। उनके सामने सीमारहित जीवन-क्षेत्र और बिना क्षितिज के कार्यक्षेत्र खुला था। वे स्वतः उसमें कूद पड़े और प्रत्येक दिशा की ओर अग्रसर हुए। परन्तु राजनीतिक विश्व की सीमा पर पहुँच कर वे अपने आप ही रुक गये और उन्होंने भय के मारे अपनी प्रबलतम क्षमताओं के प्रयोग को अलग कर दिया। वे अब न तो संदाय करते हैं और न नयी रीति-नीतियाँ प्रारम्भ करते हैं। वे पवित्र स्थल पर से पर्दा हटाने से भी दूर ही रहते हैं और उन सत्यों के समक्ष, जिन्हें वे बिना किसी वाद-विवाद के स्वीकार कर लेते हैं, पूर्ण श्रद्धा के साथ झुक जाते हैं।

इस प्रकार नैतिक विश्व में प्रत्येक वस्तु वर्गीकृत, प्रणालीबद्ध, पूर्व-दृष्ट और पूर्व-निर्णीत है। राजनीतिक विश्व में प्रत्येक वस्तु के लिए आन्दोलन किया जाता है, विवाद किया जाता है और प्रत्येक वस्तु अनिश्चित है। नैतिक विश्व में निष्क्रिय आज्ञापालकता होती है, यद्यपि वह ऐच्छिक होती है, राजनीतिक विश्व में अनुभव से घृणा करने वाली और समस्त सत्ता से द्वेष रखने वाली स्वाधीनता होती है। प्रत्यक्षतः परस्पर विरोधी ये दोनों प्रवृत्तियाँ एक दूसरे के विरुद्ध संघर्षरत होने से बहुत दूर हैं; वे एक साथ आगे बढ़ती हैं और

एक दूसरे का समर्थन करती हैं। धर्म मे यह धारणा है कि नागरिक स्वतंत्रता मनुष्य की क्षमताओ को एक पुनीत कार्यक्षेत्र प्रदान करती है और राजनीतिक विश्व एक ऐसा क्षेत्र है, जो स्रष्टा द्वारा मस्तिष्क के प्रयत्नो के लिए तैयार किया गया है। स्वयं अपने क्षेत्र में स्वतंत्र और शक्तिशाली, अपने लिए सुरक्षित स्थान से सन्तुष्ट धर्म जब अपनी मूल शक्ति के अतिरिक्त अन्य किसी भी वस्तु से असमर्थित मनुष्यों के हृदय पर शासन करता है, तब वह जितने निश्चित रूप से अपने साम्राज्य की स्थापना करता है, उससे अधिक निश्चित रूप से वह अपने साम्राज्य की स्थापना कभी नहीं करता।

स्वतंत्रता अपने समस्त संघर्षों और अपनी विजयों में धर्म को अपना सहचर मानती है। वह उसे अपने शैशव का पालना और अपने अधिकारों का पुनीत स्रोत मानती है। वह धर्म को नैतिकता के लिए संरक्षण के रूप में और नैतिकता को कानून की सर्वोत्तम सुरक्षा के रूप मे तथा स्वाधीनता के स्थायित्व के लिए दृढ़तम प्रतिज्ञा के रूप में मानती है।

२—आंग्ल अमरीकियों की प्रजातांत्रिक सामाजिक स्थिति

सामाजिक स्थिति का निर्माण सामान्यतः परिस्थितियों, कभी-कभी कानूनो और बहुधा इन दोनों कारणों के मिलने के फलस्वरूप होता है; परन्तु जब एक बार उसकी स्थापना हो जाती है, वो उसे राष्ट्र के आचरण को नियमित रखने वाले सभी कानूनों, रीतियों और विचारों का वास्तविक उद्गम माना जा सकता है और वह जिस वस्तु को उत्पन्न नहीं करती, उसका रूपान्तरण करती है। यदि हम किसी राष्ट्र के विधान और आचरण से परिचित होना चाहते हैं, तो हमें उसकी सामाजिक स्थिति के अध्ययन से ही श्रीगणेश करना चाहिए।

'आंग्ल अमरीकियों की सामाजिक स्थिति का अनोखा लक्षण उसका सारभूत प्रजातंत्र है!'

अमरीकियों की सामाजिक स्थिति प्रधानतः लोकतांत्रिक है। उपनिवेशों के निर्माण के समय यह उसकी विशिष्टता थी और आज वह और भी अधिक उल्लेखनीय बन गयी है। ...न्यू इंग्लैण्ड के तटों पर बसने वाले उत्प्रवासियों

में अत्यधिक समानता विद्यमान थी। संघ के उस भाग मे कभी कुलीनतंत्र का अंकुर तक पैदा नहीं हुआ था। वहाँ एक मात्र प्रतिभा का प्रभाव ही व्याप्त था। वहाँ के लोग ज्ञान और सद्गुण के प्रतीक के रूप में कुछ नामों की पूजा करने के अभ्यस्त थे।

हडसन के पूर्व में इसी प्रकार की स्थिति थी, परन्तु उस नदी के दक्षिण-पश्चिम में और फ्लोरिडा तक स्थिति भिन्न थी। हडसन के दक्षिण-पश्चिम में स्थित अधिकांश राज्यों में कुछ बड़े सम्पत्तिशाली अंग्रेज बस गये थे, जो अपने साथ कुलीनतंत्र के सिद्धान्त और इंग्लिश उत्तराधिकार-कानून लेकर आये थे। अमरीका में शक्तिशाली कुलीनतंत्र की स्थापना के असम्भव होने के कारणों का स्पष्टीकरण मैं कर चुका हूँ। ये कारण हडसन के दक्षिण-पश्चिम में अपेक्षाकृत कम शक्तिशाली थे। दक्षिण में एक आदमी गुलामों की मदद से देश के विस्तृत भूखण्ड पर खेती कर सकता था और इसलिए आमतौर से वहाँ धनी भूस्वामी देखे जाते थे; परन्तु यूरोप में कुलीनतंत्र का जैसा अर्थ समझा जाता है, उस अर्थ मे उनका प्रभाव बिल्कुल ही कुलीनतांत्रिक न था, क्योंकि उनके पास विशेषाधिकार नहीं थे और चूँकि उनकी जमीन पर खेती का कार्य गुलामों द्वारा किया जाता था, इसलिए उनके ऊपर आश्रित रहने वाले काश्तकार नहीं थे और परिणामस्वरूप किसी पर उनका संरक्षण नहीं था। फिर भी हडसन के दक्षिण में भूस्वामियों का एक उच्च वर्ग था, जिसके अपने खुद के विचार और दृष्टिकोण थे और जिसने अपने को राजनीतिक गतिविधियों का केन्द्र बना लिया था। इस प्रकार के कुलीनतंत्र की सहानुभूति ऐसे लोगों के समाज से हो गयी थी, जिनके आवेगों और हितों को उसने सुगमता से अंगीकृत कर लिया था। परन्तु यह कुलीनतंत्र अत्यन्त निर्बल और अत्यन्त अल्पजीवी था और इसी कारण वह प्रेम अथवा घृणा, किसी को भी उत्तेजित करने के लिए काफी नहीं था। यह वह वर्ग था, जिसने दक्षिण में विद्रोह का नेतृत्व किया था और जिसने अमरीकी राज्यक्रान्ति के सर्वश्रेष्ठ नेताओं को जन्म दिया था।

इस समय समाज की मूल भित्ति हिल उठी। जनता ने, जिसके नाम पर संघर्ष प्रारम्भ हुआ था, उस अधिकार का प्रयोग करना चाहा, जिसे उसने प्राप्त किया था। उसकी लोकतांत्रिक प्रवृत्तियाँ जाग्रत हो उठीं और मातृभूमि के जुए को फेंक चुकने के पश्चात् उसकी महत्वाकांक्षा हर प्रकार की स्वाधीनता

प्राप्त करने की हुई। व्यक्तियों का प्रभाव शनैः-शनैः कम पड़ता गया और प्रथा तथा कानूनों ने संयुक्त रूप से इसी प्रकार का परिणाम पैदा कर दिया।

परन्तु उत्तराधिकार कानून समानता के लिए अन्तिम चरण था। मुझे इस बात से आश्चर्य होता है कि प्राचीन और आधुनिक न्यायवेत्ताओं ने इस कानून को मानव कार्यों पर महान प्रभाव डालने वाला बताया है। यह सही है कि ये कानून नागरिक कार्यों से सम्बन्धित हैं, फिर भी इन कानूनों को समस्त राजनीतिक संस्थाओं के शीर्ष पर रखा जाना चाहिए था; क्योंकि वे सामान्य मनुष्य की सामाजिक स्थिति पर आश्चर्यजनक प्रभाव डालते है, जब कि राजनीतिक कानून केवल यह बताते है कि यह स्थिति कैसी है! इसके अतिरिक्त समाज पर उनकी क्रिया की निश्चित और एक-सी पद्धति होती है, जिसका प्रभाव किस न किसी प्रकार भावी संतति पर पड़ता है। अपने साधनों से मनुष्य अपने जाति-भाइयों की भावी स्थिति पर एक प्रकार की विलक्षण एवं असाधारण शक्ति प्राप्त कर लेता है। विधायक एक बार उत्तराधिकार कानून को विनियमित करने के बाद अपने काम से छुट्टी पाकर आराम कर सकता है। मशीन चलने के बाद कई युगों तक चलती रहेगी और पूर्व निर्देशित बिन्दु की ओर बढ़ती रहेगी मानो वह स्वयं संचालित हो। जब इस कानून की किसी विशिष्ट प्रकार से रचना की जाती है, तब वह सम्पत्ति और शक्ति दोनों को कुछ ही लोगो के हाथों में एकत्र करता है, एक साथ संयुक्त करता है और तत्सम्बन्धी अधिकार सौंपता है और कहा जा सकता है कि वह कुलीनतंत्र की सृष्टि करता है। यदि उसकी रचना विरोधी सिद्धान्तों पर की जाती है, तो उसकी क्रिया और भी अधिक तेज हो जाती है। वह सम्पत्ति और शक्ति दोनों का विभाजन, वितरण और लोप करता है। उसकी प्रगति की तीव्रता से भयभीत होकर जो लोग उसकी गति को रोकने मे हताश हो जाते हैं, वे और कुछ नहीं, तो कठिनाइयाँ और बाधाएँ उत्पन्न कर के ही उसे अवरुद्ध करने का प्रयास करते हैं। वे विरोधी प्रयत्नों से उसके प्रभाव को समाप्त करने की व्यर्थ चेष्टाएँ करते हैं। वह प्रत्येक बाधा के टुकड़े-टुकड़े करके उसे चूर्ण विचूर्ण कर डालता है और अन्त मे हमें गतिशील और अतिसूक्ष्म धूल के बादलों के सिवाय कुछ भी दिखाई नहीं दे सकता, जो हमें लोकतंत्र के आगमन की सूचना देता है।

विभाज्य उत्तराधिकार के कानून के अन्तर्गत प्रत्येक मालिक की मृत्यु उसकी सम्पत्ति की स्थिति में एक प्रकार की क्रान्ति ला देती है। उसके परिणाम-

स्वरूप न केवल उसकी जायदाद दूसरे लोगों के हाथों में चली जाती हैं, बल्कि उसका मूल रूप ही बदल जाता है; क्योंकि वह जायदाद टुकड़े-टुकड़े होकर कई हिस्सों में विभक्त हो जाती है और ये हिस्से प्रत्येक विभाजन के समय छोटे होते जाते हैं। यह कानून का प्रत्यक्ष और एक प्रकार से उसका भौतिक प्रभाव है। तब इससे यह परिणाम निकलता है कि उन देशों में, जहाँ उत्तराधिकार की समानता कानून से स्थापित है, सम्पत्ति की, विशेषतया भूमि-सम्पत्ति की, प्रवृत्ति निरन्तर छोटे-से-छोटे भागों में विभाजित होने की होनी चाहिए .. परन्तु समान विभाजन का कानून अपना प्रभाव न केवल जायदाद पर ही डालता है, अपितु वह उत्तराधिकारियों के मस्तिष्क को भी प्रभावित करता है और मनोवेगों को कार्यरत कर देता है। अप्रत्यक्ष परिणाम अत्यन्त शक्तिशाली रूप से विशाल सम्पत्तियों, विशेषतः बड़ी रियासतों को नष्ट कर देता है।

उन राष्ट्रों में, जहाँ उत्तराधिकार कानून ज्येष्ठतम संतान के अधिकार पर आधारित होता है, भू-सम्पत्ति प्रायः बिना विभाजित हुए एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होती रहती है। उसका परिणाम यह होता है कि पारिवारिक भावना कुछ अंशों में जायदाद के साथ जुड़ी रहती है। परिवार जायदाद का प्रतिनिधित्व करता है और जायदाद परिवार का, जिसका नाम उसके मूल, उसके गौरव, उसकी शक्ति और उसके गुणों के साथ भूतकाल के अनश्वर स्मारक और भविष्य की निश्चित सुरक्षा के रूप में चिरस्थायी हो जाता है। जब सम्पत्ति का समान विभाजन कानून द्वारा स्थापित हो जाता है तब पारिवारिक भावना और पैतृक सम्पत्ति के संरक्षण के बीच जो प्रगाढ़ सम्बन्ध रहता है, वह नष्ट हो जाता है। फिर जायदाद परिवार का प्रतिनिधित्व नहीं करती; क्योंकि उसका विभाजन चूँकि एक या दो पीढ़ियों के बाद अनिवार्य रूप से हो जायगा, इसलिए स्पष्टतः उसकी प्रवृत्ति निरंतर घटती जाने की हो जाती है और अंत में वह पूर्णतः छिन्न-भिन्न हो जाती है। यदि किसी बड़े भू स्वामी के लड़कों की संख्या कम है या यदि भाग्य उनकी सहायता करता है तो वे निश्चय ही अपने पिता की तरह धनी होने की आशा कर सकते हैं, परन्तु वे उसी सम्पत्ति के स्वामी होने की आशा नहीं कर सकते, जो सम्पत्ति उनके पिता के पास थी, उनकी सम्पत्ति आवश्यक रूप से उनके पिता की सम्पत्ति से भिन्न तत्वों से निर्मित होगी। अब भूस्वामी को सम्बन्ध, परम्परा और पारिवारिक गर्व से अपनी भू-सम्पत्ति के संरक्षण में जो अभिरुचि प्राप्त होती है, उस अभिरुचि से आप उसे ज्योंही वंचित कर देंगे, त्योंही वह निश्चित रूप से अपनी सम्पत्ति को बेच डालेगा, क्योंकि विक्रय के

पक्ष में धन सम्बन्धी शक्तिशाली स्वार्थ रहता है, क्योंकि चलपूंजी पर अचल सम्पदा की अपेक्षा अधिक ब्याज मिलता है और क्षणिक वासनाओं की तृप्ति के लिए अधिक शीघ्रता से धन सुलभ हो जाता है।

जो बड़ी भू-सम्पत्तियाँ एक बार विभाजित हो जाती हैं, वे दुबारा कभी संयुक्त नहीं होतीं; क्योंकि छोटा भूस्वामी अपनी भूमि से आनुपातिक दृष्टि से बड़े भूस्वामी की अपेक्षा अधिक राजस्व प्राप्त करता है और निश्चय ही वह उसे अधिक ऊँची दर पर बेचता है। अतः लाभ की जो गणनाएँ धनी व्यक्ति को अपना भूक्षेत्र बेचने के लिए प्रेरित करती हैं, वे और भी अधिक प्रबलता के साथ उसे छोटी-छोटी भू-सम्पत्तियाँ खरीद कर उन्हें बड़ी भू-सम्पत्ति के रूप में संयुक्त करने के विरुद्ध प्रभावित करती हैं। जिसे पारिवारिक गर्व कहा जाता है, वह बहुधा आत्म प्रेम की एक भ्रान्ति पर आधारित होता है। कहा जा सकता है कि मनुष्य अपने पौत्र प्रपौत्रों में अपने को शाश्वत एवं अमर बन जाने की इच्छा रखता है। जब पारिवारिक गर्व अपना कार्य करना बन्द कर देता है तब व्यक्तिगत स्वार्थपरता कार्यरत हो जाती है, जब परिवार की भावना अस्पष्ट और अनिश्चित हो जाती है, तब मनुष्य अपनी वर्तमान सुविधाओं का ध्यान करता है, वह केवल अपनी अगली पीढ़ी के लिए व्यवस्था करता है, उसके बाद के लिए नहीं। या तो मनुष्य अपने परिवार को चिरस्थायी बनाने का विचार छोड़ देता है या फिर वह किसी भी तरह भू-सम्पत्ति के अतिरिक्त अन्य साधनों द्वारा उसे पूर्ण करने की कोशिश करता है।

इस प्रकार विभाज्य उत्तराधिकार कानून न केवल परिवारों के लिए अपने पूर्वजों की भू-सम्पत्ति को पूर्ण रूप से सुरक्षित रखना कठिन कर देता है, बल्कि वह उन्हें इस प्रकार का प्रयत्न करने की प्रवृत्ति से भी वंचित कर देता है और उन्हें कुछ हद तक स्वयं अपने विनाश में कानून के साथ सहयोग करने के लिए बाध्य कर देता है। इन दोनों तरीकों से कानून भू-सम्पत्ति की जड़ों पर प्रहार करने में और परिवारों तथा समृद्धि दोनों को शीघ्रता से नष्ट करने में सफलता प्राप्त कर लेता है। विभाजन के कानून के प्रभाव में संशय करने का काम निश्चय ही उन्नीसवीं शताब्दी के हम फ्रांसीसियों का नहीं है, जो इस कानून के फलस्वरूप होने वाले राजनीतिक और सामाजिक परिवर्तनों को प्रति दिन देखते रहते हैं। वह हमारे घरों की दीवारों को तोड़ता हुआ, हमारी खेती की सीमाओं को भंग करता हुआ, हमारे देश में निरन्तर स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता रहता है; किन्तु यद्यपि फ्रांस पर उसका बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा है, अभी उसके द्वारा

बहुत-कुछ किया जाना शेष है। हमारी स्मृतियाँ, विचारधाराएँ और आदतें उसकी प्रगति के मार्ग में प्रबल बाधाएँ उपस्थित करती हैं।

संयुक्त-राज्य अमरीका में इस कानून ने अपने विनाश-कार्य को लगभग समाप्त सा कर लिया है और हम यहाँ उसके परिणामों का सर्वोत्तम रीति से अध्ययन कर सकते हैं। राज्यक्रांति के समय प्रायः सभी राज्यों में सम्पत्ति-हस्तानान्तरण सम्बन्धी अंग्रेजी कानून समाप्त कर दिये गये। भू-सम्पत्ति-विषयक उत्तराधिकार कानून में, जिसके द्वारा तत्काल भू-सम्पत्ति का विक्रय नहीं किया जा सकता, इस प्रकार परिवर्तन किया गया, जिससे सम्पत्ति के स्वतंत्र परिचालन में कोई विशेष बाधा न होने पाये। पहली पीढ़ी के समाप्त होने के बाद जायदाद के टुकड़े होने आरम्भ हुए और यह परिवर्तन समय की गति के साथ अधिकाधिक वेगवान बनता गया और अब साठ साल से कुछ अधिक वर्षों के बाद समाज का पहलू पूर्णतः बदल चुका है और बड़े भूस्वामियों के प्रायः सभी परिवार सामान्य जनों के साथ मिल चुके हैं। इन अमीर नागरिकों के पुत्र व्यापारी, वकील और डाक्टर हो गये हैं। उनमें से अधिकांश का पता ठिकाना नहीं रह गया है। पैतृक पद और प्रतिष्ठा के अन्तिम चिन्ह समाप्त हो गये हैं और विभाजन के कानून ने सब को एक ही स्तर पर ला दिया है।

मेरे कहने का यह अभिप्राय नहीं है कि संयुक्त-राज्य अमरीका में धनी व्यक्तियों का किसी प्रकार का अभाव है। मैं अमरीका को छोड़कर अन्य किसी ऐसे देश को नहीं जानता, जहाँ वस्तुतः रुपयों—पैसों के प्रेम ने मनुष्यों के हृदय को इतनी बुरी तरह जकड़ लिया हो और जहाँ सम्पत्ति की स्थायी समानता के सिद्धान्त के प्रति इतनी प्रगाढ़ घृणा प्रकट की जाती हो। परन्तु धन इतनी शीघ्रता से परिचालित होता है कि उसकी कल्पना तक नहीं की जा सकती और अनुभव बताता है कि ऐसी दो पीढ़ियों का मिलना दुर्लभ ही है, जिन्होंने लगातार पूर्ण रूप से धन का उपभोग किया हो।

यह चित्र सम्भवतः अतिशयोक्तिपूर्ण प्रतीत हो सकता है। फिर भी पश्चिम और दक्षिण-पश्चिम के नये राज्यों में जो कुछ घटित हो रहा है, उसके सम्बन्ध में यह अत्यन्त अपूर्ण ज्ञान प्रदान करता है। पिछली शताब्दी के अन्तिम चरण में समृद्धि की तलाश में निकले कतिपय साहसी व्यक्तियों ने मिस्सीसीपी घाटी में प्रवेश करना प्रारम्भ किया और शीघ्र ही जनसंख्या के बड़े भाग ने उस दिशा में बढ़ना प्रारम्भ कर दिया; उस समय तक जिन समुदायों का नाम तक नहीं सुना गया था, वे आकस्मिक रूप

से रेगिस्तान में प्रकट हो गये। कुछ वर्षों पूर्व तक जिन राज्यों के नाम का कोई अस्तित्व नहीं था, उन्होंने अमरीकी संघ में स्थान ग्रहण कर लिया और पश्चिमी उपनिवेशों में हम प्रजातंत्र को अपनी चरमसीमा पर पहुँचा हुआ देख सकते हैं। इन राज्यों के, जिनकी स्थापना आकस्मिक रूप से अथवा यों कहा जा सकता है कि संयोगवश हुई थी, निवासी अभी कल के ही हैं। एक दूसरे से मुश्किल से परिचित, निकटतम पड़ोसी भी एक दूसरे के इतिहास को नहीं जानते। इसलिए अमरीकी महाद्वीप के इस भाग की जनसंख्या न केवल बड़े नामों और प्रचुर वैभव के प्रभाव से, अपितु ज्ञान और गुण की स्वाभाविक कुलीनता से भी वंचित रही है। वहाँ कोई भी उस सम्माननीय सत्ता का अधिकारी नहीं है, जिसे मनुष्य स्वेच्छा से, अपनी आँखों के सामने अच्छे कृत्य करने वालों की याददाश्त में प्रदान कर देते हैं। पश्चिम के नये राज्य पहले ही बस चुके हैं, परन्तु उनमे समाज का कोई अस्तित्व नही है।

अमरीका मे मनुष्यों की समृद्धि ही केवल समान नहीं है, प्रत्युत उन्होंने प्रयास द्वारा जो कुछ प्राप्त किया है, उसमे भी किसी अंश तक वही एकरूपता दिखायी देती है। मैं यह विश्वास नहीं करता कि संसार में और भी कोई ऐसा देश है, जहाँ जनसंख्या के अनुपात मे इतने कम लोग अशिक्षित हों और साथ-ही-साथ इतने कम विद्वान हों। वहाँ प्राथमिक शिक्षण प्रत्येक के लिए सुलभ है, उच्च शिक्षा शायद ही किसी के द्वारा प्राप्त की जाती है। इसमे कोई आश्चर्य की बात नहीं है। वास्तव में जो कुछ हमने ऊपर उल्लेख किया है, यह उसी का आवश्यक परिणाम है। प्रायः सारे अमरीकी सुगम परिस्थितियों में रहते हैं और इसलिए वे मानव ज्ञान के प्राथमिक तत्त्वों की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

अमरीका में समृद्धिशाली व्यक्तियों की संख्या कम है, लगभग सभी अमरीकियों को कोई-न-कोई पेशा अख्तियार करना पड़ता है और प्रत्येक पेशे के लिए प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। अमरीकी केवल जीवन के प्रारम्भिक वर्षों में ही सामान्य शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं। पन्द्रह वर्ष की आयु में वे अपने पेशे मे प्रवेश करते हैं और इस प्रकार उनकी शिक्षा सामान्यतः उस आयु में समाप्त हो जाती है, जिस आयु मे हमारी शिक्षा प्रारम्भ होती है। बाद में जो कुछ भी किया जाता है, वह किसी विशेष और भारी लाभ के उद्देश्य से किया जाता है। विज्ञान को एक व्यवसाय के रूप में

हाथ में लिया जाता है और उसकी उसी शाखा पर ध्यान दिया जाता है, जिसका कोई तात्कालिक व्यावहारिक उपयोग हो सके।

अमरीका में अधिकांश अमीर पहिले गरीब थे। अधिकांश लोग, जो आज आराम का जीवन व्यतीत करते हैं, अपनी युवावस्था में व्यापार में लगे हुए थे। इसका परिणाम यह हुआ कि जब उन्हें अध्ययन के प्रति रुचि हो सकती थी, उस समय उनके पास उसके लिए कोई समय नहीं था और अब जब कि समय उनके पास है, उनमें अध्ययन की रुचि नहीं रही। अतः अमरीका में ऐसा कोई वर्ग नहीं है, जिसे पैतृक सम्पत्ति एवं सुख के साथ बौद्धिक आनंद की अभिरुचि प्राप्त हुई हो और जिसके द्वारा बौद्धिक श्रम को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता हो। तदनुसार इन उद्देश्यों के प्रति इच्छा और व्यवहार की शक्ति का समान रूप से अभाव है। अमरीका में मानव ज्ञान के लिए एक निम्न कोटि का स्तर निश्चित है। सभी लोग, कुछ उत्थान-काल में और कुछ ह्रास-काल में उस स्तर के उतने निकट पहुँचते हैं, जितने निकट वे जा सकते हैं। निश्चय ही बहुत से ऐसे व्यक्ति मिलेंगे, जो धर्म, इतिहास, विज्ञान, राजनीतिक अर्थशास्त्र, विधान और सरकार के सम्बन्ध में उतने ही विचार रखते हैं, जितनी उनकी संख्या होती है। बुद्धि का उपहार सीधे ईश्वर से प्राप्त होता है और मनुष्य उसके असमान वितरण को रोक नहीं सकता; किन्तु हमने अभी जो कुछ कहा है, उसी का कम-से-कम यह एक परिणाम है कि यद्यपि मनुष्यों की योग्यताएँ भिन्न भिन्न हैं, जैसा कि ईश्वर ने उनको बनाया है, तथापि अमरीकी समान रूप से उनका उपयोग करने का साधन ढूँढ निकालते हैं।

अमरीका में कुलीनतंत्र का तत्व अपने जन्मकाल से ही सदा दुर्बल रहा है और यद्यपि इस समय वास्तविक रूप से उसका विनाश नहीं हुआ है, फिर भी वह ऐसा अपंग हो चुका है कि वह मुश्किल से घटनाओं की गति को किसी भी अंश में प्रभावित करने का कार्य कर सकता है। इसके विपरीत, लोकतान्त्रिक सिद्धान्त ने समय, घटनाओं और विधान से इतनी शक्ति अर्जित कर ली है कि वह न केवल सर्वप्रधान, प्रत्युत सर्वशक्तिमान भी बन गया है। वहाँ कोई परिवार अथवा नियमित सत्ता नहीं है और व्यक्तिगत चरित्र के प्रभाव का स्थायित्व भी मुश्किल से मिलता है। इसलिए अमरीका अपनी सामाजिक स्थिति में असाधारण लक्षण प्रकट करता है। वहाँ मनुष्यों में सम्पत्ति और बुद्धि की दृष्टि से अधिक समानता दिखाई देती है अथवा दूसरे

शब्दों में विश्व के अन्य किसी राष्ट्र या किसी युग की तुलना में, जिसकी स्मृति को इतिहास ने सुरक्षित रखा है, उनकी शक्ति में अधिक समानता है।

सामाजिक लोकतंत्र का राजनीतिक परिणाम

इस प्रकार की सामाजिक स्थिति के राजनीतिक परिणामों के विषय में सरलता के साथ निष्कर्ष निकाला जा सकता है। यह विश्वास करना असम्भव है कि जिस प्रकार समानता अन्य सभी स्थानों में प्रवेश करती है, उसी प्रकार अन्ततोगत्वा यह राजनीतिक जगत में भी नहीं प्रवेश कर जायगी। ऐसे मनुष्यों की कल्पना कर सकना असम्भव है, जो अन्य सब बातों में समान रहते हुए भी एक बात में हमेशा असमान बने रहें। उन्हें अन्त में समान होना ही पड़ेगा।

राजनीतिक जगत में समानता स्थापित करने के केवल दो ही तरीकों से मैं परिचित हूँ–प्रत्येक नागरिक को उसके अधिकार प्रदान किये जायें या किसी के पास अधिकार न रहें। इसलिए उन राष्ट्रों के लिए, जो सामाजिक अस्तित्व की उसी अवस्था में पहुँच चुके हैं, जिसमें आंग्ल अमरीकी पहुँच चुके हैं, सब की सार्वभौमिकता और एक व्यक्ति की निरंकुश सत्ता के बीच एक माध्यम ढूँढ निकालना बहुत ही कठिन है और इस बात से इनकार करना निरर्थक ही होगा कि मैंने जिस सामाजिक अवस्था का वर्णन किया है, उसका उसी प्रकार इन परिणामों में से एक परिणाम हो सकता है, जिस प्रकार कि दूसरा। वास्तव में समानता के लिए वहाँ एक ऐसी पुरुषोचित और वैधानिक उत्कट अभिलाषा है, जो मनुष्यों को यह कामना करने के लिए प्रेरित करती है कि सभी शक्तिशाली हों और सभी का सम्मान किया जाय। यह उत्कट अभिलाषा तुच्छ व्यक्तियों को महान व्यक्तियों की कोटि में पहुँचा देती है, किन्तु मानव हृदय में समानता के लिए एक कलुषित भावना का भी अस्तित्व रहता है, जो दुर्बलों को शक्तिशालियों की स्थिति को नीचे गिरा कर अपने स्तर पर लाने का प्रयत्न करने के लिए प्रेरित करती है और मनुष्यों को इतने निम्न स्तर पर ला देती है कि वे स्वतंत्रतासहित असमानता की अपेक्षा पराधीनतायुक्त समानता को अधिक पसन्द करने लगते हैं। यह बात नहीं है कि वे राष्ट्र, जिनकी सामाजिक स्थिति लोकतांत्रिक है, स्वाभाविक रूप से स्वाधीनता का तिरस्कार करते हैं; इसके विपरीत उनमें उसके प्रति सहज

प्रेम होता है, परन्तु स्वाधीनता सदा उनकी इच्छाओं का मुख्य एवं निरन्तर उद्देश्य नहीं रहती, जब कि समानता उनका इष्ट रहती है। वे स्वाधीनता की प्राप्ति के लिए तीव्र गति से एवं आकस्मिक प्रयत्न करते हैं और यदि वे अपने उद्देश्य में असफल हो जाते हैं, तो निराश होकर बैठ जाते हैं, परन्तु बिना समानता के उन्हें कोई संतोष नहीं दे सकता और उसे खोने की अपेक्षा विनष्ट हो जाना वे अधिक पसन्द करेंगे।

दूसरी ओर, जिस राज्य के सभी नागरिक लगभग समान होते हैं, वहाँ उनके लिए शक्ति-प्रहारों के विरुद्ध अपनी स्वाधीनता को बनाये रखना कठिन हो जाता है। चूँकि उनमे कोई भी व्यक्ति इतना शक्तिशाली नहीं होता कि वह अकेला ही लाभदायक रीति से संघर्ष कर सके, इसलिए वहाँ सामान्य एकता के अतिरिक्त अन्य कोई भी वस्तु उनकी स्वाधीनता की रक्षा नहीं कर सकती। अब इस प्रकार की एकता हमेशा सम्भव नहीं है। तब उसी सामाजिक स्थिति से राष्ट्र दो महान राजनीतिक परिणामों में से एक या दूसरा परिणाम निकाल सकते हैं। ये परिणाम एक दूसरे से नितान्त भिन्न होते हैं, परन्तु वे दोनों एक ही कारण से उत्पन्न होते है। आंग्ल अमरीकी राष्ट्र ऐसा प्रथम राष्ट्र था, जो अपने समक्ष इस दुर्दान्त विकल्प के उपस्थित होने पर भी इतना भाग्यशाली रहा कि निरंकुश सत्ता के आधिपत्य से बच निकला। वे अपनी परिस्थितियों, अपने उद्गम, अपनी बुद्धि और विशेषतः अपनी नैतिकता द्वारा जनता की सार्वभौमिकता की स्थापना और रक्षा कर सकने में समर्थ हुए हैं।

३—अमरीका में जनता की सार्वभौमता

जब कभी संयुक्त-राज्य अमरीका के राजनीतिक कानूनों पर विचार करना हो, तो हमें जनता की सार्वभौमता के सिद्धान्त से ही प्रारम्भ करना चाहिए।

जनता की सार्वभौमता का सिद्धान्त, जो प्रायः समस्त मानवीय संस्थाओं के मूल में सदैव पाया जाता है, सामान्यतः दृष्टि से ओझल रहता है। उसका पालन उसके साक्षात्कार के बिना ही किया जाता है अथवा यदि क्षण भर के लिए वह प्रकाश में आता है, तो उसे शीघ्र ही पुनः पवित्रता के अन्धकार में फेंक दिया जाता है।

'राष्ट्र की इच्छा' उन लोकोक्तियों में से एक है, जिसका दुरुपयोग प्रत्येक युग के धूर्तों और स्वेच्छाचारियों द्वारा अत्यन्त व्यापक रूप से किया जाता रहा है। कुछ लोगों ने सत्ता के थोड़े से अनुचरों के खरीदे गये मताधिकार में और कुछ लोगों ने कायर अथवा स्वार्थरत अल्पसंख्यक समुदाय के मतों में इसकी अभिव्यक्ति को देखा और कुछ लोगों ने इस अनुमान से कि आत्मसमर्पण की वास्तविकता प्रभुत्व के अधिकार को प्रतिष्ठित करती है, इसे जनता की चुप्पी में भी खोज निकाला।

अमरीका में जनता की सार्वभौमता का सिद्धान्त न तो जड़ (निष्क्रिय) है और न प्रच्छन्न है, जैसा कि कुछ अन्य राष्ट्रों में देखा जाता है। वह रीति-रिवाजों द्वारा मान्य किया गया और कानूनों द्वारा उद्घोषित किया गया है। वह स्वतंत्रता-पूर्वक विस्तृत होता है और बिना किसी रुकावट के अपने अत्यन्त दूरवर्ती परिणामों की प्राप्ति कर लेता है। संसार में यदि कोई ऐसा देश हो, जहाँ जनता की सार्वभौमता के सिद्धान्त का समुचित रूप से मूल्यांकन किया जा सकता हो, जहाँ समाज के प्रकार्यों में उसके प्रयोग का अध्ययन किया जा सकता हो और जहाँ उसके खतरों और उसकी उपयोगिताओं को तौला जा सकता हो, तो वह देश निश्चित रूप से अमरीका है।

मैं पहिले ही बता चुका हूँ कि अमरीका स्थित अधिकांश ब्रिटिश उपनिवेशों के प्रारम्भकाल से ही जनता की सार्वभौमता का सिद्धान्त उनका मूलभूत सिद्धान्त था। फिर भी समाज के शासन पर उसका इतना अधिक प्रभाव नहीं पड़ा था, जितना आजकल है। दो बाधाओं ने—एक बाह्य और दूरी आन्तरिक—उसकी तीव्र प्रगति के मार्ग को अवरुद्ध कर दिया था।

यह उन उपनिवेशों के कानूनों में, जो अभी तक मूल देश की आज्ञाओं का पालन करने के लिए विवश थे, प्रत्यक्ष रूप से अपने-आप को प्रकट नहीं कर सकता था। अतः उसे प्रान्तीय धारा-सभाओं और विशेषतः जिलों में गुप्त रूप से शासन करने के लिए विवश होना पड़ा।

उस समय तक अमरीकी समाज उसे, उसके समस्त परिणामों सहित अपना लेने के लिए तैयार नहीं था। न्यू इंग्लैंड में ज्ञान ने और हडसन के दक्षिण प्रदेश में धन ने (जैसा कि मैंने पिछले अध्याय में बतलाया है) दीर्घकाल तक एक प्रकार के कुलीनवर्गीय प्रभाव को जमाये रखा, जिसकी प्रवृत्ति सामाजिक शक्ति का नियंत्रण थोड़े-से व्यक्तियों के हाथों में सौंप देने की रही थी। सभी सार्वजनिक अधिकारियों का चुनाव जनता के मत से नहीं होता था और न सभी नागरिक

मतदाता ही थे। निर्वाचनात्मक मताधिकार सभी स्थानों पर किसी अंश में सीमित और कतिपय योग्यताओं पर निर्भर करता था। ये योग्यताएँ उत्तर में बहुत कम और दक्षिण में अधिक विचारणीय थीं।

अमरीकी राज्यक्रान्ति प्रारम्भ हुई और जनता की सार्वभौमता का सिद्धान्त जिलों से निकल कर बाहर आया और उसने राज्य पर अधिकार प्राप्त कर लिया। उसके लिए प्रत्येक वर्ग आगे आया, लड़ाइयाँ लड़ी गयीं और विजय प्राप्त की गयी। यह कानूनों का कानून बना।

समाज के भीतर प्रायः तीव्र गति से परिवर्तन हुआ, जहाँ उत्तराधिकार विधान ने स्थानीय प्रभावों को परिपूर्ण रूप से समाप्त कर दिया था।

ज्योंही प्रत्येक व्यक्ति के सामने कानूनों और राज्यक्रान्ति का यह प्रभाव स्पष्ट हुआ, त्योंही लोकतंत्र की चिरस्थायी विजय की घोषणा कर दी गयी। वस्तुतः सारी सत्ता उसके हाथों में थी और अब प्रतिरोध सम्भव नहीं रह गया। उच्चतर व्यवस्थाओं ने बिना किसी चीं-चपड़ और संघर्ष के एक ऐसी बुराई के समक्ष आत्मसमर्पण कर दिया, जो अब अनिवार्य हो गयी थी। पतनोन्मुख शक्तियों का सामान्य भाग्य उनकी प्रतीक्षा कर रहा था। उनका प्रत्येक सदस्य अपने ही हित की ओर देखता था और ऐसी जनता के हाथों से सत्ता छीन सकना असम्भव था, जिससे वे इतनी अधिक घृणा नहीं करते थे कि उसका धीरतापूर्वक सामना कर सकें और उनका एकमात्र उद्देश्य किसी भी मूल्य पर उसकी सद्भावना प्राप्त करना था। परिणामतः अत्यन्त लोकतान्त्रिक कानूनों का समर्थन उन्हीं व्यक्तियों द्वारा किया गया, जिनके हितों पर उन्होंने कुठाराघात किया था और इस प्रकार यद्यपि उच्चतर वर्गों ने अपनी व्यवस्था के विरुद्ध लोगों के मनोवेगों को उत्तेजित नहीं किया, तथापि उन्होंने स्वयं नयी व्यवस्था की विजय की गति को तीव्र बना दिया, जिससे एक परिवर्तन से ही उन्हीं राज्यों में लोकतान्त्रिक प्रेरणाएँ अत्यंत अदम्य सिद्ध हुईं जहाँ कुलीनतंत्र का आधिपत्य सबसे अधिक था। मेरीलैण्ड का राज्य, जिसकी स्थापना उच्च वर्ग के लोगों द्वारा की गयी थी, सार्वजनीन मताधिकार की घोषणा करने वाला और सरकार के सम्पूर्ण ढाँचे को परिपूर्ण रूप से लोकतांत्रिक बना देने वाला प्रथम राज्य था।

जब राष्ट्र निर्वाचनात्मक अर्हता का रूपान्तरण प्रारम्भ करता है तब बड़ी सुगमता से भविष्यवाणी की जा सकती है कि किसी-न-किसी समय यह अर्हता पूर्णतः समाप्त हो जायगी। समाज के इतिहास में इससे बढ़कर अपरिवर्तनीय

नियम कोई नहीं है। निर्वाचन अधिकारों को जितना अधिक विस्तृत किया जाता है, उनको विस्तृत करने की आवश्यकता उतनी ही अधिक होती है; क्योंकि प्रत्येक सुविधा के बाद लोकतंत्र की शक्ति में वृद्धि होती है और शक्ति वृद्धि के साथ ही उसकी मांग में भी वृद्धि होती है। निर्धारित मान से ऊपर के व्यक्तियों की संख्या जितनी अधिक होती है, उतने ही अधिक अनुपात में निर्धारित मान से नीचे रहने वाले व्यक्तियों की महत्त्वाकांक्षाओं को उत्तेजन मिलता है। अंत में अपवाद नियम बन जाता है, सुविधा के बाद सुविधा चली आती है और जब तक सार्वजनीन मताधिकार नहीं मिल जाता, तब तक उसकी गति को कोई रोक नहीं सकता।

सम्प्रति संयुक्त-राज्य अमरीका में जनता की सार्वभौमता का सिद्धान्त व्यावहारिक विकास की उस चरमसीमा पर पहुँच गया है, जिसकी कल्पना की जा सकती है। वह उन गल्पों के बोझ से मुक्त है, जो अन्य राष्ट्रों में उस पर थोप दी जाती हैं और वे अवसर की आवश्यकता के अनुकूल प्रत्येक सम्भव स्वरूप में प्रकट होती हैं। कभी जनता संस्थाबद्ध होकर कानूनों का निर्माण करती है, जैसा कि एथेन्स में होता था और कभी सार्वजनीन मताधिकार द्वारा निर्वाचित जनता के प्रतिनिधि उसके नाम पर और उसके तात्कालिक पर्यवेक्षण के अन्तर्गत कार्य करते हैं।

कुछ देशों में ऐसी सत्ता का अस्तित्व रहता है, जो कुछ अंशों में सामाजिक संस्था के लिए अपरिचित होते हुए भी उसका परिचालन करती है और किसी निश्चित मार्ग का अनुसरण करने के लिए उसे बाध्य करती है। अन्य देशों में शासन करने वाली सत्ता विभाजित है और अंशतः जनता के वर्गों के भीतर और अंशतः बाहर होती है, परंतु इस प्रकार की कोई भी बात संयुक्त-राज्य अमरीका में देखने को नहीं मिलेगी। वहाँ समाज स्वयं अपने ऊपर अपने लिए शासन करता है। सारी सत्ता उसके अन्तर में केन्द्रित है और शायद ही कोई व्यक्ति ऐसा मिलेगा जो उसे अन्यत्र पाने की बात सोचता हो; इस प्रकार के विचार की अभिव्यक्ति करने का साहस तो वह और भी नहीं कर सकता। राष्ट्र अपने कानूनों के निर्माण में अपने विधायकों की इच्छा द्वारा और उनके परिपालन में शासन-कार्यकारिणी के अभिकर्ताओं की इच्छा द्वारा भाग लेता है। प्रशासन के पास इतना कम और सीमित भाग रह जाता है, अधिकारी अपने मूलस्रोत जनता को तथा जिस सत्ता से उनका उद्भव होता है, उस सत्ता को इतना कम विस्मृत करते हैं कि लगभग यही कहा जा सकता है कि राष्ट्र अपने ऊपर स्वयं शासन करता है।

अमरीकी राजनीतिक जगत में जनता उसी तरह से शासन करती है जैसे परमात्मा इस जगत का परिपालन करता है। वह सारी वस्तुओं का कारण और उद्देश्य है, सारी वस्तुओं का उद्भव वहीं से होता है और समस्त वस्तुओं का समावेश भी उसी में हो जाता है।

४. स्वायत्त शासन

जन-सार्वभौमता का सिद्धान्त आंग्ल-अमरीकियों की समस्त राजनीतिक पद्धति को नियंत्रित करता है। इस पुस्तक के प्रत्येक पृष्ठ में उस सिद्धान्त के नये व्यवहारों पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया जायगा। जिन राष्ट्रों में जनता की सार्वभौमता अंगीकार कर ली गयी है, वहाँ हर व्यक्ति सत्ता में समान रूप से भागीदार होता है और राज्य के शासन में समान रूप से भाग लेता है। तब प्रश्न यह उठता है कि वह सरकार की आज्ञा का पालन क्यों करता है और इस आज्ञापालन की प्राकृतिक सीमाएँ क्या हैं? प्रत्येक व्यक्ति से हमेशा यह आशा रखी जाती है कि वह अपने अन्य किसी भी सह-नागरिक की भाँति पूर्ण जानकारी रखता है तथा वैसा ही गुणी और वैसा ही शक्तिशाली है। वह सरकार की आज्ञा का पालन इसलिए नहीं करता है कि जो सरकार चलाते हैं, उनसे वह हीन है या इसलिए नहीं कि वह अपने पर शासन करने के लिए अन्य व्यक्तियों की अपेक्षा योग्यता में कम है; अपितु इसलिए कि वह अपने साथियों के साथ संघ-बद्ध रहने की उपयोगिता को समझता है और यह जानता है कि एक नियामक शक्ति के बिना संघबद्धता अस्तित्व में नहीं आ सकती। नागरिकों के एक दूसरे के प्रति जितने कर्तव्य होते हैं, उन सबका उसे पालन करना पड़ता है और जिन बातों का स्वयं उससे सम्बन्ध होता है, उनमें वह स्वतंत्र है और केवल ईश्वर के प्रति उत्तरदायी होता है। अतः इस स्वयंसिद्धि की सृष्टि होती है कि हर व्यक्ति अपने व्यक्तिगत हित का सर्वश्रेष्ठ और एकमात्र निर्णायक होता है और समाज को किसी मनुष्य के कार्यों का नियंत्रण करने का अधिकार नहीं है, जब तक सामान्य हित पर उन कार्यों का कोई प्रतिकूल प्रभाव न पड़ता हो या जब तक कि सामान्य हित के लिए उसकी सहायता की आवश्यकता न हो।

जाता है, तो नगर-प्रशासन को उसे अपने यहाँ लागू करना ही पड़ता है। यदि सार्वजनिक शिक्षण की कोई सामान्य पद्धति लागू की जाती है, तो प्रत्येक नगर-प्रशासन कानून के अनुसार स्कूल खोलने के लिए बाध्य होता है। जब मैं संयुक्तराज्य अमरीका में कानून के प्रशासन के विषय पर प्रकाश डालूँगा, तब मैं बताऊँगा कि कैसे और किन उपायों से नगर-प्रशासन इन विभिन्न परिस्थितियों में आज्ञा मानने के लिए बाधित होते हैं। यहाँ मैं केवल उस बाध्यता का अस्तित्व दिखा रहा हूँ। यह बाध्यता बड़ी कड़ी होती है, परन्तु राज्य की सरकार उसे केवल सिद्धान्त के रूप में लागू करती है और उसके परिपालन में नगर-प्रशासन अपने समस्त स्वतंत्र अधिकारों को पुनः ग्रहण कर लेते हैं। इस प्रकार राज्यों द्वारा कर-सम्बन्धी निर्णय किया जाता है, किन्तु नगर-प्रशासन द्वारा उन्हें लागू किया जाता है और उनका संग्रह किया जाता है। राज्य द्वारा स्कूल की स्थापना करना अनिवार्य करार दिया जाता है, परन्तु नगर-प्रशासन उसका निर्माण करते हैं, उसका व्यय उठाते हैं और उसकी देखरेख करते हैं। फ्रांस में राज्य-संग्रहकर्ता स्थानीय कर वसूल करते हैं; अमरीका में नगर-प्रशासन के संग्रहकर्ता राज्य के करों को वसूल करते हैं। इस प्रकार फ्रांस की सरकार अपने एजेंटों को 'कम्यून' को सौंपती है और अमरीका में नगर-प्रशासन अपने एजेंटों को सरकार को सौंपते हैं। केवल इसीसे पता चल जाता है कि दोनों राष्ट्रों में कितनी व्यापक विभिन्नता है

न्यूइंग्लैंड के नगर-प्रशासनों की भावना

अमरीका में न केवल म्युनिसिपल संस्थाओं का अस्तित्व है, अपितु उन्हें नगर की भावना से जीवित रखा जाता है और सहायता प्रदान की जाती है। न्यूइंग्लैंड के नगर-प्रशासन के पास दो सुविधाएँ हैं, जो मानवजाति की अभिरुचि को प्रबलरूप से जाग्रत करती हैं — वे हैं स्वाधीनता और अधिकार। निश्चय ही उसका क्षेत्र सीमित है, परन्तु उस क्षेत्र के भीतर उसके कार्य असीमित हैं। केवल यह स्वतंत्रता ही उन्हें यथार्थ महत्व प्रदान करती है, जो महत्ता उन्हें अपने विस्तार और जनसंख्या से भी प्राप्त नहीं हो सकती।

यह बात भी ध्यान में रहनी चाहिए कि मनुष्यों का प्रेम सामान्यतः शक्ति की ओर प्रवृत्त होता है। विजित राष्ट्र में देशभक्ति स्थिर नहीं रहती। न्यूइंग्लैण्ड का निवासी अपने नगर-प्रशासन से जो प्रेम रखता है, वह इसलिए नहीं कि उसका वहाँ जन्म हुआ है, परन्तु इसलिए कि नगर एक स्वतंत्र और शक्तिशाली समाज है, जिसका वह सदस्य है और जो उस सावधानी का अधिकारी है, जो उसके प्रबन्ध

में बरती जाती है। यूरोप में सत्तारूढ़ व्यक्ति स्थानीय लोकभावना के अभाव पर निरन्तर खेद प्रकट करते हैं। प्रत्येक व्यक्ति इस बात से सहमत है कि व्यवस्था और शान्ति के लिए इससे बढ़कर कोई निश्चित 'गारंटी' नहीं है। फिर भी इस भावना को उत्पन्न करने जैसा कठिन कार्य कोई नहीं है। यदि म्युनिसिपल संस्थाओं को शक्तिशाली और स्वतंत्र बना दिया जाय, तो यह भय रहता है कि वे बहुत अधिक शक्तिशाली हो जायेंगी और राज्य में आतंक फैला देंगी। तथापि बिना शक्ति और स्वतंत्रता के भी नगर में अच्छी प्रजा हो सकती है, परन्तु वहाँ सक्रिय नागरिकों का अभाव रहेगा। एक दूसरा महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि न्यूइंग्लैंड के नगरों का संगठन इस रूप से हुआ है कि उनसे मानव हृदय के महत्वाकांक्षापूर्ण भावों को जगाये बिना अत्यन्त हार्दिक मानवीय प्रेम जाग्रत होता है। काउंटी के अधिकारियों का चुनाव नहीं होता और उनकी सत्ता बड़ी सीमित रहती है। यहाँ तक कि राज्य भी केवल मध्यम कोटि का समाज है, जिसका शान्त और निम्न कोटि का प्रशासन लोगों में इतना पर्याप्त उत्साह पैदा नहीं करता कि वे अपने घरों के हितों को छोड़कर सार्वजनिक कार्यों के भँवर में कूद पड़ें। जो व्यक्ति संघीय सरकार का संचालन करते हैं, उन्हें वह अधिकार और प्रतिष्ठा प्रदान करती है, परन्तु ऐसे लोगों की संख्या कभी अधिक नहीं हो सकती। प्रेसिडेंट के उच्च पद तक प्रौढ़ता में ही पहुँचा जा सकता है और उच्च श्रेणी के अन्य संघीय अधिकारी प्रायः वे ही लोग होते हैं, जिनके सौभाग्य ने साथ दिया हो या जिन्होंने जीवन के अन्य विशिष्ट क्षेत्र में दक्षता प्राप्त की हो। महत्वाकांक्षापूर्ण व्यक्तियों का इस प्रकार का स्थायी उद्देश्य नहीं हो सकता, परन्तु जीवन के सामान्य सम्बन्धों के मध्यबिंदु पर नगर-प्रशासन सार्वजनिक सम्मान की इच्छा, उत्तेजक अभिरुचि की आवश्यकता और सत्ता तथा लोकप्रियता के स्वाद के लिए एक क्षेत्र का काम करता है और जो उत्कट भावनाएँ सामान्यतः समाज को जकड़े रहती हैं, उन्हें जब घर एवं पारिवारिक क्षेत्र के इतने निकट अभिव्यक्ति का अवसर मिल जाता है, तब उनका स्वरूप परिवर्तित हो जाता है।

सामान्य हित में यथासम्भव अधिकतम व्यक्तियों को रुचि लेने के लिए प्रेरित करने के उद्देश्य से अमरीकी नगरों में अधिकार का वितरण प्रशंसनीय कौशल के साथ किया गया है। मतदाताओं से, जिन्हें समय-समय पर कार्य करने के लिए कहा जाता है, स्वतंत्र रह कर अधिकार का वितरण असंख्य कर्मचारियों और अधिकारियों में किया गया है, जो सभी अपने विभिन्न

क्षेत्रों में उस शक्तिशाली समाज का प्रतिनिधित्व करते हैं, जिसके नाम पर वे कार्य करते हैं। इस प्रकार स्थानीय प्रशासन असंख्य लोगों के लिए निरन्तर लाभ और हित का साधन बना हुआ है।

इतने अधिक नागरिकों में स्थानीय सत्ता का वितरण करने वाली अमरीकी पद्धति नगर-अधिकारियों के कार्यों को बढ़ाने में आगा-पीछा नहीं करती; क्योंकि संयुक्त-राज्य अमरीका में ऐसा विश्वास किया जाता है और वह भी सच्चाई के साथ कि देशभक्ति एक प्रकार की उपासना है, जो कट्टरता से पालन किये जाने पर अधिक परिपुष्ट होती है। इस तरीके से नागरिक स्वशासन की गतिविधि निरन्तर बनी रहती है और कर्तव्य के निष्पादन में या अधिकार के प्रयोग में हमेशा प्रत्यक्षतः दृष्टिगोचर होती है। इस प्रकार समाज में अविराम, किन्तु शान्त गति बनी रहती है, जो बिना किसी हलचल के उसमें चेतना का स्फुरण करती है।

जिस प्रकार एक पर्वतारोही अपनी शिलाओं से चिपटा रहता है, उसी प्रकार अमरीकी स्वयं को अपने छोटे समुदाय के साथ बाँधकर रखता है, क्योंकि उसी में उसे अपने देश के विशिष्ट लक्षणों के दर्शन होते हैं और प्रकृति का बोध होता है।

न्यूइंग्लैंड में नागरिक स्वशासनों का अस्तित्व सामान्यतः मांगलिक है। वह शासन लोगों की रुचि के अनुकूल और उन्हीं की पसन्द का है। पूर्ण शान्ति और व्यापक सुखों से सम्पन्न अमरीका में म्युनिसिपल जीवन सम्बन्धी आन्दोलन बहुत कम होते हैं। स्थानीय कारोबार का संचालन सुगमता से होता है। जनता की राजनीतिक शिक्षा पहले से ही पूरी हो चुकी है, बल्कि यह कहना चाहिए कि यह शिक्षा तभी पूरी हो चुकी थी, जब पहली बार लोगों ने इस भूमि पर पैर रखे थे। न्यूइंग्लैंड में श्रेणीगत भेद की परम्परा नहीं है। समुदाय का कोई भाग अन्य लोगों को दबाने के लिए प्रवृत्त नहीं होता और अन्यायों को, जो एकाकी व्यक्तियों के लिए घातक हो सकते हैं, चारों ओर फैले हुए सामान्य संतोष के बीच भुला दिया जाता है। यदि सरकार के कुछ दोष होते हैं (और निस्सदेह कुछ दोषों को बताना सहज होगा) तो उनकी ओर ध्यान नहीं दिया जाता; क्योंकि सरकार का वस्तुतः निस्सरण उन्हीं से होता है जिन पर वह शासन करती है। वह सरकार अच्छा करे या बुरा, उसके अवगुण इस लिए ढँक जाते हैं, क्योंकि उसके प्रति जनता का अभिभावक जैसा भाव होता है। इसके अतिरिक्त लोगों के पास ऐसी कोई चीज नहीं है, जिससे उस शासन

की तुलना की जा सके। इंग्लैण्ड पहले से ही अनेक उपनिवेशों पर शासन कर चुका था, परन्तु जनता अपने नागरिक प्रशासन में हमेशा सार्वभौम थी। उसका शासन न केवल प्राचीन है, बल्कि आदिकाल की दशा में है।

न्यूइंग्लैण्ड के निवासी को अपने नगर का स्वशासन इसलिए प्रिय है कि वह स्वाधीन और हस्तक्षेपरहित है। शासन-कार्य में उसका यह सहयोग उसके हितों से उसको जकड़ रखता है; उससे प्राप्त सुख-सुविधाओं के कारण उसके प्रति उसका स्नेह बराबर बना रहता है और उसकी इच्छा तथा उसके भावी प्रयत्न नागरिक स्वशासन की भलाई से परिलक्षित होते हैं। वह प्रत्येक स्थानीय घटना में भाग लेता है, इस प्रकार वह अपनी पहुँच के सीमित क्षेत्र में शासन-कला का अभ्यास करता है। वह उन परिस्थितियों में अपने को ढालता है, जिनके बिना स्वाधीनता केवल क्रान्ति द्वारा ही आगे बढ़ सकती है; वह उनकी भावनाओं को हृदयंगम करता है; वह अपने भीतर व्यवस्था के प्रति अभिरुचि जाग्रत करता है; वह शक्ति-संतुलन को समझता है और अपने कर्तव्यों की प्रकृति और अपने अधिकारों के विस्तार के सम्बन्ध में स्पष्ट और व्यावहारिक धारणाएँ ग्रहण करता है ......।

५. अमरीका में विकेन्द्रीकरण और उसके प्रभाव

अमरीका में किसी यूरोपीय भ्रमणार्थी का ध्यान सबसे पहले इस बात की ओर जाता है कि जिसे हम सरकार या प्रशासन कहते हैं, उसका वहाँ अभाव है। अमरीका में लिखित कानून मौजूद है और हर व्यक्ति उनका पालन होते देखता है, किन्तु यद्यपि प्रत्येक वस्तु नियमित रूप से गतिशील है, उसका नियामक कहीं भी नजर नहीं आता। सामाजिक यंत्र को नियंत्रित रखने वाले हाथ अदृश्य ही रहते हैं। इतना होने पर भी अपने विचारों को अभिव्यक्त करने के लिए जिस प्रकार सभी लोगों को व्याकरण के कुछ स्वरूपों का, जो मानवीय भाषा के मूलाधार हैं, आश्रय ग्रहण करना पड़ता है, उसी प्रकार समस्त समुदायों को अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिए किसी हद तक सत्ता स्वीकार कर लेनी पड़ती है। ऐसा न होने पर वे अराजकता के शिकार हो जाते हैं। यह सत्ता विभिन्न रूपों में विभाजित हो सकती है, परन्तु हर हालत में कहीं-न-कहीं उसका अस्तित्व रहना ही चाहिए।

किसी राष्ट्र में सत्ता की शक्ति को कम करने के दो तरीके हैं। प्रथम तरीका यह है कि कतिपय निश्चित परिस्थितियों के अन्तर्गत समाज को अपनी सुरक्षा करने से रोक कर या मनाकर सर्वोच्च सत्ता को उसके मूल रूप में ही निर्बल बना दिया जाय। इस प्रकार सत्ता को निर्बल बनाकर स्वतंत्रता की स्थापना करना यूरोपीय ढंग है।

सत्ता के प्रभावों को घटाने के दूसरे तरीके में न तो समाज को उसके कतिपय अधिकारों से वंचित किया जाता है और न उसकी सुरक्षा को पंगु बनाया जाता है, प्रत्युत विभिन्न व्यक्तियों को उसके अधिकारों का प्रयोग करने का अधिकार प्रदान किया जाता है; अधिकारियों की संख्या बढ़ा दी जाती है और प्रत्येक अधिकारी को उतनी सत्ता सौंप दी जाती है, जो उसके कर्तव्यपालन के लिए आवश्यक होती है। कई ऐसे राष्ट्र हो सकते हैं, जहाँ सामाजिक सत्ता का इस प्रकार का वितरण अराजकता उत्पन्न कर सकता है, परन्तु वह स्वयं अराजकतापूर्ण नहीं है। वास्तव में इस प्रकार विभाजित सत्ता की अदम्यता कम हो जाती है और वह कम खतरनाक हो जाती है, परन्तु उसका नाश नहीं होता।

संयुक्त राज्य अमरीका की क्रान्ति स्वतंत्रता के प्रति एक परिपक्व एवं विचारपूर्ण अभिमान्यता का परिणाम थी, न कि उसके लिए किसी अस्पष्ट और गलत ढंग से की गयी किसी लालसा का परिणाम। अराजकता के उग्र मनोविकारों के साथ उसका कोई सम्बन्ध नहीं था, परन्तु इसके विपरीत व्यवस्था और कानून के प्रेम से उसका मार्ग प्रशस्त रहा।

संयुक्त-राज्य अमरीका में यह धारणा कभी नहीं रही कि किसी स्वतंत्र देश के नागरिक को स्वेच्छापूर्वक कोई भी कार्य करने का अधिकार होता है। इसके विपरीत वहाँ उस पर अन्य स्थानों की अपेक्षा और अधिक सामाजिक प्रतिबन्ध लगाये गये। सिद्धान्त पर कुठाराघात करने अथवा समाज के अधिकारों का विरोध करने की धारणा को कभी मान्य नहीं किया गया, किन्तु समाज के अधिकारों का प्रयोग विभाजित था, ताकि अधिकार शक्तिशाली और अधिकारी नगण्य रह सकें और समाज एक साथ ही नियमबद्ध और स्वतंत्र, दोनों रह सके। संसार के किसी भी देश में कानून की ऐसी परिपूर्ण परिभाषा नहीं की गयी, जैसी कि अमरीका में और न किसी देश में उसका प्रयोग करने का अधिकार इतने अधिक लोगों के हाथों में सौंपा गया। प्रशासकीय सत्ता अपने विधान के अनुसार न तो केन्द्रित है और न आनुवंशिक। यही कारण है कि यह अदृश्य

रही है। सत्ता का अस्तित्व तो है, परन्तु उसका प्रतिनिधित्व कहीं भी दिखाई नहीं पड़ता।

केन्द्रीयकरण प्रतिदिन और सामान्य रूप से व्यवहृत होने वाला एक शब्द है जिसका किसी विशेष अर्थ में प्रयोग नहीं होता। फिर भी केन्द्रीयकरण के स्पष्टतः दो स्वरूप हैं। इन दोनों के भेद को सही-सही जान लेना आवश्यक है।

कुछ हित ऐसे होते हैं जो राष्ट्र के सभी भागों के लिए सामान्य होते हैं, जैसे उसके सामान्य कानूनों का अभिनिर्धारण और उसके विदेशी सम्बन्धों की देखभाल। कुछ हित ऐसे भी होते हैं जो राष्ट्र के कुछ भागों के लिए ही विशिष्ट होते हैं; उदाहरणार्थ अनेक नगरों का व्यापार। जब पूर्वोक्त या सामान्य हितों का निर्देशन करने वाली सत्ता एक स्थान पर या व्यक्तियों के एक समूह में ही केन्द्रित हो जाय तो उसे हम केन्द्रित सरकार कहेंगे। इसी तरीके से दूसरे या स्थानीय हितों का निर्देशन एक ही स्थान पर केन्द्रित हो तो उसे हम केन्द्रित प्रशासन कहेंगे।

ये दोनों प्रकार के केन्द्रीयकरण कुछ बातों में समान हैं, परन्तु प्रत्येक के क्षेत्र के भीतर अधिक विशिष्ट रूप से आने वाले तथ्यों का वर्गीकरण किया जाय तो दोनों का भेद स्पष्ट ज्ञात हो जायगा।

यह बात प्रत्यक्ष है कि जब केन्द्रित सरकार केन्द्रित प्रशासन से संयुक्त हो जाती है, तो उसके हाथों में अत्यधिक शक्ति आ जाती है। ऐसा हो जाने पर वह मनुष्यों को अपनी निजी इच्छा का स्वभावतः और पूर्णरूपेण परित्याग कर देने का तथा न केवल एक बार और एक बात में, प्रत्युत हर बात में और हर समय आत्मसमर्पण करने का अभ्यस्त बना देती है। अतः शक्ति का यह संयुक्त स्वरूप न केवल उन्हें अनिवार्यतः दबा देता है, परन्तु वह उनकी साधारण आदतों को भी प्रभावित करता है; उन्हें विलग कर देता है और फिर प्रत्येक को अलग-अलग रूप से प्रभावित करता है।

ये दोनों प्रकार के केन्द्रीयकरण एक दूसरे की सहायता करते हैं और एक दूसरे को आकर्षित करते हैं, परन्तु यह मानना गलत होगा कि ये दोनों अविभाज्य हैं। फ्रांस में लुई चौदहवें की जैसी सरकार थी, उससे अधिक परिपूर्ण केन्द्रित सरकार की कल्पना करना असम्भव है। इस सरकार में जो व्यक्ति कानूनों का निर्माता था, वही उसकी व्याख्या करनेवाला भी था। वही घर और बाहर फ्रांस का प्रतिनिधि था। वह स्वयं अपने को राज्य का प्रतिरूप कहा करता

था और उसका यह कहना ठीक ही था, फिर भी लुई चौदहवें के समय का प्रशासन वर्तमान समय की अपेक्षा बहुत ही कम केन्द्रित था।

इंग्लैंड में सरकार का केन्द्रीकरण अत्यन्त परिपूर्णता के साथ सम्पन्न हुआ है। राज्य के पास एक पुरुष की संयोजित शक्ति है और उसकी इच्छा विशाल जन-समूह को क्रियाशील बना देती है और जहाँ इच्छा होती है, उधर ही वह अपनी सारी शक्ति को लगा देता है। परन्तु इंग्लैंड ने, जिसने गत पचास वर्षों में इतने महान कार्य किये हैं, अपने प्रशासन का केन्द्रीयकरण कभी नहीं किया। वास्तव में मैं इस बात की कल्पना भी नहीं कर सकता कि कोई राष्ट्र सरकार का शक्तिशाली रूप से केन्द्रीयकरण किये बिना जीवित रह सकता है और समृद्धिशाली बन सकता है। परन्तु मेरी धारणा है कि जिन राष्ट्रों में प्रशासन केन्द्रित होता है, वहाँ वह स्थानीय भावनाओं का निरन्तर ह्रास करता रहता है और इस प्रकार उन राष्ट्रों की शक्ति को क्षीण कर देता है। इसके अतिरिक्त वह दूसरा कुछ कर ही नहीं सकता। यद्यपि इस प्रकार का प्रशासन किसी खास अवसर पर किसी खास विषय के लिए राष्ट्र के सभी उपलब्ध साधनों को एक साथ जमा कर सकता है; परन्तु वह उन साधनों की पुनरावृत्ति के लिए घातक सिद्ध होता है। वह किसी संघर्ष की घड़ी में विजय को सुनिश्चित बना सकता है, परन्तु धीरे-धीरे वह शक्ति के स्नायुओं को निर्बल कर देता है। वह मनुष्य की अस्थायी महानता में प्रशंसनीय सहायता प्रदान कर सकता है, परन्तु किसी राष्ट्र की स्थायी समृद्धि में सहायक नहीं हो सकता।

इस बात को ध्यान में रखिए कि जब कभी यह कहा जाता है कि केन्द्रित न होने के कारण राज्य कोई कार्य सम्पन्न नहीं कर सकता तो इसका अर्थ यह होता है कि सरकार का केन्द्रीयकरण नहीं हुआ है। बारम्बार कहा जाता है और हम भी इस बात को स्वीकार कर लेते हैं कि जर्मनी का साम्राज्य अपनी समस्त शक्तियों को एक साथ काम में नहीं ला सका। इसका कारण यह था कि राज्य अपने सामान्य कानूनों का पालन करा सकने में कभी समर्थ नहीं हुआ। इस महान संस्था के अनेक सदस्य हमेशा सामान्य सत्ता के प्रतिनिधियों को सहयोग न देने के अधिकार का दावा करते थे अथवा इसके लिए कोई-न-कोई उपाय ढूँढ़ निकालते थे; यहाँ तक कि साधारण जनता से सम्बन्धित मसलों पर भी वे ऐसा करते थे। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि वहाँ सरकार का कोई केन्द्रीयकरण नहीं था। यही बात मध्यकालीन युग के लिए भी लागू होती है। सामन्ती समाज के सभी दुःखों का मूल यह था कि न केवल प्रशासन

का, अपितु सरकार का नियंत्रण हजारों लोगों के बीच में हजारों तरीकों से बँटा हुआ था। केन्द्रित सरकार के अभाव ने यूरोप के राष्ट्रों को किसी भी सीधे मार्ग पर सामर्थ्य के साथ आगे बढ़ने से रोक दिया।

हम यह दिखा चुके हैं कि संयुक्त-राज्य अमरीका में न तो कोई केन्द्रित प्रशासन है और न सार्वजनिक अधिकारियों की आनुवांशिकता। अमरीका में स्थानीय सत्ता को इतना आगे बढ़ाया गया, जितना यूरोप का कोई भी राष्ट्र बिना बड़ी असुविधाओं के नहीं कर सकता। इससे अमरीका में कुछ हानिकारक परिणाम भी हुए हैं। परन्तु वहाँ सरकार का केन्द्रीयकरण परिपूर्ण रूप से हुआ है और यह आसानी से सिद्ध किया जा सकता है कि राष्ट्रीय शक्ति का केन्द्रीयकरण वहाँ इतना अधिक है कि यूरोप के प्राचीन राष्ट्रों में ऐसा कभी नहीं हुआ। वहाँ न केवल प्रत्येक राज्य में एक ही विधानसभा है, न केवल वहाँ राजनीतिक सत्ता का एक ही स्रोत है, प्रत्युत जिलों और कांउटियों में अनेक विधानसभाओं की संख्या में सामान्यतः वृद्धि नहीं की गयी है, जिससे कहीं वे अपने प्रशासकीय कर्तव्यों का परित्याग कर सरकार में हस्तक्षेप न करने लगें। अमरीका में प्रत्येक राज्य का विधान-मण्डल सर्वोच्च है और कोई भी वस्तु – न तो विशेषाधिकार और न स्थानीय स्वतंत्रता, न व्यक्तिगत प्रभाव और न तर्क का साम्राज्य ही उसकी सत्ता के मार्ग में बाधक बन सकता है; क्योंकि यह सत्ता उस बहुमत का प्रतिनिधित्व करती है, जो विवेक का एकमात्र अधिकारी होने का दावा करता है। अतः विधानसभा का संकल्प ही उसके कार्यों की एक मात्र सीमा होती है। इसके सान्निध्य में और इसके तात्कालिक नियंत्रण के अन्तर्गत अधिशासित सत्ता का प्रतिनिधि रहता है। इसका कर्तव्य सर्वोच्च सत्ता द्वारा अनियंत्रितों को आज्ञा पालन के लिए बाध्य करना होता है। निर्बलता का एक मात्र लक्षण सरकार के कार्य की कतिपय सूक्ष्मताओं में निहित रहता है। अमरीकी गणतन्त्रों के पास किसी क्षुब्ध अल्पसंख्यक समुदाय को दबाने के लिए सेनाएँ नहीं हैं, परन्तु चूँकि अब तक किसी भी अल्पसंख्यक समुदाय को ऐसा नहीं दबाया गया कि वह खुले रूप से लड़ाई की घोषणा करने के लिए बाध्य हो, इसलिए फौज रखने की कोई आवश्यकता ही महसूस नहीं हुई। राज्य प्रायः नगर या जिले के अधिकारियों की नियुक्ति करता है। इस प्रकार, उदाहरणार्थ, न्यूइंग्लैंड में नगर आय-कर अधिकारी करों की दर निर्धारित करता है, नगर-संग्राहक उनको वसूल करता है और नगर कोषाध्यक्ष धनराशि को सार्वजनिक खजाने

में जमा करा देता है तथा जो विवाद उत्पन्न होते हैं उन्हें साधारण न्यायालयों में पेश किया जाता है। कर-संग्रह की यह पद्धति धीमी और साथ-ही-साथ असुविधाजनक भी है। ऐसी पद्धति इस सरकार के लिए, जिसकी खर्च की माँगें बड़ी है, हमेशा के लिए बाधक सिद्ध होगी। सरकार के अस्तित्व पर जिन बातों का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है, उन बातों की देखभाल ऐसे ही अधिकारियों द्वारा होनी उचित है, जिनकी नियुक्ति स्वयं सरकार करे, जिन्हें वह अपनी इच्छा के अनुसार हटा सके और जो शीघ्रतापूर्वक कार्य करने के अभ्यस्त हों; परन्तु अमरीका में जिस प्रकार की केन्द्रीय सरकार का गठन हुआ है, उसके लिए अपनी आवश्यकताओं के अनुसार कार्य करने को अधिक उत्साहपूर्ण एवं प्रभावशाली पद्धतियों को प्रचलित करना सदा सरल रहेगा।

ऐसी स्थिति में केन्द्रित सरकार का अभाव नयी दुनिया के गणतन्त्रों के विनाश का कारण नहीं होगा, जैसी कि बहुधा आशंका प्रकट की जाती है, क्योंकि इसके बाद मैं अब यह सिद्ध करूँगा कि अमरीका की राज्य-सरकारें पर्याप्त केन्द्रित न होते हुए भी बहुत केन्द्रित हैं। विधान-सभाएँ प्रति दिन सरकार की सत्ता का अतिक्रमण करती हैं और फ्रांस की परम्परा के समान ही उनकी प्रवृत्ति इस सत्ता को पूर्णतः अपने ही अधिकार में कर लेने की है। इस प्रकार केन्द्रित सामाजिक शक्ति निरन्तर भिन्न-भिन्न लोगों के हाथों में बदलती रहती है; क्योंकि वह जनता की शक्ति पर आश्रित है। वह प्रायः अपनी शक्ति की चैतन्यता में बुद्धिमत्ता और दूरदर्शिता के नियमों को भूल जाती है। परिणामस्वरूप उसको खतरा पैदा हो जाता है, सम्भवतया उसकी क्षीणता से नहीं, उसकी शक्ति से ही उसका अन्तिम विनाश होगा।

विकेन्द्रित प्रशासन की पद्धति अमरीका में अनेक विभिन्न प्रभावों को जन्म देती है। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि अमरीकियों ने सरकार के प्रशासन को अलग हटा कर, श्रेष्ठ नीति की सीमाओं का अतिक्रमण कर दिया है; क्योंकि उनके लिए गौण कार्यों में भी व्यवस्था राष्ट्रीय महत्व की वस्तु होती है। चूँकि राज्य अपने क्षेत्र के विभिन्न स्थानों पर अपने निजी प्रशासकीय अधिकारी नहीं रखता, जिनमें वह एक से भाव जगा सके, इसलिए वह शायद ही कभी पुलिस-सम्बन्धी सामान्य नियमों को जारी करने का प्रयत्न करता है। ऐसे नियमों का अभाव बहुत ही खटकता है और यूरोपीय लोगों ने निरन्तर उस अभाव का अनुभव किया है। धरातल पर दिखायी

पड़नेवाली अव्यवस्था को देखकर सर्वप्रथम उसकी ऐसी धारणा बन जाती है कि समाज जैसे अराजकता की स्थिति में है और जब तक वह विषय की गहराई मे नहीं जाता, तब तक उसे अपनी गलती भी दिखाई नहीं पड़ती। कुछ कार्य सारे राज्य के लिए महत्वपूर्ण होते हैं, परन्तु उनका कार्यान्वय इसलिए नहीं किया जा सकता कि उनका निर्देश करने के लिए कोई राज्य-प्रशासन नही है। उन्हें निर्वाचित और अस्थायी अभिकर्ताओं की देखरेख के नीचे, नगरों या जिलों द्वारा सम्पन्न किये जाने के लिए छोड़ दिया जाता है। इससे कुछ परिणाम नही निकलता या कम-से-कम कोई स्थायी लाभ नहीं होता।

यूरोप में केन्द्रीयकरण के समर्थक बहुधा यह मत व्यक्त करते है कि प्रत्येक स्थानीय क्षेत्र के प्रकार्यों का प्रशासन सरकार स्वयं वहाँ के नागरिकों की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह से कर सकती है। यह बात तब सही हो सकती है जब केन्द्रीय प्रशासन विवेकशील होता है और स्थानीय संस्थाएँ अनभिज्ञ रहती हैं, जब वह सतर्क होता है और वे सुस्त रहती हैं, जब वह कार्य करने का और वे आज्ञा पालन करने की अभ्यस्त रहती है। वास्तव में यह प्रत्यक्ष है कि केन्द्रीयकरण की वृद्धि के साथ यह दुहरी प्रवृत्ति भी बढ़नी चाहिए और एक की तत्परता तथा अन्यों की अयोग्यता अधिक-से-अधिक उभर कर सामने आनी चाहिए। परन्तु जब अमरीकियों की तरह ही जनता विवेकशील होती है, अपने हितों के प्रति जागरूक होती है और अमरीकियों के समान ही उन पर विचार करने की अभ्यस्त होती है, तब इस प्रकार की बात होगी, ऐसा मैं नहीं मानता। इसके विपरीत मैं ऐसा मानने के लिए बाध्य हूँ कि इसी स्थिति में नागरिकों की सामूहिक शक्ति हमेशा जनकल्याण के कार्यों को सरकार की सत्ता की अपेक्षा अधिक सफलता के साथ पूरा कर सकेगी। मैं जानता हूँ की सुप्त जनता को जाग्रत करने के लिए निश्चित साधनों को ढूँढ निकालना और जो उत्साह और ज्ञान उसमें नहीं है, उन्हें भर देना, बड़ा ही कठिन कार्य है। मैं यह भी अच्छी तरह जानता हूँ कि लोगो को अपने ही कार्यों में व्यस्त रहने के लिए राजी करना एक बड़ा ही विकट कार्य है। उनमें अपने सामान्य घर की मरम्मत करने के लिए रुचि जाग्रत करने की अपेक्षा अदालतों के शिष्टाचार की सूक्ष्मताओं के प्रति दिलचस्पी पैदा करना हमेशा आसान रहेगा। परन्तु जब कभी कोई केन्द्रीय प्रशासन अत्यधिक रुचि रखने वाले लोगों की इच्छा के पूर्णतः विरुद्ध कार्य करने की कोशिश करता है

तो मेरा विश्वास है कि या तो वह गलत रास्ते पर है या गलत रास्ते पर ले जाने की इच्छा रखता है। केन्द्रीय शासन चाहे जितना विवेकशील और कुशल हो, वह किसी बड़े राष्ट्र के जीवन की सारी विशेषताओं को अपने अन्दर समाविष्ट नहीं कर सकता। इस प्रकार की सावधानी मनुष्य की शक्तियों के परे है और जब वह बिना किसी सहायता के अनेक विकट स्रोतों का निर्माण करने और उन्हें प्रवाहित करने का प्रयत्न करता है, तो उसका बहुत ही अपूर्ण परिणाम होगा या उसकी शक्ति निष्फल और निरर्थक प्रयत्नों में नष्ट हो जायगी।

मनुष्यों की बाह्य क्रियाओं को एक निश्चित एकरूपता के अधीनस्थ कर केन्द्रीयकरण वास्तव में बड़ी आसानी से सफलता प्राप्त कर लेता है। अंत में हम इस एकरूपता से स्वयं उसी के निमित्त प्रेम करने लगते हैं और उन वस्तुओं को भूल जाते हैं, जिनके सम्बन्ध में यह एकरूपता काम में लायी जाती है, यह प्रेम उन भक्तों के प्रेम की तरह है, जो मूर्ति की पूजा करते हैं और मूर्ति जिस देवता का प्रतिनिधित्व करती है, उसे भूल जाते हैं। केन्द्रीयकरण बिना किसी कठिनाई के दैनिक कारोबार में सराहनीय नियमितता ला देता है। सामाजिक पुलिस की व्यवस्था बड़ी निपुणता से कर देता है, छोटी अव्यवस्थाओं और तुच्छ अपराधों को दबा देता है और सुधार तथा पतन दोनों से समानरूप से बचाये रख कर समाज को, जिस स्थिति में वह है, उसी में बनाये रखता है और प्रकार्यों के संचालन में उत्साहविहीन नियमितता बनाये रखता है। ऐसी स्थिति को प्रशासन के मुखिया लोग सुव्यवस्था और सार्वजनिक शान्ति पुकारने के आदी हो गये हैं। संक्षेप में ऐसा कह सकते हैं कि वह केवल रोकथाम में आगे है, क्रियाशीलता में नहीं। जब समाज विशालरूप से आगे बढ़ता या अपने मार्ग पर तेजी के साथ कदम बढ़ाता है, तो केन्द्रीयकरण की शक्ति उसका साथ छोड़ देती है। यदि एक बार उसके कार्यों को आगे बढ़ाने के लिए गैर-सरकारी नागरिकों की आवश्यकता पड़ जाती है तो उस समय उसकी नपुंसकता का भेद खुल जाता है। अपनी दयनीय दशा में नागरिकों से सहायता की अभ्यर्थना करते हुए भी केन्द्रीय सत्ता उनसे यही कहती है, "तुमको वही करना पड़ेगा, जैसा मैं चाहती हूं। उतना ही करना होगा, जितना मैं चाहती हूँ और उसी ढंग से करना होगा, जैसा कि मैं चाहती हूँ और पद्धति के मार्गदर्शन की इच्छा न रखते हुए तुम्हें सारी बातों का संचालन करना पड़ेगा, तुम्हें अन्धकार में रह कर काम

करना पड़ेगा और उसके बाद मेरे कार्य को उसके परिणामों से तोल सकोगे।" ये वे शर्तें नहीं हैं जिन पर मनुष्य की इच्छा-शक्ति का सहकार्य प्राप्त किया जा सके। मानवीय इच्छा का अपना मार्ग चुनने के लिए स्वतंत्र और अपने कार्यों के लिए उत्तरदायी रहना आवश्यक है अथवा (जैसा कि मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति है) नागरिक के लिए उन योजनाओं में, जिनसे उसका परिचय नहीं है, परावलम्बी कार्याधिकारी होने के स्थान पर निष्क्रिय दर्शक के रूप में रहना ज्यादा अच्छा होगा।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि फ्रांस के प्रत्येक नागरिक के आचरण को नियंत्रित करनेवाला समान नियमों का अभाव संयुक्त-राज्य अमरीका में बहुधा महसूस नहीं होता। सामाजिक उदासीनता और उपेक्षा के निम्न कोटि के उदाहरण देखने को मिलते हैं और समय-समय पर आसपास फैली हुई सभ्यता के ठीक विपरीत अपमानजनक कलंक भी देखने को मिल जाते है। उपयोगी उपक्रमों को, जिनकी सफलता के लिए निरन्तर ध्यान रखने की अवश्यकता होती है और जिनको पूरा करने के लिए अथक परिश्रम करना पड़ता है, बहुधा ऐसे ही छोड़ दिया जाता है। इसका कारण यह है कि अमरीका तथा अन्य देशों में भी लोग आकस्मिक आवेशों और क्षणिक प्रयासों से ही आगे बढ़ते हैं। यूरोप का निवासी इस बात का अभ्यस्त है कि वह जो भी कार्य हाथ में लेगा, उसमें हस्तक्षेप करनेवाला कर्मचारी भी उसी के साथ रहेगा। इस कारण वह नगर-सम्बन्धी प्रशासन की जटिल प्रक्रिया को बड़ी कठिनाई से समझ पाता है। सामान्यतः यह कहा जा सकता है कि अमरीका में पुलिस-व्यवस्था की बारीकियों पर, जो जीवन को सुगम और आरामदेह बना देती है, कम ध्यान दिया गया है, परन्तु समाज में मनुष्य के लिए जो संरक्षण आवश्यक होते है, वे वहाँ भी अन्य स्थानों की भाँति ही शक्तिशाली हैं। अमरीका में प्रशासन का संचालन करने वाली शक्ति बहुत ही कम नियमित, कम विवेकशील और कम निपुण है; परन्तु यूरोप की अपेक्षा हजार गुना महान है। संसार के किसी भी देश में सामान्य हित के लिए नागरिक इतना श्रम नहीं करते। मैंने ऐसे लोगों को कहीं नहीं देखा है, जिन्होंने इतनी विविध और प्रभावोत्पादक पाठशालाओं की और नागरिकों की आवश्यकताओं के अनुकूल ऐसे श्रेष्ठ सार्वजनिक पूजा स्थानों की स्थापना की हो या जिन्होंने अपनी सड़कों की ऐसी अच्छी मरम्मत की हो। एकरूपता अथवा आकृति का स्थायित्व, छोटी-छोटी बातों का सूक्ष्म विन्यास और प्रशासकीय पद्धति की परिपूर्णता संयुक्त-राज्य अमरीका में नहीं मिलेगी, परन्तु

हमें वहाँ एक ऐसी शक्ति देखने को मिलेगी जो किंचित् प्रचण्ड होते हुए भी कम-से-कम भव्य है तथा जो वास्तव में दुर्घटनाओं से परिपूर्ण होते हुए भी संजीवन शक्ति और प्रयत्नों से ओतप्रोत है।

उदाहरण के लिए यदि यह मान लिया जाय कि संयुक्त-राज्य अमरीका के गाँवों और जिलों का प्रशासन, उन्हीं में से चुने गये अधिकारियों द्वारा जैसा होता है, उससे अधिक उपयोगी किसी केन्द्रीय सत्ता द्वारा होगा, जिसका अनुभव उन्हें अभी तक नहीं हुआ है और तर्क के लिए यदि यह स्वीकार कर लिया जाय कि यदि सारा प्रशासन किसी एक व्यक्ति के हाथ में केन्द्रित होगा तो अमरीका में अधिक सुरक्षा होगी और वहाँ समाज के साधनों का उत्तम रीति से उपयोग किया जायगा, तो भी विकेन्द्रीकरण-पद्धति से जो लाभ अमरीकियों को मिलते हैं, वे मुझे इस विरोधी योजना की तुलना में उसे अधिमान्यता देने के लिए आकर्षित करेंगे। यदि कोई सत्ता मेरी स्वाधीनता और मेरे जीवन की एकमात्र स्वामिनी है और यदि वह मेरी गतिविधियों एवं जीवन पर इस प्रकार एकाधिपत्य स्थापित कर लेती है कि उसका ह्रास होने पर उसके आसपास की प्रत्येक वस्तु का ह्रास हो जाय, उसके निद्रित अर्थात् निष्क्रिय होने पर प्रत्येक वस्तु का निद्रित अर्थात् निष्क्रिय होना आवश्यक हो जाय और उसका नाश होने पर स्वयं राज्य का ही नाश हो जाय, तो अन्ततः मुझे इस बात से तनिक भी लाभ नहीं होगा कि एक जागरूक सत्ता मेरी प्रसन्नताओं की शान्ति की सदा रक्षा करती है और मेरी परवाह अथवा चिन्ता के बिना ही मेरे मार्ग के समस्त खतरों को निरन्तर दूर करती रहती है।

यूरोप में ऐसे देश है, जहाँ के निवासी अपने को प्रवासी के तौर ही मानते हैं और जहाँ वे रहते हैं, वहाँ की घटनाओं के प्रति उदासीन रहते हैं। वहाँ के निवासियों की सहमति अथवा जानकारी के बिना ही (जब तक कि संयोग ही उन्हें घटना की जानकारी न करा दे) बड़े-बड़े परिवर्तन कर दिये जाते हैं। इतना ही नहीं, इससे भी अधिक बात यह होती है कि ऐसे स्थानों का निवासी अपने गाँव की हालत, अपनी गली की पुलिस, चर्च की मरम्मत और पादरी के मकान से कोई सरोकार नहीं रखता; क्योंकि वह समझता है जैसे इन वस्तुओं से उसका कोई सम्बन्ध ही नहीं है। वह इन सबको किसी शक्तिशाली अपरिचित व्यक्ति की सम्पत्ति मानता है, जिसे वह सरकार कहता है। इन सब वस्तुओं से उसका सम्बन्ध केवल जीवन साहचर्य का है। इनके प्रति उसमें न तो कोई स्वामित्व की भावना होती है और न सुधार का कोई विचार ही।

अपने से सम्बन्धित विषयों में उसकी रुचि इतनी कम है कि यदि उसकी या उसके बच्चे की सुरक्षा खतरे में पड़ जाती है तो उस खतरे से बचने का प्रयत्न करने के स्थान पर हाथ बाँध वह तब तक खड़ा रहेगा, जब तक सारा राष्ट्र उसकी सहायता के लिए उमड़ न पड़े। अन्य किसी भी व्यक्ति की अपेक्षा यह व्यक्ति, जिसने अपनी स्वतंत्र इच्छा-शक्ति को पूर्ण रूप से बलिदान कर दिया है, अनुशासन से प्रेम नहीं करता। यह सही है कि छोटे-से-छोटे अधिकारी के सामने वह भयभीत रहता है, परन्तु ज्योंही कानून की श्रेष्ठ शक्ति हटा ली जाती है, त्योंही वह किसी विजित शत्रु के भाव से कानून की अवहेलना करने लगता है। वह निरन्तर दासता और उच्छृंखलता के बीच झूलता रहता है।

जब किसी राष्ट्र में यह स्थिति उत्पन्न हो जाय तो उसे या तो अपने रीति-रिवाजों और कानूनों को बदल देना चाहिए या उसे समाप्त हो जाना चाहिए। कारण यह है कि उस हालत में जन-सामर्थ्य का साधन समाप्त-सा हो जाता है और उस राष्ट्र में यद्यपि प्रजा रह सकती है, परन्तु वहाँ नागरिक नहीं हो सकते। इस प्रकार के जन-समुदाय विदेशी आक्रमणों के सहज शिकार हो जाते हैं और यदि वे रंगमंच से पूर्णतया अदृश्य नहीं होते तो केवल इसलिए कि वे अपने समान या अपने से हीन राष्ट्रों से घिरे रहते हैं, और अभी तक उनमें देशभक्ति के कुछ मनोभाव और अपने देश के प्रति अनैच्छिक गौरव या भूतकालीन प्रसिद्धि की कोई अस्पष्ट स्मृति शेष है, जो उनमें आत्मरक्षा की भावना जगाने के लिए पर्याप्त है।

और न कुछ जातियों द्वारा, किसी देश की रक्षा के लिए, जहाँ वे विदेशी की तरह रहे थे, किये गये अथक प्रयत्नों को इस प्रकार की पद्धति के पक्ष में उदाहरणस्वरूप माना जा सकता है, क्योंकि ऐसे उदाहरणों में हम पायेंगे कि उनकी उत्तेजना का मुख्य कारण धर्म था। राष्ट्र का स्थायित्व, गौरव और समृद्धि उनके धर्म के अंग बन चुके थे और अपने राष्ट्र की रक्षा करते समय उन्होंने उस 'पवित्र नगरी' की भी रक्षा की, जिसके वे सब नागरिक थे। तुर्की की जन-जातियों ने कभी अपने कार्यों के सम्पादन में सक्रिय भाग नहीं लिया था, परन्तु जब तक सुल्तान की विजय को मुसलमान धर्म की जीत माना जाता रहा, उन्होंने उन असाधारण साहसिक कार्यों के पूर्ण होने में बराबर साथ दिया। वर्तमान काल में उन जातियों का तीव्र गति से लोप होता जा रहा है, क्योंकि उनका धर्म उनसे बिछुड़ता जा रहा है और केवल

निरंकुशता के अवशेष रह गये हैं। मान्टेस्क्यू ने निरंकुश शक्ति के लिए एक विशिष्ट प्रकार का अधिकार निर्धारित कर उसे अवांछनीय गौरव प्रदान किया है, ऐसा मैं समझता हूँ। कारण यह है कि निरंकुशता स्वयं किसी वस्तु को स्थायित्व नहीं प्रदान कर सकती। सूक्ष्म निरीक्षण करने पर हमें यह ज्ञात होगा कि निरंकुश सरकार की दीर्घकालीन समृद्धि का कारण भय न होकर धर्म ही रहा है। *आप कुछ भी करें, मनुष्यों में उनकी इच्छाशक्ति के स्वतंत्र संयोग* के अतिरिक्त और कोई वास्तविक शक्ति नहीं है और देशप्रेम अथवा धर्म ही इस संसार में ऐसे दो प्रेरणा-स्रोत हैं, जो सभी लोगों में एक समान लक्ष्य की ओर अग्रसर होने की प्रेरणा जाग्रत कर सकते हैं।

धर्म की बुझी हुई लौ को कानून फिर से प्रज्ज्वलित नहीं कर सकते, परन्तु वे मनुष्यों में अपने राष्ट्र के भाग्य के प्रति अभिरुचि जाग्रत कर सकते हैं। देशप्रेम के अस्पष्ट मनोवेगों का, जो मानव-हृदय में चिरस्थायी बसे रहते हैं, जाग्रत और निर्देशित करना कानूनों पर निर्भर करता है। यदि यह मनोवेग विचारों, मनोविकारों और जीवन की दैनिक प्रवृत्तियों से सम्बन्धित हो तो वह एक स्थायी और विवेकपूर्ण मनोभाव में परिणत हो जायगा। यह कहना कि ऐसे प्रयोग में देरी हो चुकी है, सही नहीं है; क्योंकि राष्ट्र मनुष्यों की *तरह वृद्ध नहीं बनते और हमेशा प्रत्येक नयी पीढ़ी की जनता विधानमण्डल के* कार्यों की देखरेख करने के लिए तत्पर रहती है।

मैं अमरीका में विकेन्द्रीकरण के प्रशासकीय प्रभावों की नहीं, प्रत्युत उसके राजनीतिक प्रभावों की सबसे अधिक प्रशंसा करता हूँ। संयुक्त-राज्य अमरीका में हर जगह राष्ट्रीय हितों को मद्दे नजर रखा जाता है। सम्पूर्ण संघ के लोग उन्हें बहुत महत्वपूर्ण विषय मानते हैं और उनके साथ प्रत्येक नागरिक का बड़ा भावपूर्ण लगाव रहता है, मानो वे उसके स्वयं के हों। वह राष्ट्र के गौरव से अपने को गौरवान्वित समझता है, उसकी सफलता की भूरि-भूरि प्रशंसा करता है और मानता है कि इसमें वह खुद भी एक भागीदार है। वह देश की सामान्य खुशहाली में आनन्द मनाता है, जो उसे लाभ पहुँचाती है। राज्य के प्रति उसकी भावनाएँ उसी प्रकार की हैं जो उसे अपने परिवार से सम्बन्धित करती हैं। *वह जिस भाव से देश के कल्याण में रुचि लेने लगता है, वह एक* प्रकार की स्वार्थपरता ही है।

यूरोपीय लोगों के लिए एक सार्वजनिक अधिकारी उच्च सत्ता का प्रतिनिधि माना जाता है और अमरीकियों के लिए वह एक अधिकार का प्रतिनिधित्व

करता है। अतः यह कहा जा सकता है कि अमरीका में व्यक्ति की आज्ञा का पालन कोई नही करता, बल्कि वह न्याय तथा विधि का पालन करता है। यदि मान लिया जाय कि उस धारणा को, जो नागरिक अपने सम्बन्ध मे रखता है, बढ़ा-चढ़ा कर कहा जाता है तो भी वह स्वस्थ धारणा अवश्य है। वह बिना किसी शिक्षक के अपनी स्वयं की शक्तियों पर विश्वास करता है, जो उसे पूर्णतया पर्याप्त मालूम पड़ती है। जब कोई गैर-सरकारी व्यक्ति किसी आक्रमण की कल्पना करता है, तो वह सरकार से सहयोग प्राप्त करने के सम्बन्ध मे कभी नहीं सोचता, चाहे उस कार्य का समाज के कल्याण से प्रत्यक्षतः कितना ही सम्बन्ध क्यों न हो। इसके विपरीत वह अपनी योजना प्रकाशित करता है, उसे पूरा करने का विश्वास दिलाता है; दूसरे व्यक्तियों से सहायता प्राप्त करता है और समस्त बाधाओं से बड़े साहस के साथ संघर्ष करता है। निस्सन्देह उसे उतनी सफलता नहीं मिलती, जितनी सफलता राज्य को उसके स्थान पर होने पर मिलती; किन्तु अन्त में समस्त निजी उपक्रम मिल कर उतना कर लेने मे सफल हो जाते हैं, जितना सरकार भी नहीं कर पाती।

चूँकि प्रशासकीय सत्ता नागरिकों की, जिनका वह कुछ अंशों में प्रतिनिधित्व करती है, पहुँच के अन्तर्गत होती है, इसलिए वह उसकी ईर्ष्या या घृणा को उत्तेजित नहीं करती। चूँकि उसके साधन सीमित रहते हैं, इसलिए प्रत्येक व्यक्ति यह महसूस करता है कि उसे उसकी सहायता पर पूर्णतः भरोसा नहीं करना चाहिए। इस प्रकार जब प्रशासन स्वयं अपनी सीमाओं के अन्तर्गत कार्रवाई करना उचित समझता है, तो उसे अकेले नहीं छोड़ दिया जाता, जैसा कि यूरोप में होता है और न यह समझा जाता है कि चूँकि राज्य कार्रवाई करने के लिए आगे आया है, इसलिए नागरिकों के कर्तव्य समाप्त हो गये हैं। बल्कि इसके विपरीत प्रत्येक नागरिक उसका समर्थन करने को तैयार रहता है। व्यक्तियों का यह कार्य सार्वजनिक अधिकारियों के कार्यों से मिलकर प्रायः ऐसी सफलताएँ प्राप्त कर लेने में समर्थ हो जाता है, जिन्हें प्राप्त करने में अत्यन्त शक्तिशाली केंद्रित प्रशासन भी असमर्थ रहता।

मैंने जो कुछ कहा है, उसके प्रमाण के लिए अनेक तथ्य सरलता-पूर्वक प्रस्तुत किये जा सकते हैं। परन्तु मै उनमें से केवल एक ही तथ्य प्रस्तुत करूँगा, जिससे मैं अच्छी तरह वाकिफ हूँ। अमरीका में अपराधों की खोज और अपराधियों की गिरफ्तारी के लिए अधिकारियों के पास जो

साधन उपलब्ध हैं, वे बहुत ही कम हैं। राज्य-पुलिस का अस्तित्व नहीं है और पारपत्र (पासपोर्ट) अज्ञात है। संयुक्त-राज्य अमरीका की दण्ड-पुलिस की तुलना फ्रांस की पुलिस से नहीं की जा सकती। वहाँ न्यायाधीश और सार्वजनिक अभिकर्ता इतने अधिक नहीं हैं, न वे अपराधी को पकड़ने के लिए हमेशा अगुआई करते हैं और वहाँ कैदियों का बयान जल्दी और मौखिक रूप से हो जाता है। फिर भी, मेरा विश्वास है कि अन्य देशों की अपेक्षा यहाँ बड़ी मुश्किल से कोई सजा पाने से बच सकता है। इसका कारण यह है कि अपराध की साक्षी देने में और अपराधी को पकड़वाने में हर कोई दिलचस्पी रखता है। अमरीका में अपने प्रवास-काल के समय मैंने यह देखा कि देहात में एक बहुत बड़े अपराधी की खोज और गिरफ्तारी के लिए स्वेच्छा से समितियों का निर्माण किया गया था। यूरोप में अपराधी एक ऐसा दुःखी व्यक्ति होता है, जिसे अपने जीवन के लिए सत्ता के प्रतिनिधियों से संघर्ष करना पड़ता है, जबकि जनता उस संघर्ष की दर्शक मात्र रहती है। अमरीका में ऐसे अपराधी को समस्त मानव-जाति के शत्रु के रूप में देखा जाता है और सारा मानव-समाज उसके खिलाफ उठ खड़ा होता है।

मैं समझता हूँ कि सभी राष्ट्रों के लिए प्रान्तीय संस्थाएँ उपयोगी होती हैं; परन्तु मुझे लगता है कि लोकतांत्रिक समाज के लिए उनकी सबसे बड़ी आवश्यकता होती है। कुलीनतंत्रवाद में स्वाधीनता के बीच व्यवस्था को हमेशा कायम रखा जा सकता है और चूँकि शासकों को इस व्यवस्था में काफी हानि उठानी पड़ती है, इसलिए व्यवस्था उनका बड़ा महत्वपूर्ण विषय बन जाती है। इसी प्रकार कुलीनतंत्र निरंकुशता के अत्याचारों से लोगों को बचाये रखता है; क्योंकि उसके हाथों में एक निरंकुश का प्रतिरोध करने के लिए एक संगठित शक्ति रहती है, परन्तु बिना प्रांतीय संस्थाओं के लोकतंत्र के पास इन बुराइयों के प्रतिरोध के लिए कोई संरक्षण नहीं होता। छोटी-छोटी बातों में स्वातंत्र्य से अनभ्यस्त जनसाधारण बड़े विषयों में उसका संयम के साथ प्रयोग करना कैसे सीख सकते हैं ? किसी देश में, जहाँ प्रत्येक व्यक्ति निर्बल है तथा जहाँ के नागरिक किसी सामान्य हित में एक सूत्र में बंधे हुए नहीं हैं, निरंकुश शासक का प्रतिरोध कैसे किया जा सकता है ? जो भीड़ की स्वेच्छाचारिता से संत्रस्त रहते हों और जो निरंकुश शक्ति से डरते हों, उन्हें समान रूप से प्रान्तीय स्वाधीनताओं के उत्तरोत्तर विकास की कामना करनी चाहिए।

मेरा यह भी विश्वास है कि अनेक कारणों से केन्द्रित प्रशासन के बोझ से लोकतांत्रिक राष्ट्रों के दब जाने की सर्वाधिक आशंका रहती है। उनमें से कुछ कारण ये हैं।

इन राष्ट्रों की यह निरन्तर प्रवृत्ति रही है कि सरकार की सारी शक्ति को एकमात्र सत्ता के हाथों में, जो जनता का प्रत्यक्ष प्रतिनिधित्व करती है, केन्द्रित कर दिया जाय। क्योंकि जनता से परे एक से व्यक्तियों की भीड़ के अतिरिक्त कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता। परन्तु जब उसी सत्ता के पास सरकार के सारे गुण पहले से ही विद्यमान हों, तो वह प्रशासन के विस्तार में प्रवेश करने से अपने को नहीं रोक सकती और जैसा कि फ्रांस में हुआ, अन्ततोगत्वा इस प्रकार का अवसर निश्चित रूप से उपस्थित हो जाता है। फ्रांस की राज्यक्रान्ति में दो भावनायें विरोधी दिशाओं में काम कर रही थीं, जिनके विषय में कदापि भ्रम में नहीं पड़ना चाहिए। उनमें से एक स्वाधीनता के पक्ष में थी और दूसरी निरंकुशता के। प्राचीन राजतंत्र के अन्तर्गत कानूनों का एकमात्र प्रणेता सम्राट था और उस सम्राट के अधिकार के नीचे कतिपय अर्द्धनष्ट प्रान्तीय संस्थाओं के अवशेष उस समय भी जीवित थे। ये प्रान्तीय संस्थायें अस्थिर और अव्यवस्थित थीं और प्रायः अनर्गल कार्य करती थीं। वे कभी-कभी कुलीनतंत्र के हाथों में पड़कर अत्याचार के साधन बन गयी थीं। राज्यक्रान्ति ने शीघ्र ही अपने को राजवंश और प्रान्तीय संस्थाओं का शत्रु घोषित कर दिया। उसने अपने पहले की समस्त वस्तुओं, निरंकुश सत्ता और उसके दुरुपयोगों के अवरोधों के प्रति अन्धाधुन्ध घृणा फैलायी और उसकी प्रवृत्ति एक साथ ही गणतंत्र एवं केन्द्रीकरण की स्थापना करने की थी। फ्रांस की राज्य क्रान्ति का यह दुहरा स्वरूप एक ऐसा तथ्य है, जिसका उपयोग निरंकुश सत्ता के समर्थकों द्वारा बड़ी निपुणता से किया गया। क्या उन्हें निरंकुशता के पक्ष का समर्थन करने का दोषी ठहराया जा सकता है, जब कि उन्होंने उस केन्द्रित प्रशासन का समर्थन किया है जो क्रान्ति की एक महान अभिनव देन थी ?

इस तरह लोकप्रियता, जनता के अधिकारों के विरोधों से संयुक्त हो सकती है और क्रूर शासन का गुप्त दास स्वातंत्र्य का प्रेमी होने की घोषणा कर सकता है।

मैं ऐसे दो देशों में गया हूँ, जहाँ स्वाधीनता अत्यन्त परिपूर्णता से संस्थापित है और मैं उन देशों के विभिन्न दलों के विचारों को सुन चुका हूँ। अमरीका में मैं ऐसे व्यक्तियों से मिला हूँ, जो इंग्लैंड में संघ की लोकतांत्रिक संस्थाओं

को समाप्त कर देने की गुप्त इच्छा रखते हैं। ऐसे लोग भी मिले, जो खुले-आम कुलीनवाद पर आक्षेप कर रहे थे। परन्तु मैंने एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं पाया जो प्रान्तीय स्वाधीनता को एक महान वस्तु न समझता हो। दोनों देशों में राज्य की बुराई के हजारों कारण मुझे सुनने को मिले, परन्तु उनमें स्थानीय पद्धति का कभी उल्लेख नहीं हुआ। मैंने नागरिकों के मुख से उनके देश की शक्ति और समृद्धि के सम्बन्ध में अनेक प्रशंसाएँ सुनी, परन्तु उन सबने स्थानीय संस्थाओं के लाभों को सर्वप्रथम स्थान प्रदान किया।

क्या मैं यह धारणा बना लूँ कि जब मनुष्य, जो स्वाभाविक रूप से धर्मों, विचारों और राजनीतिक सिद्धान्तों पर एकमत नहीं हैं, किसी एक बात पर सहमत होते हैं (और वह बात ऐसी है जिसके सम्बन्ध में वे ही सर्वश्रेष्ठ निर्णायक हो सकते हैं, क्योंकि उसका उनको दैनिक अनुभव है) तो सब-के-सब गलती पर हैं? केवल वे ही राष्ट्र प्रान्तीय स्वाधीनताओं की उपयोगिताओं से इनकार करते हैं, जहाँ वे बहुत ही कम होती हैं--अर्थात् वे केवल उन संस्थाओं पर प्रतिबंध लगाते हैं, जिनके सम्बन्ध में उनको जानकारी नहीं है।

६. संयुक्त राज्य अमरीका में न्यायिक शक्ति

अमरीका के न्यायिक अधिकारों पर अलग से एक परिच्छेद लिखना मैंने उपयुक्त समझा है, जिससे उनका प्रासंगिक जिक्र कर देने मात्र से पाठकों की दृष्टि में उनकी राजनीतिक महत्ता कहीं कम न हो जाये। अमरीका के अतिरिक्त अन्य राष्ट्रों में भी राज्यमण्डल संस्थापित हुए हैं। मैंने गणराज्यों को केवल नयी दुनिया के किनारों पर ही नहीं, अपितु अन्य स्थानों पर भी देखा है। प्रतिनिधिमूलक सरकार की पद्धति यूरोप के अनेक राज्यों में भी अपनायी गयी है, परन्तु मैं नहीं समझता कि अब तक विश्व के किसी भी देश ने न्यायिक शक्ति को इस ढंग से संगठित किया है, जैसा कि अमरीकियों द्वारा किया गया है। संयुक्त राज्य अमरीका का न्यायिक संगठन एक ऐसी संस्था है, जिसे किसी अजनबी को समझने में बड़ी कठिनाई होती है। वह सुनता है कि प्रतिदिन घटित होने वाली राजनीतिक घटनाओं में न्यायाधीश के अधिकार की दुहाई दी जाती है। इससे वह स्वाभाविक रूप से इस निष्कर्ष पर पहुँच जाता है कि संयुक्त राज्य अमरीका में न्यायाधीश बड़े महत्त्वपूर्ण

राजनीतिक अधिकारी होते हैं। फिर भी, जब वह न्यायाधिकरणों के स्वरूप का निरीक्षण करता है तो उसे प्रथम दृष्टि में जो कुछ दिखायी देता है, वह इन संस्थाओं की सामान्य प्रवृत्तियों और विशेषाधिकारों से तनिक भी विपरीत नहीं होता। उसे सार्वजनिक मामलों में हस्तक्षेप केवल संयोगवश ही दिखायी पड़ता है, परन्तु यह संयोग ऐसा है जो प्रतिदिन घटित होता है...।

समस्त राष्ट्रों में न्यायिक सत्ता का प्रथम लक्षण पंचायत का कर्त्तव्य है, परन्तु किसी अदालत (न्यायाधिकरण) के हस्तक्षेप को उचित सिद्ध करने के लिए अधिकारों का विरोध करना चाहिए और किसी न्यायाधीश का निर्णय प्राप्त करने के पहिले कोई कार्रवाई होनी चाहिए। अतः जब तक किसी कानून को कोई चुनौती नहीं देता तब तक किसी न्यायिक संस्था को उस पर विचार करने के लिए नहीं कहा जाता और वह प्रत्यक्षानुभूति के बिना अपना अस्तित्व बनाये रख सकती है। यदि कोई न्यायाधीश प्रस्तुत किसी विवाद में उस विवाद से सम्बन्धित कानून पर आक्षेप करता है तो वह अपने सामान्य कर्तव्यों के क्षेत्र को विस्तृत कर देता है, परन्तु फिर भी वह उसकी सीमा का अतिक्रमण नहीं करता, क्योंकि विवाद का निर्णय करने के लिए उससे सम्बधित कानून पर किसी-न-किसी रूप में निर्णय करना ही पड़ता है। परन्तु यदि वह विवादसम्बन्धी कुछ कार्रवाई किये बिना कानून पर अपनी राय जाहिर करता है तो स्पष्टतः अपने क्षेत्र का उल्लंघन और विधान निर्मातृ सत्ता के क्षेत्र पर आक्रमण करता है।

न्यायिक सत्ता का द्वितीय लक्षण यह है कि वह सामान्य सिद्धान्तों पर नहीं, *अपितु विशिष्ट विवादों पर ही अपना निर्णय देती है। यदि कोई न्यायाधीश किसी* विशिष्ट प्रश्न पर निर्णय करते समय किसी सामान्य सिद्धान्त को, किसी निर्णय द्वारा, जो उस सिद्धान्त के समस्त तर्कों को अस्वीकार कर देता है और परिणामतः उसे रद्द कर देता है, अमान्य ठहरा देता है, तो भी वह अपने प्रकार्यों की सामान्य सीमाओं में ही रहता है; परन्तु यदि वह बिना किसी विशिष्ट प्रश्न को ध्यान में रखे किसी सामान्य सिद्धान्त पर प्रत्यक्ष प्रहार करता है तो वह उस क्षेत्र का उल्लंघन कर देता है, जिसमें उसके अधिकारों को, समस्त राष्ट्रों ने परिसीमित कर रखा है। इस स्थिति में वह किसी न्यायाधीश से अधिक महत्वपूर्ण और सम्भवतः अधिक प्रयोजनीय प्रभाव ग्रहण कर लेता है। परन्तु वह न्यायिक शक्ति का प्रतिनिधित्व करने योग्य नहीं रह जाता।

न्यायिकशक्ति का तीसरा लक्षण यह है कि वह तभी कार्रवाई कर सकती है जब उसे ऐसा करने के लिए कहा जाय या कानूनी शब्दों में जब उसने

किसी घटना पर ध्यान दिया हो। यह लक्षण उपर्युक्त दो लक्षणों की अपेक्षा कम सामान्य है, परन्तु अपवादों के बावजूद मेरी दृष्टि में वह अनिवार्य जैसा ही समझा जायगा। न्यायिक शक्ति अपनी प्रकृति से क्रियाहीन है, किसी परिणाम की प्राप्ति के लिए ही उसे गतिशील बनाना चाहिए। जब उसे किसी अपराध को रोकने के लिए कहा जाता है, तब वह अपराधी को सजा देती है; जब किसी दोष को दूर करना होता है, जब वह उसे दूर करने के लिए तैयार रहती हैं; जब किसी अधिनियम की व्याख्या करने की आवश्यकता पड़ती है, तब वह उसकी व्याख्या करने को तत्पर रहती है—परन्तु वह अपराधियों का पीछा नहीं करती, दोषों की खोज नहीं करती या अपने इच्छानुसार प्रमाण की छानबीन नहीं करती। जो न्यायिक अधिकारी अगुआई करता है और अनधिकारपूर्वक कानूनों का दोषविवेचन करता है, वह अपने अधिकारों की निष्क्रिय प्रवृत्ति पर कुछ अंशों में आघात पहुँचायेगा।

न्यायिकशक्ति के इन तीनों विशिष्ट लक्षणों को अमरीकियों ने अपने अधिकार में कर रखा है। अमरीकी न्यायाधीश मुकदमा दायर होने पर ही निर्णय की घोषणा करता है, वह केवल विशिष्ट विवादों से सर्वथा परिचित रहता है और वह तब तक कार्रवाई नहीं कर सकता, जब तक कि अदालत में मामला विधिवत् पेश नहीं हो जाता। अतः उसकी स्थिति पूर्णतः अन्य राष्ट्रों के न्यायाधीशों की स्थिति के ही समान है। फिर भी वह बृहत् राजनीतिक अधिकारों से युक्त है। यह कैसे होता है ? यदि उसके अधिकार का क्षेत्र और उसकी कार्रवाईयों के साधन उन अन्य न्यायाधीशों के समान ही हैं, तो कहाँ से उसे वह शक्ति प्राप्त होती है जो उनके पास नहीं है ? इस भेद का कारण इस छोटे-से तथ्य में निहित है कि अमरीकियों ने कानूनों की अपेक्षा संविधान के आधार पर निर्णय करने के न्यायाधीशों के अधिकार को मान्य किया है। दूसरे शब्दों में अमरीकियों ने उन्हें ऐसे कानूनों को अमल में लाने की अनुमति नहीं दी है, जो उन्हें अवैधानिक प्रतीत होते हों

मुझे इस बात का पता है कि कभी-कभी अन्य देशों के न्यायालयों ने भी इसी प्रकार के अधिकार का दावा किया है, किन्तु उनका यह दावा निरर्थक ही सिद्ध हुआ है, किन्तु अमरीका में सभी सत्ताओं ने इसे मान्य किया है और कोई भी दल, इस अधिकार से इनकार करता हुआ नहीं दिखायी देता, व्यक्ति की तो बात ही दूर रही। इस तथ्य को केवल अमरीकी संविधानों के सिद्धान्तों द्वारा ही समझाया जा सकता है। फ्रांस में संविधान अपरिवर्तनीय है या कम-से-कम समझा जाता है और सामान्य तौर से

स्वीकृत सिद्धान्त यह है कि किसी शक्ति को उसके किसी भाग को बदलने का अधिकार नहीं है। इंग्लैण्ड में संविधान निरन्तर बदलता रह सकता है, बल्कि उसका वास्तविक रूप में अस्तित्व नहीं है। संसद् एक साथ ही कानून और संविधान, दोनों का निर्माण करने का कार्य करती है। अमरीका के राजनीतिक सिद्धान्त अधिक सरल और अधिक युक्तिपूर्ण हैं। फ्रांस की तरह अमरीकी संविधान अपरिवर्तनीय नहीं समझा जाता और न इंग्लैण्ड की तरह समाज की साधारण शक्तियों द्वारा उसमें परिवर्तन किये जा सकते हैं। वह सम्पूर्ण रूप से एक पृथक वस्तु है, जो समस्त जनता की इच्छा का प्रतिनिधित्व करने के कारण विधायकों के लिए भी उतना ही माननीय है, जितना कि गैर-सरकारी नागरिकों के लिए; किन्तु जिसमें प्रस्थापित नियमों के अनुसार, पूर्व निश्चित परिस्थितियों में जनता की इच्छा द्वारा परिवर्तन किया जा सकता है। इसलिए अमरीका में संविधान बदलता हुआ रह सकता है, परन्तु जब तक उसका अस्तित्व है, वह समस्त अधिकार का उद्‌गम और प्रधान शक्ति का एक मात्र साधन है।

संयुक्तराज्य अमरीका में विधान जितना गैर-सरकारी नागरिकों पर लागू होता है, उतना ही विधायकों पर भी लागू होता है। चूंकि वह सर्वप्रथम और सर्वप्रधान कानून है, इसलिए उसमें किसी कानून द्वारा परिवर्तन नहीं किया जा सकता और इसलिए यह उचित ही है कि न्यायाधिकरण किसी कानून की अपेक्षा संविधान की आज्ञा का पालन करना अधिक पसन्द करे। यह स्थिति न्याय-सत्ता का मूल तत्त्व है, क्योंकि उस कानूनी बन्धन को चुनना, जिससे वह सबसे दृढ़ता से बंधा रहता है, वस्तुतः एक प्रकार से प्रत्येक मजिस्ट्रेट का प्राकृतिक अधिकार है।

फ्रांस में भी संविधान सर्वप्रथम कानून है और न्यायाधीशों को उसे अपने निर्णयों का आधार मानने का अधिकार है। परन्तु यदि वे उस अधिकार का प्रयोग करें तो उन्हें अपने अधिकारों से अधिक पवित्र अधिकारों का अर्थात् समाज के उन अधिकारों पर जिसके नाम पर वे कार्य कर रहे हैं, अतिक्रमण के लिए बाध्य हो जाना पड़ेगा। इस विषय में राज्य के हेतु स्पष्टतः सामान्य प्रयोजनों से अधिक शक्तिशाली हैं। अमरीका में, जहाँ राष्ट्र अपने विधान को बदल कर मजिस्ट्रेटों को आज्ञा मानने के लिए बाधित कर सकता है, इस प्रकार के खतरे का कोई भय नहीं है। इसलिए इस विषय में राजनीतिक और

तर्कसंगत हेतु एक समान है और जनता और न्यायाधीश, दोनों ही अपने अपने विशेषाधिकारों को सुरक्षित रखते हैं।

संयुक्त-राज्य अमरीका के किसी न्यायाधिकरण में जब कभी किसी ऐसे कानून की दुहाई दी जाती है, जिसे न्यायाधीश असांविधानिक मानता है, तो न्यायाधिकरण उस कानून को एक नियम के रूप में स्वीकार करने से इनकार कर सकता है। यह अधिकार अमरीकी मजिस्ट्रेट का एक-मात्र विशिष्ट अधिकार है, किन्तु यह अधिकार अति व्यापक राजनीतिक प्रभाव की सृष्टि करता है। सच तो यह है कि बहुत थोड़े कानून अधिक समय तक न्यायसत्ता के खोजपूर्ण विश्लेषण से बचे रहे सकते हैं; क्योंकि बहुत कम कानून ऐसे हैं जो किसी-न-किसी वैयक्तिक हित के विरुद्ध न हों और ऐसा कोई भी कानून नहीं है, जो किसी न्यायालय में पक्षों की इच्छा से या विवाद की आवश्यकता से पेश न किया जा सकता हो। परन्तु ज्योंही कोई न्यायाधीश किसी कानून विशेष को किसी विवाद के सम्बन्ध में लागू करने से इनकार कर देता है, त्योंही वह कानून अपने नैतिक प्रभाव का कुछ अंश खो देता है। वे लोग, जिनके लिए वह कानून प्रतिकूल रहता है, जान जाते हैं कि उसकी सत्ता को समाप्त करने के साधन विद्यमान हैं और जब तक वह कानून शक्तिहीन नहीं हो जाता, तब तक इस प्रकार के मुकदमों की संख्या बढ़ती ही जाती है।

ऐसी स्थिति में विकल्प यह रहता है कि या तो जनता संविधान में परिवर्तन करे या विधान-सभा कानून को रद्द करे। अतः न्यायालयों को जो राजनीतिक शक्ति प्रदान की गयी है, वह अत्यन्त व्यापक है, किन्तु चूँकि न्यायालयों को छोड़ कर किसी भी द्वारा कानूनों पर प्रहार किया जाना असम्भव है, इसलिए इस शक्ति की बुराइयाँ पर्याप्तरूप से घट गयी हैं। यदि न्यायाधीश को सैद्धांतिक सामान्यताओं के आधार पर कानून को चुनौती देने का अधिकार प्राप्त होता, यदि उसे अग्रणी बनने और विधायक की निंदा करने का अधिकार होता, तो वह एक प्रमुख राजनीतिक कार्य करता और एक पक्ष के समर्थक अथवा विरोधी के रूप में राष्ट्र की विरोधी भावनाओं को संघर्षरत कर देता। परन्तु जब कोई न्यायाधीश किसी प्रश्न विशेष पर होने वाले अस्पष्ट वाद-विवाद में किसी कानून को चुनौती देता है, तो जनता को उसकी आलोचना के महत्व की जानकारी नहीं हो पाती, उसके निर्णय का प्रभाव एक व्यक्ति के हितों पर पड़ता है और कानून केवल प्रासंगिक रूप से तुच्छ समझा जाता है। इसके अतिरिक्त,

यद्यपि कानून की निन्दा की जाती है, परन्तु वह रद्द नहीं होता, उसका नैतिक प्रभाव घट सकता है, परन्तु उसकी शक्ति का हरण नहीं किया जाता। उसका अन्तिम हनन न्यायाधिकारियों द्वारा बारम्बार की गयी निन्दा से ही हो सकता है। यह भी देखने में आयेगा कि कानून को चुनौती देने का कार्य वैयक्तिक हितों पर छोड़ देने से और कानून की परीक्षा को एक व्यक्ति के मुकदमे के साथ ही घनिष्ठतापूर्वक सम्बद्ध कर देने से मर्यादाहीन आक्रमणों और दलगत भावना के दैनिक प्रहारों से कानून सुरक्षित रहता है। विधायकों की त्रुटियों को केवल किसी वास्तविक अभाव की पूर्ति के लिए ही खोलकर रखा जाता है और किसी अभियोग के आधार के रूप में सदा एक निश्चयात्मक और सराहनीय तथ्य को ही प्रस्तुत किया जाता है।

मेरा विश्वास है कि अमरीकी न्यायालयों की यह कार्यपद्धति स्वतंत्रता और सार्वजनिक व्यवस्था, दोनों के लिए अत्यन्त अनुकूल है। यदि न्यायाधीश खुले और प्रत्यक्ष रूप से विधायक की आलोचना ही कर सकता, तो कभी-कभी वह उसका विरोध करने से डरता और अन्य समयों पर दलगत भावना उसे प्रत्येक अवसर पर विधायक की अवहेलना करने के लिए प्रोत्साहित करती। परिणामतः जिस सत्ता से कानून निःसृत होते हैं, उस सत्ता के निर्बल होने पर कानूनों पर प्रहार किया जाता और उस सत्ता के प्रबल होने पर कानूनों का पालन होता; अर्थात् जब कानूनों का सम्मान करना लाभदायक होता, तब बहुधा उसका विरोध किया जाता और जब उन्हें दमन के एक साधन के रूप में परिणत कर देना सरल होता, तब उनका सम्मान किया जाता। किन्तु अमरीकी न्यायाधीश राजनीति के अखाड़े में स्वतंत्रतापूर्वक एवं स्वेच्छा से ही उतरता है। वह कानून के सम्बन्ध में निर्णय देने के लिए विवश है। जिस राजनीतिक प्रश्न का समाधान करने के लिए उससे कहा जाता है, वह दलों के हितों से सम्बन्ध रखता है और न्याय से इनकार किये बिना वह इस प्रश्न का समाधान करने से इनकार नहीं कर सकता। एक मजिस्ट्रेट के रूप में उसके पेशे से सम्बन्धित जो कर्तव्य है, उन कर्तव्यों का पालन कर वह नागरिकता के अपने कर्तव्यों का पालन करता है। यह सच है कि इस पद्धति से विधानमंडल के ऊपर न्यायालयों के प्रतिबन्ध को अविवेकपूर्वक समस्त कानूनों के सम्बन्ध में लागू नहीं किया जा सकता; क्योंकि उनमें से कुछ न्यायालय कभी ऐसे विवाद के ठीक-ठीक नमूने नहीं उत्पन्न कर सकते, जिन्हें कानून-विषयक विवाद कहा जाता है; और इस प्रकार के विवाद के

सम्भव होने पर भी हो सकता है कि कोई उसे अदालत के सामने लाने की परवाह न करे। अमरीकियों ने बहुधा इस असुविधा का अनुभव किया है, किन्तु उन्होंने उसके समाधान को अपूर्ण ही छोड़ दिया है, जिससे वह कहीं इतना अधिक प्रभावशाली न हो जाय कि कतिपय मामलों में वह खतरनाक सिद्ध होने लगे। इन सीमाओं के अन्तर्गत अमरीकी न्यायालयों को किसी कानून को असांविधानिक घोषित करने का जो अधिकार प्राप्त है, वह राजनीतिक विधान-सभाओं के अत्याचार के विरुद्ध सोचे गये अवरोधों में सबसे अधिक शक्तिशाली अवरोध है।

यह बताने की आवश्यकता नहीं कि अमरीका जैसे एक स्वतंत्र देश में समस्त नागरिकों को साधारण न्यायाधिकरणों के समक्ष सार्वजनिक अधिकारियों के विरुद्ध आरोप लगाने का अधिकार प्राप्त है और समस्त न्यायाधीशों को सार्वजनिक अधिकारियों को दंडित करने का अधिकार प्राप्त है। कानूनों का उल्लंघन करने पर शासन-कार्यकारिणी के अभिकर्ताओं को दंड देने का जो अधिकार न्यायालयों को प्रदान किया गया है, वह इतना स्वाभाविक अधिकार है कि उसे एक असाधारण विशेषाधिकार नहीं समझा जा सकता। न मुझे ऐसा ही प्रतीत होता है कि समस्त सार्वजनिक अधिकारियों को न्यायाधिकरणों के प्रति उत्तरदायी बना देने से संयुक्त राज्य अमरीका में शासन का स्रोत क्षीण हो गया है। इसके विपरीत ऐसा प्रतीत होता है कि अमरीकियों ने इस साधन द्वारा उस सम्मान में वृद्धि कर दी है, जो अधिकारियों को प्राप्त होना चाहिए और साथ-ही-साथ इन अधिकारियों को भी अपराध न करने के लिए अधिक सतर्क बना दिया है। संयुक्त-राज्य अमरीका में राजनीतिक मुकदमों की संख्या की न्यूनता को देख कर मुझे आश्चर्य हुआ, किन्तु इस परिस्थिति के कारण का पता लगाने में मुझे कोई कठिनाई नहीं हुई। मुकदमेबाजी, चाहे उसका स्वरूप कुछ भी हो, सदा ही एक कठिन एवं व्ययसाध्य कार्य होता है, समाचारपत्रों में किसी सार्वजनिक व्यक्ति पर प्रहार करना सरल है, किन्तु उसे किसी न्यायाधिकरण के समक्ष उपस्थित करने का उद्देश्य अवश्य ही गम्भीर होना चाहिए। किसी सार्वजनिक अधिकारी के विरुद्ध मुकदमा चलाने के पूर्व शिकायत का एक ठोस आधार अवश्य रहना चाहिए और जब वे अधिकारी अपने विरुद्ध मुकदमा चलाये जाने से भयभीत रहते हैं, तब वे इस बात के लिए अत्यन्त सतर्क रहते हैं कि शिकायत के इस प्रकार के ठोस आधार न मिल सकें।

यह अमरीकी संस्थाओं के गणतंत्रात्मक स्वरूप पर निर्भर नहीं करता, क्योंकि इंग्लैण्ड में भी ऐसा ही होता है। ये दोनो राष्ट्र राज्य के मुख्य अधिकारियों के विरुद्ध आरोप लगाये जाने को अपनी स्वतंत्रता के लिए एक 'गारंटी' नहीं मानते, किन्तु उनकी मान्यता है कि स्वतंत्रता की रक्षा उन महान न्यायिक कार्य-प्रणालियों द्वारा नहीं होती, जिनका प्रयोग प्रायः अत्यन्त विलम्ब से होता है, प्रत्युत उन छोटे-छोटे मुकदमों द्वारा होती है, जिन्हें तुच्छतम नागरिक भी किसी भी समय चला सकता है।

मध्य युगों मे, जब अपराधियों तक पहुँच सकना अत्यन्त दुष्कर होता था, न्यायाधीश गिरफ्तार हो जाने वाले थोड़े-से व्यक्तियों को भयंकर दण्ड दिया करते थे, किन्तु इससे अपराधों की संख्या में कोई कमी नहीं होती थी। उसके बाद से इस बात का पता चला कि जब न्याय अधिक निश्चयात्मक और अधिक नम्र होता है, तब वह अधिक प्रभावकारी होता है। अंग्रेजों और अमरीकियों की मान्यता है कि दण्ड में कमी कर तथा दण्ड देने की प्रक्रिया को सुविधाजनक बनाकर अत्याचार और दमन को भी अन्य किसी अपराध की तरह ही माना जाय।

७. संघीय संविधान के पहलू

जैसा कि मैं पूर्व में उल्लेख कर चुका हूँ, उन तेरह उपनिवेशों के, जिन्होने पिछली शताब्दी के अन्त में इंग्लैण्ड के जुए को एक साथ ही उतार फेंका था, एक ही धर्म, एक ही भाषा, एक ही रीति-रिवाज और प्रायः एक-से ही कानून थे। वे सब एक सामान्य शत्रु के विरुद्ध संघर्ष कर रहे थे और ये सब तथ्य उन्हें परस्पर मिलाने के लिए और एक राष्ट्र के रूप में उनका एकीकरण करने के लिए पर्याप्त शक्तिशाली थे। परन्तु चूंकि उनमें से प्रत्येक का सदैव अपना एक अलग अस्तित्व था और प्रत्येक की अपनी सीमा के भीतर अलग सरकार थी, इसलिए भिन्न हितों और विशिष्ट प्रथाओं का प्रादुर्भाव हुआ जो इस प्रकार के दृढ़ और घनिष्ट संयोग के मार्ग में बाधक थे; क्योंकि ऐसा होने पर प्रत्येक का व्यक्तिगत महत्व सब के सामान्य महत्व में मिलकर समाप्त हो जाता। अतः दो परस्पर विरोधी प्रवृत्तियों का जन्म हुआ। उनमें से एक आंग्ल-अमरीकियों को एक होने के लिए प्रोत्साहन दे रही थी और दूसरी उनकी शक्ति को विभाजित कर रही थी।

जब तक मातृदेश के साथ युद्ध चलता रहा, संघ का सिद्धान्त आवश्यकता के कारण जीवित रहा और यद्यपि उसे निर्मित करने वाले कानून दोषपूर्ण थे, तथापि उनकी अपूर्णताओं के बावजूद सामान्य हित ने उनको परस्पर बाँध रखा था; परन्तु ज्योंही शान्ति-सन्धि हुई, इस विधान के दोष सामने प्रकट होने लगे और अचानक राज्य का विघटन होता दिखायी पड़ा। प्रत्येक उपनिवेश ने स्वाधीन गणराज्य बनकर निरंकुश सार्वभौमता धारण की। संघीय सरकार अपने संविधान द्वारा निष्क्रिय करार दी गयी और सामान्य खतरे की उपस्थिति से पूर्व की भाँति उसका अस्तित्व नहीं रहा। उसने यूरोप के बड़े राष्ट्रों द्वारा अपने ध्वज का अपमान होते देखा और उसके लिए उस समय रेड इंडियन जन-जाति के विरुद्ध संघर्ष में रत रहना और स्वाधीनता-संग्राम के दिनों में लिये गये ऋण का ब्याज चुकाना अत्यन्त कठिन हो गया। वह उस समय विनाश के किनारे पर खड़ी थी, जब उसने अधिकृत रूप से सरकार के संचालन की अपनी अयोग्यता घोषित की और सम्बन्धित सत्ता से अपील की।

यदि अमरीका कभी भी वैभव के उच्च शिखर तक पहुँचा है (चाहे वह थोड़े समय के लिए हो), जहाँ निवासियों की अहमन्य भावना प्रदर्शित होने लगी हो, तो वह यही ऐश्वर्यशाली अवसर था, जब राष्ट्रीय शक्ति ने मानो अपनी सत्ता का परित्याग कर दिया था। जनता को अपनी स्वाधीनता की प्राप्ति के लिए शक्ति के साथ संघर्ष करते हुए हम सभी युगों में देखते हैं, परन्तु अंग्रेजी जुए से मुक्त होने के लिए अमरीकियों ने जो प्रयत्न किये, उन्हें काफी बढ़ा-चढ़ा कर बताया गया है। वे अपने शत्रुओं से तीन हजार मील समुद्र की दूरी पर थे और शक्तिशाली मित्र का उन्हें सहारा था। इस प्रकार संयुक्त-राज्य अमरीका की विजय का मुख्य कारण उसकी भौगोलिक स्थिति थी, न कि उसकी सेनाओं की वीरता या नागरिकों की देशभक्ति। अमरीका के स्वाधीनता-युद्ध की फ्रांस की राज्य-क्रांति से या अमरीकियों के प्रयत्नों की फ्रांसीसियों के प्रयत्नों से तुलना करना हास्यास्पद होगा। जब फ्रांस पर समस्त यूरोप द्वारा आक्रमण किया गया, तब उसने बिना धन, बिना साख, बिना मित्रों की सहायता के, शत्रुओं से मोर्चा लेने के लिए अपनी जनसंख्या के बीसवें भाग को युद्ध में झोंक दिया और एक हाथ में राज्यक्रांति की मशाल लेकर देश की सीमाओं से पार दुनिया के अन्य भागों में उसकी लपटों को पहुँचा दिया; परन्तु देश के

उसका दम घुटने लगा था; परन्तु विधानमण्डल द्वारा स्थिति का यह स्पष्टीकरण होने पर कि सरकार का कारोबार ठप्प हो गया है, विशाल जनसंख्या का शान्त रहना और बुराई की गहनता का सतर्कतापूर्वक परीक्षण करने के लिए अपना सूक्ष्म अनुवीक्षण करना और संकट का समाधान न होने तक, जिसके सामने उसने मनुष्य जाति का बिना आँसू और खून बहाये स्वेच्छा से आत्मसमर्पण कर दिया था, धैर्यपूर्वक पूरे दो वर्ष तक प्रतीक्षा करते रहना समाज के इतिहास में एक अपूर्व घटना है।

अमरीका में जब प्रथम संविधान की अपर्याप्तताएँ ज्ञात हुईं, तब अमरीका को दोहरा लाभ हुआ। एक तो उसे क्रांति के उफान के बाद की शान्ति हुई और दूसरे उन महान व्यक्तियों का सहयोग मिला, जिन्हें क्रान्ति ने उत्पन्न किया था। द्वितीय संविधान बनाने का कार्य हाथ में लेने वाली विधान सभा छोटी थी, परन्तु उसका सभापति जार्ज वाशिंगटन था और उसमें नयी दुनिया के अत्यन्त दुर्लभ बुद्धिवाले सम्भ्रान्त चरित्र के व्यक्ति सम्मिलित थे। इस राष्ट्रीय संविधान सभा ने दीर्घ और गम्भीर विचार-विमर्श के बाद सामान्य कानूनों का विधान स्वीकृति के लिए जनता के सामने प्रस्तुत किया जिसके द्वारा अब तक संघ का प्रशासन चलाया जाता है। सभी राज्यों ने यथाक्रम इस संविधान को अंगीकृत किया। दो वर्षों की अराजकता के पश्चात् सन् १७८९ में नयी संघीय सरकार का निर्माण हुआ। जब अमरीका की क्रान्ति सफलता के साथ समाप्त हुई तब फ्रांस की क्रान्ति का उदय हुआ।

अमरीकियों के सामने मूल प्रश्न यह बना रहा कि सार्वभौमता को किस प्रकार विभाजित किया जाय कि संघ बनाने वाले भिन्न राज्यों में प्रत्येक को अपनी आन्तरिक समृद्धि से सम्बन्धित सभी विषयों में प्रशासन करने का अधिकार यथावत् बना रहे, जब कि सम्पूर्ण राष्ट्र जिसका प्रतिनिधित्व संघ द्वारा किया जाय, निरन्तर एक गठित संस्था के रूप में बना रहे और सामान्य आवश्यकताओं की पूर्ति करता रहे। यह एक जटिल और कठिन समस्या थी। पहले से ही दोनों सरकारों को मिलने वाली सत्ता के भाग को ठीक-ठीक निश्चित कर देना असम्भव था, जिस प्रकार राष्ट्र के जीवन में घटित होने वाली समस्त घटनाओं की भविष्यवाणी नहीं की जा सकती।

संघीय सरकार के कर्तव्य और अधिकार सरल थे, जिनकी ठीक-ठीक व्याख्या की जा सकती थी; क्योंकि संघ का निर्माण कतिपय महत्तर सामान्य

आवश्यकताओं की पूर्ति के स्पष्ट उद्देश्य से किया गया था। दूसरी ओर अकेले राज्यों के अधिकार और कर्तव्य जटिल और विविध थे, क्योंकि उनकी सरकार ने सामाजिक जीवन की समस्त सूक्ष्मताओं में अन्तः प्रवेश पा लिया था। इसलिए संघीय सरकार के कार्यों की व्याख्या बड़ी सावधानी के साथ की गयी और जो कार्य उनमें सम्मिलित नहीं किये गये, उन्हें विभिन्न राज्यों की सरकारों को सौंप देने की घोषणा की गयी। इस प्रकार राज्यों की सरकार नियंत्रित रही, परन्तु राज्यमण्डल की सरकार इसका अपवाद थी। परन्तु जैसी कि भविष्यवाणी की गयी कि इस अपवादस्वरूप व्यवहार में सत्ता की वास्तविक सीमाएँ क्या हों? इस सम्बन्ध में प्रश्न उठ खड़े हो सकते हैं और इन प्रश्नों को विभिन्न राज्यों में, स्वयं राज्यों द्वारा संस्थापित सामान्य न्यायालयों के सामने निर्णयार्थ प्रस्तुत करना खतरनाक होगा। अतः संविधान के अन्तर्गत एक उच्चसंघीय न्यायालय का निर्माण किया गया, जिसका मुख्य कर्तव्य दोनों प्रतिद्वन्द्वी सरकारों के मध्य सन्तुलन बनाये रखना था।

मनुष्य स्वतः पूर्णतया एकाकी हैं और उनको एक सरकार के अन्तर्गत संघटित करने की आवश्यकता क्यों है, इसका विशिष्ट कारण यह है कि वे विदेशियों के सामने विशेषाधिकारों से युक्त दिखाई पड़ें। इसलिए शान्ति और युद्ध करने, व्यापारिक सन्धियाँ करने, फौज का विस्तार करने और जहाजी बेड़े को सुसज्जित करने का अनन्य अधिकार संघ को सौंपा गया। समाज के आन्तरिक प्रकार्यों के संचालन के लिए राष्ट्रीय सरकार की आवश्यकता इतनी महत्वपूर्ण नहीं समझी गयी; परन्तु कतिपय ऐसे सामान्य हित हैं, जिनकी देखभाल केवल सामान्य सत्ता द्वारा विशेष सुविधापूर्वक की जा सकती है। संघ को आर्थिक व्यवस्था पर नियंत्रण रखने, डाक व्यवस्था का प्रबन्ध करने और देश के विविध-विभिन्न भागों को मिलाने के लिए बड़ी सड़कों का निर्माण करने का अधिकार दिया गया। प्रत्येक राज्य की सरकार को उसके स्वयं के अधिकार क्षेत्र में स्वतंत्रता दी गयी, फिर भी संघीय सरकार को राज्य के आन्तरिक प्रकार्यों के कतिपय पूर्व निश्चित उन मामलों में, जिनमें उनकी स्वाधीनता का अदूरदर्शी व्यवहार सारे संघ की प्रतिष्ठा को खतरे में डाल सकता है, हस्तक्षेप करने का अधिकार दिया गया। अतः जब कि राज्यमण्डल के प्रत्येक गणतंत्र को स्वेच्छा से अपने अधिनियमों में संशोधन करने और बदलने का अधिकार सुरक्षित रखा गया था, परन्तु पश्चात् कानूनों को लागू करना या कुलीनता की पदवी

प्रदान करना निषिद्ध कर दिया है। अन्त मे, जैसा कि संघीय सरकार के लिए अपने उत्तरदायित्वों को निभाना आवश्यक था, उसे कर-निर्धारण के असीम अधिकार दिये गये।

संघीय संविधान द्वारा स्थापित शक्तियों के विभाजन के परीक्षण में, एक ओर विभिन्न राज्यों के लिए सुरक्षित सार्वभौमता के अंश का तथा दूसरी ओर सत्ता के उस भाग का, जो संघ को प्रदान किया गया, लक्ष्य निरूपण करने पर यह प्रत्यक्षतः मालूम हो जाता है कि संघीय विधायक सरकार के केन्द्रीयकरण के सम्बन्ध में अत्यन्त स्पष्ट और सही धारणा ग्रहण किये हुए थे। संयुक्त राज्य अमरीका न केवल गणतंत्र है, परन्तु वह एक राज्यमण्डल भी है, फिर भी वहाँ राष्ट्रीय सत्ता यूरोप के अनेक निरंकुश राजतंत्रों की अपेक्षाकृत अधिक केंद्रित है।

कार्यकारिणी शक्ति

यदि अमरीका मे शासन-कार्यकारिणी फ्रांस की अपेक्षाकृत शक्तिहीन है, तो इसका कारण सम्भवतः देश के कानूनों की अपेक्षाकृत परिस्थितियों पर अधिक आरोपणीय है।

मुख्यतः विदेशी सम्बन्धों में कार्यकारिणी शक्ति को अपनी कुशलता और अपनी शक्ति का प्रदर्शन करने का अवसर मिलता है। यदि संघ का अस्तित्व निरन्तर खतरे में रहता, यदि उसके मुख्य हितों का अन्य शक्तिशाली राष्ट्रों के हितों से दैनिक सम्पर्क बना रहता तो शासन-कार्यकारिणी उन कार्यों के अनुपात मे, जिनको पूरा करने की उससे आशा की जाती है अथवा जिन्हें उसे पूरा करना पड़ता, अधिक महत्ता ग्रहण कर लेती। यह सही है कि संयुक्त राज्य अमरीका का राष्ट्रपति सेना का सेनाध्यक्ष है, परन्तु सेना केवल छः हजार सैनिकों की है, वह जहाजी बेड़े का नायक है, परन्तु जहाजों की गणना मात्र होती है और कुछ ही जहाज सक्रिय दिखायी पड़ते हैं। वह संघ के विदेशी सम्बन्धों की देखभाल करता है, परन्तु संयुक्त राज्य अमरीका बिना पड़ोसियों का राष्ट्र है। वह संसार के अन्य भागों से समुद्र के कारण विलग है और अभी तक महासागरों पर प्रभुत्व स्थापित करने के लिए सशक्त नहीं है। उसका कोई शत्रु नहीं है और उसके हित विश्व के अन्य किसी राष्ट्र के हित से शायद ही कभी मेल खाते हैं। इससे यही सिद्ध होता है कि सरकार की व्यावहारिक शक्ति को उसके संविधान के सिद्धान्त से नहीं तोलना चाहिए। संयुक्त-राज्य अमरीका के राष्ट्रपति के पास प्रायः राजकीय परमाधिकार होते हैं, पर उन्हें अमल में लाने के लिए उसे कोई अवसर नहीं मिलता। इस समय वह जिन विशेषाधिकारों का प्रयोग कर सकता है, वे बहुत

ही सीमित हैं। कानून राष्ट्रपति को शक्तिशाली बनाता है, परन्तु परिस्थितियाँ उसे निर्बल बनाये रखती है।

संघीय पद्धति के सामान्य लाभ और अमरीका में उसकी विशेष उपयोगिता

छोटे राज्यों में समाज की सतर्कता प्रत्येक भाग में व्याप्त रहती है और सुधार की भावना विस्तृत रूप से सभी सूक्ष्म बातों में निहित रहती है। इसी निर्बलता के कारण लोगों की महत्वाकांक्षा नियंत्रित रहती है और नागरिकों के सभी प्रयत्न और साधन समाज के आन्तरिक कल्याण की ओर उन्मुख रहते हैं और अहमन्यता के उच्छ्वास में उसके लोप हो जाने की सम्भावना नहीं रहती। प्रत्येक व्यक्ति की शक्तियाँ सामान्यतः सीमित रहने के कारण उसकी इच्छाएँ यथोचित कम रहती हैं। भाग्य की सामान्यता जीवन की विभिन्न परिस्थितियों को प्रायः समान बना देती है और निवासियों के आचरण व्यवस्थित और सरल हो जाते हैं। इस प्रकार सभी बातों पर विचार करने पर और नैतिकता तथा संस्कार की विभिन्न अवस्थाओं को मान्यता देने पर सामान्य रूप से हम यह पायेंगे कि बड़े राष्ट्रों की अपेक्षा छोटे राष्ट्रों में ऐसे लोगों की संख्या अधिक होगी जो सुविधाजन्य परिस्थितियों में अधिक संतोष और सुख से रहते हैं।

जब छोटे राज्य के भीतर क्रूर शासन की स्थापना होती है, तो वह अन्य स्थानों की अपेक्षा वहाँ अधिक निष्ठुर रहता है, क्योंकि संकुचित दायरे में रहने के कारण हर वस्तु उससे प्रभावित रहती है। वह सूक्ष्म ब्योरे की सैकड़ों बातों में उत्तेजक हस्तक्षेप द्वारा या हिंसा उत्पन्न कर उन बड़ी योजनाओं के लिए मार्ग प्रशस्त कर देता है, जिन्हें वह पूर्ण करने में असमर्थ रहता है और राजनीतिक जगत को अपने उपयुक्त स्थान पर छोड़ देता है ताकि वह व्यक्तिगत जीवन की व्यवस्था में हस्तक्षेप कर सके। रुचियों तथा कार्यों को नियमित करना होगा तथा नागरिकों के परिवारों तथा राज्य को भी नियंत्रित करना पड़ेगा। अधिकारों पर कुठाराघात होता है, मगर कभी-कभी। स्वतंत्रता छोटे समुदायों की वस्तुतः स्वाभाविक स्थिति होती है। सरकार आकांक्षाओं को जाग्रत करने के लिए जो प्रलोभन देती है, वे बहुत ही निर्बल होते हैं और व्यक्तियों के स्रोत बहुत मामूली होते हैं। इस कारण सार्वभौमता पर बड़ी सरलता से एक व्यक्ति का प्रभुत्व छा जाता है और इस प्रकार की घटना घटित होने पर राज्य की प्रजा सहज ही संगठित होकर निरंकुश शासक और निरंकुशता का शीघ्र

उन्मूलन कर सकती है। इसलिए सर्वदा राजनीतिक स्वाधीनता छोटे राष्ट्रों में ही पनपी और उनमें से अनेकों को बड़े होने के परिणामस्वरूप स्वतंत्रता से हाथ धोना पड़ा। इस तथ्य से यह प्रमाणित हो जाता है कि स्वतंत्रता लोगों के गुणों के कारण न होकर, उनके छोटे आकार के परिणामस्वरूप थी।

संसार के इतिहास में ऐसे किसी बड़े राष्ट्र का उदाहरण नहीं मिलता, जिसने अनेकों वर्ष तक प्रजातांत्रिक सरकार के स्वरूप को बनाये रखा हो ...। सभी मनोवेग, जो प्रजातांत्रिक संस्थाओं के लिए अत्यन्त घातक हैं, सीमा के विस्तार के साथ-साथ बढ़ते जाते हैं, जबकि उनको सशक्त बनाने वाले गुण, उसी अनुपात में नहीं बढ़ते हैं। गैर-सरकारी नागरिकों की आकांक्षा राज्य की शक्ति के साथ बढ़ती है, दलों की शक्ति उनके उद्देश्यों की महत्ता के साथ बढ़ती है, परन्तु देशप्रेम, जिसे इन विनाशकारी अभिकर्त्ताओं पर अंकुश रखना चाहिए, छोटे गणतंत्र में इतना शक्तिशाली नहीं रहता। निस्सन्देह यह आसानी के साथ सिद्ध किया जा सकता है कि यह कम शक्तिशाली और कम विकसित है।

धन की प्रचुरता और अत्यधिक दरिद्रता, बड़े-बड़े महत्वपूर्ण नगर, विलासपूर्ण नैतिकता, स्वार्थपरता और परस्पर विरोधी हित, ऐसे खतरे हैं, जो प्रायः राज्य के फैलाव के साथ उत्पन्न होते हैं। इनमें से अधिकांश बुराइयाँ शायद ही कभी राजतंत्र के लिए घातक होती है और इनमें से कुछ उसकी शक्ति और अवधि में सहायक होती है। राजतान्त्रिक राज्यों में सरकार की अपनी एक विशिष्ट शक्ति होती है, वह समाज का प्रयोग कर सकती है, परन्तु उस पर निर्भर नहीं कर सकती और लोगों की जितनी ही अधिक संख्या होगी, राजा उतना ही अधिक शक्तिशाली होगा; परन्तु बुराइयों के विरोध में प्रजातान्त्रिक सरकार की एक मात्र सुरक्षा बहुमत के समर्थन में निहित है। तथापि यह समर्थन वृहद गणतंत्र में छोटे गणतंत्र की अपेक्षा अनुपात में वश नहीं होता और इस प्रकार आक्रमण के साधनों में निरंतर वृद्धि होती है, प्रतिरोध की शक्ति, संख्या और प्रभाव दोनों की दृष्टि से वही रहती है अथवा यह कहा जा सकता है कि शक्ति घट जाती है; क्योंकि जनसंख्या में वृद्धि से लोगों की प्रवृत्तियाँ और हित अधिक विभाजित हो जाते हैं और एक संगठित बहुमत के निर्माण करने की कठिनाई निरन्तर बढ़ती रहती है। इसके सिवाय यह देखा गया है कि मानवीय भावों की गहनता न केवल उस लक्ष्य की महत्ता से बढ़ती है, जिसे वे प्राप्त करना चाहते हैं, बल्कि उन व्यक्तियों के समुदाय से बढ़ती है, जो उस समय उनसे प्रेरणा प्राप्त करते

हैं। प्रत्येक को यह कहने का अवसर मिलता है कि सहानुभूति प्रकट करनेवाले समुदाय के मध्य उसके भाव उन भावों की अपेक्षाकृत अधिक उत्तेजित होते हैं, जिन्हें वह एकान्त में अनुभव करता। महान गणतंत्रों में राजनीतिक उद्वेग अनिवार्य हैं, केवल इसलिए नहीं कि उनका लक्ष्य महान प्रयोजनों की पूर्ति करना होता है, अपितु इसलिए कि उन्हीं के साथ लाखों मनुष्य इसी प्रकार के भावों को महसूस करते हैं।

इसलिए सामान्य प्रस्तावना के रूप में यह उद्घोषित किया जा सकता है कि केवल बड़े साम्राज्य ही मनुष्यों के कल्याण और उनकी स्वतंत्रता के विरोधी हैं; फिर भी बड़े राज्यों के विशिष्ट लाभों की महत्ता को भुलाया नहीं जा सकता; क्योंकि इसी कारण शक्ति प्राप्त करने की इच्छा सामान्य लोगों की अपेक्षा इन समाजों में अधिक तीव्र होती है। अहमन्यता कतिपय नागरिकों के हृदय में अधिक प्रस्फुटित होती है, जो महान लोगों की ख्याति को उनके प्रयासों का फल समझते हैं। यदि हमें इस बात का ज्ञान हो जाय कि ज्ञान-वृद्धि और सभ्यता की उन्नति में बड़े राष्ट्र छोटे राज्यों की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली ढंग से क्यों योगदान देते हैं, तो हम उन बड़े नगरों में जो बौद्धिक केन्द्र हैं और जहाँ मानवीय प्रतिभा की सारी किरणें प्रतिबिम्बित हैं, विचारों के शीघ्र और प्रभावशाली परिचालन का पर्याप्त कारण ढूँढ लेंगे। इसके अतिरिक्त, अत्यन्त महत्वपूर्ण अनुसन्धानों के लिए राष्ट्रीय शक्ति के उपयोग की आवश्यकता होती है, जो छोटे राज्य की सरकार करने में असमर्थ है। बड़े राष्ट्रों में सरकार के पास व्यापक कल्पनाएं होती हैं जो पूर्ववर्ती कार्यों की संलग्नता एवं स्थानीय भावना की स्वार्थपरता से पूर्णतः मुक्त रहती हैं, उसके प्रयोजन अधिक प्रतिभावान होते हैं और अधिक साहस के साथ उनका परिचालन होता है।

शान्ति के समय छोटे राष्ट्रों का कल्याण निसन्देह अधिक सामान्य और निश्चित रहता है, परन्तु युद्ध की विभीषिकाओं से वे अधिक संत्रस्त रहते हैं, अपेक्षाकृत उन महान साम्राज्यों के, जिनके सुदूर सीमान्त दीर्घ काल तक जनता पर आने वाले संकट को टाल सकते हैं। इसलिए छोटे राष्ट्र प्रतिस्पर्धा से नष्ट होने के बजाय प्रायः पीड़ित रहते हैं।

परन्तु इस विषय में अनेक बातों की तरह एक निर्णायक तर्क की आवश्यकता है। यदि छोटे राष्ट्रों को छोड़ कर किसी का अस्तित्व न रहे तो मेरा विश्वास है कि मानवता अधिक सुखी और अधिक स्वतंत्र रहेगी, परन्तु बड़े राष्ट्रों का अस्तित्व भी अनिवार्य है।

इस प्रकार राजनीतिक शक्ति राष्ट्रीय समृद्धि की एक आवश्यक शर्त हो जाती है। उससे राज्य लाभान्वित होता है, परन्तु यदि निरंतर उसकी लूट होती रहे और वह परवश रहे तो बहुत कम समृद्धि और स्वतंत्रता होगी। उसे अन्य बड़े राष्ट्र की अपेक्षा, जिनका महासागरों पर प्रभुत्व है और विश्व के बाजार में जिसका कानून चलता है, उत्पादन और व्यवसायों से बहुत ही कम लाभ प्राप्त होगा। छोटे राष्ट्र प्रायः पीड़ित रहते हैं, इसलिए नहीं कि वे छोटे हैं, बल्कि इसलिए कि वे निर्बल हैं और बड़े राष्ट्र समृद्धि करते हैं, इसलिए नहीं कि वे बड़े हैं, अपितु इसलिए कि वे शक्तिशाली हैं। अतः भौतिक शक्ति राष्ट्रों की समृद्धि की एक प्राथमिक आवश्यकता है, यहाँ तक कि उनके अस्तित्व की भी। परिणाम यह होता है कि छोटे राष्ट्र हमेशा अन्त मे या तो दबाव से अथवा अपनी सहमति से बड़े साम्राज्यो में मिल जाते हैं, बशर्ते कोई विचित्र स्थिति न उत्पन्न होजाय। मेरी दृष्टि में इससे बढ़ कर दयनीय दशा और कोई नहीं हो सकती जब वे राष्ट्र अपनी रक्षा करने या स्वयं की आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असमर्थ हो।

राष्ट्रों की विशालता और लघुता से मिलने वाले विभिन्न लाभो का समन्वय करने की दृष्टि से संघीय पद्धति प्रारम्भ की गयी और संयुक्त-राज्य अमरीका पर दृष्टिपात करने से पता चल जायगा कि इसे अंगीकार करने से उसे क्या लाभ मिला है।

विधायक को अधिक केन्द्रित राष्ट्रो मे कानूनो को एकरूपता देनी पड़ती है, जो हमेशा प्रथाओं और जिलो की विभिन्नताओ के अनुकूल नहीं होते, क्योंकि वह तत्सम्बन्धी विशिष्ट विषयो की ओर ध्यान नहीं देता। वह केवल सामान्य सिद्धान्त पर कार्य कर सकता है और जनता विधान के निर्देशित नितान्त आवश्यकताओ के अनुकूल कार्य करने को बाध्य रहती है, क्योंकि कानून आवश्यकताओं और जनता की रीतियों के अनुसार अपने को नहीं ढाल सकता। यही स्थिति कठिनाइयों और दुःखो का मूल कारण है। यह प्रतिकूलता संघ में स्थित नहीं है। कॉग्रेस राष्ट्रीय सरकार के मुख्य अधिनियमों को विनियमित करती है और प्रशासन की सारी सूक्ष्मताऍ प्रान्तीय विधानमण्डलों के लिए सुरक्षित रहती हैं। कोई भी व्यक्ति सहज ही यह कल्पना नहीं कर सकता कि सार्वभौमता का यह विभाजन संघ निर्मित करने वाले प्रत्येक राज्य के कल्याण के लिए कितना योगदान देता है। इन छोटे समुदायों में, जो कभी भी धन बढ़ाने की लालसा या आत्मरक्षा की चिन्ता से उत्तेजित नहीं

होते, सभी सार्वजनिक प्रभुत्व और निजी शक्ति आन्तरिक सुधार की ओर उन्मुख रहती है। नागरिकों के निकटतम सम्पर्क में रहने वाली प्रत्येक राज्य की केन्द्रीय सरकार को समाज में उत्पन्न होने वाले अभावों का सर्वदा ध्यान रहता है और उन अभावों को दूर करने के लिए प्रति वर्ष नयी योजनाएँ बनायी जाती है। इन योजनाओं पर नगर-सभाओं और विधानमण्डल द्वारा विचारविमर्श किया जाता है, तत्पश्चात नागरिकों में अभिरुचि और उत्साह जगाने के लिए उन्हें प्रेस द्वारा प्रचारित किया जाता है। अमरीकी प्रजातंत्र में सुधार की भावना निरन्तर बनी रहती है और उनकी शान्ति को खतरे में डाले बिना, शक्ति की अभिलाषा के स्थान पर कम शिष्ट और कम खतरनाक कल्याण की अभिलाषा स्थान ग्रहण कर लेती है। अमरीका में सामान्यतः यह धारणा प्रचलित है कि नयी दुनिया में प्रजातांत्रिक सरकार का अस्तित्व और स्थायित्व संघीय पद्धति के अस्तित्व और स्थायित्व पर निर्भर है और प्रायः दक्षिण अमरीका के नये राज्यो के दुर्भाग्यों का अधिकांशतः दोष विभाजित और सधीय सार्वभौमता के स्थान पर अविवेकता से निर्मित बड़े गणतंत्रों को है।

यह निर्विवाद सत्य है कि संयुक्त-राज्य अमरीका में प्रजातान्त्रिक सरकार के प्रति अभिरुचि और प्रवृत्ति प्रथमतः नगरों और प्रान्तीय विधान सभाओं में पैदा हुई। उदाहरणार्थ, कनेक्टीकट जैसे छोटे राज्य में, जहाँ नहर की खुदाई या सड़क का निर्माण बड़ा राजनीतिक प्रश्न होता है, जहाँ राज्य कोई सेना नहीं रख सकता, न युद्ध का संचालन कर सकता है और जहाँ सम्राटों को विशाल धन और प्रतिष्ठा नहीं दी जा सकती, सरकार का कोई स्वरूप प्रजातंत्र से बढ़ कर अधिक स्वाभाविक और अधिक उपयुक्त नहीं हो सकता। परन्तु इसी प्रजातान्त्रिक भावना और स्वतंत्र मनुष्यों के इन्हीं आचार और रीति-रिवाजों का, जो विभिन्न राज्यों में पैदा हुए और पनपे, बाद में सारे राष्ट्र में प्रयोग होना आवश्यक है। कहने का तात्पर्य यह कि संघ की जनभावना विभिन्न प्रान्तों की देशभक्ति से ओतप्रोत उत्साह का समष्टि स्वरूप या सार है। कहने का अभिप्राय यह है कि संयुक्त-राज्य अमरीका में प्रत्येक नागरिक अपने छोटे गणतंत्र के प्रति लगाव को अमरीकी देशभक्ति के सामान्य प्रक्षेत्र की ओर वहन करके लाता है। वह संघ की सुरक्षा करते समय अपने स्वयं के राज्य या देश की बढ़ती हुई समृद्धि की सुरक्षा करता है। उसके कार्य-संचालन के अधिकार तथा अंगीकृत सुधार के कार्य उसके स्वयं के हित के अनुकूल

होते हैं। ये सब वे निमित्त कारण हैं, जो देश के सामान्य हित और राष्ट्रीय गौरव से बढ़कर मनुष्यों में किसी प्रकार की उत्तेजना पैदा नहीं करते।

दूसरी ओर यदि निवासियों का स्वभाव और आचार उन्हें महान प्रजातंत्र के कल्याण की अभिवृद्धि के लिए विशेषतः योग्य बनाते हैं, तो संघीय पद्धति उनके कार्य को कठिन कर देती है। समस्त अमरीकी राज्यों का संघ लोगों के विशाल समुदायों के परिणामस्वरूप उत्पन्न सामान्य असुविधाओं में कोई भी बाधा उपस्थित नहीं करता ; परन्तु उद्देश्यों की न्यूनता, जिसके लिए सरकार कार्यरत होती है, छोटे राज्य में घुलमिल जाती है। उसके अधिनियम महत्त्वपूर्ण होते हैं, परन्तु वे बहुत कम संख्या मे होते हैं। संघीय सार्वभौमता चूँकि परिसीमित होती है और अपरिपूर्ण रहती है, उसका प्रयोग स्वाधीनता के लिए खतरनाक नहीं होता। वह प्रसिद्धि और शक्ति की अतृप्त अभिलाषाओं को उत्तेजित नहीं करती, जो विशाल गणतंत्रों के लिए घातक सिद्ध हुई हैं। चूँकि देश में कोई सामान्य केन्द्र नहीं होता, इसलिए बड़े विशाल शहर, अपार धनराशि, निकृष्ट दरिद्रता और आकस्मिक क्रान्तियाँ समान रूप से अज्ञात रहती है और राजनीतिक उत्तेजना घास के विस्तृत मैदानों में फैलने वाली अग्नि की तरह नहीं फैलती। वह अपनी शक्ति को प्रत्येक राज्य के स्वार्थ और व्यक्तिगत उद्वेगों के विरोध में लगा देती है।

फिर भी, स्पृश्य प्रयोजन और विचार सारे संघ में उस देश की भाँति, जहाँ एक समाज निवास करता है, स्वतंत्रता के साथ फैलते हैं। कोई भी उसकी साहसिक अन्तःप्रेरणा पर रोक नहीं लगाता। सरकार उन सभी लोगों की सहायता आमंत्रित करती है, जिनमें सेवा की प्रतिभा और समझ होती है। संघ की सीमाओं के भीतर, दृढ़ शान्ति रहती है जैसे कि कुछ महान साम्राज्यों के भीतर हो और बाहर वह पृथ्वी पर अत्यन्त शक्तिशाली राष्ट्रों की श्रेणी में रखा जा सकता है। उसका दो हजार मील का समुद्री तट संसार के व्यापार के लिए खुला पड़ा है और नयी दुनिया की कुंजी उसके हाथों में है, उसके ध्वज का आदर दूरवर्ती समुद्रों तक होता है। संघ छोटे समाज की तरह खुशहाल और स्वतंत्र है और बड़े राष्ट्र की भाँति गौरवशाली और शक्तिशाली है।

युद्ध का प्रभाव

राष्ट्र के जीवन में अत्यन्त महत्वपूर्ण घटना युद्ध का छिड़ना है। युद्ध में सारा समाज अपने अस्तित्व की सुरक्षा के लिए विदेशी राष्ट्रों के सामने एक व्यक्ति की तरह लड़ता है। सरकार की दक्षता, समुदाय की सद्बुद्धि और वह

स्वाभाविक अनुराग, जो मनुष्य प्रायः हमेशा अपने देश के प्रति अभिव्यक्त करते हैं, वे उस समय तक पर्याप्त रहेंगे, जबतक राज्य की आन्तरिक शान्ति बनाये रखना और देश की आन्तरिक समृद्धि बढ़ाना ही एक मात्र लक्ष्य हो; परन्तु राष्ट्र के लिए महान युद्ध की आवश्यकता होने पर लोगों को विविध और अधिक कष्टदायक त्याग करना चाहिए और इस प्रकार की कल्पना करना कि अधिक संख्या में लोग स्वयं अपनी इच्छा से इन अनिवार्यताओं के सम्मुख आत्म-समर्पण कर देंगे, मानव प्रकृति की अनभिज्ञता ही है। उन सभी राष्ट्रों को, जिन्हें दीर्घ काल तक गम्भीर युद्ध में संलग्न होने के लिए बाध्य होना पड़ा था, परिणामतः उन्हें अपनी सरकार की शक्ति में वृद्धि करनी पड़ी थी। जो इस प्रयत्न में सफल नहीं हुए, उन्हें दासता स्वीकार करनी पड़ी। दीर्घकालीन युद्ध प्रायः हमेशा राष्ट्रों को, हार द्वारा नष्ट होने के लिए, विजयी होकर निरंकुश बनने के लिए हतभाग्य के इस विकल्प के सामने छोड़ देते हैं। इसलिए युद्ध सरकार को निर्बल बनाता है। यह अत्यन्त स्पष्ट और अत्यन्त खतरनाक स्थिति है और मैं बता चुका हूँ कि संघीय सरकार की यह अन्तर्हित हार उसके निर्बल होने में है।

संघीय पद्धति में केन्द्रित प्रशासन का केवल अभाव ही नहीं है, अपितु उसमें कोई बात नहीं है जो उससे मेल खाती हो; परन्तु केन्द्रीय सरकार स्वयं परिपूर्ण रूप से सुव्यवस्थित नहीं है, जो राष्ट्र की निर्बलता का सबसे बड़ा कारण है, जब कि राष्ट्र उन देशों का विरोधी हो, जो एक मात्र सत्ताधारी से शासित होते हैं।

तब यह कैसे होता है कि अमरीकियों का संघ अपने कानूनों की समस्त सापेक्षित परिपूर्णता के साथ बड़े युद्ध चालू होने पर भी नष्ट नहीं होता? यह इसलिए होता है कि उसे बड़े युद्धों का भय नहीं है। विस्तृत महाद्वीप के केन्द्र में स्थापित संघ, जो मानव प्रयत्नों के लिए विस्तृत क्षेत्र खुला रखता है, प्रायः अपनी सीमाओं से पृथक रहता है, मानों उसकी सीमाएँ समुद्र से घिरी हों। कनाडा में केवल दस लाख निवासी रहते हैं और उसकी जनसंख्या दो विरुद्ध राष्ट्रों में विभाजित है। जलवायु की तीव्रता उसकी सीमाओं के विस्तार को परिसीमित कर देती है और उसके बन्दरगाहों को छः महीने के लिए बन्द कर देती है। कनाडा से लेकर मैक्सिको की खाड़ी तक उन असभ्य जंगली आदिवासियों का सामना छः हजार सैनिकों को करना पड़ता है, जो पीछे हटते रहते हैं। दक्षिण में, संघ मैक्सिको के साम्राज्य से जुड़ा हुआ है और वहीं पर एक दिन गम्भीर

संघर्ष पैदा हो जाने की आशा की जा सकती है। परन्तु ऐसा होने मे दीर्घ समय लगेगा, क्योंकि मेक्सिको के लोगों की असभ्यता, उनकी नैतिक भ्रष्टता और उनकी परम दरिद्रता उस देश को बड़े राष्ट्र की श्रेणी में नहीं आने देंगे; यथा यूरोप की शक्तियाँ भयंकर होने के लिए काफी दूर है।

इसलिए संयुक्त-राज्य अमरीका की महान सुविधाएँ संघीय संविधान में निहित नहीं है, जिससे वह बड़े युद्ध में रह सके, बल्कि वह उसकी भौगोलिक स्थिति है, जो ऐसे युद्ध को असम्भव कर देती है।

मुझसे बढ़कर शायद ही कोई संघीय पद्धति के लाभों की सराहना करने का इच्छुक होगा। मेरी दृष्टि में वह मनुष्यों की समृद्धि और स्वतंत्रता के लिए अत्यन्त उपयुक्त संयोग है। मैं उन राष्ट्रों के भाग्य को ईर्ष्या की दृष्टि से देखता हूँ जो इसे अंगीकार करने में असमर्थ हो चुके हैं। परन्तु मैं इस पर विश्वास नहीं कर सकता कि संघीय प्रजा समान शक्ति वाले राष्ट्रों से, जिनकी सरकार केंद्रित है, अधिक या बराबर प्रतिस्पर्धा कर सकती है। वह राष्ट्र, जिसने अपनी सार्वभौमता का विभाजन विभिन्न भागों मे किया हो, यूरोप के महान सैनिक राजतंत्रों के समक्ष, मेरी राय में, अपनी शक्ति का विनाश कर देगा और सम्भवतः अपना नाम व अस्तित्व भी खो देगा। परन्तु नयी दुनिया की इस प्रकार की स्थिति सराहनीय है कि मनुष्य का स्वयं के सिवाय कोई दूसरा शत्रु नही है और खुशहाल रहने और स्वतंत्रता का उपभोग करने के लिए उसे केवल इस बात का निर्णय कर लेना है कि वह ऐसा ही बनेगा।

८—राजनीतिक दल

अमरीका में जनता विधायिनी और कार्यकारिणी सत्ता को नियुक्त करती है और जूरियों की व्यवस्था करती है, जो कानूनों का उल्लंघन करने वालों को सजा देते हैं। वहाँ की संस्थाएँ न केवल सिद्धान्त की दृष्टि से, अपितु परिणामों की दृष्टि से भी लोकतान्त्रिक हैं और जनता अपने प्रतिनिधियों का निर्वाचन प्रत्यक्ष रूप से तथा अधिकांशतः प्रतिवर्ष करती है, जिससे उन संस्थाओं पर जनता का भरोसा बना रहे। अतः वास्तविक निर्देशक सत्ता जनता के हाथों में रहती है और यद्यपि सरकार का स्वरूप प्रतिनिधिमूलक है, यह स्पष्ट है कि जनता के अभिमतों, पूर्वाग्रहों, हितों और यहाँ तक कि उसकी भावनाओं को

भी प्रतिदिन के कार्यों के संचालनार्थ प्रभावित करते रहने में कोई स्थायी बाधा नहीं उपस्थित होती। संयुक्त-राज्य अमरीका में जनता के नाम पर बहुमत शासन करता है, जैसा सभी देशों में, जहाँ जनता सर्वोपरि है, होता है। यह बहुमत सिद्धान्ततः उन शान्तिप्रिय नागरिकों से गठित होता है, जो प्रवृत्तिवश अथवा स्वार्थवश अपने देश के कल्याण की सच्चे दिल से कामना करते हैं; किन्तु वे पार्टियों के अविच्छिन्न आन्दोलन से घिरे रहते हैं, जो उनका सहयोग और समर्थन प्राप्त करने का प्रयास करती हैं।

पार्टियों के बीच एक बड़े अन्तर को बताना जरूरी है। कुछ देश इतने बड़े हैं कि वहाँ बसने वाले विभिन्न लोगों के हित एक ही सरकार के अन्तर्गत सगठित रहते हुए भी परस्पर विरोधी रहते हैं और इसके फलस्वरूप वे निरन्तर विरोध करने की स्थिति में रह सकते हैं। ऐसे मामले में लोगों के विभिन्न भागों को मात्र पार्टियाँ समझने की अपेक्षा विभिन्न राष्ट्र समझना उचित होगा और जब गृह-युद्ध छिड़ जाता है, तो यह संघर्ष एक ही राज्य के भागों द्वारा नहीं, प्रत्युत प्रतिद्वन्द्वी राज्यों द्वारा चलाया जाता है। किन्तु जब नागरिक ऐसे विषयों पर—उदाहरणार्थ, सरकार-संचालन के आधारभूत सिद्धान्तों पर भिन्न मत रखते हैं, जिनका प्रभाव सारे देश पर समान रूप से पड़ता है, तब विभेद उत्पन्न होते हैं, जिनको सही रूप में पार्टियों की संज्ञा प्रदान की जा सकती है। स्वतन्त्र सरकारों में पार्टियाँ अनिवार्यतः एक बुराई है, किन्तु हर समय उनका स्वरूप और प्रवृत्ति एक समान नहीं रहती।

अमरीका में बड़ी-बड़ी पार्टियाँ थीं, किन्तु अब वे नहीं रह गयी हैं और यदि इससे उसके सुख में अत्यधिक वृद्धि हुई है, तो उसकी नैतिकता को आघात भी पहुँचा है। जब स्वतन्त्रता-संग्राम समाप्त हुआ और नयी सरकार की नींव डाली जाने वाली थी, तब राष्ट्र दो विचार-धाराओं में विभक्त हो गया। ये दो विचारधाराएँ उतनी ही पुरानी हैं, जितना विश्व और वे सभी स्वतन्त्र जातियों में विभिन्न स्वरूपों और विभिन्न नामों के साथ मिलती हैं। इनमें से एक विचारधारा जनता की शक्ति और सत्ता को सीमित करना चाहती है और दूसरी उसका अनिश्चित रूप से विस्तार करना चाहती है। इन दो विचारधाराओं के संघर्ष ने अमरीका में उतना हिंसात्मक रूप नहीं धारण किया, जितना हिंसात्मक रूप वह अन्य स्थानों पर बहुधा धारण करता रहा है। अमरीकियों की दोनों पार्टियाँ अत्यावश्यक विषयों पर सहमत थीं और किसी को भी विजय प्राप्ति के

लिए किसी पुराने संविधान को नष्ट करना अथवा समाज के ढाँचे को भंग करना नहीं पड़ा। फलस्वरूप उनमें से किसी में भी विजय अथवा पराजय से प्रभावित बहुत अधिक निजी हित नहीं थे, किन्तु स्वतन्त्रता एवं समानता के प्रेम जैसे उच्चस्तर के नैतिक सिद्धान्त संघर्ष में प्रमुख थे और वे हिंसात्मक भावनाओं को उभारने के लिए पर्याप्त थे।

जनशक्ति को सीमित करने की इच्छा रखनेवाली पार्टी ने अपने सिद्धान्तों को विशेष रूप से यूनियन के संविधान पर लागू करने का प्रयास किया, जिससे इसका नाम संघीय (फेडरल) हुआ। दूसरी पार्टी, जो केवल स्वतन्त्रता के पक्ष से ही सम्बन्धित रही, रिपब्लिकन कहलायी। अमरीका लोकतान्त्रिक देश है। अतः संघवादी हमेशा अल्पमत में रहे, किन्तु उन्हें स्वतन्त्रता संग्राम के प्रायः सभी महान पुरुषों का समर्थन प्राप्त रहा और उनकी नैतिक शक्ति भी अत्यधिक थी। इसके अतिरिक्त उनके उद्देश्य को परिस्थितियों से बल मिला। प्रथम महासंघ के विनाश से जनता अराजकता के भय से ग्रस्त हो गयी और जनसमूह की इस क्षणस्थायी मनोवृत्ति से संघवादियों को लाभ हुआ। दस अथवा बारह वर्षों तक वे सत्तारूढ़ रहे और उन्होंने अपने कतिपय सिद्धान्तों को कार्यान्वित किया। यद्यपि वे अपने समस्त सिद्धान्तों को कार्यरूप में नहीं परिणत कर सके, क्योंकि विरोध का प्रवाह दिन-प्रति-दिन इतना उग्र होता जा रहा था कि उसको रोकना मुश्किल था। १८०१ में रिपब्लिकनों ने सत्ता प्राप्त कर ली, थामस जेफर्सन प्रेसिडेंट चुने गये और उन्होंने अपनी अत्यधिक लोकप्रियता बुद्धि, प्रतिभा और नाम की महत्ता के बल पर अपनी पार्टी के प्रभाव को बढ़ाया।

जिन तरीकों से संघवादियों ने अपनी स्थिति को बनाये रखा, वे कृत्रिम थे, उनके प्रसाधन अस्थायी थे। वे अपने नेताओं के गुणों अथवा उनकी प्रतिभा तथा सौभाग्यपूर्ण परिस्थितियों के कारण सत्तारूढ़ हुए थे। जब रिपब्लिकनों ने अपनी बारी आने पर वही स्थान प्राप्त कर लिया, तब उनके विरोधियों की करारी हार हुई। एक बड़ा बहुमत अवकाश ग्रहण करनेवाली पार्टी के विरुद्ध हो गया और संघवादी इतने अल्पमत में रह गये कि उनकी भावी सफलता की आशा तत्काल समाप्त हो गयी। उस समय के बाद रिपब्लिकन अथवा डेमोक्रेटिक पार्टी विजय-पर-विजय प्राप्त करती रही, जब तक उसने देश में पूर्ण प्राधान्य प्राप्त नहीं कर लिया। संघवादियों ने यह देखा कि वे पराजित होकर साधनविहीन हो गये हैं तथा राष्ट्र के मध्य एकाकी रह गये हैं और वे दो भागों

में बँट गये, जिनमें से एक भाग विजयी रिपब्लिकन पार्टी से मिल गया और दूसरे ने अपने ध्वज उतार कर अपना नाम बदल दिया। एक पार्टी के रूप में संघवादियों का अस्तित्व समाप्त हुए अनेक वर्ष व्यतीत हो चुके है।

मेरे मतानुसार संघवादियों का सत्तारूढ़ होना महान अमरीकी संघ के निर्माण के साथ-साथ घटित होने वाली एक अत्यन्त सौभाग्यपूर्ण घटना थी। उन्होंने अपने देश की और अपने समय की अनिवार्य प्रवृत्तियों का विरोध किया। उनके सिद्धान्त चाहे अच्छे रहे हों अथवा बुरे, किन्तु उनका दोष यह था कि कुल मिला कर वे उस समाज पर लागू नहीं हो सकते थे, जिस पर वे शासन करना चाहते थे और इस कारण जेफर्सन के तत्वावधान में जिस समाज का निर्माण हुआ, वह शीघ्र अथवा बाद में अवश्य होता। किन्तु उनकी सरकार ने नवीन गण-राज्य (रिपब्लिक) को कुछ स्थायित्व प्रदान करने और जिन सिद्धान्तों का उन्होंने विरोध किया था, बाद मे उन्हीं सिद्धान्तों के गतिमान विकास का बिना किसी असुविधा के समर्थन करने का अवसर प्रदान किया। इसके अलावा इनके अनेक सिद्धान्त अन्त में उनके विरोधियों के राजनीतिक सिद्धान्त में शामिल कर लिये गये। आज जो संघीय संविधान है, वह उनकी देशभक्ति एवं बुद्धि का चिरस्थायी स्मारक है।

इस प्रकार वर्तमानकाल में अमरीका में महान राजनीतिक पार्टियाँ नहीं दिखायी देतीं।

महान पार्टियों के अभाव में अमरीका में छोटे मोटे विवादों की भरमार रहती है और जनमत छोटे-छोटे प्रश्नों पर हजारों विचारधाराओं में विभक्त रहता है। पार्टियों के बनाने में जो कष्ट उठाने पड़ते हैं, उनकी कल्पना नहीं की जा सकती और आज यह कार्य सरल नहीं है। अमरीका में कोई धार्मिक ईर्ष्या नहीं है; क्योंकि सभी धर्मों का सम्मान किया जाता है और कोई मत प्रमुख नहीं है। वहाँ कोई श्रेणीगत द्वेष नहीं है, क्योंकि जनता ही सब कुछ है और कोई भी उसके अधिकारों के सम्बन्ध में विवाद नहीं कर सकता। अन्तिम बात यह है कि यहाँ किसी प्रकार का सार्वजनिक संकट नहीं है, जो आन्दोलन का साधन सिद्ध हो सके, क्योंकि देश की भौतिक स्थिति ऐसी है कि उद्योग का विशाल क्षेत्र खुला है और मनुष्य को आश्चर्यजनक कार्य सम्पन्न करने के लिए केवल अकेला छोड़ दिये जाने की आवश्यकता रहती है। तथापि महत्वाकांक्षी व्यक्ति पार्टियों के बनाने में सफल हो सकेंगे, क्योंकि किसी व्यक्ति को केवल इसी

आधार पर कि दूसरे व्यक्ति उसके पद को लोभ की दृष्टि से देखते है और उसे ग्रहण करना चाहते है, सत्ता से हटाना कठिन है । राजनीतिक जगत के समस्त नेताओ का कौशल राजनीतिक दलो के निर्माण की कला मे ही निहित रहता है। संयुक्त राज्य अमरीका मे राजनीतिक महत्वाकांक्षी व्यक्ति सर्वप्रथम अपने खुद के हितो को पहचानता है, फिर अपने चारो ओर पाये जानेवाले अन्य हितो की खोज कर और एकत्र कर उन्हे अपने हितो में सम्मिलित कर लेता है। तत्पश्चात् वह कुछ ऐसे मतो या सिद्धान्तो की छानबीन करता है जो इस नये संसर्ग के उद्देश्यों के अनुकूल होते है। अत में वह अपने दल को आगे लाने के लिए और उसकी लोकप्रियता बनाये रखने के लिए उन्हें उसी प्रकार अंगीकार कर लेता है जिस प्रकार पूर्वकाल में किसी पुस्तक के मुखपृष्ठ पर शाही चिह्न अकित कर देने से उसे उस श्रेणी की पुस्तक में शामिल कर लिया जाता था जिसके वह योग्य नहीं होती थी। इस प्रकार राजनीतिक जगत में एक नये दल का प्रादुर्भाव होता है।

बाहरी व्यक्ति को शुरू शुरू में अमरीकियों के समस्त वादविवाद उद्दण्ड और तुच्छ प्रतीत होते हैं और वह असमंजस में पड़ जाता है कि वह ऐसे समाज पर, जो नितान्त तुच्छ बातो को गम्भीरतापूर्वक स्वीकार करता है, सहानुभूति प्रकट करे या उस प्रसन्नता के प्रति ईर्ष्या प्रकट करे जो समाज को इन छोटी-छोटी बातो पर विचार करने योग्य बनाती है। परन्तु, बाद में जब वह अमरीका के दलों को नियंत्रित करनेवाली गुप्त प्रवृत्तियो का अध्ययन करता है, तो शीघ्र ही उसे ज्ञात हो जाता है कि उनमें से अधिकांश दल न्यूनाधिक रूप में, स्वतंत्र समाज में सर्वदा विद्यमान रहनेवाले बड़े दलों मे से, किसी-न-किसी एक से सम्बन्धित है। ज्यों-ज्यों हम इन दलों की गहराई मे प्रवेश करते हैं, त्यों-त्यो हम देखते हैं कि एक का उद्देश्य जनता के अधिकारों को सीमित करने और दूसरे का उद्देश्य उन्हे विस्तृत करने का होता है। मेरा मंतव्य यह नहीं है कि इन दलों का परोक्ष अथवा अपरोक्ष उद्देश्य देश में कुलीनतंत्र अथवा प्रजातंत्र की अभिवृद्धि है। परन्तु निश्चयपूर्वक मेरा यह कहना है कि सभी दलों की तह में कुलीनतंत्र या प्रजातंत्र के उद्वेगों को सरलता से ढूँढ़ा जा सकता है, यद्यपि ऊपरी तौर से ऐसा दिखाई नहीं देता, फिर भी संयुक्त-राज्य अमरीका में वस्तुतः प्रत्येक दल का मुख्य विषय और मूल सार यही है।

कभी-कभी ऐसा होता है कि जहाँ लोगों में विभिन्न विचारधाराएँ होती हैं, वहाँ दलों का संतुलन बिगड़ जाता है और उनमें से एक दल परम शक्ति धारण

करता है, समस्त बाधाओं को पार करता है, अपने विरोधियों का उन्मूलन करता है और समाज के समस्त साधनों को अपने लिए उपयोगी बना लेता है। हारनेवाले सफलता के प्रति निराशा से अपना मुंह छिपा लेते हैं। उस समय सारा राष्ट्र केवल एक सिद्धान्त द्वारा शासित दिखाई देता है, और सर्वव्यापी सुस्थिरता आ जाती है। तभी देश में शान्ति और एकता बनाये रखने का सारा श्रेय सत्ताधारी दल को मिलता है; परन्तु इस प्रत्यक्ष एकता के भीतर अब भी विचारों का गहरा मतभेद और वास्तविक विरोध पाया जाता है।

अमरीका में जो कुछ हुआ, वह निम्नलिखित है : जब डेमोक्रेटिक पार्टी को सत्ता मिल गयी तब उसने कार्यों के सचालन पर एकाधिकार कर लिया और उस समय के बाद से समाज के कानूनों एवं प्रथाओं को उसकी समय-समय पर परिवर्तित होने वाली इच्छाओं के अनुसार बनाया जाता रहा है। आज समाज के अधिक समृद्ध वर्गों का राजनीतिक कार्यों पर कोई प्रभाव नहीं है और धन द्वारा अधिकार प्राप्त होना तो दूर की बात है; वह सत्ता प्राप्त करने के एक साधन की अपेक्षा अलोकप्रियता का कारण बन गया है। निर्धनतर वर्गों के अपने सहनागरिकों के विरुद्ध प्रतिस्पर्धा करने और बहुधा निरर्थक प्रतिस्पर्धा करने की अनिच्छा के कारण धनी व्यक्ति सूची से पृथक हो जाते हैं। चूंकि वे सार्वजनिक जीवन में वही स्थान प्राप्त नहीं कर सकते, जो उन्हें निजी जीवन में प्राप्त होता है; अतः वे सार्वजनिक जीवन का परित्याग कर निजी जीवन की ओर झुक जाते हैं और राज्य में उनका एक निजी समाज बन जाता है, जिसकी अपनी रुचियाँ और अपने आनन्द होते हैं। वे स्थिति को एक असाध्य बुराई मान कर उसके समक्ष आत्मसमर्पण कर देते हैं; किन्तु वे इस बात की सावधानी बरतते हैं कि यह न प्रकट होने पावे कि वे स्थिति के जारी रहने से भयभीत हैं। जब वे जनता के मध्य आते हैं, तब वे गणतांत्रिक शासन एवं प्रजातांत्रिक संस्थाओं के लाभों की प्रशंसा करते हुए सुनायी देते हैं। मनुष्य अपने शत्रुओं से घृणा करने के बाद उनकी खुशामद करने की ओर सर्वाधिक प्रवृत्त होते हैं; किन्तु बहुमत-सत्ता के प्रति इस कृत्रिम उत्साह और आज्ञाकारिता के नीचे यह देखना एक सरल कार्य है कि धनी व्यक्ति अपने देश की प्रजातांत्रिक संस्थाओं के प्रति हार्दिक घृणा रखते हैं। जनता एक सत्ता का निर्माण करती है, जिससे वह एक साथ ही भयभीत रहती है और घृणा भी करती है। यदि संयुक्त-राज्य अमरीका में कभी प्रजातंत्र के कुशासन के परिणामस्वरूप क्रान्तिकारी संकट उत्पन्न हुआ और राजतंत्रीय संस्थाएं बनीं, तो मेरे तर्कों की सत्यता स्पष्ट हो जायगी।

सफलता प्राप्त करने के लिए दल जिन दो प्रमुख अस्त्रों का प्रयोग करते हैं, वे हैं समाचार-पत्र और सार्वजनिक संगठन।

९—अमरीका में प्रेस की स्वतंत्रता

प्रेस की स्वतंत्रता का प्रभाव केवल राजनीतिक विचारधाराओं पर ही नहीं, बल्कि लोगों की समस्त विचारधाराओं पर भी पड़ता है और वह प्रथाओं तथा कानूनों, दोनों में परिवर्तन-संशोधन करता है। मैं स्वीकार करता हूँ कि प्रेस की स्वतंत्रता के प्रति मेरा वह दृढ़ एवं परिपूर्ण लगाव नहीं है, जो लगाव उन वस्तुओं के प्रति अपने आप होता है, जो स्वभावतः अत्यन्त उत्तम होती हैं। इससे जो लाभ होते हैं, उनकी अपेक्षा इससे रुकनेवाली बुराइयों की दृष्टि से मैं इसे अधिक पसन्द करता हूँ। यदि कोई पूर्ण स्वतंत्रता और पूर्ण वैचारिक दासता के बीच की एक ऐसी मध्यम स्थिति बता सके, जो तर्क-संगत भी हो, तो सम्भवतः मैं उसे ग्रहण करने के लिए तैयार हो जाऊँ; किन्तु उस मध्यम स्थिति का पता लगा सकना ही तो कठिन कार्य है। प्रेस की स्वेच्छाचारिता में सुधार करने और संयमित भाषा के प्रयोग की पुनः स्थापना करने के उद्देश्य से आप सर्वप्रथम जूरी के समक्ष अपराधी के विरुद्ध अभियोग लगाते हैं, किन्तु यदि जूरी उसे मुक्त कर देता है, तो जो मत एक व्यक्ति मात्र का था, वह समस्त देश का मत बन जाता है। अतः बहुत अधिक और बहुत कम किया गया है; तब और आगे बढ़िये। आप अपराधी को स्थायी मजिस्ट्रेटों के सामने लाते हैं, किन्तु यहाँ भी मामले का निर्णय किये जाने से पूर्व उसकी सुनवाई आवश्यक होती है और जिन सिद्धान्तों को किसी भी पुस्तक में व्यक्त करने का साहस नहीं किया जाता, उन्हीं सिद्धान्तों को बहसों में सार्वजनिक रूप से प्रस्तुत किया जाता है और केवल एक निबन्ध में जिस बात का अस्पष्ट रूप से संकेत किया गया था, उसकी पुनरावृत्ति इस प्रकार अन्य अनेक प्रकाशनों में की जाती है। भाषा केवल अभिव्यक्ति और (यदि मैं ऐसा कह सकूँ) विचार का शरीर होती है, किन्तु वह स्वयं विचार नहीं होती। न्यायाधिकरण शरीर की भर्त्सना कर सकते हैं, किन्तु रचना का अर्थ तथा उसकी भावना उनकी सत्ता के लिए अत्यन्त सूक्ष्म होती है। फिर भी पीछे हटने की दिशा में बहुत अधिक और आपके लक्ष्य की प्राप्ति की

दिशा मे बहुत कम किया गया है, आपको और आगे बढ़ना चाहिए। प्रेस की सेंसरशिप स्थापित कीजिए, किन्तु सार्वजनिक वक्ता की आवाज अब भी सुनायी देती रहेगी और आपका उद्देश्य अभी तक पूर्ण नहीं हुआ है; आपने केवल शरारत में वृद्धि कर दी है। शारीरिक शक्ति की भाँति विचार अपने अभिकर्त्ताओं की संख्या पर आश्रित नहीं होता, न लेखकों की गणना किसी सेना के सैनिकों की भाँति की जा सकती है। इसके विपरीत बहुधा ऐसा होता है कि कम व्यक्तियों द्वारा व्यक्त किये जाने वाले सिद्धान्त की शक्ति बढ़ जाती है। ध्यानपूर्वक सुनने वाले जन-समुदाय की भावनाओं को सम्बोधित कर कहे गये दृढ़ संकल्पवाले व्यक्ति के शब्द हजार वक्ताओं के शोरगुल से अधिक शक्तिशाली होते हैं और यदि उसे किसी सार्वजनिक स्थान पर स्वतंत्रता-पूर्वक बोलने की अनुमति दे दी जाय, तो उसका परिणाम वही होगा, जो परिणाम प्रत्येक गाँव में स्वतंत्रतापूर्वक बोलने की अनुमति देने का होगा। अतः भाषण-स्वतंत्रता और प्रेस-स्वतंत्रता को भी नष्ट करना अत्यन्त आवश्यक है। अब आप सफल हो गये, प्रत्येक व्यक्ति शांत हो गया, किन्तु आपका उद्देश्य स्वतंत्रता के दुरुपयोग को दबाना था और आप एक अत्याचारी के चरणों में पहुँच गये। आप स्वतंत्रता की चरम सीमा से दासता की चरम सीमा तक पहुँचा दिये गये और मार्ग में आपको कोई भी ऐसी तर्कसंगत स्थिति नहीं मिली, जिस पर आप रुक सकते।

अमरीकी पत्रों के अल्प प्रभाव के अनेक कारण हैं, जिनमें से कुछ ये हैं—लेखन-स्वतंत्रता में जब नवीनता होती है, तब वह अन्य समस्त स्वतंत्रताओं की भाँति अत्यन्त दुर्दम होती है, क्योंकि जो लोग अपने समक्ष राजकीय प्रश्नों पर विचार-विमर्श सुनने के अभ्यस्त नहीं हैं, वे उस प्रथम वक्ता में स्पष्ट विश्वास करने लगते हैं, जो उनके समक्ष उनके अधिकारों के समर्थक के रूप में उपस्थित होता है। उपनिवेशों की स्थापना के समय से ही आंग्ल-अमरीकी इस स्वतंत्रता का उपभोग करते रहे हैं। इसके अतिरिक्त प्रेस मानव-भावनाओं को उत्पन्न नहीं कर सकता, भले ही विद्यमान मानव-भावनाओं को प्रज्वलित करने में वह कितना ही कुशल हो। अमरीका मे राजनीतिक जीवन सक्रिय, विभिन्नताओं से पूर्ण और यहाँ तक कि आन्दोलन से भरा है, किन्तु वह उन गहरी भावनाओं से बहुत कम प्रभावित होता है, जो भौतिक हितों पर आघात पहुँचने पर उभर पड़ती हैं। अमरीका में ये हित समृद्धशालियों के हित हैं। एक फ्रांसीसी और एक अमरीकी समाचार-पत्र पर

दृष्टिपात करने से वह अन्तर स्पष्ट हो जायगा, जो इस सम्बन्ध में दोनों राष्ट्रों के मध्य विद्यमान है। फ्रांस में व्यापारिक विज्ञापनों को बहुत कम स्थान दिया जाता है और समाचारों का चयन भी अधिक नहीं होता, किन्तु तात्कालिक राजनीति पर विचार-विमर्श पत्र का आवश्यक अंग होता है। अमरीका में पत्र के विशाल पृष्ठ का तीन चौथाई भाग विज्ञापनों से भरा जाता है और शेष पर बहुधा राजनीतिक समाचार अथवा साधारण जीवन की घटनाएँ रहती हैं। फ्रांस के पत्रकार अपने पाठकों को जिस प्रकार के जोरदार विचार प्रतिदिन देते रहते हैं, उस प्रकार के विचार अमरीकी पत्रों में केवल समय समय पर एक कोने में दिखायी देते हैं।

पर्यवेक्षण से यह बात सिद्ध हो चुकी है तथा क्षुद्रतम निरंकुश व्यक्ति की भी निश्चित अन्तःप्रेरणा से इस बात का पता चल चुका है कि जिस अनुपात में किसी सत्ता के निर्देशन का केन्द्रीयकरण होता है, उसी अनुपात से उसके प्रभाव में वृद्धि होती है। फ्रांस में प्रेस का दो प्रकार का केन्द्रीयकरण होता है। उसकी प्रायः सारी सत्ता एक ही स्थान पर केन्द्रित है, अथवा यों कहना चाहिए कि वह थोड़े-से व्यक्तियों के हाथों में ही केन्द्रित है, क्योंकि उसके अङ्ग अनेक नहीं हैं। एक सन्देहपूर्ण राष्ट्र पर इस प्रकार से गठित सार्वजनिक प्रेस का प्रभाव प्रायः अपरिसीम होता है। यह एक ऐसा शत्रु है, जिसके साथ एक सरकार समय-समय पर सन्धि कर सकती है, किन्तु जिसका प्रतिरोध अधिक समय तक कर सकना कठिन होता है।

इस प्रकार के किसी भी केन्द्रीयकरण का अमरीका में अस्तित्व नहीं है। संयुक्त-राज्य अमरीका में कोई केन्द्र बिन्दु नहीं है, जनता की बुद्धि और सत्ता इस विशाल राष्ट्र के सभी भागों में होकर फैली हुई है और एक ही बिन्दु से प्रसारित होने की अपेक्षा वे प्रत्येक दिशा में एक दूसरे का अतिक्रमण करती हैं। अमरीकियों ने कहीं भी विचारों की कोई केन्द्रीय दिशा नहीं स्थापित की है, जिस प्रकार कि उन्होंने कार्य संचालन के लिए कोई केन्द्रीय दिशा नहीं निर्धारित की है। यह अन्तर भी स्थानीय परिस्थितियों के कारण ही उत्पन्न होता है, मानवीय शक्ति से नहीं; किन्तु संघ के कानूनों के कारण ही मुद्रकों को लाइसेंस नहीं दिये जाते, फ्रांस की भाँति यहाँ सम्पादकों से जमानतें नहीं माँगी जातीं और फ्रांस एवम् इंग्लैण्ड की भाँति यहाँ स्टाम्प-कर नहीं लिया जाता। इसका परिणाम यह होता है कि समाचार-पत्र की स्थापना से सरल अन्य कोई कार्य नहीं है; क्योंकि थोड़े-से ग्राहक भी उसके व्यय की पूर्ति के लिए पर्याप्त होते हैं।

अतः अमरीका में पत्र-पत्रिकाओं की संख्या इतनी अधिक हैं कि उन पर विश्वास नहीं होता। अत्यधिक सुविज्ञ अमरीकी प्रेस के इस अल्प प्रभाव का कारण उसकी सत्ता का अत्यधिक बिखरा होना बताते हैं, और इस देश में राजनीतिक विज्ञान की यह एक स्वयंसिद्धि है कि सार्वजनिक पत्रों का प्रभाव कम करने का एकमात्र मार्ग है कि उनकी संख्या में वृद्धि कर दी जाय। मैं नहीं समझ पाता कि जो सत्य इतना अधिक स्वतः स्पष्ट है, उसे यूरोप में पहले ही अधिक सामान्य रूप से क्यों नहीं स्वीकार किया गया। मैं यह तो समझ सकता हूँ कि वे व्यक्ति, जो पत्रों के साधन से क्रान्ति उत्पन्न करने की आशा करते हैं, क्यों उन्हें थोड़े-से शक्तिशाली अंगों तक ही सीमित रखना चाहते हैं। किन्तु इस बात की कल्पना भी नहीं की जा सकती कि वर्तमान व्यवस्था के सरकारी पक्षपाती तथा कानून के स्वाभाविक समर्थक प्रेस की सत्ता के केन्द्रीयकरण द्वारा उसके प्रभाव को कम करने का प्रयास करें। यूरोप की सरकारें प्रेस के साथ उसी प्रकार की शिष्टता बरतती हुई प्रतीत होती हैं, जैसी कि पुराने जमाने के सरदार अपने विपक्षियों के साथ बरतते थे। निजी अनुभव से यह जान लेने के बाद कि केन्द्रीयकरण एक शक्तिशाली शस्त्र है, उन्होंने अपने शत्रुओं को उससे सज्जित किया है, जिससे वे उन्हें अधिक गौरव के साथ परास्त कर सकें।

अमरीका में शायद ही कोई ऐसा गाँव होगा जिसका अपना समाचार-पत्र नहीं है। इस बात की सहज ही कल्पना की जा सकती है कि इतने अधिक प्रतिद्वन्द्वियों के मध्य न तो अनुशासन की और न कार्य की एकता की स्थापना की जा सकती है और फलस्वरूप प्रत्येक अपने झण्डे के नीचे संघर्ष करता रहता है। निश्चय ही अमरीका में सभी राजनीतिक पत्रिकाएँ प्रशासन के पक्ष में अथवा विपक्ष में विचार व्यक्त करती रहती हैं, किन्तु वे हजारों भिन्न-भिन्न मार्गों से उसका समर्थन अथवा विरोध करती हैं। वे विचारों का वह प्रचण्ड प्रवाह नहीं बना सकतीं जो अत्यन्त शक्तिशाली बांधों को भी बहा ले जाता है। प्रेस के प्रभाव के इस विभाजन से अन्य परिणाम उत्पन्न होते हैं, जो कम महत्वपूर्ण नहीं हैं। समाचारपत्रों की स्थापना इतनी आसानी से होती है कि उनकी संख्या बहुत अधिक बढ़ जाती है, किन्तु चूँकि प्रतिस्पर्द्धा के कारण अधिक लाभ नहीं होता, अतः अधिक योग्यतावाले व्यक्ति इन संस्थाओं के साथ सम्बद्ध होने के लिए बहुत कम प्रेरित होते हैं। सार्वजनिक समाचारपत्रों की संख्या इतनी अधिक होती है कि उनके धन कमाने के साधन होते हुए भी उन सभी के संचालन के लिए योग्य प्रेरक नहीं मिल सकते। अमरीका

के पत्रकारों की स्थिति सामान्यतः अत्यन्त विपन्न होती है, उनकी शिक्षा कम होती है और उनकी विचारधारा विकृत होती है। बहुमत की इच्छा सर्वाधिक कानून होती है और उससे एक प्रकार की परम्परा बनती है, जिसके अनुकूल हर एक को चलना ही चाहिए। इन सामान्य परम्पराओं की समष्टि को ही हर एक धन्धे की वर्ग-भावना कहा जाता है; इस प्रकार वकीलों, न्यायालयों आदि की वर्ग-भावना होती है। फ्रांसीसी पत्रकारों की वर्ग भावना राज्य के महान हितों पर उग्र रूप से, किन्तु बहुधा प्रभावशाली एवं धाराप्रवाह भाषा में और उच्च विचार-विमर्श करने में निहित होती है और इस प्रकार की लेखन-प्रणाली के अपवाद कभी-कभी ही दिखायी देते हैं। अमरीकी पत्रकार की विशिष्टता यह होती है कि वह अपने पाठकों की भावनाओं को खुले रूप से एवं भद्दे ढंग से उभाड़ता है; वह व्यक्तियों के आचरण पर आक्षेप करने, उनके व्यक्तिगत जीवन का पता लगाने तथा उनकी समस्त कमज़ोरियों और बुराइयों को प्रकट करने के सिद्धान्तों का परित्याग कर देता है।

यद्यपि प्रेस इन साधनों तक ही सीमित है, तथापि अमरीका में उसका प्रभाव बहुत अधिक है। वह उस विशाल देश के समस्त भागों में राजनीतिक जीवन का संचार करता है। राजनीतिक कुचक्रों के गुप्त स्रोतों का पता लगाने के लिए तथा जनमत के न्यायालय के समक्ष बारी-बारी से सभी राजनीतिक दलों के नेताओं को बुलाने के लिए उसकी आँखें सदा खुली रहती हैं। वह समाज के हितों को कतिपय सिद्धान्तों के चारों ओर एकत्र करता है और प्रत्येक दल का लक्ष्य निर्धारित करता है; क्योंकि वह उन लोगों को विचार-विनिमय का एक साधन प्रदान करता है, जो कभी तात्कालिक सम्पर्क में आये बिना एक-दूसरे की बातें सुनते हैं और एक-दूसरे को सम्बोधित करते हैं। जब प्रेस के अनेक अंग एक ही प्रकार की आचरण-पद्धति ग्रहण करते हैं, तब अन्ततोगत्वा उनका प्रभाव अदम्य हो जाता है और निरन्तर एक ही दिशा से आक्रान्त होता रहनेवाला जनमत अन्त में उस प्रहार के समक्ष आत्मसमर्पण कर देता है। अमरीका में एक पृथक पत्र की सत्ता कुछ भी नहीं होती; किन्तु नियमित अवधि के अन्तर से प्रकाशित होने वाले पत्रों की शक्ति का स्थान जनता की शक्ति के बाद ही है।

१० — संयुक्त-राज्य अमरीका में राजनीतिक संगठन

विश्व में अमरीका के अलावा किसी भी अन्य राष्ट्र में संघ के सिद्धान्त का इतनी सफलता से प्रयोग नहीं किया गया है अथवा इसको इतनी व्यापकता से लागू नहीं किया गया है। कस्बों, नगरों अथवा काउंटियों के नामों के अन्तर्गत अथवा कानून द्वारा स्थापित स्थायी संगठनों के अतिरिक्त अन्य अनेक संगठन निजी व्यक्तियों द्वारा निर्मित और संचालित होते हैं।

अमरीका के नागरिक को बचपन से ही अपने ही प्रयासों पर विश्वास करना सिखाया जाता है, जिससे वह जीवन की कठिनाइयों और बुराइयों का सामना कर सके। वह सामाजिक सत्ता को सन्देह और चिन्ता की दृष्टि से देखता है और उसकी सहायता का तभी दावा करता है जब उसके बिना उसके लिए कार्य करना असम्भव हो जाता है। इस आदत की झलक पाठशालाओं में भी देखी जा सकती है, जहाँ बालक अपने द्वारा बनाये हुये नियमों के आगे झुकने के आदी होते हैं और उन नियमों का, जिनको उन्होंने ही बनाया है, उल्लंघन करनेवाले को दण्ड देते हैं। इस प्रकार की भावना सामाजिक जीवन की सभी गतिविधियों में व्याप्त है। यदि मार्ग में किसी प्रकार की रुकावट आ जाती है और यातायात में किसी प्रकार की बाधा उपस्थित हो जाती है तो पड़ोसी तत्काल एक विचार-सभा का निर्माण कर लेते हैं और बिना किसी पूर्व तैयारी के तत्काल बनायी गयी यह सभा कार्यपालिका सत्ता को जन्म देती है और इसके पूर्व कि कोई व्यक्ति तात्कालिक रूप से सम्बद्ध व्यक्तियों की सत्ता से उच्चतर एवं पहले से ही विद्यमान सत्ता को सूचित करने की बात सोच सके, इस असुविधा को दूर कर दिया जाता है। यदि किसी सार्वजनिक आनन्द का प्रश्न उठता है तो उस मनोरंजन में नियमितता और अधिक शोभा लाने के लिए संगठनों का गठन किया जाता है। ऐसी बुराइयों को, जिनका स्वरूप विशुद्धतः नैतिक होता है, मिटाने के लिए, जैसे मद्यपान की बुराई कम करने के लिए, संस्थाएं बनायी जाती हैं। अमरीका में सार्वजनिक सुरक्षा, वाणिज्य, उद्योग, नैतिकता और धर्म की रक्षा के लिए संगठन बनाये जाते हैं। एक संस्था के रूप में संगठित व्यक्तियों की सम्मिलित शक्ति द्वारा किसी भी लक्ष्य की प्राप्ति में मानवीय इच्छा हतोत्साह नहीं होती।

व्यक्तियों का कोई समूह कतिपय सिद्धान्तों को, जो सार्वजनिक सहमति प्रदान करता है तथा एक निश्चित पद्धति द्वारा उन सिद्धान्तों के प्रसार के लिए

वे जो कुछ करने के लिए अनुबन्ध करते है, उसी से संस्था का निर्माण होता है। इस प्रकार के मतों के साथ सम्बद्ध होने का अधिकार बहुत अधिक लाइसेंस-रहित मुद्रण की स्वतंत्रता के सदृश होता है, किन्तु इस प्रकार से बनी संस्थाओ के अधिकार प्रेस से भी अधिक होते हैं। जब एक सस्था किसी मत का प्रतिनिधित्व करती है तब वह आवश्यक रूप से सही और स्पष्ट रूप धारण कर लेती है। वह अपने समर्थकों की सस्था की गणना करती है और उन्हे अपने उद्देश्यों मे दीक्षित करती है, दूसरी ओर वे एक दूसरे से परिचित होते हैं और उनकी संख्या से उनके उत्साह मे वृद्धि होती है। एक सगठन भिन्न दिशा में सलग्न मस्तिष्कों के प्रयासो को एक दिशा मे लाता है और उन्हें एक लक्ष्य की ओर, जिसका वह स्पष्ट संकेत करता है, बढ़ने के लिए प्रबल रूप से प्रेरित करता है।

संघ के अधिकार के प्रयोग का दूसरा अश है सभा की शक्ति। जब किसी संगठन को देश के कुछ महत्वपूर्ण भागों में कार्य-केन्द्र स्थापित करने की अनुमति दी जाती है, तब उसकी गतिविधि बढ़ जाती है और उसके प्रभाव की सीमा विस्तृत हो जाती है। मनुष्यों को एक दूसरे से मिलने का अवसर मिलता है, कार्य करने के साधन सयुक्त हो जाते है और मतों की रक्षा एक ऐसे उत्साह एवं शक्ति के साथ की जाती है, जिन्हें लिखितभाषा कभी नहीं प्राप्त कर सकती। अन्त में राजनीतिक सगठनों के अधिकार के प्रयोग में एक तीसरा अश होता है; किसी मत के समर्थक निर्वाचक सस्थाओ में सयुक्त होकर केन्द्रीय धारासभा में अपना प्रतिनिधित्व करने के लिए प्रतिनिधियो का निर्वाचन कर सकते हैं। ठीक ठीक कहा जाय तो यह दल पर प्रतिनिधिमूलक प्रणाली को लागू करना है।

इस प्रकार प्रारम्भ मे एक मत रखने वाले व्यक्तियों की एक संस्था बनती है और जो सूत्र उनको एक दूसरे से आबद्ध रखता है, उसका स्वरूप विशुद्ध बौद्धिक होता है। दूसरे मामले में छोटी छोटी सस्थाएं बनती है जो पार्टी के एक भाग का ही प्रतिनिधित्व करती है। अन्त में, यानी तीसरे मामले में यह कहा जा सकता है कि वे राष्ट्र के बीच एक अलग राष्ट्र और सरकार के अन्तर्गत सरकार बनाती हैं। उनके प्रतिनिधि बहुमत के वास्तविक प्रतिनिधियों की भाँति अपनी पार्टी की समस्त सामूहिक शक्ति का प्रतिनिधित्व करते है और उनकी भाँति ही वे एक राष्ट्र के रूप में दिखायी देते है तथा उसके परिणामस्वरूप उत्पन्न होने वाली समस्त नैतिक शक्ति भी उनके पास होती है। यह सच है कि

उनको अन्यों की भाँति कानून बनाने का अधिकार नहीं होता, किन्तु जो कानून प्रचलित हैं, उनकी आलोचना करने का तथा जो कानून बनाये जाने चाहिए उनकी रूपरेखा अग्रिम रूप से तैयार करने का उन्हें अधिकार होता है।

जिस जाति को स्वतंत्रता का प्रयोग करने का अपूर्ण अधिकार होता है अथवा जिसकी राजनीतिक भावनाएँ उग्र होती हैं, उसमें यदि कानून बनाने वाले बहुमत के पार्श्व में एक ऐसे अल्पमत को रख दिया जाय, जो केवल विचार विमर्श करता है तथा जिसे अमल में लाने के लिए तैयार कानून मिलते हैं, तो मैं यह विश्वास किये बिना नहीं रह सकता कि वहाँ जन-शान्ति के लिए बहुत बड़ा खतरा उपस्थित हो जायगा। इसमें सन्देह नहीं कि यह सिद्ध करने में कि एक कानून अपने आप में एक दूसरे कानून की अपेक्षा अधिक अच्छा है तथा यह सिद्ध करने में कि दूसरे कानून का स्थान पहले कानून को दिया जाय, बहुत बड़ा अन्तर है; किन्तु अधिकांश व्यक्ति इस अन्तर की, जो विचारशील व्यक्तियों के मस्तिष्क में स्पष्ट होता है, आसानी के साथ उपेक्षा कर देते हैं। कभी-कभी ऐसा होता है कि एक राष्ट्र दो लगभग बराबर की पार्टियों में विभक्त होता है, जो बहुमत का प्रतिनिधित्व करने का दावा करती हैं। यदि निर्देशिका सत्ता के निकट एक दूसरी सत्ता की स्थापना हो जाय, जिसका नैतिक अधिकार पहली के नैतिक अधिकार के समान ही है, तो हमें यह विश्वास नहीं करना चाहिए कि वह कार्रवाई किये बिना बोलने में ही सन्तोष करेगी अथवा वह सदा इस सूक्ष्म विचार तक ही सीमित रहेगी कि संघों का काम विचारधाराओं का निर्देशन करना है; उनको लागू करना नहीं, कानून का सुझाव देना है, कानून बनाना नहीं।

प्रेस-स्वातंत्र्य पर उसके मुख्य परिणामों के दृष्टिकोण से मैं जितना अधिक सोचता हूँ, उतना ही मुझे विश्वास होता जाता है कि आधुनिक विश्व में यह स्वतंत्रता का मुख्य और यह कहना चाहिए कि सारभूत तत्त्व है। अतः जो राष्ट्र स्वतंत्र रहने के लिए कृतसंकल्प हैं, उनका किसी भी कीमत पर इस स्वतंत्रता के लिए माँग करना ठीक ही है; किन्तु राजनीतिक संस्था की असीमित स्वतंत्रता को प्रेस की स्वतंत्रता के पूर्णतः समान नहीं माना जा सकता, क्योंकि वे एक दूसरे की अपेक्षा एक साथ ही कम आवश्यक और अधिक खतरनाक होती हैं। कोई राष्ट्र आत्मनिर्देशन की शक्ति के किसी भी अंश को समर्पित किये बिना भी कतिपय सीमाओं के अन्तर्गत रह सकता है और कभी-कभी वह अपने अधिकार की रक्षा करने के लिए विवश भी हो जाता है।

इस बात को स्वीकार करना ही होगा कि अमरीका में राजनीतिक संगठन की निरंकुश स्वतंत्रता के अभी तक ऐसे घातक परिणाम नहीं हुए हैं, जो अन्य राष्ट्रों में सम्भवतः हो सकते हैं। संगठन का अधिकार इंग्लैण्ड से आया और अमरीका में यह सदा कायम रहा: इस विशेषाधिकार का प्रयोग अब लोगों के रीति-रिवाजों और आचरण के साथ मिल गया है। आज के युग में बहुमत के अत्याचार के विरुद्ध संगठन की स्वतंत्रता एक आवश्यक 'गारण्टी' हो गयी है। अमरीका में जैसे ही एक पार्टी प्रभुताशाली बन जाती है, सभी सार्वजनिक अधिकार उसके हाथ में चले जाते हैं, उसके निजी समर्थक समस्त पदों पर आरूढ़ हो जाते हैं और प्रकाशन की सारी शक्ति उनके हाथ में चली जाती है। चूंकि विपक्षी दल के अत्यन्त प्रतिष्ठित व्यक्ति भी उस सीमा को पार नहीं कर सकते, जो उनको सत्ता से अलग रखती है, इसलिए उनके लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वे उसके बाहर अपनी स्थिति को सुदृढ़ बनायें और भौतिक सत्ता पर अल्पमत के उस समस्त नैतिक अधिकार का विरोध करें, जिसका उस पर आधिपत्य होता है। इस प्रकार एक भीषण खतरे का सामना करने के लिए एक खतरनाक साधन का प्रयोग किया जा सकता है।

बहुमत की सर्वशक्तिमत्ता मुझे अमरीकी गणतंत्रों के लिए इतने खतरों से भरी हुई मालूम देती है कि उस पर रोक लगाने के लिए खतरनाक साधनों का प्रयोग भी घातक की अपेक्षा लाभदायक अधिक प्रतीत होता है और यहाँ मैं एक ऐसा मत व्यक्त करूंगा, जिससे पाठक को वह बात याद आ जायेगी जो मैंने बस्तियों की स्वतंत्रता के सम्बन्ध में कही थी। किसी दल की निरंकुशता अथवा किसी राजा की स्वेच्छाचारिता के अत्याचार को रोकने के लिए संगठनों की आवश्यकता अन्य देशों में उतनी नहीं होती, जितनी गणतांत्रिक देशों में। कुलीनतांत्रिक राष्ट्रों में सरदारों और धनिकों का स्वतः एक संगठन बन जाता है, जो सत्ता के दुरुपयोग को रोकता है। जिन देशों में ऐसे संघ नहीं है, यदि निजी व्यक्ति उसके स्थान पर कृत्रिम और स्थायी संगठन नहीं बना सकते तो भीषण अत्याचारों से उनके लिए कोई स्थायी सुरक्षा नहीं हो सकती और एक छोटे वर्ग अथवा एक व्यक्ति द्वारा महान जन-समुदाय का स्वतंत्रतापूर्वक दमन किया जा सकता है।

इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि राजनीतिक कार्यों के लिए संगठन की अनियंत्रित स्वतंत्रता एक ऐसा विशेषाधिकार है जिसके प्रयोग को

सीखने में मनुष्य को सब से अधिक समय लगता है। यदि वह राष्ट्र में अराजकता उत्पन्न नहीं करती तो वह अराजकता के संकट की आशंकाओं में निरन्तर वृद्धि अवश्य करती है। फिर भी, एक विन्दु पर इस खतरनाक स्वतंत्रता से दूसरे प्रकार के खतरों से रक्षा होती है। ऐसे देशों में जहाँ संघ स्वतंत्र होते हैं, गुप्त संस्थाएँ अज्ञात रहती हैं। अमरीका में दलबन्दी है, किन्तु षड्यन्त्र नहीं।

स्वेच्छापूर्वक कार्य करने के बाद मनुष्य का सर्वाधिक स्वाभाविक अधिकार है अपने सहभागियों के साथ अपने प्रयत्नों को संयुक्त करना तथा उनके साथ मिलकर सामान्य कार्य करना। अतः मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि संगठन का अधिकार भी व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार के समान ही अविच्छेद्य है। कोई भी विधायक समाज की नींव को आघात पहुँचाये बिना उस पर प्रहार नहीं कर सकता। तथापि यदि संगठन की स्वतंत्रता कुछ राष्ट्रों के लिए केवल लाभ और समृद्धि का एक साधन है तो अन्य राष्ट्र उसको दूषित भी कर सकते हैं और उसे जीवन के तत्व से बदल कर सर्वनाश का कारण बनाया जा सकता है। ऐसे देशों में जहाँ स्वतंत्रता को अच्छी तरह समझा जाता है और जहाँ स्वतंत्रता उच्छृंखलता का रूप धारण कर लेती है, संगठनों द्वारा अपनायी जानेवाली विभिन्न पद्धतियों की तुलना सरकारों और पार्टियों के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

अधिकांश यूरोपीय संगठन को एक ऐसा अस्त्र मानते हैं, जिसको शीघ्र बनाया जा सकता है और संघर्ष के समय तत्काल काम में लाया जा सकता है। संस्था की स्थापना विचार विनिमय के लिए की जाती है, किन्तु इसमें शामिल होनेवालों के मस्तिष्क में भावी कार्रवाई की भावना व्याप्त रहती है। वास्तव में यह एक सेना है और भाषण में जितना समय व्यतीत किया जाता है, उसमें शक्ति का अनुमान लगाया जाता है तथा समूह के साहस को जाग्रत किया जाता है, जिसके बाद वे शत्रु के विरुद्ध प्रयाण करते हैं। कानून की सीमाओं के अन्तर्गत रहनेवाले साधन संगठन के सदस्यों को सफलता के साधन के रूप में जँच सकते हैं, किन्तु वे सफलता के एकमात्र साधन के रूप में कभी नहीं जँच सकते।

फिर भी अमरीका में संगठन के अधिकार को इस प्रकार नहीं समझा जाता। अमरीका में वे नागरिक, जो अल्पसंख्यक हैं, प्रथमतः अपनी संख्यागत शक्ति का प्रदर्शन करने और इस प्रकार बहुमत की नैतिक शक्ति को कम करने के लिए और द्वितीयतः

प्रतिस्पर्द्धा में वृद्धि करने तथा इस प्रकार उन तर्कों का पता लगाने के लिए, जो बहुसंख्यक दल पर प्रभाव डालने के लिए सर्वाधिक उपयुक्त होते हैं, अपना संगठन बनाते हैं, क्योंकि उनको सदैव यह आशा रहती है कि वे बहुमत को अपनी ओर ला सकेंगे और इस प्रकार उसके नाम पर सर्वोच्च सत्ता का प्रयोग कर सकेंगे। अतः अमरीका में राजनीतिक संगठनों के इरादे शान्तिमय होते हैं और उनके द्वारा अपनाये जानेवाले साधन पूर्णतः वैधानिक होते हैं। वे बलपूर्वक कहते हैं तथा उनका कथन पूर्णतया सत्य भी है कि उनका उद्देश्य केवल वैधानिक उपायों द्वारा ही सफलता प्राप्त करने का होता है।

इस सम्बन्ध में अमरीकियों और यूरोपीय लोगों के मध्य जो अन्तर है, वह कई कारणों पर निर्भर करता है। यूरोप में ऐसी पार्टियाँ हैं, जिनका बहुमत से इतना अधिक मतभेद होता है कि वे उसका समर्थन प्राप्त करने की आशा कभी नहीं कर सकतीं। फिर भी वे सोचती हैं कि वे अपने आप में इतनी शक्तिशालिनी हैं कि वे बहुमत का सामना कर सकती हैं। जब इस प्रकार की पार्टी कोई संगठन बनाती है तब उसका उद्देश्य विश्वास दिलाना नहीं, बल्कि संघर्ष करना होता है। अमरीका में जो व्यक्ति बहुमत के बहुत अधिक प्रतिकूल मत रखते हैं, वे उसके विरुद्ध कुछ भी नहीं कर सकते और अन्य सभी पार्टियाँ बहुमत को अपने ही सिद्धान्तों के अनुकूल बनाने की आशा रखती हैं। तब जिस अनुपात में बड़ी पार्टियाँ बहुमत प्राप्त कर सकने में अपने को पूर्णतया असमर्थ पाती हैं, उसी अनुपात में संगठन के अधिकार का प्रयोग खतरनाक हो जाता है। संयुक्त राज्य अमरीका जैसे देश में जहाँ मतभेद स्वरूप-भेद मात्र है, संगठन का अधिकार बिना दुष्परिणामों के अपरिसीम रह सकता है। हम स्वतंत्रता विषयक अपनी अनुभवहीनता के फलस्वरूप संगठन की स्वतंत्रता को केवल सरकार की आलोचना करने का अधिकार समझने लगते हैं। अपनी शक्ति का ज्ञान होने के बाद पार्टी और व्यक्ति के समक्ष जो प्रथम धारणा उपस्थित होती है, वह है हिंसा की धारणा। तर्क द्वारा मनाने की धारणा बाद में बनती है और वह अनुभव से प्राप्त की जाती है। अंग्रेज, जो ऐसी पार्टियों में बँटे हुए हैं जो एक दूसरे से भिन्न हैं, संगठन के अधिकार का दुरुपयोग बहुत कम करते हैं; क्योंकि लम्बे अर्से से वे इसका पालन करने के आदी हैं। फ्रांस में युद्ध की भावना इतनी उग्र है कि इतने अधिक पागलपन से भरा हुआ अथवा राज्य के कल्याण के लिए इतना अधिक

हानिकारक कार्य कोई नहीं है और कोई व्यक्ति अपने प्राणों की कीमत पर इसकी रक्षा करने में अपने को सम्मानित नहीं मानता।

किन्तु अमरीका में राजनीतिक संगठनों की हिंसा को कम करने का कदाचित् सबसे बड़ा कारण देशव्यापी मताधिकार है। जिन देशों में देशव्यापी मताधिकार है, वहाँ बहुमत कभी भ्रम में नहीं रहता, क्योंकि कोई भी पार्टी समाज के उस वर्ग का प्रतिनिधित्व करने का तर्क-संगत दावा नहीं कर सकती, जिसने मतदान नहीं किया है। संगठन और राष्ट्र भी जानते हैं कि वे बहुमत का प्रतिनिधित्व नहीं करते। वास्तव में इस बात का पता उनके अस्तित्व से ही चल जाता है, क्योंकि यदि वे बहुमत की शक्ति का प्रतिनिधित्व करते हैं तो वे सुधार का प्रयत्न करने की अपेक्षा कानून में परिवर्तन ही कर डालते। इसके फलस्वरूप सरकार का, जिसकी वे आलोचना करते हैं, नैतिक प्रभाव बहुत बढ़ जाता है और स्वयं उनकी शक्ति बहुत अधिक क्षीण हो जाती है।

यूरोप में बहुत कम ऐसे संगठन हैं जो बहुमत का प्रतिनिधित्व करने का दिखावा नहीं करते अथवा जो उसका प्रतिनिधित्व करने का विश्वास नहीं रखते। यह धारणा अथवा यह दावा उनकी शक्ति में आश्चर्यजनक वृद्धि करता है और यह उनकी कार्रवाइयों को वैधानिक बनाने में कम योग नहीं देता। दबाये गये अधिकार के बचाव में हिंसा भी क्षम्य प्रतीत हो सकती है। इस प्रकार मानवीय कानूनों की विशाल उलझनों में ऐसा होता है कि उग्र स्वतंत्रता कभी-कभी स्वतंत्रता की बुराइयों में सुधार करती और उग्र प्रजातंत्र प्रजातंत्र के खतरों को दूर करता है। यूरोप में संगठन अपने को कुछ हद तक अपने लिए बोलने में असमर्थ लोगों की विधान-निर्मातृ और कार्यकारिणी परिषद् मानते हैं तथा इसी विश्वास के आधार पर वे कार्य और नेतृत्व करते हैं। अमरीका में, जहाँ वे सबकी दृष्टि में राष्ट्र के अल्पमत का ही प्रतिनिधित्व करते हैं, वे तर्क करते हैं और आवेदन पेश करते हैं।

यूरोप में संगठनों द्वारा अपनाये जाने वाले साधन उनके लक्ष्यों के अनुकूल होते हैं। चूँकि इन संस्थाओं का मुख्य उद्देश्य कार्य करना होता है, विश्वास दिलाना नहीं, अतः वे ऐसे संगठन बनाने के लिए प्रेरित होते हैं जो नागरिक और शान्तिपूर्ण नहीं होते, बल्कि सैनिक जीवन की आदतों और सिद्धान्तों का अनुसरण करते हैं। वे अपनी शक्ति को जहाँ तक सम्भव हो सके, केन्द्रित करते हैं और समूची पार्टी की शक्ति को थोड़े से नेताओं के हाथ में सौंप देते हैं

इन संगठनों के सदस्य गश्त पर तैनात सैनिकों की भांति एक सांकेतिक शब्द पर सक्रिय हो जाते हैं, वे सविनय आज्ञापालन के सिद्धान्त में विश्वास करते हैं अथवा यह कह सकते हैं कि वे एक साथ संगठित होने में तत्काल अपने निजी निर्णय और स्वतंत्र इच्छा के प्रयोग का परित्याग कर देते हैं। ये संस्थाएँ जिस तानाशाही नियंत्रण का प्रयोग करती हैं, वह समाज पर सरकार की सत्ता की अपेक्षा, जिसकी वे आलोचना करते हैं, बहुत अधिक असमर्थनीय होती हैं। इन कार्रवाइयों से उनकी नैतिक शक्ति बहुत कम हो जाती है और उनका वह पावन स्वरूप नष्ट हो जाता है, जो दमनकारियों के विरुद्ध दलितों के संघर्ष के साथ सदा सम्बद्ध रहता है। जो निश्चित मामलों में दासता की भावना से अपने साथियों की आज्ञा का पालन करना स्वीकार करता है और जो अपनी इच्छा तथा अपने विचारों को भी उनके नियंत्रण में छोड़ देता है, वह यह कैसे कह सकता है कि वह स्वतंत्र होना चाहता है?

अमरीकियों ने अपने संगठनों में सरकार की भी स्थापना की है, किन्तु यह अपरिवर्तनीय रूप से नागरिक प्रशासन से उधार ली गयी है। हरेक व्यक्ति की स्वतंत्रता को औपचारिक रूप से मान्यता मिली हुई है, जैसे कि समाज में सभी सदस्य एक ही लक्ष्य की ओर एक ही समय बढ़ते हैं, किन्तु उनके लिए एक ही मार्ग अपनाना आवश्यक नहीं है। कोई भी अपने तर्क और अपनी स्वतंत्र इच्छा के प्रयोग का परित्याग नहीं करता, किन्तु प्रत्येक व्यक्ति समान कार्य को आगे बढ़ाने के लिए उस तर्क एवं इच्छा पर जोर देता है।

११. संयुक्त-राज्य अमरीका में प्रजातंत्र से लाभ

प्रजातांत्रिक सरकार की कमियों और कमजोरियों का तत्काल पता चल सकता है, इनका पता स्पष्ट घटनाओं से चल जाता है, जबकि इसका लाभकारी प्रभाव अस्पष्ट और अज्ञात रहता है। उसकी कमियों का पता लगाने के लिए एक दृष्टिपात मात्र पर्याप्त होता है, किन्तु उसके अच्छे गुणों का पता दीर्घकालिक पर्यवेक्षण से ही चल सकता है। अमरीकी प्रजातंत्र के कानून त्रुटिपूर्ण अथवा अपूर्ण हैं। वे कभी-कभी निहित स्वार्थों पर प्रहार करते हैं अथवा कुछ अन्य की स्वीकृति देते हैं, जो समाज के लिए खतरनाक होते हैं और यदि वे अच्छे भी हों तो भी उनकी बहुलता एक भारी बुराई है।

तब किस प्रकार अमरीकी गणतंत्र समृद्धि की ओर बढ़ते जाते है और कायम है ?

प्रजातंत्र के कानून सामान्यतः यथासम्भव अधिकाधिक व्यक्तियों के कल्याण के लिए होते हैं, क्योंकि वे नागरिकों के बहुमत द्वारा बनाये जाते हैं, जिनके लिए गलतियाँ करना स्वाभाविक होता है, किन्तु जिनका हित स्वयं उन्हींके लाभ के विरुद्ध नहीं हो सकता। इसके विपरीत कुलीनतंत्र के कानूनों के अनुसार धन और सत्ता अल्पमत के हाथ मे रहती है, क्योंकि कुलीनतंत्र का स्वरूप ही अल्पमत में निहित रहता है। अतः एक सामान्य सिद्धान्त के रूप में यह बलपूर्वक कहा जा सकता है, कि कानून बनाने में प्रजातंत्र का उद्देश्य कुलीनतंत्र के उद्देश्य की अपेक्षा मानवता के लिए अधिक लाभदायक होता है। फिर भी, इससे होने वाले कुल लाभ यही हैं।

विधान निर्माण के विज्ञान में कुलीनतान्त्रिक प्रणालियाँ प्रजातान्त्रिक पद्धतियों की अपेक्षा निश्चित रूप से अधिक सिद्धहस्त रही हैं। उनके पास आत्मनियंत्रण होता है, जो क्षणिक उत्तेजना से उत्पन्न होने वाली भूलों से उनकी रक्षा करता है और वे दूरगामी निर्णय करते हैं, जिनके बारे में वे यह जानते हैं कि वे अनुकूल अवसर आने तक कैसे पूर्ण होते हैं। कुलीनतान्त्रिक सरकार चतुरता से आगे बढ़ती है और वह यह समझती है कि किस प्रकार एक निश्चित बिन्दु पर अपने सभी कानूनों की सामूहिक शक्ति को एक ही समय एकत्र किया जाता है। प्रजातंत्रों में स्थिति भिन्न रहती है, जिसके कानून लगभग सदा ही अप्रभाव-कारी अथवा अस्वाभाविक होते है। अतः प्रजातंत्र के साधन कुलीनतंत्र के साधनों से अधिक अपूर्ण होते है और वह अनजाने जो भी कार्रवाई करता है, वह प्रायः उसके ही उद्देश्य के विरुद्ध होती है, किन्तु उसका उद्देश्य अधिक उपयोगी होता है।

सार्वजनिक अधिकारियों के सम्बन्ध में भी ऐसा ही मत व्यक्त किया जा सकता है। यह देखना सरल है कि अमरीकी प्रजातंत्र जिन व्यक्तियों को प्रशासन के अधिकार देता है, उनके चुनाव में वह बहुधा गलतियाँ करता है। अमरीका में जिन लोगों को सार्वजनिक मामलों के निर्देशन का भार सौंपा जाता है, वे क्षमता और नैतिकता, दोनों दृष्टियों से उन व्यक्तियों से प्रायः निम्नकोटि के होते हैं, जिन्हें कुलीनतान्त्रिक पद्धति में सत्तारूढ़ किया जाता है; किन्तु उनका हित उनके सह नागरिकों के बहुमत के साथ होता है। वे प्रायः अविश्वसनीय

और गलत हो सकते हैं, किन्तु वे व्यवस्थित रूप से ऐसा कोई आचरण नहीं करेंगे, जो बहुमत के विरुद्ध हो और वे सरकार को एक खतरनाक अथवा सर्वस्वतंत्र मनोवृत्ति नही प्रदान कर सकते।

इसके अतिरिक्त प्रजातांत्रिक मजिस्ट्रेट का कुप्रशासन एक पृथक तथ्य होता है, जिसका प्रभाव उस अल्पावधि तक ही रहता है, जिसके लिए वह चुना जाता है। भ्रष्टाचार और अक्षमता उस प्रकार के सामान्य हित नहीं होते, जो मनुष्य को सदा के लिए एक दूसरे से सम्बद्ध कर सकते है। एक भ्रष्ट अथवा अयोग्य मजिस्ट्रेट केवल इस कारण से किसी दूसरे मजिस्ट्रेट के साथ अपने कार्यों को सम्बद्ध नही करेगा कि दूसरा भी उतना ही भ्रष्ट और अयोग्य है, जितना कि वह स्वयं और ये दोनों व्यक्ति अपनी दूर की पीढ़ियों के भ्रष्टाचार और अक्षमता में वृद्धि के लिए अपने प्रयासों को कभी संयुक्त नहीं करेंगे। इसके विपरीत, एक की आकांक्षाएँ और प्रयास दूसरे का भंडाफोड़ कर देंगे। प्रजातांत्रिक राज्यों में मजिस्ट्रेट के दुर्गुण प्रायः पूर्णतः व्यक्तिगत होते है।

अमरीका में जहाँ सार्वजनिक अधिकारियों का कोई वर्गहित नहीं होता, सरकार का सामान्य और निरन्तर प्रभाव लाभकारी होता है, यद्यपि सरकार का संचालन करने वाले व्यक्ति बहुधा अकुशल और कभी-कभी घृणित होते हैं। प्रजातांत्रिक संस्थाओं में निश्चय ही एक गुप्त प्रवृत्ति होती है, जो उनकी त्रुटियों और बुराइयों के बावजूद नागरिकों के प्रयासों को समाज की समृद्धि के लिए सहायक बनाती है, जब कि कुलीनतांत्रिक संस्थाओं मे एक गुप्त पक्षपात होता है, जो सरकार का संचालन करने वालों के गुणों एवं योग्यताओं के बावजूद उन्हें ऐसी दिशा मे प्रवृत्त करता है, जिससे वे अपने साथियों का दलन करने लगते हैं। कुलीनतांत्रिक सरकारों में सार्वजनिक व्यक्ति इरादा न रखते हुए भी प्रायः हानि पहुँचा सकते हैं और प्रजातांत्रिक राज्यों में वे ऐसे अच्छे परिणाम उत्पन्न कर देते है, जिनकी उन्होंने कभी कल्पना भी नही की थी।

जन-भावना

देशप्रेम का एक ऐसा मोह होता है, जो मुख्यतः उस स्वाभाविक, निःस्वार्थ और अनिर्वचनीय भावना से उत्पन्न होता है, जो मनुष्य के प्रेम को उसके जन्मस्थान के साथ सम्बद्ध करती है। यह स्वाभाविक प्रेम प्राचीन प्रथाओं के प्रति अभिरुचि तथा प्राचीन परम्पराओं के प्रति श्रद्धा के साथ सम्बद्ध होता है। जिनमें यह भावना होती है, वे अपने देश के साथ वैसे ही प्रेम करते हैं, जैसे अपने पिता के भवन से करते हैं। यह भावना उन्हें जो शान्ति

प्रदान करती है, उससे वे प्रेम करते हैं। वे उन शान्तिपूर्ण आदतों से लिपटे रहते हैं, जिन्हें उन्होंने इसके अन्तस्तल में प्राप्त किया है। वे इससे जाग्रत होने वाली स्मृतियों से सम्बद्ध रहते हैं और वे वहाँ आज्ञाकारिता की अवस्था में रहने में भी प्रसन्नता का अनुभव करते हैं। इस देशभक्ति को कभी-कभी धार्मिक उत्साह से भी प्रोत्साहन मिलता है और तब वह काफी प्रयास करने योग्य हो जाती है। यह स्वयं एक प्रकार का धर्म है; यह तर्क नहीं करती, किन्तु यह विश्वास और भावना की प्रेरणा से कार्य करती है। कुछ राष्ट्रों में राजा को देश का प्रतीक माना जाता है और देशभक्ति का जोश निष्ठा के जोश में परिणत हो जाने पर वे उसकी विजयों में सहानुभूतिपूर्ण गर्व और उसकी शक्ति में गौरव का अनुभव करते हैं। प्राचीन राजतंत्र के अंतर्गत एक समय था जब फ्रांसीसी अपने राजा की मनमानी इच्छा पर अवलम्बित रहने में संतोष अनुभव करते थे और वे गर्व के साथ कहा करते थे कि " हम विश्व के सबसे शक्तिशाली राजा के शासन में रहते हैं "; किन्तु समस्त स्वाभाविक भावनाओं की भाँति इस प्रकार की देशभक्ति महान अस्थायी प्रयासों को तो प्रोत्साहित करती है, उन प्रयासों को निरंतरता नहीं प्रदान करती। संकट-काल में इससे राज्य की रक्षा हो सकती है, किन्तु शान्तिकाल में बहुधा इस प्रवृत्ति के कारण राज्य की क्षति होने लगती है। जब लोगों के आचरण साधारण होते हैं और जब समाज ऐसी परम्परागत संस्थाओं पर आधारित होता है, जिनकी वैधता पर कभी विवाद नहीं उठा, तब इस प्रकार की आंतरयौद्धिक देशभक्ति दृढ़ रहती है।

किन्तु देश के प्रति लगाव का एक दूसरा प्रकार भी है, जो उस देशप्रेम से, जिसका हम अभी तक वर्णन करते आये हैं, अधिक युक्तिसंगत है। यह सम्भवतः कम उदार और कम प्रबल है, किन्तु अधिक लाभदायक और स्थायी है। यह ज्ञान से प्रवाहित होता है, कानूनों से उसका पोषण होता है; नागरिक अधिकारों के प्रयोग से इसका विकास होता है और अन्त में नागरिकों के निजी हितों से यह आच्छादित हो जाता है। मनुष्य के कल्याण पर उसके देश के कल्याण का जो प्रभाव पड़ता है, उसे वह समझता है, वह इस बात से अवगत होता है कि कानून उसको उस समृद्धि में योग देने की अनुमति देता है और वह उसके विकास के लिए परिश्रम करता है। प्रथमतः वह ऐसा इसलिए करता है कि उसको इससे लाभ होता है और दूसरे इसलिए कि वह उसके कार्य का ही एक अंग है।

किन्तु किसी राष्ट्र के जीवन में कभी-कभी ऐसे युग आते हैं, जब जनता के पुराने रीति-रिवाज बदल जाते है, सार्वजनिक नैतिकता नष्ट हो जाती है, धार्मिक विश्वास डगमगा जाते हैं, परम्परा का जादू भंग हो जाता है। जब कि ज्ञान अपूर्ण रहता है और समाज के नागरिक अधिकार अरक्षित अथवा संकीर्ण सीमाओं में बँधे रहते हैं, तब नागरिकों की दृष्टि में देश धुँधला और भ्रमपूर्ण स्वरूप धारण कर लेता है। वे उसे उस भूमि में नहीं देखते जिस पर वे रहते हैं, क्योंकि वे उसको एक निर्जीव स्थल मानते हैं। अपने पूर्वजों की प्रथाओं में, जिनको उन्होंने पतनकारी बंधन मानना सीखा है; धर्म में, जिसके बारे में उनको संशय रहता है; कानून में, जो उनके अधिकारों से उद्‌भूत नहीं है, और विधायकों में भी, जिनसे वे डरते हैं और जिनसे वे घृणा करते हैं, उन्हें देश के दर्शन नहीं होते। देश उनकी इन्द्रियों के लिए खोया हुआ रहता है, वे न तो देश के निजी रूप में और न अन्य से प्राप्त रूप में उसका पता लगा सकते हैं और वे एक संकीर्ण एवं ज्ञानरहित स्वार्थपरता के प्रभाव में आ जाते हैं। वे तर्क के साम्राज्य को स्वीकार किये बिना ही पूर्वाग्रह से मुक्त हो जाते हैं, उनमें न तो राजतंत्र की आन्तरिक देशभक्ति होती है और न गणराज्य की विवेकशील देशभक्ति होती है, प्रत्युत वे भ्रान्ति और विपत्ति के मध्य दोनों के बीच में रुक जाते हैं।

इस स्थिति में पीछे हटना असम्भव है, क्योंकि जिस प्रकार कोई व्यक्ति अपनी बाल्यावस्था की निर्दोष रुचियों को पुनः नहीं प्राप्त कर सकता, उसी प्रकार कोई जाति अपनी युवावस्था की भावनाओं को पुनः नहीं प्राप्त कर सकती। इस प्रकार की बातों पर खेद प्रकट किया जा सकता है, पर इनका नवीनीकरण नहीं किया जा सकता। उन्हें आगे बढ़ना ही होगा और निजी एवं सार्वजनिक स्वार्थों के एकीकरण की गति को तीव्र करना ही होगा, क्योंकि निःस्वार्थ देशसेवा का समय सदा के लिए चला गया है।

मैं निश्चय ही यह नहीं कह रहा हूँ कि इस परिणाम की प्राप्ति के लिए सभी लोगों को तत्काल राजनीतिक अधिकार दे दिये जायं, किन्तु मैं यह मानता हूँ कि मनुष्यों को अपने देश के कल्याण में रुचि लेने के लिए प्रेरित करने वाला जो सर्वशक्तिशाली और सम्भवतः एक मात्र साधन अब तक हमारे पास है, वह यह है कि उनको सरकार में भागीदार बनाया जाय। आधुनिक युग में मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि नागरिक उत्साह को राजनीतिक अधिकारों के प्रयोग से अलग नहीं किया जा सकता और मेरा विचार है कि इन अधि-

कारों का विस्तार जिस अनुपात में होता है, उसी अनुपात में यूरोप मे नागरिकों की संख्या बढ़ती अथवा घटती हुई दिखायी देगी।

अमरीका में, जहाँ के निवासी उस भूमि पर अभी जैसे कल ही आये, जिस पर आज उनका अधिकार है और जो अपने साथ वहाँ किसी प्रकार की परम्परा अथवा रीति रिवाज लेकर नहीं आये, जहाँ वे एक दूसरे से बिना किसी पूर्व परिचय के पहली बार मिले, जहाँ संक्षेप में, देशप्रेम की आन्तरिक भावना मुश्किल से विद्यमान हो सकती है, यह किस प्रकार होता है कि हरेक व्यक्ति अपने नगर, अपने जिले और समस्त राज्य के कार्यों में ऐसे उत्साह के साथ रुचि लेता है, जैसे वे उसी के हों। इसका कारण यह है कि अपने क्षेत्र में प्रत्येक व्यक्ति समाज के प्रशासन में सक्रिय भाग लेता है। अमरीका में निम्न श्रेणी के लोग उस प्रभाव को समझते हैं, जो प्रभाव सामान्य समृद्धि का उनके निजी कल्याण पर पड़ता है। यह पर्यवेक्षण सरल होते हुए भी जनता द्वारा बहुत ही कम किया जाता है। वे उस समृद्धि को अपने ही प्रयासों का फल मानते हैं। नागरिक सार्वजनिक समृद्धि को अपनी ही समृद्धि मानता है और वह राज्य की भलाई के लिए, केवल गर्व अथवा कर्तव्य की भावना से नहीं, अपितु एक ऐसी भावना से श्रम करता है, जिसे मैं उत्कट अभिलाषा कहता हूँ।

इस कथन की सत्यता जानने के लिए अमरीकियों की संस्थाओं और इतिहास का अध्ययन अनावश्यक है; क्योंकि उनके आचरण ही इसको पर्याप्त रूप से स्पष्ट कर देते हैं। चूँकि अमरीकी अपने देश में किये जाने वाले समस्त कार्यों में भाग लेता है, अतः उसमें जिस किसी भी बात की निन्दा होती है, उसका बचाव करना वह अपना कर्तव्य समझता है क्योंकि तब केवल उसके देश की ही नहीं, स्वयं उसकी आलोचना होती है। फल यह होता है कि उसका राष्ट्रीय गर्व हजारों कौशलों को अपनाता है और वह व्यक्तिगत अहंकार की समस्त क्षुद्र चालों पर उतर आता है।

जीवन के सामान्य आदान-प्रदान में अमरीकियों की इस उत्तेजनीय देशभक्ति से अधिक आकृष्ट करने वाली कोई वस्तु नहीं है। कोई नवागंतुक इस देश की अनेक संस्थाओं की प्रशंसा करने के लिए प्रेरित होता है, किन्तु वह इसकी कतिपय वस्तुओं की आलोचना करने की अनुमति चाहता है; यह अनुमति निर्ममतापूर्वक अस्वीकृत कर दी जाती है। अतः अमरीका एक राष्ट्र है, जिसमें आपको सम्भवतः जलवायु और भूमि को छोड़कर,

प्राइवेट व्यक्तियों अथवा राज्य, नागरिकों अथवा निजी अथवा सार्वजनिक व्यवसायों के अधिकारियों अथवा संक्षेप में, किसी भी वस्तु के सम्बन्ध में स्वतंत्रतापूर्वक अपना मत व्यक्त करने की अनुमति नहीं है, ताकि आपके कथनों से किसी की भावनाओं पर आघात न पहुँच जाय। इतना होने पर भी अमरीकी जलवायु और भूमि, दोनों का बचाव करने के लिए तत्पर मिलेंगे, मानो उनकी सृष्टि उनकी राय से ही हुई हो।

अपने युग में हमें सबकी देशभक्ति और थोड़े-से व्यक्तियों की सरकार में से एक को चुनना है, क्योंकि सबकी देशभक्ति के साथ, जो सामाजिक शक्ति और गतिविधि प्रदान करती है, थोड़े-से व्यक्तियों की सरकार द्वारा प्राप्त होनेवाले शांति के वचनों का मेल नहीं बैठ सकता।

अधिकारों की भावना

मुझे ऐसे किसी सिद्धान्त का ज्ञान नहीं है, जो पुण्य की सामान्य भावना के अतिरिक्त अधिकार के सिद्धान्त से उच्चतर हो अथवा यों कहा जा सकता है कि ये दोनों भावनाएँ एक में संयुक्त हैं। अधिकार की भावना राजनीतिक जगत् में लागू की गयी पुण्य की भावना मात्र है। अधिकार की भावना ने ही मनुष्यों को अराजकता और अत्याचार की परिभाषा करने के योग्य बनाया और इसी ने अहंकार बिना स्वतंत्र होना तथा दासता की वृत्ति के बिना आज्ञापालन करना सिखाया।

जो मनुष्य हिंसा के आगे झुक जाता है, उसकी आज्ञापालकता उसे नीचे गिराती है, किन्तु जब वह अधिकार की सत्ता के आगे नत हो जाता है, जिसे वह अपने सह-प्राणी में स्वीकार करता है, तब वह कुछ अंश तक आज्ञा देने वाले व्यक्ति से ऊपर उठ जाता है। गुणों के बिना कोई व्यक्ति महान नहीं होता और अधिकारों के प्रति सम्मान के बिना कोई राष्ट्र महान नहीं हो सकता, बल्कि इसके बिना कोई समाज ही नहीं हो सकता; क्योंकि केवल शक्ति के बन्धन के द्वारा एक दूसरे से आबद्ध बौद्धिक और प्रतिभाशाली प्राणियों का मिलन और क्या है?

प्रजातंत्र सरकार राजनीतिक अधिकारों की भावना को उसी प्रकार साधारणतम नागरिकों के स्तर तक ला देती है, जिस प्रकार सम्पत्ति का विकेन्द्रीकरण इस धारणा को जन्म देता है कि सभी व्यक्ति सम्पत्ति को प्राप्त कर सकते हैं; मेरे मतानुसार यह इसका एक सबसे बड़ा लाभ है। मैं यह नहीं कहता कि लोगों को

राजनीतिक अधिकारों का प्रयोग सिखाना आसान है, किन्तु मै मानता हूँ कि जब यह सम्भव हो, तो इससे जो परिणाम निकलते हैं वे अधिक महत्त्वपूर्ण होते हैं और मैं पुनः कहता हूँ कि इस प्रकार के प्रयास का यदि कोई समय है, तो वह आज है। क्या आप नहीं देखते हैं कि धार्मिक विश्वास टूट रहा है, अधिकारो की पुनीत धारणा का ह्रास होता जा रहा है, नैतिकता का मूल्य कम होता जा रहा है और नैतिक अधिकारों की धारणा समाप्त हो रही है, विश्वास का स्थान तर्क ले रहा है, भावना का स्थान आँकड़े ले रहे हैं! इस सामान्य विघटन के बीच यदि आप अधिकार की धारणा को निजी हित के साथ, जो मानव हृदय में एक मात्र अपरिवर्तनीय तत्व है, सम्बद्ध करने में सफल नहीं हो सकते; तब विश्व पर शासन करने के लिए भय के अलावा और क्या साधन आपके पास रह जायगा? जब मुझसे कहा जाता है कि कानून कमजोर है, जनता अशान्त है, उग्र भावनाएँ उभाड़ी जाती हैं और पुण्य की सत्ता शक्तिहीन हो गयी है और इसीलिए प्रजातंत्र के अधिकारों में वृद्धि करने के लिए कोई कार्रवाई नहीं की जानी चाहिए, तो मैं उत्तर देता हूँ कि इन्हीं कारणों से इस प्रकार की कोई कार्रवाई करनी चाहिए और मैं विश्वास करता हूँ कि समाज की अपेक्षा सरकारें इन कार्रवाइयों के करने में अधिक रुचि रखती हैं, क्योंकि सरकार समाप्त हो सकती हैं, समाज नहीं।

मैं अमरीका द्वारा पेश किये जानेवाले उदाहरण को बढ़ा-चढ़ा कर कहना नहीं चाहता। वहाँ लोगों को उस समय राजनीतिक अधिकार दिये गये जब उनका दुरुपयोग नहीं किया जा सकता था, क्योंकि वहाँ के निवासी संख्या में कम और साधारण आचरण वाले थे। जनसंख्या में वृद्धि के साथ अमरीकियों ने प्रजातंत्र के अधिकारों में वृद्धि नहीं की है, बल्कि उसके आधिपत्य में विस्तार किया है।

इसमें सन्देह नहीं किया जा सकता कि जिस समय किसी जनता को, जिसके पास पहले राजनीतिक अधिकार नहीं थे, राजनीतिक अधिकार दिये जाते हैं, वह समय बड़ा संकटपूर्ण होता है तथा यह कार्रवाई बहुधा आवश्यक होते हुए भी सदा खतरनाक होती है। एक बालक जीवन के मूल्य से अवगत होने से पहले ही किसी की हत्या कर सकता है, वह दूसरे व्यक्ति को, यह जानने के पहले कि स्वयं उसकी सम्पत्ति ले ली जायगी, सम्पत्ति से वंचित कर सकता है। निम्न वर्ग के लोगों को जब प्रथम बार राजनीतिक अधिकार प्रदान किये जाते हैं, तब वे उन अधिकारों का उसी प्रकार उपयोग करते हैं, जिस प्रकार बालक

समस्त प्रकृति का उपयोग करता है और तब उनके लिए इस विख्यात कहावत का प्रयोग किया जा सकता है कि मनुष्य शक्तिशाली बालक होता है। इस सत्य के दर्शन अमरीका में भी किये जा सकते हैं। जिन राज्यों में नागरिकों ने अधिकतम समय तक नागरिक अधिकारों का उपभोग किया है, उन राज्यों में नागरिक उनका सर्वोत्तम उपयोग करते हैं।

इस कथन की पुनरावृत्ति बारबार नहीं की जा सकती कि विलक्षण प्रतिभा-वाले व्यक्तियों में स्वतंत्र रहने की कला से बढ़ कर दूसरी कोई विशेषता नहीं होगी, किन्तु स्वतन्त्रता के प्रशिक्षण से कठिनतर कार्य कोई नहीं है।

तानाशाही में ऐसा नहीं होता। तानाशाही बहुधा हजारों पुरानी बुराइयों में संशोधन करने का वचन देती है, वह अधिकारों का समर्थन करती है, वह पीड़ितों की रक्षा करती है और सार्वजनिक व्यवस्था को कायम रखती है। उससे उत्पन्न होनेवाली अस्थायी समृद्धि से राष्ट्र तब तक के लिए चुप हो जाता है, जब तक कि वह अपने दुःख के प्रति जागरूक नहीं हो जाता। इसके विपरीत स्वतन्त्रता आम तौर से अनेक संकटों के तूफानों के बीच कठिनाई से स्थापित होती है। वह नागरिक संघर्ष से पूर्णता प्राप्त करती है और उसके लाभों को तब तक नहीं समझा जा सकता, जब तक वह पुरानी नहीं हो जाती।

कानून का सम्मान

कानून बनाने में सभी लोगों से प्रत्यक्षतः अथवा अप्रत्यक्षतः परामर्श लेना सदा सम्भव नहीं होता, किन्तु इस बात को अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि जब यह सम्भव होता है, तो कानून का अधिकार बहुत अधिक बढ़ जाता है। इस लोकप्रिय उद्‌भव से, जिससे विधान की बुद्धिमत्ता और अच्छाई में बाधा पहुँचती है, सत्ता की वृद्धि में पर्याप्त योग मिलता है। सभी लोगों की मताभिव्यक्ति में आश्चर्यजनक शक्ति है और जब वह अपने को घोषित करती है तो उन लोगों की, जो उससे प्रतिस्पर्धा करना चाहते हैं, कल्पना का भी अतिक्रमण हो जाता है। पार्टियाँ इस तथ्य के सत्य को भलीभाँति जानती हैं और फलस्वरूप वे जहाँ तक सम्भव हो सकता है, बहुमत को अपने पक्ष में करने का प्रयास करती हैं। यदि बहुमत उनके पक्ष में नहीं होता तो वे इस बात पर बल देती हैं कि सच्चे बहुमत ने मतदान नहीं किया और यदि वे यहाँ भी विफल रहती हैं, तो वे उनकी शरण लेती हैं, जिनको मतदान का अधिकार नहीं है।

अमरीका में गुलामों, नौकरों और नगरीय प्रशासनों की सहायता पर निर्भर

निस्सहाय निर्धनों को छोड़ कर कोई ऐसा वर्ग नहीं है, जिसे मताधिकार प्राप्त न हो और जो अप्रत्यक्ष रूप से कानून बनाने में योग न देता हो। इसके फलस्वरूप जो कानूनों की आलोचना करना चाहते हैं, उन्हें या तो राष्ट्र का जनमत बदलना पड़ता है अथवा उनके निर्णयों को कुचलना पड़ता है।

एक दूसरा कारण, जो और अधिक प्रत्यक्ष और प्रभावकारी है, पेश किया जा सकता है और वह यह है कि अमरीका में प्रत्येक व्यक्ति व्यक्तिगत रूप से इस बात में रुचि रखता है कि समस्त समाज कानून का आज्ञाकारी हो। चूँकि अल्पसंख्यक दल शीघ्र ही बहुमत को अपने सिद्धान्तों का अनुगामी बना सकता है, इसलिए वह विधायक के आदेशों के प्रति, जिन्हें अपना कहने का अवसर उसे शीघ्र ही उपलब्ध हो सकता है, सम्मान व्यक्त करने में रुचि रखता है। कानून कितना ही अरुचिकर क्यों न हो, अमरीका के नागरिक उसका पालन करते हैं। इसका कारण केवल यह नहीं है कि वह बहुमत द्वारा बनाया गया है, बल्कि यह है कि वह उसे अपना मानता है और वह उसे एक ऐसा अनुबन्ध मानता है, जिसमें वह भी शामिल है।

अतः अमरीका में विशाल उग्र जनसमूहों का अस्तित्व नहीं है, जो कानून को अपना स्वाभाविक शत्रु मानकर उसको भय और अविश्वास की दृष्टि से देखते हैं। इसके विपरीत यह न देख सकना भी असंभव है कि सभी वर्ग अपने देश के विधान पर पूर्ण विश्वास करते हैं और एक प्रकार के पैतृक प्रेम द्वारा उससे सम्बद्ध हैं।

फिर भी सभी वर्गों का उल्लेख करना मेरी भूल है, क्योंकि चूँकि अमरीका में अधिकार की यूरोपीय तुला उलट दी गयी है, इसलिए वहाँ धनवानों को उसी स्थिति में रखा जाता है जिस स्थिति में पुराने विश्व में निर्धनों को रखा जाता था और धनवान वर्ग ही बहुधा कानून को सन्देह की दृष्टि से देखते हैं। मैं पहले ही कह चुका हूँ कि जैसा कि कभी-कभी कहा जाता है, प्रजातंत्र का लाभ यह नहीं है कि वह सबके हितों की रक्षा करता है, बल्कि उसका लाभ केवल इतना है कि वह बहुमत के हितों की रक्षा करता है। अमरीका में, जहाँ गरीबों का शासन होता है, धनीवर्ग के लिए उनके द्वारा अधिकारों के दुरुपयोग से भय करने का कोई न कोई कारण सदैव बना रहता है। धनियों की यह स्वाभाविक चिन्ता एक गुप्त असन्तोष को जन्म दे सकती है, किन्तु इससे समाज के कार्य में बाधा उपस्थित नहीं होती; क्योंकि वही कारण, जो विधान निर्मातृ सत्ता में धनिकों का विश्वास नहीं उत्पन्न होने देता, उनसे उसके आदेशों का पालन

कराता है; उनकी जो सम्पत्ति कानून बनाने के उनके मार्ग में बाधक सिद्ध होती है, वही उसका विरोध करने से भी उन्हें रोकती है। सभ्य देशों में केवल वे ही लोग विद्रोह करते हैं, जिनके पास खाने के लिए कुछ नहीं होता और यदि किसी प्रजातंत्र का कानून सदैव सम्मानीय नहीं होता, तो भी उनका सदैव सम्मान किया जाता है, क्योंकि जो लोग सामान्यतः कानून भंग करते हैं, स्वयं अपने द्वारा निर्मित और अपने को लाभ पहुँचाने वाले कानूनों का पालन करने में चूक नहीं सकते, जबकि वे नागरिक, जो उनको भंग करने में दिलचस्पी रख सकते हैं, अपने चरित्र और स्थिति के कारण विधानमण्डल के निर्णयों के आगे, चाहे वे कुछ भी हों, झुकने के लिए प्रेरित होते हैं। इसके अलावा, अमरीकी केवल इसलिए कानून का पालन नहीं करते कि यह उनका कार्य है; बल्कि इसलिए कि उनके हानिकारक होने पर वे उनमें परिवर्तन कर सकते हैं। कानून का पालन किया जाता है, क्योंकि प्रथमतः यह स्वतः थोपी गयी बुराई है और दूसरे, यह बुराई अस्थायी होती है।

संयुक्त-राज्य अमरीका में राजनीतिक गतिविधियों की व्यापकता

अमरीकियों की आश्चर्यजनक स्वतन्त्रता का अनुमान लगाना असंभव नहीं। इसी प्रकार उनकी समानता के सम्बन्ध में मत निर्धारित किया जा सकता है, किन्तु अमरीका की राजनीतिक गतिविधियों को समझने के लिए उनका अध्ययन जरूरी है। जैसे ही आप अमरीकी भूमि पर कदम रखते हैं, आप वहाँ की हलचल से आश्चर्यचकित हो जाते हैं। हर दिशा से एक अस्पष्ट शिकायत सुनायी देती है और हजारों व्यक्ति एक साथ अपने सामाजिक अभावों की पूर्ति की माँग करते हैं। आपके चारों ओर हर प्रकार की गतिशीलता दिखायी देती है। यहाँ नगर के एक ओर के लोग गिरजाघर बनाने के सम्बन्ध में निर्णय करने के लिए मिलते हैं और वहाँ प्रतिनिधियों का चुनाव हो रहा है, कुछ दूर जाने पर जिले के प्रतिनिधि कुछ स्थानीय सुधारों पर परामर्श करने के हेतु नगर की ओर बढ़ रहे हैं, दूसरे स्थान पर गाँव के मजदूर अपने हल छोड़कर सड़क अथवा एक सार्वजनिक स्कूल के निर्माण की योजना में भाग ले रहे हैं। सरकार के कार्यों के प्रति असहमति प्रकट करने के एकमात्र उद्देश्य से सभाएँ बुलायी जाती हैं, जबकि दूसरी सभाओं में नागरिक उस समय के अधिकारियों को अपने देश के पिता समझ कर उनका गुणगान करते हैं। ऐसी संस्थाएँ बनायी जाती हैं जो मद्यपान को राज्य की बुराइयों का मूल कारण मानती हैं और

मद्यनिषेध का उदाहरण उपस्थित करने के लिए गम्भीरतापूर्वक प्रतिज्ञाएँ करती हैं। अमरीकी विधायिका संस्थाओं का विशाल राजनीतिक आन्दोलन, जो विदेशियों का ध्यान आकर्षित करने वाला एक मात्र आन्दोलन है, एकमात्र घटना है, अथवा विश्वव्यापी आन्दोलन का एक प्रवाह है, जो निम्नतम वर्ग से प्रारम्भ होता है और एक के बाद दूसरे समाज के सभी वर्गों में फैल जाता है। सुख की खोज में इससे अधिक प्रयास करना असम्भव है।

अमरीका के नागरिकों की वृत्तियों में राजनीतिक चिन्ताओं का एक प्रमुख स्थान होता है और एक अमरीकी जो एकमात्र आनन्द जानता है, वह सरकार में हाथ बँटाने और उसकी कार्रवाइयों पर विचार-विमर्श करने का होता है। यह भावना जीवन के तुच्छतम व्यापारों में व्याप्त है, यहाँ तक कि महिलाएँ भी कई बार सभाओं में भाग लेती हैं और मनोरंजन के रूप में अपने घरेलू मजदूरों से जोशीले राजनीतिक भाषण सुनती हैं। वादविवाद क्लब, कुछ सीमा तक, रंगमंच मनोरंजन के पूरक हैं। अमरीका का निवासी वार्तालाप नहीं कर सकता, किन्तु वह बहस कर सकता है और उसकी वार्ता विवरणात्मक हो जाती है। वह आपसे इस प्रकार बात करता है, मानो वह कहीं सभा में भाषण कर रहा हो, और यदि उसे बहस में उत्तेजित होने का अवसर मिल जाता है, तो उस व्यक्ति को, जिससे वह बात कर रहा है—"सज्जनो!" कहेगा।

कुछ देशों में वहाँ के निवासी कानून द्वारा उन्हें दिये गये राजनीतिक अधिकारों से लाभ उठाने के अनिच्छुक प्रतीत होते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि वे अपने समय को इतना अधिक मूल्यवान समझते हैं कि उसे समाज के हित में व्यय नहीं किया जा सकता और वे अपने को ससीम स्वार्थपरता की ठोस चहारदीवारी में बन्द कर लेते हैं; किन्तु यदि एक अमरीकी अपने मामलों तक ही अपनी गतिविधियों को सीमित रखता है, तो उसके जीवन का आधा हिस्सा उससे छीन लिया जाता है। वह उस जीवन में, जिसका वह आदी है, एक विशाल रिक्तता अनुभव करने लगता है और उसके लिए यह निम्न कोटि की स्थिति असह्य हो जाती है। मैं ऐसा मानने के लिए प्रेरित हुआ हूँ कि यदि कभी अमरीका में निरंकुशता की स्थापना हुई, तो स्वतंत्रता के प्रति प्रेम पर विजय पाने की अपेक्षा स्वतंत्रता से निर्मित आदतों पर विजय पाना अधिक कठिन होगा।

राजनीतिक जगत् में प्रजातांत्रिक शासन द्वारा प्रारम्भ किये गये इस अनवरत आन्दोलन का प्रभाव समस्त सामाजिक आदान-प्रदानों पर पड़ता है। म

निश्चित रूप से नहीं कह सकता कि कुल मिला कर यह प्रजातंत्र का सबसे बड़ा लाभ नहीं है और वह जो कुछ करता है, उस पर प्रसन्नता प्रकट करने के लिए मैं उतना प्रेरित नहीं होता जितना कि इसके द्वारा जो होता है, उस पर प्रसन्नता प्रकट करने के लिए प्रेरित होता हूँ। यह निर्विवाद है कि लोग प्रायः अत्यन्त अनुचित ढंग से सार्वजनिक कार्य करते हैं, किन्तु निम्न वर्गों का अपने विचारों के क्षेत्र का विस्तार किये बिना और अपने विचारों के सामान्य क्रम का परित्याग किये बिना सार्वजनिक कार्यों में भाग लेना असम्भव है। समाज के प्रशासन में सहयोग करने वाला क्षुद्रतम व्यक्ति भी कुछ अंश तक आत्मसम्मान प्राप्त कर लेता है। चूँकि उसके पास अधिकार होता है, अतः वह अपने से अधिक विकसित मस्तिष्कों की सेवाएँ प्राप्त कर सकता है। असंख्य प्रार्थी उसका प्रचार करते हैं और वे हजारों तरीकों से उसे मूर्ख बनाने का प्रयत्न कर उसके ज्ञान में वृद्धि करते हैं। वह ऐसे राजनीतिक कार्यों में भाग लेता है, जिनको उसने प्रारम्भ नहीं किया था, किन्तु जो उसमें इस प्रकार के कार्यों के प्रति रुचि उत्पन्न करते हैं। सामान्य सम्पत्ति में नये नये सुधारों की ओर उसका ध्यान प्रति दिन आकृष्ट किया जाता है और इससे उसमें स्वयं अपनी सम्पत्ति में सुधार करने की इच्छा उत्पन्न होती है। सम्भवतः वह अपने सामने आने वाले व्यक्तियों की अपेक्षा न तो अधिक सुखी है और न उनसे अच्छा है; किन्तु वह अधिक जानकारी रखता है और अधिक सक्रिय रहता है। मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं कि अमरीका के निवासियों की विशाल व्यावसायिक गतिविधियों का कारण (प्रत्यक्ष कारण नहीं, जैसा कि बहुधा कहा जाता है, बल्कि अप्रत्यक्ष कारण) देश के भौतिक संविधान से सम्बद्ध वहाँ की प्रजातांत्रिक संस्थाएँ हैं। इसका निर्माण कानूनों से नहीं होता, किन्तु लोग विधान से प्राप्त अनुभव के आधार पर इसका निर्माण करना सीखते हैं।

प्रजातंत्र के विरोधी जब बलपूर्वक कहते हैं कि एक व्यक्ति सबकी सरकार की अपेक्षा अच्छा कार्य करता है, तो मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि वे सही हैं। यदि दोनों ओर ज्ञान की समानता मान ली जाय, तो एक व्यक्ति की सरकार समूह की सरकार से अधिक सम्बद्ध, अधिक धैर्यवान, अधिक एकरूपताशाली, और विवरण में अधिक ठीक होती है और वह जिन व्यक्तियों को काम पर रखता है, उनका चयन वह विवेक के साथ करता है। यदि कोई इसको अस्वीकार करता है, तो उसने प्रजातांत्रिक सरकार को कभी देखा नहीं है अथवा उसने एकपक्षीय प्रमाण पर निर्णय किया है। यह सत्य है कि यदि स्थानीय परिस्थितियाँ

और जनता के कार्यकलाप प्रजातांत्रिक संस्थाओं के जीवित रहने की अनुमति देते हैं, तो भी वे नियमित और विधिवत् शासनपद्धति का प्रदर्शन नहीं करते। कुशल निरंकुशता में जिस कौशल के साथ योजनाओं की पूर्ति होती है, उस कौशल के साथ प्रजातांत्रिक स्वतन्त्रता में समस्त योजनाओं की पूर्ति नहीं हो सकती। यह बहुधा उनके फल निकलने से पूर्व ही उनका परित्याग कर देती है अथवा उस समय उनका खतरा मोल लेती है, जब उनके परिणाम खतरनाक हो सकते हैं, किन्तु अन्त में उसके परिणाम किसी निरंकुश सरकार से अधिक निकलते हैं। यदि वह थोड़े से कार्य अच्छी तरह करती है, तो वह बहुत अधिक कार्य करती है। उसके आधिपत्य में सार्वजनिक प्रशासन के कार्य का नहीं, प्रत्युत उसके बिना अथवा उसके बाहर किये गये कार्य का महत्व होता है। प्रजातंत्र से जनता को कुशलतम सरकार नहीं मिलती, किन्तु वह उस वस्तु का निर्माण करती है, जिसका निर्माण बहुधा योग्यतम सरकार भी करने में असमर्थ रहती है, यथा एक सर्वव्यापी एवं अविराम गतिविधि, एक अति बहुल शक्ति और उससे अविभाज्य एक शक्ति का निर्माण होता है, जिनसे प्रतिकूल परिस्थितियों में भी आश्चर्यजनक कार्य होते हैं। प्रजातंत्र के ये वास्तविक लाभ हैं।

आज के युग में, जब ईसाईयत का भाग्य अनिश्चित प्रतीत होता है, कुछ लोग प्रजातंत्र को शत्रुतापूर्ण शक्ति बता कर उसकी निंदा करते हैं, जब कि अभी उसका विकास हो रहा है और दूसरे लोग इस नये देवता की, जो अव्यवस्था से उत्पन्न हो रहा है, पहले से ही पूजा कर रहे हैं; किंतु दोनों पार्टियाँ अपनी घृणा अथवा पूजा के उद्देश्यों से पूर्ण परिचित नहीं हैं, वे अंधेरे में प्रहार करती हैं और उनके प्रहार ऊटपटांग होते हैं।

हमें पहले यह समझ लेना चाहिए कि समाज और उसकी सरकार से क्या अपेक्षा है ? क्या आप मानवीय मस्तिष्क का कुछ उन्नयन करना और उसको इस विश्व की वस्तुओं को उदार भावनाओं से समझना, मनुष्यों में मात्र सांसारिक लाभों के प्रति घृणा की भावना भरना, दृढ़ धारणाओं का निर्माण एवं उनका पालन करना और सम्माननीय भक्ति की भावना को जीवित रखना चाहते हैं ? क्या आपका उद्देश्य आदर्शों को विशुद्ध करना, व्यवहार में सुशीलता लाना, कला के प्रति आसक्ति उत्पन्न करना, काव्य, सौंदर्य और वैभव के प्रति प्रेम जाग्रत करना है ? क्या आप ऐसे व्यक्ति तैयार करना चाहते हैं जो अन्य देशों से दृढ़ता का व्यवहार करने योग्य हों और इतिहास में अमर हो जाने वाले

साहसिक कार्यों को, जिनके परिणाम चाहे जो हों, पूरा करने के लिए तत्पर हों? यदि आप समाज के इस प्रकार के प्रमुख उद्देश्य में विश्वास करते हैं तो प्रजातांत्रिक सरकार का परित्याग कीजिये, क्योंकि वह आपको लक्ष्य की ओर निश्चित रूप से नहीं ले जायेगी।

परन्तु यदि आपका ऐसा विश्वास है कि मनुष्य की नैतिक और बौद्धिक क्रिया को सुखसुविधाओं के उत्पादन तथा सामान्य कल्याण की अभिवृद्धि की ओर उन्मुख करना वाञ्छनीय है; यदि आपका लक्ष्य वीरोचित गुणों के स्थान पर शांत स्वभावों को प्रोत्साहित करने का है; यदि आपने अपराधों के स्थान पर दुर्गुणों को देखना पसन्द किया है और उच्च कार्यों की न्यूनता से ही संतोष कर लिया है, इस शर्त पर कि उसी अनुपात से जुर्म कम हो जायेंगे; यदि आपको सम्पन्न समाज के मध्य रहने के स्थान पर अपने आस-पास की समृद्धि देख कर ही सतोष होता है—सक्षेप मे, यह कि आप उन लोगों में से हैं, जिनके मतानुसार सरकार का मुख्य उद्देश्य राष्ट्र के स्वरूप को अधिकतम सम्मान्य शक्ति और गौरव प्रदान करना नहीं, अपितु अपने प्रत्येक व्यक्ति के लिए अधिकाधिक आनन्द की उपलब्धि करना और उसके अधिकाधिक दुःखों को दूर करना है—यदि आपका ध्येय यही है तो आपको चाहिये कि आप मनुष्यों की परिस्थितियों मे समानता लायें और प्रजातान्त्रिक सस्थाओं का निर्माण करें।

परन्तु यदि इस प्रकार के विकल्प का अवसर हाथ से चला गया है और यदि मनुष्य से अधिक शक्तिशाली कोई अन्य शक्ति हमारी इच्छाओं का विचार किये बिना हमें इन दोनों सरकारों में से किसी एक को अपनाने के लिए विवश कर रही है, तो हमें चाहिए कि जो कुछ हमारे पास सुलभ है, उसका सर्वश्रेष्ठ रीति से प्रयोग करने का प्रयत्न करें और उसकी अच्छी और बुरी दोनों प्रवृत्तियों को जानें ताकि हम यथाशक्ति अच्छी प्रवृत्तियों की समृद्धि और बुरी प्रवृत्तियों का दमन करने में समर्थ हो सके...

१२. बहुमत की असीमित शक्ति और उसके परिणाम

प्रजातान्त्रिक सरकार का सार ही बहुमत की पूर्ण सार्वभौमता में सन्निहित है; क्योंकि प्रजातान्त्रिक राज्यों में ऐसी कोई व्यवस्था नहीं, जो इसका विरोध करने में समर्थ हो। अधिकांश अमरीकी संविधानों ने कृत्रिम साधनों से बहुमत की इस प्राकृतिक शक्ति में वृद्धि करने का प्रयास किया है।

समस्त राजनीतिक संस्थाओं में से विधानमण्डल ही ऐसी संस्था है, जो बहुमत की इच्छा से सर्वाधिक सरलतापूर्वक प्रभावित हो जाती है। अमरीकियों ने निश्चय किया कि विधानमण्डल के सदस्यों का चुनाव लोगों द्वारा प्रत्यक्षतः किया जाय और वह भी बहुत कम अवधि के लिए, ताकि वे न केवल अपने निर्वाचकों के सामान्य विश्वासों के, बल्कि उनकी दैनिक भावनाओं के भी अधीन हो जायं। दोनों सदनों के सदस्य समाज के एक ही वर्ग से लिये जाते हैं और एक ही रीति से उनका नामाङ्कन किया जाता है, जिससे विधायिका संस्थाओं की गतिविधियाँ प्रायः इतनी ही तीव्र और अप्रतिरोधक होती हैं, जितनी कि किसी एक ही जन-समुदाय की। इस प्रकार से जिस विधानमण्डल का गठन किया जाता है, उसे ही सरकार की सारी सत्ता सौंप दी जाती है।

इसके साथ साथ कानून उन अधिकारियों की शक्ति में वृद्धि करता है, जो स्वतः शक्तिशाली होते हैं और जो स्वतः कमजोर हैं, उन्हें और अधिक निर्बल बनाता है। यह कार्यपालिका-सत्ता के प्रतिनिधियों को सभी प्रकार के स्थायित्व और स्वतंत्रता से वंचित कर देता है और उन्हें विधानमण्डल की मनमानियों के पूर्ण अधीनस्थ बना कर उन्हें उस क्षीण प्रभाव से भी वंचित कर देता है, जो प्रजातान्त्रिक सरकार की प्रकृति से उन्हें उपलब्ध होता। अनेक राज्यों में न्यायिक अधिकार भी बहुमत द्वारा निर्वाचन का विषय बना दिया गया और सभी राज्यों में उसका अस्तित्व विधान निर्मात्री सत्ता की इच्छा पर निर्भर कर दिया गया; क्योंकि प्रतिनिधियों को प्रति वर्ष न्यायाधीशों के भत्ते नियमित करने का अधिकार दे दिया गया।

प्रथाओं ने कानून से भी अधिक कार्य किया है। अमरीका में एक कार्रवाई अधिकाधिक सामान्य होती जा रही है, जो अन्त में प्रतिनिधिमूलक सरकार की 'गारंटियाँ' समाप्त कर देगी। बहुधा ऐसा होता है कि मतदाता किसी प्रतिनिधि का चुनाव करते समय उसके लिए आचरण का सिद्धान्त बनाते हैं और उस पर

कतिपय निश्चयात्मक दायित्व टाल देते हैं, जिनको पूरा करने के लिए वह वचनबद्ध होता है। उपद्रव को छोड़कर, इससे यही प्रतीत होता है मानों बहुमत स्वयं सरे-बाजार विचार विमर्श कर रहा हो।

अन्य अनेक परिस्थितियाँ एक साथ मिल कर, अमरीका में बहुमत की शक्ति न केवल सर्वप्रधान बना देती हैं, अपितु उसे उस चरम सीमा तक पहुँचा देती हैं, जहाँ उसका विरोध नहीं किया जा सकता। बहुमत का नैतिक अधिकार अंशतः इस धारणा पर आधारित है कि अनेक संगठित व्यक्तियों की बुद्धि, एक व्यक्ति की बुद्धि की अपेक्षा अधिक होती है और विधायकों की संख्या उनके गुण से अधिक महत्वपूर्ण होती है। इस प्रकार समानता का सिद्धान्त मनुष्यों की बुद्धि पर लागू किया जाता है और इस पर, मानवीय गर्व पर एक ऐसे सिद्धान्त से प्रहार किया जाता है, जिसे अल्पमत स्वीकार करने से हिचकिचाता है और जिसे वह धीरे-धीरे स्वीकार किये बिना न रहेगा। अन्य सभी शक्तियों की भाँति और सम्भवतः अन्य किसी भी शक्ति से अधिक अनेक व्यक्तियों की सत्ता समय व्यतीत होने पर ही न्यायसंगत प्रतीत होती है। सर्वप्रथम वह दबाव द्वारा आज्ञा पालन कराती है और उसके कानूनों का तब तक सम्मान नहीं होता, जब तक उनको दीर्घ काल तक बनाये नहीं रखा जाता।

समाज पर शासन करने का वह अधिकार, जिसका अधिकारी होने की कल्पना बहुमत अपनी श्रेष्ठतर बुद्धि के बल पर करता है, संयुक्त-राज्य अमरीका में सर्वप्रथम बसने वाले लोगों द्वारा प्रचलित किया गया और यह विचार जो स्वतः राष्ट्र बनाने के लिए पर्याप्त है, अब लोगों के आचरण और सामाजिक जीवन की छोटी घटनाओं के साथ घुलमिल गया है।

फ्रांसवासियों ने पुराने राजतन्त्र के अंतर्गत यह सिद्धान्त निर्धारित कर लिया था कि सम्राट कोई गलती नहीं करता और यदि उससे कुछ गलती हुई भी तो इसका सारा दोष उसके सलाहकारों पर मढ़ दिया जाता था। इस धारणा से स्वामिभक्ति अत्यन्त आसान हो गयी, इससे प्रजा को कानून-निर्माता के प्रति निरन्तर सम्मान और प्रेम प्रकट करते हुए भी कानून के विरुद्ध शिकायत करने का अवसर मिला। अमरीकियों की बहुमत के सम्बन्ध में यही धारणा है।

बहुमत की नैतिक शक्ति एक अन्य सिद्धान्त पर भी आधारित है। वह सिद्धान्त यह है कि कम लोगों के हितों की अपेक्षा अधिक लोगों के हितों को अधिक महत्व दिया जाना चाहिए। इससे यह सीधा अनुमान लगाया जा सकता है कि बहुमत के अधिकारों के प्रति जिस आदर की उद्घोषणा की गयी, उसमें

स्वभावतः पार्टियों की स्थिति के अनुसार वृद्धि और कमी होनी चाहिए। जब देश अनेक बड़े परस्पर-विरोधी हितों में विभाजित हो जाता है, तब बहुमत के विशेषाधिकार की प्रायः उपेक्षा होती है, क्योंकि माँगों की पूर्ति असह्य हो जाती है।

यदि अमरीका में नागरिकों का एक ऐसा वर्ग होता, जिसे विधान निर्माता बहुमत उन विशिष्ट अधिकारों से वंचित करने का प्रयत्न करता, जो उसके पास युग युग से रहते आये थे और उसे उच्च स्तर से जनसाधारण के स्तर पर लाने का प्रयत्न करता, तो यह सम्भव है कि अल्पमत उसके कानूनों को मानने के लिए कम तैयार होता परन्तु चूँकि अमरीका समान श्रेणी के लोगों का उपनिवेश है, इसलिए अभी तक वहाँ विभिन्न निवासियों के हितों में कोई स्वाभाविक अथवा स्थायी विरोध नहीं है।

ऐसे जनसमुदाय भी होते हैं, जिनमें अल्पमत के सदस्य कभी भी बहुमत को अपनी ओर करने की आशा नहीं कर सकते; क्योंकि इस स्थिति में उन्हें उस विषय का ही परित्याग कर देना होगा, जो उन दोनों के बीच विवाद का कारण बना हुआ है, इस प्रकार एक कुलीनतंत्र कभी बहुमत नहीं हो सकता, जबकि उसके विशिष्ट विशेषाधिकार पूर्ववत् बने रहते हैं और वह अपना परित्याग किये बिना अपने विशेषाधिकारों का परित्याग कर नहीं कर सकता।

अमरीका में राजनीतिक प्रश्नों पर इतने सामान्य और स्वतंत्र तरीके से विचार नहीं किया जा सकता और सभी पार्टियाँ बहुमत के अधिकारों को मान्यता प्रदान करने की इच्छुक हैं; क्योंकि सभी यह आशा रखती हैं कि किसी दिन वे उसको अपने हित के अनुकूल बनाने में सफल हो जायेंगी। अतः उस देश में बहुमत के पास अत्यधिक वास्तविक सत्ता और उतनी ही बड़ी मत शक्ति होती है और ऐसी कोई बाधा नहीं होती, जो उसकी प्रगति में बाधक हो सके; अथवा उसकी गति को अवरुद्ध कर सके, जिससे वह उन लोगों की शिकायतें सुन सके, जिनको वह अपने मार्ग में कुचल देता है। यह स्थिति उसीके लिए हानिकारक है और भविष्य के लिए घातक भी...

बहुमत का अत्याचार

मैं इसको एक अनुचित और तिरस्कार योग्य सिद्धान्त मानता हूँ कि राजनीतिक दृष्टि से लोगों को हर कार्य करने का अधिकार होता है; फिर भी मैंने इस बात पर बल दिया है कि सारी सत्ता का स्रोत बहुमत की इच्छा है। तो क्या इस प्रकार मैं अपने ही मत का विरोध करता हूँ?

किसी एक देश के बहुमत ने नहीं, प्रस्तुत मानव जाति के बहुमत ने एक सामान्य विधान का निर्माण और उसकी पुष्टि की है, जिसे न्याय की संज्ञा प्रदान की गयी है। अतः प्रत्येक जाति के अधिकार न्याय की सीमाओं के अंतर्गत रहते हैं। किसी देश को ऐसा न्यायाधीश माना जा सकता है, जिसे समस्त समाज का प्रतिनिधित्व करने तथा न्याय का, जो समाज का कानून होता है, उपयोग करने का अधिकार है। क्या समाज का प्रतिनिधित्व करने वाले इस प्रकार के न्यायाधीश को स्वयं समाज से भी अधिक, जिसके कानूनों को वह कार्यान्वित करता है, अधिकार प्राप्त होने चाहिए ?

जब मैं किसी अनुचित कानून का पालन करने से इनकार करता हूँ तब बहुमत के शासन करने के अधिकार का खण्डन नहीं करता, बल्कि मैं केवल जनता की सार्वभौमता के विरुद्ध मानवता की सार्वभौमता से अपील करता हूँ। कुछ लोगों ने निर्भीकतापूर्वक मत व्यक्त किया है कि कोई जाति या समाज उन मामलों में, जो विशुद्ध रूप से उसी के हैं, न्याय और तर्क की सीमाओं का उल्लंघन कदापि नहीं कर सकता और फलस्वरूप उस जाति या समाज का प्रतिनिधित्व करने वाले बहुमत को पूर्ण अधिकार दिया जा सकता है; किन्तु यह गुलामों की भाषा है।

सामूहिक दृष्टि से विचार करने पर बहुमत एक व्यक्ति मात्र है, जिसके मत और प्रायः जिसके हित उस अन्य व्यक्ति के हित के विरुद्ध हैं, जिसे अल्पसंख्यक कहा जाता है। यदि यह मान लिया जाय कि पूर्ण अधिकार से युक्त व्यक्ति विरोधियों पर अत्याचार कर उसका दुरुपयोग कर सकता है, तब यही आरोप बहुमत पर भी क्यों नहीं लगाया जा सकता ? मनुष्यों का आचरण परस्पर मिलने पर नहीं बदलता और न बाधाओं की उपस्थिति में उनकी शक्ति के साथ-साथ उनके धैर्य में वृद्धि होती है। जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, मैं यह विश्वास नहीं कर सकता। मैं अपने समान व्यक्तियों में से एक व्यक्ति को सब कुछ करने का जो अधिकार प्रदान करने से इनकार करता हूँ, उस अधिकार को मैं व्यक्तियों के समूह को कदापि नहीं प्रदान कर सकता।

मैं नहीं सोचता कि स्वाधीनता की रक्षा के लिए एक ही सरकार में अनेक सिद्धान्तों का सम्मिश्रण संभव है, जिससे कि वे एक दूसरे का वास्तविक विरोध करें। सरकार का वह सामान्यतः मिला-जुला रूप, मुझे केवल कल्पनामात्र दिखायी देता है। वस्तुतः मिली-जुली सरकार जैसी कोई वस्तु नहीं है, जैसा कि उस शब्द का सामान्यतः अर्थ लिया जाता है; क्योंकि सभी समुदायों में कार्य

करने के एक ही सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जाता है, जो अन्य से अधिक शक्तिशाली होता है। गत शताब्दि में, इंग्लैंड, जिसका इस प्रकार की सरकार के लिए उदाहरण दिया जाता है, अनिवार्यतः एक कुलीनतंत्र राज्य था, यद्यपि इसमें प्रजातन्त्र के कुछ महान तत्त्व सन्निहित थे। फिर भी देश के कानून और नियम ऐसे थे, जिससे कालान्तर में कुलीनतंत्र प्रभावकारी सिद्ध हुए बिना और सार्वजनिक प्रकार्यों में अपने इच्छानुसार निर्देश किये बिना नहीं रह सका। दोष उस समय उत्पन्न हुआ जबकि जनता के हितों की कीमत पर निरन्तर रूप से कुलीन व्यक्तियों के हितों का विचार, बिना मूल समस्या पर विचार किये, किया गया, जो कि अधिक महत्वपूर्ण था। जब समुदाय में वस्तुतः मिली जुली सरकार रहती है अर्थात् जब वह परस्पर-विरोधी सिद्धान्तों के बीच समान रूप से विभाजित है, तब उसे या तो क्रान्ति का अनुभव होना चाहिए अथवा अराजकता के हाथों नष्ट हो जाना चाहिए।

अतः मेरा यह मत है कि सामाजिक शक्ति को, जो अन्य शक्तियों में सर्वश्रेष्ठ है, वहीं स्थान मिलना चाहिए; किन्तु मेरी दृष्टि से स्वाधीनता उस समय खतरे में पड़ जाती है, जब यह शक्ति अपने मार्ग में कोई ऐसी बाधा नहीं पाती, जो उसकी प्रगति को रोक सके और उसे स्वयं की उग्रता में कमी करने का अवसर प्रदान कर सके।

असीमित शक्ति अपने आप में बुरी और खतरनाक है। मानव प्राणियों में उसका विवेकपूर्वक प्रयोग करने की क्षमता नहीं होती। केवल ईश्वर ही सर्वशक्तिमान् हो सकता है, क्योंकि उसकी बुद्धि और उसका न्याय सदैव उसकी शक्ति के समान होता है। पृथ्वी पर कोई शक्ति नहीं है जो स्वयं आदर के योग्य हो अथवा इतने पावन अधिकार से सम्पन्न हो, जिससे मैं उसके अनियन्त्रित एवं सबसे विशिष्ट अधिकार को स्वीकार कर सकूँ। जब मैं देखता हूँ कि पूर्ण आधिपत्य के अधिकार और साधन किसी विशिष्ट सत्ता को सौंप दिये जाते हैं, चाहे वह प्रजा हो या राजा, कुलीनतंत्र हो अथवा प्रजातन्त्र, राजतंत्र हो अथवा गणतन्त्र, तो मैं कहता हूँ कि निरंकुशता का बीजारोपण हो चुका है और मैं अन्य स्थान पर अन्य कानूनों के अंतर्गत रहना पसन्द करता हूँ।

मेरे मतानुसार अमरीका में वर्तमान प्रजातान्त्रिक संस्थाओं की मुख्य बुराई उसकी कमजोरी से उत्पन्न नहीं होती, जैसा प्रायः यूरोप के बारे में कहा जाता है, बल्कि उनकी अदम्य शक्ति से उत्पन्न होती है। मैं उस देश में फैली अत्यधिक स्वतंत्रता से उतना चिन्तित नहीं, जितना कि अत्याचार के विरुद्ध ज्ञानि की

उपलब्ध सुरक्षाओं की अपर्याप्तताओं से।

अमरीका में जब किसी व्यक्ति अथवा पार्टी के साथ अन्याय किया जाता है, तब वह उसके निवारणार्थ किससे आवेदन कर सकता है? क्या वह जनमत से कहे, जो बहुमत का है? क्या वह विधानमण्डल से कहे, जो बहुमत का प्रतिनिधित्व करता है और जिसके आदेश का वह पालन करता है! क्या वह कार्यकारिणी सत्ता के समक्ष जाय, जो बहुमत द्वारा नियुक्त होती है और उसके हाथों में खिलौने की भाँति कार्य करती है! जन-शक्ति में सदास्त्र बहुमत रहता है, जूरी न्यायविषयक मामलों की सुनवाई करने के अधिकार से सम्पन्न बहुमत है और कतिपय राज्यों में न्यायाधीश भी बहुमत द्वारा चुने जाते हैं। आप जिस कानून की शिकायत करते हैं, वह चाहे जितना असमानतापूर्ण और मूर्खतापूर्ण क्यों न हो, आपको उसके सामने यथाशक्य अधिक से-अधिक झुकना ही पड़ेगा।

दूसरी ओर यदि एक विधायिनी शक्ति का इस प्रकार गठन किया जाय कि वह बहुमत का, उसकी भावनाओं की गुलाम हुए बिना, प्रतिनिधित्व करे; कार्यकारिणी इस प्रकार बने की वह अधिकार का उचित भाग रख सके और न्याय विभाग इस प्रकार स्थापित हो कि वह अन्य दो शक्तियों से पृथक् रहे; तब एक सरकार इस प्रकार बनेगी कि वह अत्याचार का खतरा मोल लिये बिना ही प्रजातान्त्रिक होगी।

मैं नहीं कहता कि अमरीका में आज प्रायः अत्याचार होता रहता है, किन्तु मेरी मान्यता है कि इसके विरुद्ध कोई निश्चित प्रतिबन्ध नहीं है और जिन कारणों से सरकार शांत होती है, वे देश के कानूनों की अपेक्षा वहाँ की परिस्थितियों और आचरण में मिलते हैं।

अमरीकी सार्वजनिक अधिकारियों के स्वच्छन्द अधिकार पर बहुमत की सर्वोच्चता के प्रभाव

क्रूर और निरंकुश शासन में भेद स्पष्ट हो जाना चाहिए। क्रूरता का प्रयोग स्वयं कानून के साधनों से ही हो सकता है और ऐसी स्थिति में वह निरंकुशता नहीं। निरंकुश सत्ता का प्रयोग जनहित के लिए भी हो सकता है और उस स्थिति में यह क्रूरता नहीं है। क्रूरता में सामान्यतः निरंकुश साधनों का उपयोग होता है, किन्तु आवश्यकता होने पर वह इसके बिना भी कार्य चला सकती है। संयुक्त राज्य अमरीका में बहुमत की सर्वोच्च शक्ति, जो विधानमण्डल की

वैधानिक निरंकुशता के अनुकूल है, उसी प्रकार मजिस्ट्रेट के निरंकुश अधिकार का समर्थन करती है। बहुमत को कानून बनाने और उसके कार्यान्वय का ध्यान रखने का पूर्ण अधिकार होता। चूँकि उसका सत्तारूढ़ लोगों पर तथा सारे समुदाय पर समान अधिकार होता है, अतः वह सार्वजनिक अधिकारियों को अपना निष्क्रिय अभिकर्ता मानता है और उन्हें अपने कार्यों को पूरा करने का उत्तरदायित्व सौंप देता है। उनके पदों और उनके विशेषाधिकारों की पूर्व व्याख्या कभी-कभी ही की जाती है। उनके साथ वैसा ही व्यवहार होता है जैसा कि एक मालिक नौकर के साथ करता है, क्योंकि वे सदैव उनकी निगरानी में काम करते हैं और वह किसी भी समय निर्देश दे सकता है अथवा उनको फटकार बता सकता है।

अमरीकी अधिकारियों के लिए जो क्षेत्र निर्धारित होता है, उस क्षेत्र में वे सामान्यतः फ्रांसीसी नागरिक अधिकारियों की अपेक्षा बहुत अधिक स्वतंत्र होते हैं। कभी-कभी लोकप्रिय सत्ता द्वारा उन सीमाओं का अतिक्रमण करने की भी अनुमति उन्हें मिल जाती है और चूँकि बहुमत के विचार और सत्ता द्वारा उन्हें संरक्षण एवं समर्थन प्राप्त होता है, इसलिए वे ऐसा कार्य करने का साहस करते हैं, जिसके प्रति एक यूरोपीय भी, जो निरंकुश सत्ता का अभ्यस्त है, आश्चर्य-चकित हो जाता है। इन्हीं साधनों से स्वाधीन देश के भीतर ऐसी प्रवृत्तियाँ पनपती हैं, जो एक दिन स्वतंत्रता के लिए घातक सिद्ध हो सकती हैं।

अमरीका में जनमत पर बहुमत का प्रभाव

संयुक्त राज्य अमरीका में विचारों के प्रयोग परीक्षण में हम स्पष्टतः समझ सकते हैं कि किस प्रकार बहुमत का अधिकार उन सभी अधिकारों का, जिनसे हम यूरोप में परिचित हैं, अतिक्रमण करता है। विचार अदृश्य और सूक्ष्म शक्ति है, जो क्रूरता के सभी प्रयासों का तिरस्कार करता है। आजकल यूरोप में पूर्ण शक्तिशाली शासक भी अपने कतिपय मतों का, जो उनकी सत्ता के विरोध में हैं, अपने क्षेत्रों और न्यायालयों में गुप्त रूप से परिचालन नहीं रोक सकते। परन्तु अमरीका में ऐसा नहीं है, जब तक बहुमत का प्रश्न अनिश्चित रहता है, विचार-विमर्श चलता रहता है; किन्तु जब भी निर्णय की घोषणा की जाती है, प्रत्येक शान्त हो जाता है और कार्रवाई के सहयोगी और विरोधी उसकी उपयुक्तता पर स्वीकृति देने के हेतु संगठित हो जाते हैं। इसका कारण स्पष्ट है। कोई भी शासक इतना पूर्ण नहीं है कि वह समाज की सभी शक्तियों को अपने

हाथ में ले सके और सभी विरोधियों पर विजय पा सके, जैसा कि बहुमत करने में समर्थ है, जिसको कानून बनाने और उन्हें क्रियान्वित करने का अधिकार है।

राजा की सत्ता पार्थिव होती है और वह मनुष्यों के कार्यों पर उनकी इच्छाओं को दबाये बिना नियंत्रण रखती है, किन्तु बहुमत को एक ऐसी सत्ता प्राप्त है जो पार्थिव और नैतिक दोनों ही है और जो इच्छाशक्ति पर उतनी ही प्रक्रिया करती है, जितनी कार्यों पर, और जो केवल संघर्षों को ही नहीं, वरन् सभी वादविवादों का दमन करती है। मैं ऐसा कोई देश नहीं जानता, जहाँ मस्तिष्क की इतनी कम स्वाधीनता और विचार-विमर्श की इतनी कम वास्तविक स्वतंत्रता हो, जैसा कि अमरीका में है। यूरोप के किसी भी सांविधानिक राज्य में हर प्रकार के धार्मिक और राजनीतिक सिद्धान्त का स्वतंत्रता से प्रचार किया जा सकता है और उसको फैलाया जा सकता है; क्योंकि यूरोप में ऐसा कोई देश नहीं, जो किसी एक ही सत्ता के इतना अधीन हो गया हो, जो अपने कष्टों के फलस्वरूप सत्य की आवाज उठाने वाले व्यक्ति की रक्षा न कर सके। यदि वह पूर्ण सत्ताप्राप्त सरकार के अंतर्गत रहनेवाला अभागा है, तो प्रायः लोग उसकी ओर हो जाते हैं और यदि वह स्वतंत्र राष्ट्र में रहता है, तो वह आवश्यकता पड़ने पर राजसिंहासन की शरण ले सकता है। कुछ देशों में समाज का कुलीन वर्ग उसका समर्थन करता है और अन्य में प्रजातंत्र; किन्तु जहाँ अमरीकी संस्थाओं के समान प्रजातांत्रिक संस्था संगठित है, वहाँ केवल एक ही सत्ता है, शक्ति और सफलता का एक ही तत्त्व है और उसके परे कुछ नहीं है।

अमरीका में बहुमत मत-स्वातंत्र्य के चारों ओर प्रबल अवरोध खड़ा कर देता है और इन अवरोधों के अन्तर्गत एक लेखक जो चाहे लिख सकता है, परन्तु मर्यादा का उल्लंघन करना उसके लिए घातक होता है। उसको न केवल सजा का ही खतरा मोल लेना पड़ता है, प्रत्युत निरंतर रूप से उसका अपमान किया जाता है। उसका राजनीतिक जीवन सदा के लिए समाप्त हो जाता है; क्योंकि उसने उस एकमात्र अधिकार का अपमान किया है, जो उसे राजनीतिक जीवन प्रदान कर सकता है। उसको किसी प्रकार का मुआवजा नहीं दिया जाता, यहाँ तक कि सम्मान तक से उसको वंचित कर दिया जाता है। अपना मत प्रकाशित करने से पूर्व वह मानता है कि उसका मत अन्यों के मतों के सामान है, किन्तु उनके प्रकाशन के तत्काल बाद उस पर विरोधियों द्वारा रोक लगा दी जाती है, जबकि उसके समान मत रखने वाले भी बोलने का साहस न होने के कारण चुप रह जाते हैं। वह प्रतिदिन किये जाने वाले प्रयासों के निष्फल होने से

झुक जाता है और शान्त हो जाता है, जैसे कि वह सत्य बोल कर भी पश्चात्ताप कर रहा हो।

बेड़ियाँ और वधिक ऐसे प्रसाधन थे, जिनका पहले क्रूर शासन द्वारा प्रयोग किया जाता था; किन्तु हमारे युग की सभ्यता ने स्वयं निरंकुशता को भी मात कर दिया है, यद्यपि उसको सीखने की गुंजाइश नहीं दिखायी देती। यह कहा जा सकता है कि निरंकुश शासकों ने दमन की नीति को साकार रूप प्रदान किया और आज के प्रजातांत्रिक गणतंत्र ने उसे केवल मस्तिष्क तक ही सीमित रख दिया है, मानो वह इच्छा के दमन की ओर प्रवृत्त होता है। एक व्यक्ति के प्रभुत्व में आत्मा को अधीनस्थ करने के लिए शरीर पर आक्रमण किया जाता था, किन्तु आत्मा उन आक्रमणों से बच निकली, जो उसके विरुद्ध निर्देशित थे और उसने गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया। प्रजातांत्रिक गणतंत्र के क्रूर शासन में यह मार्ग नहीं अपनाया जाता; यहाँ शरीर स्वतंत्र रहता है और आत्मा को गुलाम बनाया जाता है। शासक ऐसा अब नहीं कहता—"तुम वैसा ही सोचो, जैसा मैं कहता हूँ अन्यथा तुम मर जाओगे।" किन्तु वह कहता है—"तुम मुझसे भिन्न विचार रखने में स्वतंत्र हो, तुम अपना जीवन, सम्पत्ति और जो कुछ भी तुम्हारे पास है, उसको सुरक्षित रख सकते हो, किन्तु तुम आइन्दा से अपने ही लोगों में एक अजनबी की तरह रहोगे; तुम नागरिक अधिकार रख सकते हो, किन्तु वे तुम्हारे लिए अनुपयोगी होंगे, क्योंकि यदि तुम उनसे वोट माँगोगे तो कभी भी अपने साथी नागरिकों द्वारा नहीं चुने जाओगे, यदि तुम उनसे आदर प्राप्त करना चाहोगे तो वे तुम्हारी उपेक्षा करेंगे। तुम मनुष्यों के बीच रहोगे, किन्तु तुम मानवता के अधिकारों से वंचित रहोगे। तुम्हारे साथी तुमको अपवित्र समझ कर तुमसे विलग रहेंगे, और वे भी, जो तुम्हारी सज्जनता में विश्वास करते हैं, तुम्हारा परित्याग कर देंगे; क्योंकि उनको भी अपने को अलग किये जाने का भय होगा। शान्तिपूर्वक रहो; मैंने तुमको तुम्हारा जीवन प्रदान किया है, किन्तु वह जीवन भी मृत्यु से बदतर है।"

पूर्ण स्वेच्छाचारी राजतंत्रों ने निरंकुशता को बदनाम किया था। हमें सजग रहना चाहिए; ऐसा न हो कि कहीं प्रजातान्त्रिक गणराज्यों में वह पुनर्जीवित हो जाय और वे उसको कुछ लोगों के लिए और अधिक कष्टप्रद बना कर बहुजनों की दृष्टि में इसे कम घृणित और अपमानजनक बना दें।

पुराने विश्व के सर्वाधिक गर्वीले राष्ट्रों में उस समय की त्रुटियों और बुराइयों को दूर करने के उद्देश्य से ग्रन्थ प्रकाशित किये गये। लेब्रूयेरे उस समय दुर्ग

चौदहवें के प्रासाद में रहता था। जब उसने महान चौदहवें लुई-विषयक अध्याय लिखा था, मोलियरे ने राज दरबार में अभिनीत नाटकों में दरबारियों की ही आलोचना की थी; किन्तु अमरीका में शासक सत्ता को खिलौना नहीं बनाया जा सकता। छोटी सी निंदा भी उसकी भावना को उभाड़ देती है और साधारण मजाक भी, जिसका आधार सत्य हो, उसको क्रोधित कर देता है; भाषा के स्वरूप से लेकर चरित्र के गुणों तक, प्रत्येक वस्तु का विषय प्रशंसात्मक होना चाहिए। कोई लेखक, चाहे कितना ही प्रमुख क्यों न हो, अपने साथी नागरिकों की चापलूसी करने से नहीं बच सकता। बहुमत निरन्तर रूप से आत्मश्लाघा के वातावरण में रहता है और ऐसे भी कुछ सत्य हैं, जिन्हें अमरीकी केवल नवागतुकों से अथवा अनुभव से सीख सकते हैं।

यदि अमरीका में अभी तक कोई बड़ा लेखक नहीं हुआ, तो उसका कारण इन तथ्यों से मिल सकता है कि विचार स्वातंत्र्य के बिना कोई भी प्रतिभाशाली साहित्यकार पैदा नहीं हो सकता और विचार-स्वातंत्र्य अमरीका में नहीं है। स्पेन में अनेक धर्मविरोधी पुस्तकों की बिक्री पर सरकार रोक लगाने में कभी भी समर्थ नहीं हुई। अमरीका में बहुमत का शासन अधिक सफल होता है, क्योंकि यह किसी के मत को प्रकाशित नहीं होने देता। अमरीका में सिद्धान्त में विश्वास न करने वाले मिल सकते हैं, किंतु नास्तिकवाद के सार्वजनिक संस्थान नहीं मिलते। कई सरकारों द्वारा अनैतिक पुस्तकों पर प्रतिबन्ध लगाकर नैतिकता की रक्षा का प्रयास किया गया है। अमरीका में इस प्रकार की पुस्तकों के लिए सजा नहीं दी जाती, किन्तु किसी को इस प्रकार की पुस्तकें लिखने के लिए प्रेरित नहीं किया जाता। इसलिए नहीं कि सभी नागरिक निष्कलंक हैं, बल्कि इसलिए कि अधिकांश लोग सभ्य हैं और नियम से रहते हैं।

इस विषय में सत्ता का प्रयोग निर्विवादतः श्रेष्ठ है और मैं स्वयं सत्ता की प्रवृत्ति पर ही विचार कर रहा हूँ। यह अदम्य सत्ता एक निरंतर सत्य है और इसका न्यायिक ढंग से प्रयोग एक संयोग मात्र है।

अमरीकियों के राष्ट्रीय चरित्र पर बहुमत की क्रूरता के प्रभाव

मैंने जिन प्रवृत्तियों का उल्लेख किया है, वे आज भी राजनीतिक समाज में थोड़ी-थोड़ी दृष्टिगोचर होती हैं, किन्तु इनका अमरीकियों के राष्ट्रीय चरित्र पर

प्रतिकूल प्रभाव पहले ही से पड़ रहा है। अमरीका में बहुमत की इस निरन्तर बढ़ती हुई निरंकुशता का कारण राजनीतिक जीवन में प्रतिष्ठित व्यक्तियों का अत्यल्प संख्या में होना है। जब अमरीकी क्रान्ति हुई तब ऐसे व्यक्ति बड़ी संख्या में सामने आये, क्योंकि उस समय जनमत का प्रयोग अत्याचार करने के लिए नहीं, अपितु व्यक्तियों के प्रयासों का निर्देशन करने के लिए किया जाता था। उस समय के सामान्य बौद्धिक आन्दोलन में भाग लेने वाले उन प्रतिष्ठित व्यक्तियों की एक अलग ही शान थी, जिसका प्रतिबिम्ब राष्ट्र पर तो पड़ा, किन्तु जो किसी भी प्रकार उससे उधार नहीं ली गयी थी।

निरंकुश सरकारों में शासक के निकटतम रहने वाले बड़े-बड़े सरदार राजा की भावनाओं के अनुकूल कार्य करते हैं और स्वेच्छापूर्वक गुलामों की भाँति उसकी आज्ञाओं का पालन करते हैं; किन्तु राष्ट्र की आम जनता दासता द्वारा अपने को नीचे नहीं गिराती; वह अपनी निर्बलता से, स्वभाव से, अज्ञान से और कभी-कभी वफादारी के कारण झुकती है। कुछ राष्ट्र आनन्द और गौरव के साथ शासक की इच्छाओं के आगे अपना बलिदान करने के लिए प्रसिद्ध हैं और इस प्रकार वे इस झुकने की कार्रवाई से ही एक प्रकार की मस्तिष्क की स्वतंत्रता का परिचय देते हैं। इन राष्ट्रों की दशा दयनीय होती है, किन्तु वे पतित नहीं होते। वह कार्य करना, जो किसी व्यक्ति को स्वीकार नहीं और वह जो कुछ करता है, उसकी स्वीकृति का ढोंग करना, इन दोनों में बड़ा अन्तर है। प्रथम निर्बल व्यक्ति की कमजोरी है और दूसरा दासता की भावना के अनुकूल है।

निरंकुश राजतंत्रों की अपेक्षा स्वतंत्र राष्ट्रों में, जहाँ प्रत्येक व्यक्ति को न्यूनाधिक रूप में राज्य के मामलों में अपना मत व्यक्त करने के हेतु प्रायः आमंत्रित किया जाता है, प्रजातान्त्रिक गणतंत्रों में जहाँ जन-जीवन निरन्तर रूप से घरेलू मामलों से सम्बद्ध रहता है, जहाँ सार्वभौम सत्ता प्रत्येक क्षेत्र में व्याप्त है और जहाँ उसका ध्यान जनता की चीख पुकार से आकर्षित होता है, अधिकतर ऐसे लोग मिलते हैं, जो उनकी कमजोरी का लाभ उठाते हैं और उनकी भावनाओं को नियंत्रित कर जीविकोपार्जन करते हैं। इसका कारण यह नहीं कि वहाँ के लोग अन्य राष्ट्रों की अपेक्षा अधिक बुरी स्थिति में हैं, किन्तु प्रलोभन अधिक तीव्र होते हैं और उनके साथ इनकी पूर्ति आसान होती है। इसके परिणाम-स्वरूप चरित्र का अधिक व्यापक रूप से पतन होता है।

प्रजातान्त्रिक गणतंत्र में बहुमत का समर्थन प्राप्त करने की पद्धति अपनायी

जाती है और यह एक साथ सभी वर्गों में जारी की जाती है, यह गम्भीरतम आक्षेप इस पर लगाया जा सकता है। अमरीकी गणराज्यों की तरह गठित प्रजातान्त्रिक राज्यों में यह बात विशेषरूप से सही है, जहाँ बहुमत की सत्ता इतनी निरंकुश एवं अदम्य है कि यदि व्यक्ति निर्धारित मार्ग से अलग होना चाहता है, तो उसे नागरिक के नाते अपने अधिकारों का परित्याग करना पड़ता है और व्यक्ति के रूप में अपने गुणों को भूल जाना पड़ता है।

संयुक्त राज्य अमरीका में सत्ता के लिए लालायित रहने वाले विशाल जन-समूह में मुझे वह पौरुषपूर्ण स्पष्टता और प्रौढ़ विचार-स्वातंत्र्य बहुत कम व्यक्तियों में देखने को मिला, जो बहुधा पूर्ववर्ती कालों में अमरीकियों की विशिष्टता होती थी और जो सर्वत्र विशिष्ट चरित्र वाले व्यक्तियों के चरित्र का प्रधान अंग होती है। अमरीकी एक ही मार्ग पर इतना सही सही चलते हैं कि प्रथम दृष्टि में ऐसा प्रतीत होता है कि समस्त अमरीकियों के दिमाग एक ही साँचे में ढाले गये हैं। निश्चय ही कभी-कभी किसी नवागन्तुक को ऐसे अमरीकी मिलते हैं जो इन नियमों की कठोरता के प्रति असहमति प्रकट करते हैं, उसे ऐसे व्यक्ति मिलते हैं, जो कानून की त्रुटियों तथा प्रजातन्त्र की अस्थिरता और अज्ञान पर खेद प्रकट करते हैं, जो राष्ट्रीय चरित्र के लिए बाधक बुरी प्रवृत्तियों तक को देखते हैं और ऐसे उपाय बताते हैं जिनसे काम लेना सम्भव हो सकता है; किन्तु आपके अतिरिक्त उनकी बातों को सुनने वाला कोई नहीं होता, और आप, जिसके समक्ष ये गुप्त विचार प्रकट किये जाते हैं, एक नवागन्तुक और एक उड़ती हुई चिड़िया के समान हैं। वे आपको ऐसे सत्य बताने के लिए अत्यन्त तत्पर रहते हैं, जो आपके लिए निरर्थक हैं; किन्तु जनता के समक्ष वे भिन्न ही भाषा में बात करते हैं।...

बहुमत की सर्वशक्तिमत्ता से अमरीकी गणराज्यों का सबसे बड़ा खतरा

सरकारों का पतन सामान्यतः निर्बलता अथवा अत्याचारों से होता है। प्रथम स्थिति में सत्ता उनसे छिन जाती है और दूसरी स्थिति में सत्ता उनके अधिकार से मुक्त हो जाती है। अनेक प्रेक्षकों ने, जिन्होंने प्रजातान्त्रिक राज्यों में अराजकता देखी है, अनुमान लगाया है कि उन राज्यों की सरकारें सामान्यतः कमजोर और निर्बल हैं। सत्य यह है कि जब पार्टियों में संघर्ष प्रारम्भ होता है

तब सरकार समाज पर अपना नियंत्रण खो देती है, किन्तु मैं नहीं सोचता कि प्रजातांत्रिक सरकार के पास स्वभावतः शक्ति अथवा साधन नहीं होते, अथवा यों कहिए कि यह शक्ति के दुरुपयोग और प्रसाधनों के गलत दिशा में प्रयोग करने से निष्फल होती है। अराजकता सदैव उसके अत्याचारों और भूलों से उत्पन्न होती है, न कि उसकी शक्ति की कमी से।

यह महत्वपूर्ण बात है कि स्थायित्व को शक्ति से और वस्तुओं की महानता को उसके काल के साथ नहीं मिलाया जा सकता। प्रजातांत्रिक गणराज्यों में समाज का निर्देशन करने वाली सत्ता स्थिर नहीं होती, क्योंकि सरकारें प्रायः बदलती रहती हैं और नया मार्ग निर्धारित करती हैं; किन्तु वे जिस मार्ग पर भी चलें, उनकी शक्ति प्रायः निर्विरोध रहती है। अमरीकी गणतंत्र की सरकारें मुझे यूरोप के स्वेच्छाचारी राजतंत्र से अधिक केन्द्रित और अधिक साहसी प्रतीत होती हैं। मैं ऐसी कल्पना नहीं करता कि वे निर्बलता के कारण नष्ट हो जायेंगी।

यदि कभी स्वतंत्र अमरीकी संस्थाएँ नष्ट हुईं, तो उसका कारण बहुमत की सर्वोच्चता ही होगा, जो भविष्य में अल्पसंख्यकों को हताश कर देगी और उनको शारीरिक बल प्रयोग के लिए बाध्य कर देगी। इसके परिणामस्वरूप अराजकता उत्पन्न होगी, किन्तु यह अराजकता अत्याचार से उत्पन्न होगी।

श्री मेडीसन ने 'फेडरलिस्ट' नं. ५१ में यही मत व्यक्त किया है—"किसी गणराज्य में इस बात का अत्यधिक महत्त्व होता है कि न केवल समाज के दमन से उसकी रक्षा की जाय, प्रत्युत उसके एक भाग के अन्याय से दूसरे भाग की भी रक्षा की जाय। न्याय सरकार का लक्ष्य होता है। यह सभ्य समाज का लक्ष्य होता है। इसके लिए सदा यत्न किया गया है और तब तक सदा यत्न किया जायगा, जब तक उसकी प्राप्ति न हो जाय अथवा इस यत्न से स्वतंत्रता खो न जाय। यह बात सचाई के साथ कही जा सकती है कि ऐसे समाज में, जिसकी व्यवस्था के अन्तर्गत प्रबलतर पक्ष शीघ्र संगठित होकर, निर्बलतर पक्ष का दमन कर सकता है, उसी प्रकार अराजकता का साम्राज्य होता है, जिस प्रकार प्रकृति की स्थिति में, जहाँ शक्तिशाली व्यक्ति की हिंसा के विरुद्ध निर्बल व्यक्ति के लिए कोई सुरक्षा नहीं होती और जिस प्रकार दूसरी अवस्था में सशक्त व्यक्ति भी अपनी अनिश्चितता के कारण ऐसी सरकार के आगे झुकने के लिए प्रेरित होते हैं, जो कमजोरों का भी उनके समान ही संरक्षण कर सकती है, उसी प्रकार पहली स्थिति में अधिक शक्तिशाली वर्ग धीरे धीरे इसी प्रकार के उद्देश्य से

प्रेरित होकर एक ऐसी सरकार के लिए कामना करने लगेगा, जो अधिक कमजोर और अधिक शक्तिशाली—सभी दलों की रक्षा करेगी। इस बात में तनिक भी सन्देह नहीं किया जा सकता कि यदि रोड आइलैण्ड राज्य को महासंघ से अलग कर दिया जाय और अकेले छोड़ दिया जाय तो इस प्रकार की संकीर्ण सीमाओं में लोकप्रिय सरकार के अन्तर्गत दलगत बहुमतों के इस प्रकार के निरन्तर दमन द्वारा अधिकार की अरक्षा का प्रदर्शन होगा और उन्हीं दलों के आवाहन पर शीघ्र ही जनता से बिल्कुल स्वतंत्र एक शक्ति की आवश्यकता होगी, जिनके कुशासन ने इसकी आवश्यकता को प्रमाणित किया था।"

जेफर्सन ने भी कहा है—"हमारी सरकार की कार्यकारिणी सत्ता ही मेरी चिन्ता का एकमात्र विषय नहीं है, सम्भवतः वह उसका प्रधान विषय भी नहीं है। विधानमण्डल की क्रूरता वास्तव में सबसे अधिक भयानक खतरा है और आगामी अनेक वर्षों तक वह सर्वाधिक भयानक बना रहेगा। कार्यकारिणी सत्ता की क्रूरता भी अवसर आने पर सामने आयेगी, किन्तु इसमें बहुत समय लगेगा।"

इस विषय पर अन्य किसी व्यक्ति के मत की अपेक्षा जेफर्सन के मत को उद्धृत करने में मुझे प्रसन्नता है, क्योंकि मैं उसे प्रजातंत्र का सबसे प्रभावशाली अधिवक्ता मानता हूँ।

१३. बहुमत की क्रूरता को शान्त करने वाले कारण

केन्द्रित प्रशासन का अभाव

मैं केन्द्रित सरकार और केन्द्रित प्रशासन के बीच का विभेद पहले बता चुका हूँ। प्रथम का अमरीका में अस्तित्व है, किन्तु दूसरा लगभग अज्ञात है। यदि अमरीकी जातियों की निर्देशिका सत्ता के पास सरकार के ये दोनों प्रसाधन होते और आदेशों को कार्य रूप में परिणत करने की प्रवृत्ति के साथ आदेश देने के अधिकार को संयुक्त कर देते, यदि वह सरकार के आम सिद्धान्तों की स्थापना के बाद उनके लागू करने के विवरणों तक पहुँच जाती और यदि वह देश के महान हितों को निर्धारित कर व्यक्तिगत हितों की पूर्ति में संलग्न हो जाती, तो नवीन विश्व में स्वतंत्रता शीघ्र ही नष्ट हो जाती।

किन्तु संयुक्त-राज्य अमरीका में बहुमत, जो प्रायः एक निरंकुश शासक की रुचियों और प्रवृत्तियों का प्रदर्शन करता रहता है, अभी तक क्रूरता के पूर्ण प्रसाधनों से युक्त नहीं है। अमरीकी गणराज्यों में केन्द्रीय सरकार ने किन्हीं ऐसे छोटे उद्देश्यों के सम्बन्ध में अपने को व्यस्त नहीं रखा, जो उसका ध्यान पूर्ण रूप से आकर्षित कर सके। समाज के अन्य मामलों को उसके अधिकारों द्वारा नियमित नहीं किया गया, और अभी तक किसी चीज ने उनमें हस्तक्षेप करने की इच्छा व्यक्त नहीं की। बहुमत अधिकाधिक निरंकुश होता गया, किन्तु उसने केन्द्रीय सरकार के परमाधिकारों में वृद्धि नहीं की। वे विशेषाधिकार निश्चित क्षेत्र तक ही सीमित रहे, यद्यपि बहुमत की निरंकुशता किसी एक बात में उत्पीड़क हो सकती है; किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि वह सब पर लागू हो सकती है। राष्ट्र में प्रमुख दल उसकी भावनाओं से चाहे कितना ही उत्तेजित हो जाता हो, अपनी योजनाओं की पूर्ति करने में वह कितना दृढ़ क्यों न हो, वह सारे देश में सभी नागरिकों को एक ही ढंग से और एक ही साथ अपनी इच्छा के अनुसार कार्य करने के लिए विवश नहीं कर सकता। जब केन्द्रीय सरकार, जो उस बहुमत का प्रतिनिधित्व करती है, आदेश जारी करती है, तो उसे उस आदेश के कार्यान्वय का कार्य अभिकर्त्ताओं को सौंपना पड़ता है, जिन पर बहुधा उसका कोई नियन्त्रण ही नहीं होता, और जिसे वह निरंतर निर्देश नहीं दे सकती। नगर-प्रशासन, म्यूनिसिपल संस्थाएँ और काउंटियां अनेक रहस्यमय बाँध हैं, जो लोकप्रिय बहुमत के निश्चयों पर नियंत्रण रखते हैं अथवा उसकी रोकथाम करते हैं। यदि कोई दमनकारी कानून स्वीकार किया जाता है तो भी उस कानून के कार्यान्वय के ढंग द्वारा स्वतन्त्रता की रक्षा की जायगी। बहुमत उसकी सूक्ष्मताओं तक और जिसे हम प्रशासनिक क्रूरता का ओछापन कह सकते हैं—नहीं पहुँच सकता। वह इस बात की कल्पना भी नहीं कर सकता कि वह ऐसा कर सकता है, क्योंकि उसको अपने अधिकार के प्रति पूर्ण जागरुकता नहीं है। वह अपने स्वाभाविक अधिकारों की सीमा को जानता है, किन्तु उनकी वृद्धि करने की कला से अपरिचित है।

इस विषय की ओर ध्यान देने की आवश्यकता है, क्योंकि यदि संयुक्त-राज्य अमरीका की भाँति किसी देश में प्रजातान्त्रिक गणतंत्र की स्थापना हुई है, जहाँ पहले कभी एक व्यक्ति के अधिकार से केन्द्रित प्रशासन की स्थापना हुई हो और जो जनता के कानूनों और प्रवृत्तियों में अत्यन्त गहराई तक पैठ चुका हो, तो मैं इस बात पर बल देने से नहीं हिचकिचाता कि इस प्रकार के गणतंत्र

में यूरोप या वस्तुतः एशिया के इस भाग में पाये जाने वाले किसी भी स्वेच्छाचारी राजतंत्र की अपेक्षा अधिक असह्य निरंकुशता का साम्राज्य होगा।

कानून का पेशा प्रजातंत्र को सन्तुलित रखने का कार्य करता है

अमरीकियों से मिलने और उनके कानूनों के अध्ययन करने पर हमें स्पष्टतः ज्ञात होता है कि कानूनी व्यवसाय के सदस्यों को सौंपे गये अधिकार और सरकार पर पड़ने वाले प्रभाव, प्रजातंत्र के दुरुपयोग के विरुद्ध सुरक्षा के लिए अधिक प्रभावशाली हैं। कानूनों का विशेष अध्ययन करने वाले व्यक्ति इस व्यवसाय से व्यवस्था की कतिपय प्रवृत्तियों, औपचारिकताओं के प्रति अभिरुचि और विचार-तारतम्य बाँधने की दिशा में एक प्रेरणा प्राप्त करते हैं, जिनसे वे क्रांतिकारी भावना और बहुसख्यकों की सुप्त भावनाओं के प्रति अधिक उग्र बन जाते हैं।

वकीलों को अध्ययन करने से जो विशेष सूचना प्राप्त होती है, उनसे समाज में उनका एक प्रतिष्ठित स्थान बन जाता है और बुद्धिजीवी वर्ग में वे एक विशेषाधिकार प्राप्त संस्था के रूप में रहते हैं। उनकी उच्च धारणा निरंतर रूप से उनके व्यवसाय में सहायक सिद्ध होती है। वे उस विज्ञान के ज्ञाता हैं, जो आवश्यक है, किन्तु जो आम तौर से सबको ज्ञात नहीं है। वे नागरिकों के बीच मध्यस्थों का कार्य करते हैं और दलों के मुकदमों के अन्धविश्वास को अपने लक्ष्य में निर्देशित करने के स्वभाव से उनको बहुसख्यकों के निर्णय के विरुद्ध कदम उठाने की प्रेरणा मिलती है। इसके अलावा स्वभावतः वे एक संस्था का निर्माण करते हैं, जो किसी पूर्व समझौते के परिणामस्वरूप या उस समझौते से जो उनको समान लक्ष्य की ओर ले जाता है, निर्मित नहीं होती; किन्तु अध्ययन की और कार्य करने की पद्धति की एकरूपता उनके विचारों में साम्य ला देती है—जैसे समान हितों से उनके प्रयास मिल जाते हों। वकीलों के आचरण में कुलीनवाद के कुछ स्वभाव और अभिरुचि देखने को मिलती है। वे व्यवस्था और औपचारिकताओं के प्रति एक-सा प्रेम प्रदर्शित करते हैं और बहुसख्यकों की कार्रवाइयों के प्रति एक सा उग्र रुख अपनाते हैं और जन-सरकार के प्रति एक ही गुप्त अपमान की धारणा रखते हैं।

मैं इस बात पर ज़ोर नहीं देता कि कानूनी व्यवसाय के सभी सदस्य हर समय शासन के मित्र और नये प्रवाह के विरोधी होते हैं, किन्तु अधिकांश इसी

प्रकार के होते हैं। जिस समाज में वकीलों को बिना किसी विरोध के उसी उच्च स्थिति में रहने दिया जाता है, जो स्वभावतः उनकी है, उनकी सामान्य भावना मुख्य रूप से दकियानूसी और प्रजातंत्र-विरोधी होगी। जब कुलीनतंत्र अपने सदस्यों में से इस व्यवसाय के नेताओं को अपनी श्रेणियों से अलग कर देता है, वे ऐसे शत्रुओं को उभाड़ते हैं जो अधिक शक्तिशाली होते हैं; क्योंकि अपने परिश्रम के कारण कुलीनों की प्रवृत्ति से अधिक स्वतंत्र होते हैं और अधिकार में निम्न होते हुए भी बुद्धि में अपने को उनके समान मानते हैं; परन्तु कुलीनतंत्र जब कभी भी उन्हीं व्यक्तियों को अपने कुछ अधिकार देना स्वीकार कर लेता है, तो दो वर्ग तत्परता से सगठित हो जाते हैं और वे उन अधिकारों को ऐसे ग्रहण कर लेते है जैसे कि वे उनके पारिवारिक हित हों।

वकील अन्य बातों की अपेक्षा सार्वजनिक व्यवस्था से अधिक सम्बन्धित रहते हैं और सार्वजनिक व्यवस्था की सुरक्षा अधिकारियों के हाथ में है। यह भी नहीं भुलाया जाना चाहिए कि यदि वे स्वतंत्रता का अधिक लाभ उठाते हैं, तो सामान्यतः वे वैधानिकता को अधिक महत्त्व देते हैं; वे पंच-निर्णय की सत्ता की अपेक्षा क्रूर शासन से कम डरते हैं और यदि विधानमण्डल स्वयं व्यक्ति को उसकी स्वतन्त्रता से विमुख करने का कदम या उठाता है, तो वे असन्तुष्ट नहीं रहते।

प्रजातान्त्रिक सरकार वकीलों के राजनीतिक अधिकार के अनुकूल होती है, क्योंकि जब धनिकों, कुलीनों और राजाओं को सरकार में शामिल नहीं किया जाता है, तब वकील अपने अधिकार के अनुसार उनका स्थान ग्रहण कर लेते हैं, क्योंकि वे ही उन लोगों की अपेक्षा अधिक बुद्धिमान एवं चतुर होते हैं और वे ही ऐसे होते है जिनका सार्वजनिक रूप से चुनाव किया जा सकता है। जब वे अपने स्वभाव से कुलीन व्यक्तियों और राजाओं के प्रति उन्मुख होते हैं, तब वे अपने हितों से जन-सम्पर्क में आते हैं। वे प्रजातंत्र की सरकार को उसके दुर्व्यसनों में भाग लिये बिना और उसकी निर्बलताओं का अनुसरण किये बिना पसन्द करते हैं और इस प्रकार वे उससे और उसके ऊपर दोहरा अधिकार प्राप्त करते हैं। प्रजातान्त्रिक राज्यों में लोग कानूनी व्यवसाय के सदस्यों के प्रति अविश्वास नहीं रखते; क्योंकि यह सर्वज्ञात है कि वे आम जनता की सेवा में अभिरुचि रखते हैं और लोग किसी प्रकार की उत्तेजना प्रकट किये बिना उनकी सुनते हैं, क्योंकि वे उनपर कुत्सचालों का दोषारोपण नहीं करते। वस्तुतः वकील प्रजातंत्र की संस्थाओं को समाप्त नहीं करना चाहते, किन्तु वे निरंतर रूप से

ऐसे साधनों द्वारा, जो उसकी प्रकृति के अनुकूल नहीं है, उसकी वास्तविक दिशा मोड़ने में प्रयत्नशील रहते हैं। वकील जन्म और हित से जनता के और स्वभाव तथा अभिरुचि से कुलीनतंत्र वर्ग के होते हैं। उनको समाज के दो महान वर्गों को जोड़नेवाली एक कड़ी कहा जा सकता है।

अमरीका में कुलीन अथवा साहित्यिक व्यक्ति नहीं हैं और लोगों में, धनिकों में अविश्वास करने की प्रवृत्ति होती है; फलतः वकील समाज में एक उच्चतम राजनीतिक श्रेणी का और अत्यन्त सभ्य वर्ग का निर्माण करते हैं। इसलिए नये परिवर्तन से वे कुछ भी नहीं खो पाते, जो सार्वजनिक व्यवस्था के लिए उनकी स्वाभाविक अभिरुचि में एक अनुदार हित संयुक्त कर देता है। यदि मुझसे पूछा जाय कि अमरीकी कुलीनतंत्र को कौन-सा स्थान दिया जाय, तो मैं बिना किसी हिचकिचाहट से कह दूँगा कि वह धनिकों के मध्य, जो सामान्य शृंखला में संगठित नहीं है, नहीं मिलेगा; प्रत्युत वह न्यायालयों और वकीलों में दिखायी पड़ता है।

अमरीका में जो कुछ घटित होता है उस पर हम जितना अधिक विचार करते हैं, उतना ही अधिक हम यह मानने के लिए प्रेरित होंगे कि वकील प्रजातान्त्रिक तत्त्व के प्रतिरोध में यदि एकमात्र नहीं, तो कम से-कम अत्यन्त शक्तिशाली संस्था का निर्माण करते हैं। उस देश में हमें सरलता से यह मालूम पड़ जाता है कि लोकप्रिय सरकार की अन्तर्निहित बुराइयों का शमन करने में किस प्रकार कानूनी व्यवसाय अपने गुणों द्वारा और यहाँ तक कि अपने दोषों द्वारा भी योग्य सिद्ध होता है। जब अमरीकी आवेग से उन्मत्त होते हैं अथवा अपने विचारों की प्रचण्डता में बह जाते हैं, तब उनको उनके कानूनी सलाहकारों के मानो अदृश्य प्रभाव द्वारा नियन्त्रित किया जाता है अथवा रोक दिया जाता है। ये गुप्त रूप से उनकी कुलीन प्रवृत्तियों के स्थान पर राष्ट्र की प्रजातान्त्रिक भावनाओं को उभाड़ते हैं, उनकी प्राचीनता के प्रति अंधविश्वास की भावना के स्थान पर नवीनता के प्रति प्रेम जाग्रत करते हैं, उनके संकीर्ण विचारों को रोक कर व्यापक दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रवृत्त करते हैं और उनकी स्वाभाविक स्फूर्ति की प्रवृत्ति पर प्रतिबन्ध लगा कर उन्हें अत्यन्त धर्मीर रहने को प्रेरित करते हैं।

न्यायालय ऐसे स्पष्ट अंग हैं, जिनके द्वारा कानूनी व्यवसाय को प्रजातन्त्र में नियन्त्रित करने का अवसर मिलता है। न्यायाधीश एक वकील है, जो निर्भीकता और व्यवस्था की अभिरुचि से, जो उसे कानून के अध्ययन से प्राप्त हुई है, स्वतन्त्र होकर अपने कार्यों की अविच्छेद्यता से स्थायित्व में अति-

रिक्त निष्ठा प्राप्त करता है। उसकी कानूनी सफलताओं ने उसे अपने साथियों में महत्वपूर्ण स्थान दिया है, उसकी राजनीतिक शक्ति उसके पद की प्रतिष्ठा को बनाये रखती है और विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग में रहने की भावना उसमें जाग्रत करती है। कानूनों को असांविधानिक घोषित करने के विशेषाधिकारों से युक्त अमरीकी मजिस्ट्रेट निरन्तर राजनीतिक मामलों में हस्तक्षेप करता रहता है। वह लोगों पर कानून बनाने का दबाव नहीं डाल सकता; किन्तु कम-से-कम वह उन्हें अपने स्वयं के अधिनियमों को पालन करने के लिए और अपने अनुकूल आचरण रखने के लिए कह सकता है।

इसके अतिरिक्त यह अनुमान नहीं लगाना चाहिए कि अमरीका में कानूनी भावना न्यायालयों तक ही सीमित है। इसका क्षेत्र उनसे भी अधिक व्यापक है। चूँकि वकील अत्यन्त सज्ञ वर्ग का निर्माण करते हैं, जिनमें लोग अविश्वास नहीं करते, अतः स्वाभाविक रूप से उनको अधिकांश सार्वजनिक पदों के लिए आमन्त्रित किया जाता है। वे विधान-सभा के लिए निर्वाचित होते हैं और प्रशासन में विशिष्ट पदों पर काम करते हैं। परिणामतः वे कानून बनाने और उसके कार्यान्वय में काफी प्रभाव रखते हैं। फिर भी वकीलों को तत्कालीन जनमत के आगे झुकना पड़ता है, जो अधिक प्रबल होता है, और जिसका वे प्रतिरोध नहीं कर सकते; किन्तु यदि उन्हें कार्य करने की स्वतंत्रता दी जाय तो इसका संकेत सरलता से मिल जाता कि वे क्या करेंगे। अमरीकियों ने, जिन्होंने अपने राजनीतिक कानूनों में अनेक परिवर्तन किये हैं, अपने नागरिक कानून में कम परिवर्तन किये हैं और वे भी काफी कठिनाई से, यद्यपि इनमें से अनेक उनकी सामाजिक स्थिति के प्रतिकूल हैं; इसका कारण यह है कि कानून के विषयों में बहुमत कानूनी व्यवसाय के अधिकार के प्रतिकूल जाने को उद्यत रहता है और अमरीकी वकील, जब उनको अपने इच्छानुसार कार्य करने के लिए छोड़ दिया जाता है, नवीनता लाने के प्रति इच्छा नहीं दिखाते।

जैसा कि मैंने उल्लेख किया है, कानूनी प्रवृत्तियों का प्रसार वास्तविक सीमाओं से अधिक बढ़ जाता है। अमरीका में शायद ही ऐसा कोई राजनीतिक प्रश्न उत्पन्न होता है जो बाद में न्यायिक प्रश्न नहीं बन जाता। अतः सभी दलों को अपने प्रतिदिन के विवादों में न्यायिक कार्रवाई के विशिष्ट विचार और यहाँ तक उसकी भाषा का प्रयोग करना पड़ता है। चूँकि अधिकांश सार्वजनिक लोग वकील हैं, अथवा रहे हैं, वे सार्वजनिक कार्यों में अपने व्यवसाय के नियम और टेक्निकल तरीके व्यवहार में लाते हैं। जूरी पद्धति यह प्रवृत्ति सभी वर्गों में

डाल देती है। इस प्रकार कुछ अंशों में कानून की भाषा अशिष्ट हो जाती है; कानून की भावना, जो स्कूलों और न्यायालयों में पनपती है, धीरे-धीरे उनकी दीवारों को भेद कर समाज के भीतर निम्न वर्ग तक पहुँचती है, जिससे अन्त में सभी न्यायिक मजिस्ट्रेट के स्वभाव और अभिरुचि को ग्रहण कर लेते हैं। अमरीका में वकील एक दल बनाते हैं, परन्तु वह इतना भयानक नहीं होता, न स्पष्टतः उसका अनुमान लगाया जा सकता है और न उसका अपना कोई विशिष्ट चिह्न होता है। यह दल समय के प्रवाह के अनुकूल अपने को ढालता है और अपने को समाज की सभी गतिविधियों के अनुकूल बिना किसी प्रतिरोध के बना लेता है; किन्तु यह दल सारे समाज में व्याप्त रहता है और समाज का निर्माण करने वाले सभी वर्गों में प्रवेश करता है। यह अप्रत्यक्ष रूप से देश पर शासन करता है, किन्तु अन्त में वह अपने उद्देश्यों के अनुरूप अपने को परिवर्तित करता है।

जूरी द्वारा सुनवाई

चूँकि मेरे विषय ने मुझे संयुक्त राज्य अमरीका में न्यायिक-प्रशासन पर विचार करने के लिए बाध्य किया है—मैं जूरी संस्था की ओर ध्यान आकर्षित किये बिना आगे नहीं बढ़ूँगा। जूरी द्वारा अभियोग-निर्णय पर दो भिन्न दृष्टिकोणों से विचार किया जा सकता है—न्यायिक और राजनीतिक संस्था के रूप में...।

मेरा वर्तमान उद्देश्य जूरी पर राजनीतिक संस्था के रूप में विचार करना है। जूरी को केवल न्यायिक संस्था के रूप में देखना संकीर्ण दृष्टिकोण होगा; क्योंकि न्यायालयों के निर्णयों पर उसका कितना ही अधिक प्रभाव क्यों न पड़ता हो, फिर भी स्वतंत्र समाज के भविष्य पर उससे भी अधिक प्रभाव पड़ता है। जूरी सर्वोपरि एक राजनीतिक संस्था है और उसका यथोचित मूल्यांकन करने के लिए इसी दृष्टिकोण से उस पर विचार करना चाहिए। जूरी से मेरा तात्पर्य समुदाय द्वारा निर्वाचित कतिपय उन नागरिकों से है, जिन्हें न्याय करने का अस्थायी अधिकार दिया जाता है। जूरी द्वारा अभियोग-निर्णय, जैसा कि उसका प्रयोग अपराध-निरोध के लिए किया जाता है, मुझे निम्न कारणों से सरकार में विशिष्ट प्रजातान्त्रिक तत्त्व प्रतीत होता है।

जूरी संस्था उस वर्ग के अनुसार, जिससे जूरी सदस्य चुने जाते हैं, कुलीन-वादी अथवा प्रजातान्त्रिक हो सकती है; परन्तु वह सदैव अपना प्रजातान्त्रिक स्वरूप कायम रखती है। इस गुण के कारण वह समाज का सही निर्देशन

सरकार के हाथों में न सौंपकर प्रजा के या प्रजा के एक भाग के हाथों में सौंपती है। शक्ति सफलता के क्षणिक तत्व के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है और शक्ति के बाद अधिकार की धारणा उत्पन्न होती है। सरकार, जो केवल युद्ध के मैदान में अपने शत्रुओं का सामना करने में समर्थ रहती है, शीघ्र नष्ट होकर रहती है। राजनीतिक कानूनों को सही अधिकार दण्डनीय विधान द्वारा प्राप्त होता है और यदि इस अधिकार का अभाव है तो कानून कभी-न-कभी प्रभावित करने की अपनी शक्ति खो देगा। इसलिए जो व्यक्ति अपराधी को सजा देता है, वस्तुतः वही समाज का कर्णधार है। अब जूरी की संस्था स्वयं लोगों को अथवा कम-से-कम नागरिकों के वर्ग को न्यायाधीशों के पद तक पहुँचाती है। परिणामतः जूरी की संस्था प्रजा अथवा नागरिकों के उस वर्ग को समाज को निर्देश देने का अधिकार सौंपती है। जूरी-पद्धति राष्ट्रीय चरित्र पर शक्तिशाली प्रभाव डालने में असफल नहीं रह सकती। वह सभी नागरिकों के मस्तिष्क में न्यायाधीशों की भावना उत्पन्न करने का कार्य करती है और यह भावना अपनी सहायक प्रवृत्तियों सहित स्वतंत्र संस्थाओं के लिए ठोस पृष्ठभूमि तैयार करती है। यह सभी वर्गों में न्याय निर्णयों के प्रति सम्मान और अधिकार की भावना उत्पन्न करती है। यदि इन दो तत्वों को निकाल दिया जाय तो स्वतंत्रता का प्रेम विनाशकारी आवेग मात्र रह जायगा। यह मनुष्यों को समानता का व्यवहार सिखाती है और प्रत्येक मनुष्य अपने पड़ोसी को उसी दृष्टिकोण से समझने का प्रयत्न करता है मानो स्वयं अपने ही पर विचार किया जा रहा हो। यह दीवानी मामलों पर विचार करने वाली जूरी-पद्धति के लिए विशेषतः सही है; क्योंकि ऐसे लोगों की संख्या, जिनमें फौजदारी अभियोग को समझने का विवेक हो, कम रहती है और प्रत्येक व्यक्ति मुकदमे का शिकार हो जाता है। जूरी-पद्धति प्रत्येक मनुष्य को स्वयं के कार्यों के उत्तरदायित्व को वहन करना सिखाती है और उसे मानवीय आत्मविश्वास से प्रभावित करती है, जिसके बिना किसी राजनीतिक गुण का अस्तित्व नहीं रह सकता। वह प्रत्येक नागरिक को एक प्रकार की न्यायिक प्रतिष्ठा प्रदान करती है, और सभी को उन कर्तव्यों से, जो उन्हें समाज के प्रति पूरा करना पड़ता है, सजग करती है और सरकार में जो भाग लेते हैं उन्हें उससे अवगत कराती है। वह मनुष्यों को उनके स्वयं के अतिरिक्त अन्य कार्यों की ओर ध्यान आकर्षित करने को बाध्य करती है। इस प्रकार वह निजी स्वार्थपरता को नष्ट करती है, जो समाज का एक कलंक है।

जूरी पद्धति न्याय करने और लोगों के स्वाभाविक ज्ञान की अभिवृद्धि में

में प्रभावकारी योगदान देती है और मेरे विचार से, यह उसका सबसे बड़ा लाभ है। उसे सदा खुला रहने वाला परोपकारी सार्वजनिक स्कूल कहा जा सकता है, जहाँ प्रत्येक जूरी सदस्य अपने अधिकारों का ज्ञान अर्जित करता है; उच्च वर्ग के अत्यन्त विद्वान और प्रगतिशील व्यक्तियों के सम्पर्क में वह उन कानूनों से, जो 'बार' के प्रयासों, न्यायाधीश के परामर्श और यहाँ तक कि दलों के आवेगों से उसकी योग्यता की पहुँच के भीतर लाये जाते हैं, पूर्णतः परिचित हो जाता है। मेरी दृष्टि में अमरीकियों ने दीवानी मामलों में जूरी का जो दीर्घकालीन प्रयोग किया है, उसका मुख्य कारण उनकी व्यावहारिक बुद्धि और विशुद्ध राजनीतिक भावना है।

इसलिए जूरी-पद्धति, जो न्यायपालिका के अधिकारों को सीमित करती हुई प्रतीत होती है, वस्तुतः उसकी शक्ति को संचित करती है और अमरीका को छोड़ कर अन्य किसी देश में न्यायाधीश इस प्रकार से शक्तिशाली नहीं हैं कि जहाँ लोग उनके विशेषाधिकारों के भागीदार होते हैं। दीवानी मामलों में विशेषतः जूरी के कारण ही अमरीकी मजिस्ट्रेट समाज के निम्न वर्गों में भी अपने व्यवसाय की भावना भरते हैं। इस प्रकार जूरी, जो जन-शासन निर्माण के लिए अत्यन्त शक्तिशाली साधन है, इस बात की शिक्षा देने का भी एक अत्यन्त प्रभावशाली माध्यम है कि कुशल प्रशासन किस प्रकार किया जाय।

१४. प्रजातंत्र को बनाये रखने वाले कारण

आकस्मिक अथवा दैविक कारण

अमरीका में प्रजातांत्रिक गणराज्य को कायम रखने में मनुष्य की इच्छा से स्वतंत्र हजारों परिस्थितियाँ योगदान देती हैं।

अमरीकियों का कोई पड़ोसी नहीं है और इसलिए उन्हें कोई बड़े युद्ध या आर्थिक संकट या प्रत्याक्रमण या आधिपत्य की सम्भावना का भय नहीं रहता। उन्हें न तो अधिक करों की, न बड़ी सेनाओं की और न महान जनरलों की आवश्यकता है और न उन्हें सैनिक प्रतिष्ठा की प्रचण्डता से, जो गणराज्यों के लिए इन समस्त बुराइयों के संयुक्त प्रभाव से भी अधिक भयावह है, किसी प्रकार से भयभीत होने की आवश्यकता है। राष्ट्र की भावना पर सैनिक प्रतिष्ठा

से पड़ने वाले अप्रत्यक्ष प्रभाव से इनकार करना असम्भव है।

अमरीका में ऐसा कोई बड़ा मुख्य नगर नहीं है, जिसका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव समस्त देश पर पड़ता हो। मैं समझता हूँ कि संयुक्त-राज्य अमरीका में प्रजातान्त्रिक संस्थाओं के कायम रखने के मूल कारणों में से यह एक है। नगरों में लोगों को परस्पर मिलने और पारस्परिक संवेगों को जाग्रत करने से रोका नहीं जा सकता, जिससे आकस्मिक और भावावेशपूर्ण निश्चयों को बढ़ावा मिलता है। नगरों को विशाल विधानमंडल कह सकते हैं, जिनके समस्त निवासी उनके सदस्य हैं। नगरों के लोगों का मजिस्ट्रेटों पर विलक्षण प्रभाव पड़ता है और वे बहुधा सार्वजनिक अधिकारियों के बिना किसी हस्तक्षेप के इच्छानुकूल अपना कार्य कर लेते हैं।

इसलिए प्रान्तों को इन 'मेट्रोपोलिटन' नगरों के अधीन रखना न केवल साम्राज्य के भाग्य को समाज के उन लोगों के हाथों में सौंप देना है, जो अन्यायी हैं, अपितु ऐसी जन-संख्या के हाथों में सौंप देना है, जो अपनी इच्छाओं की पूर्ति करती है। यह एक अत्यन्त खतरनाक प्रवृत्ति है। इसलिए विशाल नगरों की महत्ता प्रतिनिधिमूलक पद्धति के लिए अत्यन्त घातक है। इससे आधुनिक गणराज्यों में वे ही दुर्बलताएँ पैदा होती हैं जो उन प्राचीन गणराज्यों में थीं, जो सब के सब इस पद्धति से अनभिज्ञ होने से समाप्त हो चुके हैं।

अमरीकियों को अपने अनुकूल जन्मजात अवसर उपलब्ध थे और उनके पूर्वजों ने परिस्थिति और बुराई की उस समानता को इस देश में उस समय प्रविष्ट किया, जब कि प्रजातान्त्रिक गणराज्य का वस्तुतः जन्म हुआ था। केवल इतना ही नहीं था, अपितु समाज की इस प्रजातान्त्रिक स्थिति के अतिरिक्त प्रारम्भ में बसनेवाले लोगों ने अपने उत्तराधिकारियों को वसीयत में जो प्रथाएँ, आचरण और विचार प्रदान किये, वे गणराज्य की सफलता में अत्यधिक योगदान देते हैं। जब मैं इस प्राथमिक तथ्य के परिणामों की ओर दृष्टिपात करता हूँ तो मुझे प्रतीत होता है कि अमरीका का भाग्य उसके तटों पर सबसे पहले चरण रखने वाले 'प्यूरीटन' के ही हाथों में सुरक्षित था, ठीक उसी तरह जैसे समस्त मानव जाति का प्रतिनिधित्व प्रथम व्यक्ति द्वारा किया गया था।

अमरीका में प्रजातान्त्रिक गणराज्य की स्थापना करने और उसे कायम रखने में जो मुख्य परिस्थिति सहायक हुई है, वह है अमरीकियों की अपने देश की प्राकृतिक स्थिति। उनके पूर्वजों ने उन्हें समानता और स्वतन्त्रता का प्रेम प्रदान

किया, परन्तु स्वयं ईश्वर ने उन्हें विस्तृत महाद्वीप में रख कर उन्हें समान और स्वतंत्र रहने के साधन उपलब्ध किये। सामान्य समृद्धि समस्त सरकारों, विशेषतः प्रजातान्त्रिक सरकार के स्थायित्व के लिए अनुकूल रहती है, जो बहुमत की इच्छा पर और विशेषतः समाज के उस भाग की इच्छा पर, जो अभावों से अत्यन्त ग्रसित है, आधारित है। जब प्रजा शासन करती है, तो यह आवश्यक है कि उसे खुशहाल बनाया जाय, अन्यथा वह राज्य को उलट देगी। यही नहीं, उसके कष्ट उसे उत्तेजित कर उस सीमा तक पहुँचा देते हैं, जहाँ आकांक्षाएं राजाओं का उदय करती हैं। अमरीका में कानूनों से स्वतंत्र भौतिक परिस्थितियाँ विश्व के किसी अन्य देश की अपेक्षा अधिक हैं, जो सामान्य समृद्धि में योगदान देती हैं। विश्व के इतिहास में अन्यत्र ऐसा कोई उदाहरण नहीं है। संयुक्त-राज्य अमरीका में न केवल विधान प्रजातान्त्रिक है, अपितु स्वयं प्रकृति लोगों के हित के अनुकूल है।

प्रारम्भिक काल की तरह इस महाद्वीप में आज भी अजस्र स्रोतों से बहने वाली नदियाँ, हरेभरे और तर निर्जन प्रदेश और विशाल मैदान हैं, जहाँ किसान ने एक बार भी अपना हल नहीं चलाया है। उस राज्य में प्रकृति की यह देन उस व्यक्ति को सुलभ हुई है, जो पूर्वकाल की भाँति जंगली, अज्ञानी और एकाकी नहीं है, परन्तु जो पहले से ही प्रकृति के अत्यन्त महत्वपूर्ण रहस्यों से परिचित है, जो अपने साथियों से मिलजुल कर कार्य करता है और जिसे पचास शताब्दियों का अनुभव प्राप्त है। ठीक इसी समय यूरोप के लाखों सभ्य निवासी इन उर्वर मैदानों में, जिनके साधनों और विस्तार से वे स्वयं अभी तक पूर्णरूप से परिचित नहीं हैं, धीरे-धीरे फैलने लगते हैं। सर्वप्रथम तीन या चार हजार सैनिक भटकते आदिवासियों को खदेड़ कर आगे ले जाते हैं। उनके बाद आगे चलने वाले वे श्रमिक आते हैं, जो लकड़ियों को चीरते हैं, जंगली जानवरों को हाँक कर जंगलों के भीतर भगा देते हैं और वहाँ के जल स्रोतों की खोज करते हैं। इस प्रकार यह निर्जन देश सभ्यता के गौरवपूर्ण प्रवेश के लिए मार्ग प्रशस्त करता है।

यह एक गलत धारणा हो गयी है कि अमरीका के रेगिस्तान यूरोपीय उत्प्रवासियों द्वारा बसाये गये हैं, जो प्रति वर्ष नयी दुनिया के तटों पर अपना माल-असबाब उतारते हैं, जब कि वस्तुतः अमरीकी जनसंख्या की वृद्धि उस भूमि पर होती है जो उनके पूर्वजों द्वारा जीती गयी है। संयुक्त-राज्य अमरीका में बसने वाला यूरोप-निवासी अकेला और बिना सम्पत्ति के आता है, इस

लिये उसे वहाँ जीवन-निर्वाह के लिए मजदूरी करनी पड़ती है और वह शायद ही कभी समुद्र-तटीय उस क्षेत्र की ओर जा पाता है जो औद्योगिक जनसख्या द्वारा घिरा हुआ है। पूंजी या साख के बिना रेगिस्तान का अन्वेषण नहीं किया जा सकता और प्रत्येक व्यक्ति के लिए, जंगल में प्रवेश करने के पूर्व उसका नयी आबहवा की कठिनाइयों को सहन करने का अभ्यस्त होना आवश्यक है। वस्तुतः स्वयं अमरीकी ही, सुदूर क्षेत्रों में, व्यापक क्षेत्र प्राप्त करने के उद्देश्य से प्रतिदिन उन स्थानों को छोड़ कर जाते हैं, जहाँ उन्होंने जन्म लिया है। इस प्रकार यूरोपनिवासी अपने घर को अतलान्तिक तटों पर बसने के लिये छोड़ता है और इन्हीं तटों पर जन्म लेने वाला अमरीकी मध्य अमरीका के वनों में प्रवेश करता है। यह दोहरा प्रवास निरन्तर चलता रहता है। यह यूरोप के मध्य से प्रारंभ होकर अतलान्तिक महासागर को पार करता है और नयी दुनिया के निर्जन प्रदेशों को चीरता हुआ आगे बढ़ता है। लाखों व्यक्ति, जिनकी भाषा, जिनका धर्म, जिनके रीतिरिवाज भिन्न होते हैं, एक उद्देश्य अपनाकर, एक ही लक्ष्य की ओर निरन्तर आगे बढ़ रहे हैं। प्रतीत होता है, जैसे उनका भाग्य पश्चिम में कहीं छिपा हुआ है और वे उसे खोजने के लिए पश्चिम में ही आगे बढ़ रहे हैं।

कभी-कभी मनुष्य की प्रगति तीव्रगामी होती है कि उसके आगे बढ़ जाने पर रेगिस्तान फिर से प्रकट हो जाते हैं, जंगल, जो उसका मार्ग प्रशस्त करने के लिए कट जाते हैं, पुनः खड़े हो जाते हैं। पश्चिम के नये राज्यों को पार करते समय सामान्य रूप से जंगलों के बीच उजड़े हुए निवासस्थान दृष्टिगोचर होते हैं और यात्री को बहुधा अत्यन्त निर्जन स्थानों में लकड़ी के मकान के अवशेष प्राप्त होते हैं, जो मनुष्य की शक्ति और उसकी तीव्र प्रगति के प्रमाण हैं। इन परित्यक्त मैदानों में और किसी काल के इन अवशेषों पर आदिकालीन जंगल शीघ्र नये अंकुर पैदा कर देते हैं, जंगली पशु इन्हीं स्थानों में, जो कभी उनके स्वयं के थे, लौट कर पुनः शिकार करने लगते हैं। प्रकृति मनुष्य के अवशेषों को, हरी डालियों और फूलों से ढँक कर, पुनः मुस्कराने लगती है और उसके अल्पकालीन मार्ग को फिर लुप्त कर देती है।

मुझे स्मरण है कि वृक्षों से आच्छादित जिले को पार करते समय, जो अब तक न्यूयार्क राज्य में फैले हुए हैं, मैं एक झील के किनारे पहुंच गया तो देखा वह जंगल से अनन्तकाल से चले आ रहे आलिंगन में आबद्ध थी। एक छोटा-सा द्वीप पानी के बीच उठा हुआ था और वह वृक्षों से आच्छादित था,

जिनके पत्तों ने उसके किनारों को ढँक लिया था। झील के तटों पर, मनुष्यों के रहने के प्रमाणस्वरूप धूम्र स्तम्भ के अतिरिक्त कुछ भी नहीं था, जिसे क्षितिज पर वृक्षों से ऊपर उठता हुआ बादलों की ओर जाता हुआ देखा जा सकता है। वह ऐसा दिखायी पड़ता है मानो वह स्वर्ग की ओर जाने की अपेक्षा वहाँ से लटक रहा है। वहाँ रेड इंडियनों की एक डोंगी लगी थी। उसी ने सबसे पहले मेरा ध्यान आकर्षित किया और उस द्वीप में जाने की मेरी उत्कंठा जाग्रत हुई। कुछ ही मिनटों में मैंने उसके तटों पर पैर रखा। वस्तुतः सम्पूर्ण द्वीप नयी दुनिया का एक अत्यन्त रमणीय निर्जन प्रदेश था। यहाँ पहुँच कर सभ्य मनुष्य आदिवासियों के शिकार पर दुःख प्रकट करने लगता है। यहाँ की घनी हरियाली भूमि की अतुल्य उर्वरता की साक्षी है। यहाँ की गहरी निस्तब्धता, जो उत्तरी अमरीका के जंगलों में सामान्य है, हारिल पक्षियों की कर्णकटु ध्वनि और वृक्षों के तनों पर बैठे कठफोड़वों की वृक्षों की छालों को कुतरने की आवाज से भंग होती है। इस स्थान को देखकर मैं कल्पना नहीं कर सका कि यह स्थान कभी बसा होगा, क्योंकि यहाँ प्रकृति स्वयं अपने यथार्थ रूप में दिखायी पड़ रही थी, किंतु जब मैं द्वीप के भीतर पहुँचा तो मुझे मनुष्यों के कुछ अवशेष मिले। तब मैं निकट की वस्तुओं का ध्यान-पूर्वक अध्ययन करने लगा और मैंने शीघ्र ही अनुमान लगाया कि निश्चय ही किसी यूरोपनिवासी ने यहाँ शरण लेने का प्रयास किया था। फिर भी आज उसके परिश्रम द्वारा किये गये कार्यों में कितने परिवर्तन हो गये हैं। अपने निवास स्थान के लिए उसने जिन लट्ठों को शीघ्रता में काटा था, वे नये सिरे से उग आये थे, उनके खम्भे डालियों से गुँथ गये थे और उसकी कुटिया पर्ण-शाला बन गयी थी। आसपास की झाड़ियों के मध्य कुछ पत्थर दिखायी दे रहे थे, जो आग से काले पड़ गये थे और जिन पर महीन राख चमक रही थी। निस्सन्देह यहाँ अंगीठी जली थी और यहाँ जो एक चिमनी गिरी पड़ी थी उस पर कूड़ा-कर्कट पड़ा हुआ था। मैं यहाँ प्रकृति के साधनों और मनुष्य की लघुता की मूक प्रशंसा में खड़ा रहा और जब मैं इस रमणीय एकांत को छोड़ने के लिए बाध्य हुआ, तो "क्या यहाँ ये अवशेष पहले से ही थे?" कहते हुए मेरे मुँह से उदासीभरी आह निकल पड़ी।

यूरोप में हम धन-प्राप्ति की व्यग्र प्रवृत्ति, उत्कट अभिलाषा और स्वतंत्रता के प्रति विशाल प्रेम को समाज के लिए अत्यन्त खतरनाक प्रवृत्तियाँ मानते हैं। परन्तु ये वे ही तत्त्व हैं, जो अमरीका के लिए एक दीर्घसार्थक एवं शांतिपूर्ण

भविष्य निश्चित करते हैं। इन उद्वेलित भावनाओं के बिना जनता कुछ निश्चित स्थानों पर जमा हो जायगी और उसे पुराने विश्व की भांति आवश्यकताओं का अनुभव होगा जिनको सन्तुष्ट करना कठिन हो जायेगा; क्योंकि नयी दुनिया के वर्तमान समय का भाग्य ऐसा उज्ज्वल है कि यहाँ के निवासियों के अवगुण उनके गुणों की अपेक्षा कम अनुकूल हैं। इस प्रकार की परिस्थितियों से ऐसे अनुमानों पर प्रभाव पड़ता है, जिनके अनुसार मनुष्य की गतिविधियाँ दो गोलार्धों में विभाजित होती हैं। जिसको हम लालसा कहते हैं, उसे अमरीकी प्रायः प्रशंसनीय उद्योग कहते हैं और जिसको हम उदार आकांक्षा का गुण समझते हैं, उस पर वे हृदय की शुष्कता की सज्ञा का आरोप लगाते हैं।

अमरीका में प्रजातात्रिक गणराज्यों को बनाये रखने में देश की भौतिक परिस्थितियों की अपेक्षा कानून और कानूनों की अपेक्षा आचरण अधिक योग देते हैं।

अमरीका में प्रजातात्रिक संस्थाओं का कायम रहना वहाँ की परिस्थितियों, कानूनों और आचरण पर निर्भर है। अधिकांश यूरोपीय इन तीन कारणों में से केवल प्रथम से परिचित हैं और वे उसे आवश्यकता से अधिक महत्त्व दे सकते हैं।

यह सत्य है कि आंग्ल-अमरीकी इस नयी दुनिया में सामाजिक समानता की स्थिति में बसे थे। उन लोगों में ऊँच-नीच का कोई भेद नहीं था। व्यावसायिक पूर्वाग्रह, जन्म के पूर्वाग्रहों की भाँति ही सर्वतः अज्ञात थे। अतः चूंकि समाज की स्थिति प्रजातात्रिक थी, अतः प्रजातत्र का शासन बिना किसी कठिनाई के स्थापित हो गया था, किन्तु यह परिस्थिति अमरीकियों के लिए विचित्र नहीं थी। प्रायः समस्त अमरीकी उपनिवेशों की स्थापना, समान परिस्थितियों में रहने वाले लोगों द्वारा अथवा उन लोगों द्वारा, जो उन्हें बसाने के बाद समान हो गये थे, की गयी थी। नयी दुनिया के किसी भाग में यूरोप निवासी कुलीनतंत्र की स्थापना नहीं कर सके। इसके अतिरिक्त प्रजातान्त्रिक संस्थाएँ अमरीका को छोड़ कर और कहीं फली-फूली नहीं।

अमरीकी संघ के लिए ऐसा कोई शत्रु नहीं है, जिससे होड़ की जाय। यह समुद्र में द्वीप की तरह जंगलों में अकेला खड़ा है, किन्तु दक्षिण अमरीका के सेनियार्ड प्रकृति द्वारा उनसे कम विलग स्थिति में नहीं हैं, फिर भी उसी परिस्थिति ने उन्हें सेना को तैयार रखने के आरोप से मुक्त नहीं किया है। विदेशी शत्रु के अभाव में वे एक दूसरे पर आक्रमण कर बैठते हैं, परन्तु

आंग्ल-अमरीकी प्रजातंत्र ही एकमात्र ऐसा है, जो अब तक अपने को शांतिमय स्थिति में रखता आया है।

संघ की सीमाएँ मानव समाज की गतिविधियों के लिए असीम क्षेत्र और श्रम के लिए अक्षय सामग्री प्रस्तुत करती हैं। धन का उद्वेग महत्वाकांक्षा का रूप धारण कर लेता है और समृद्धि की चेतना से गुटबन्दी की गरमी शान्त हो जाती है, परन्तु विश्व में, दक्षिण अमरीका को छोड़कर, क्या अन्य किसी भाग में इतनी अधिक उपजाऊ भूमि, विशाल नदियाँ या अधिक अज्ञात और अक्षय सम्पत्ति है। फिर भी दक्षिण अमरीका प्रजातांत्रिक संस्थाओं को कायम रखने में असमर्थ रहा है। यदि राष्ट्रों का कल्याण, निवासयोग्य असीमित क्षेत्र के साथ, उनको विपरीत स्थिति में रख दिये जाने पर निर्भर करता तो दक्षिण अमरीका के स्पेनिशाई लोगों को अपने भाग्य की शिकायत करने का कोई कारण नहीं मिलता। यद्यपि उस स्थिति में संयुक्त राज्य अमरीका के निवासियों से वे कम समृद्ध होते, फिर भी उनका भाग्य, यूरोप के कुछ राष्ट्रों की ईर्ष्या उत्तेजित करने के लिए पर्याप्त होता। फिर भी पृथ्वी पर दक्षिण अमरीका के राष्ट्रों से बढ़कर किसी की भी इतनी अधिक दयनीय स्थिति नहीं है।

इस प्रकार, दक्षिण अमरीका की भौतिक परिस्थितियाँ न केवल उत्तरी अमरीका की तरह परिणाम उत्पन्न करने के लिए अपर्याप्त हैं, अपितु वे दक्षिण अमरीका की जनसंख्या को यूरोप के राज्यों के स्तर से ऊँचा नहीं उठा सकतीं। वस्तुतः वे वहाँ विपरीत परिणाम उत्पन्न करती हैं। इसलिए भौतिक परिस्थितियाँ राष्ट्रों के भाग्य को उतना प्रभावित नहीं करतीं जितना कि समझा जाता है।

इसी कारण अमरीकियों ने अपने देश की प्राकृतिक स्थिति पर, उन खतरों का, जो उनके संविधान और राजनीतिक कानूनों द्वारा उत्पन्न होते हैं, सामना करने के लिए विश्वास नहीं किया। उन्होंने उन समस्त बुराइयों के निराकरण के लिए, जो समस्त प्रजातांत्रिक राष्ट्रों के लिए सामान्य हैं, ऐसे भौतिक उपाय ढूँढ़ निकाले, जिनका विचार सिवाय उनके और किसी ने अब तक नहीं किया। यद्यपि इस प्रकार प्रयोग करने में वे प्रथम थे, फिर भी वे इसमें सफल रहे। अमरीकियों के रीति-रिवाज और कानून ही एकमात्र ऐसे नहीं हैं जो प्रजातांत्रिक समाज के अनुकूल हैं, परन्तु उन्होंने अपने प्रयोग द्वारा यह सिद्ध कर दिया कि रीति-रिवाजों और कानूनों की सहायता से प्रजातंत्र को नियंत्रित किया जा सकता है और इस विषय में नैराश्य प्रकट करना गलत होगा। यदि अन्य राष्ट्र अमरीकियों से यह सामान्य और मूल विचार ग्रहण कर लें, ि

विशिष्ट व्यवहार का अनुसरण करने के विचार से नहीं, जैसा कि अमरीकियों ने अपने लिए किया था, यदि वे उस सामाजिक परिस्थिति के लिए, जो इस युग की सतान पर ईश्वरीय इच्छा से लादी गयी है, अपने को अनुकूल बनाने का प्रयत्न करें और उसमें उस निरंकुशता और अराजकता से, जो उसके लिए खतरा उत्पन्न करती हैं, बचे रहें—तो फिर यह सोचने का क्या कारण है कि उनके प्रयत्नों को सफलता नहीं मिलेगी? ईसाई समाज में प्रजातंत्र को संघटित करना और उसकी स्थापना करना हमारे युग की महान् राजनीतिक समस्या है। अमरीकियों ने निश्चय ही इस समस्या का निराकरण नहीं किया है; परन्तु उन्होंने इस समस्या का समाधान करने वालों के लिए उपयोगी सामग्री प्रस्तुत की है।

यूरोप की स्थिति के परिणामों की महत्ता

जिस प्रश्न पर यहाँ विचार किया गया है, वह केवल संयुक्त-राज्य अमरीका के लिए ही नहीं, परन्तु सारे विश्व के लिए महत्वपूर्ण है। उसका सम्बन्ध किसी राष्ट्र से नहीं, समस्त मानव जाति से है। यदि वे राष्ट्र, जिनकी सामाजिक परिस्थिति प्रजातांत्रिक हो, केवल उसी अवस्था में स्वतंत्र रह सकते हैं जब कि वे विशाल बंजर क्षेत्रों में बसे हों, तो हमें इस स्थिति से मानव जाति के भविष्य के सम्बन्ध में निराशा होगी, क्योंकि प्रजातंत्र द्रुतगति से अधिक व्यापक प्रभुत्व प्राप्त कर रहा है और जंगल धीरे-धीरे मनुष्यों द्वारा बसाये जा रहे हैं। यदि यह सत्य होता कि कानून और रीति-रिवाज प्रजातांत्रिक संस्थाओं को कायम रखने के लिए अपर्याप्त हैं तो फिर राष्ट्रों के सम्मुख एक व्यक्ति की निरंकुशता को स्वीकार कर लेने के अतिरिक्त और क्या मार्ग रह जाता। मैं भली प्रकार जानता हूँ कि इस समय ऐसे अनेक योग्य व्यक्ति हैं, जो इस विकल्प से भयभीत नहीं हैं और जो स्वाधीनता से इतने क्लान्त हैं कि वे उसके तूफानों से अलग विश्राम करने में खुश रहते हैं; परन्तु ये व्यक्ति जिस भाग्य से बंधे हुए हैं, उससे अपरिचित हैं। पूर्व स्मृतियों से युक्त वे निरंकुश शक्ति का निर्णय इसी तथ्य से करते हैं कि वह अब तक कैसी रही है—न कि इस बात से कि हमारे युग में वह कैसी हो सकती है।

यदि यूरोप के राष्ट्रों में निरंकुश शक्ति पुनःस्थापित हुई तो मेरी यह निश्चित धारणा है कि वह नया रूप धारण करेगी और उन लक्षणों के साथ प्रकट होगी जो हमारे पूर्वजों को अज्ञात थे। यूरोप में एक ऐसा समय भी था जब प्रजा के

कानून और सहमति द्वारा राजाओं को प्रायः असीमित शक्ति प्राप्त हो गयी थी, परन्तु स्वयं उन्होंने कदाचित् ही उसका कभी प्रयोग किया था। मैं कुलीनता के उन परमाधिकारों की, न्यायालयों और निगमों की शक्ति और उनके चार्टर-अधिकारों की या प्रान्तीय विशेषाधिकारों की चर्चा नहीं करता, जिन्होंने सार्वभौम सत्ता के प्रहारों को तोड़ने के लिए और राष्ट्र में प्रतिरोध की भावना को बनाये रखने के लिए कार्य किया। इन राजनीतिक संस्थाओं से अलग राष्ट्र के आचरण और विचारों ने, जिन्होंने भले ही व्यक्तिगत स्वाधीनता का विरोध किया हो, मस्तिष्क में स्वतंत्रता के प्रेम को प्रज्ज्वलित किये रखा और जिन्होंने राजकीय सत्ता को, जो स्पष्टतः कम दृष्टिगोचर होने से कम शक्तिशाली नहीं थी, मर्यादाओं में सीमित कर दिया था। धर्म, प्रजा का स्नेह, राजाओं की परोपकारिता, प्रतिष्ठा की भावना, पारिवारिक गौरव, प्रान्तीय पक्षपात, रीति-रिवाज और जनमत ने राजाओं की शक्ति को मर्यादित कर दिया। उनके अधिकारों को एक अदृश्य परिधि में सीमित कर दिया। उस समय राष्ट्रों का संविधान निरंकुश था, परन्तु उनके आचरण स्वतंत्र थे। राजाओं को अधिकार प्राप्त थे, परन्तु स्वेच्छापूर्वक कार्य करने के लिए न तो उनके पास साधन थे और न ऐसी इच्छा ही थी।

परन्तु निरंकुशता पर प्रतिबन्ध लगाने वाली पहले जैसी सीमाएँ अब कहाँ रही हैं! जब से मनुष्यों की आत्मा से धर्म का प्रभाव उठ चुका है, तभी से वह अत्यन्त महत्वपूर्ण सीमा, जो बुराई और अच्छाई का भेद कर देती थी टूट चुकी है। नैतिक जगत् में प्रत्येक वस्तु सन्देहात्मक और अनिश्चित-सी प्रतीत होती है; सम्राट् और राष्ट्र संयोग से निर्देशित होते हैं और यह कोई भी नहीं बता सकता कि निरंकुशता की स्वाभाविक सीमाएँ और स्वतंत्रता की मर्यादाएँ कहाँ हैं! दीर्घकालीन राज्य-क्रान्तियों ने राज्य के शासकों की प्रतिष्ठा को समाप्त कर दिया है और प्रजा के आदर के बोझ से मुक्त होने के बाद ही राजाओं ने स्वयं मनमाने शासन की मदांधता के सामने बिना किसी भय के आत्मसमर्पण कर दिया होगा।

जब राजा अपनी प्रजा के हृदयों में अपने प्रति गहरी अनुभूति पाता है तो बड़ा दयालु हो जाता है, क्योंकि वह उसकी शक्ति को जानता है और उसके स्नेह से सतर्क रहता है, क्योंकि उसके प्रजाजनों का स्नेह उसके सिंहासन की दीवार होता है। ऐसी स्थिति में राजा और प्रजा के मध्य स्नेहसिक्त पारिवारिक जीवन के आह्लादपूर्ण पारस्परिक सद्भावना का समय हो जाता है। प्रजा राजा

की आज्ञा पर मन-ही-मन बड़बड़ाहट कर सकती है, परन्तु वह उसे अप्रसन्न नहीं करना चाहती, ऐसा करने पर उसे दुःख होता है और सार्वभौम राजा पैतृक स्नेह के कोमल हाथों से प्रजा को थपथपाता है।

जब एक बार भी राज्यक्रान्ति के उपद्रव में राजकीय जादू समाप्त हो जाता है, जब सिंहासन पर राजाओं के उत्तराधिकार का अन्त हो जाता है, जिससे जनता को उनके अधिकारों की दुर्बलता और उनकी शक्ति की निर्दयता का ज्ञान हो जाता है, तब कोई राजा पहले की तरह राज्य का पिता नहीं समझा जाता और स्वामी के रूप में सभी उससे भयभीत होते हैं। यदि वह निर्बल है, तो वह तिरस्कृत कर दिया जाता है, यदि वह शक्तिशाली है, तो उससे घृणा की जाती है। राजा को महसूस होता है जैसे वह स्वयं अपने देश में कोई अजनबी है और वह अपने प्रजा के साथ हारे हुए शत्रु की भाँति व्यवहार करता है।

जब प्रान्तों और नगरों ने अपने ही देश में इतने विभिन्न राष्ट्रों का निर्माण कर लिया तब हरेक की अपनी स्वतंत्र इच्छा थी, जो अधीनता की सामान्य भावना की विरोधी थी, परन्तु अब एक ही साम्राज्य के समस्त भाग अपनी स्वतंत्रताओं अपनी प्रथाओं, अपने पूर्वाग्रहों, अपनी परम्पराओं और यहाँ तक कि अपने नामों को खो देने के पश्चात् समान कानूनों का पालन करने के लिए अभ्यस्त हो चुके हैं। इसलिए पूर्व की अपेक्षा, जब उनमें से प्रत्येक का अलग से दमन किया जाता था, आज उनका एक साथ दमन करना अधिक कठिन है।

जबकि कुलीन व्यक्तियों ने अपनी शक्ति का उपभोग किया और वस्तुतः उस शक्ति के लोप हो जाने के बाद दीर्घकाल तक कुलीनतंत्र की प्रतिष्ठा ने उनके व्यक्तिगत विरोध को असाधारण शक्ति प्रदान की थी, उस समय ऐसे व्यक्ति मिल सकते थे, जो अपनी दुर्बलता के बावजूद अपनी व्यक्तिगत महत्ता के प्रति उच्च धारणा रखते थे और जो अकेले ही सार्वजनिक अधिकारों का सामना करने का साहस रखते थे, परन्तु वर्तमान समय में जब कि समस्त श्रेणियाँ अधिक-से-अधिक घुलमिल रही हैं, जब व्यक्ति भीड़ में अदृश्य हो जाता है और सामान्य अगम्यता में सरलता से खो जाता है, जब राजतंत्र की प्रतिष्ठा बिना किसी गुण को धारण किये अपनी शक्ति को प्रायः खो देती है और जब कोई भी शक्ति मनुष्य को अपने से ऊपर उठने के लिए समर्थ नहीं बना सकती, तब किस बिन्दु पर शक्ति की अनिवार्यता और दुर्बलता की दासता का अन्त हो जायगा, यह कौन बतायेगा!

जब तक पारिवारिक भावना जीवित रही, क्रूरता का विरोधी कभी भी

अकेला नहीं रहा। जब कभी उसने अपने सम्बन्ध में विचार किया, उसे अपने अनुयायी, अपने मित्र और अपने साथी मिले। यदि उसे समर्थक का अभाव रहा तो उसने स्वयं अपने पूर्वजों से प्रेरणा प्राप्त की और वंश परम्परा से चेतना प्राप्त की। परन्तु जब पैतृक सम्पत्ति विभाजित होती है और जब कुछ ही वर्षों में जातिभेद घुलमिल कर समाप्त हो जाते हैं तब पारिवारिक भावना कहाँ मिल सकती है? उस देश की प्रथाओं में क्या शक्ति हो सकती है, जिसमें परिवर्तन आ गया है और जिसमें निरन्तर परिवर्तन होता जा रहा है, जिसमें क्रूरता के प्रत्येक कार्य का पहले से ही दृष्टांत और प्रत्येक अपराध का उदाहरण रहा है, जिसमें कोई भी वस्तु इतनी पुरानी नहीं है कि उसकी प्राचीनता उसके विनाश को रोक सके, और न कोई ऐसी विलक्षण वस्तु है जिसकी विशेषता ऐसे परिवर्तन को रोक सके? इतने कोमल आचरणों से, जो बहुधा पूर्व में ही आत्मसमर्पण कर देते हैं, किस प्रकार का प्रतिरोध किया जा सकता है? जनमत की भी उस समय क्या शक्ति है, जब बीस व्यक्ति भी सामान्य शृंखला में आबद्ध नहीं हैं, जब उस मत का प्रतिनिधित्व करने या उसे क्रियाशील बना देने की शक्ति न किसी मनुष्य में, न किसी परिवार में, न किसी वैधानिक निगम में, न किसी वर्ग मे और [redacted] किसी स्वतंत्र संस्था में रहती है और जब प्रत्येक नागरिक के पास उसके समान रूप से निर्बल, समान रूप से गरीब और समान रूप से एकाकी होने से सरकार की संघटित शक्ति का विरोध करने के लिए सिवाय व्यक्तिगत असमता के कुछ भी नहीं है?

फ्रांस के ऐतिहासिक अभिलेखों में उस परिस्थिति के समान, जो उस समय उस पर लादी गयी थी, अन्य कोई उदाहरण देखने को नहीं मिलता, परन्तु उसे अधिक चतुरता से उस प्राचीन समय से और रोमन अत्याचार के उन भयानक युगों में आत्मसात् किया जा सकता है, जबकि लोगों के आचरण भ्रष्ट हो गये थे, उनकी परम्पराएँ मृतप्राय हो गयी थीं, उनकी प्रवृत्तियाँ समाप्त हो गयी थीं, उनकी धारणाएँ हिल उठी थीं और जब स्वतन्त्रता कानूनों से निष्कासित हो चुकी थी और उसे देश में कोई आश्रय नहीं मिल सकता था, जब नागरिकों की किसी भाँति रक्षा नहीं हो सकती थी, जब नागरिक स्वयं पहले की भाँति अपनी रक्षा नहीं कर सकते थे, जब मानव स्वभाव मनुष्य के हाथों खिलवाड़ हो गया था और राजाओं ने अपनी प्रजा के धैर्य को समाप्त करने के पूर्व ही नैसर्गिक उदारता का परित्याग कर दिया था। जो लोग हेनरी चतुर्थ या लुई १५ वें जैसों की बादशाहत को पुनर्जीवित करना चाहते हैं, मेरे ख्याल से वे

बौद्धिक अन्धता से पीड़ित हैं। जब मैं यूरोप के विभिन्न राष्ट्रों की वर्तमान दशा पर विचार करता हूँ, तो मुझे विश्वास करना पड़ता है कि शीघ्र ही उन राष्ट्रों के पास इसके सिवाय और कोई विकल्प नहीं रह जायगा कि या तो वे प्रजातान्त्रिक स्वाधीनता अंगीकार कर लें या सीज़र की निरंकुशता को।

क्या यह बात विचारणीय नहीं है? यदि मनुष्य वस्तुतः इस निर्णय पर पहुँच जायें कि उन्हें पूर्णतः स्वतंत्र रहना है या पूर्णतः दास, उनके समस्त अधिकार समान हों या वे समस्त अधिकारों से वंचित रहें, समाज के नियम ऐसे हों जो धीरे-धीरे जनसमूह को अपने स्तर तक ऊँचा उठाने को विवश करें या सारे नागरिकों को मानवता से नीचे गिरने दिया जाय, तो उससे क्या अनेक व्यक्तियों के सन्देहों का निराकरण नहीं हो पायेगा, अनेक व्यक्तियों की चेतना स्थिर नहीं हो जायेगी और समाज थोड़ी-सी कठिनाई के साथ महान त्याग करने के लिए तत्पर नहीं हो जायेगा? उस स्थिति में लोकतान्त्रिक आचरणों और संस्थाओं के उत्तरोत्तर विकास को सर्वश्रेष्ठ न समझ कर स्वतंत्रता को सुरक्षित रखने का केवल साधन माना जाय और लोकतंत्र की सरकार को पसन्द किये बिना भी, उसे अत्यन्त व्यावहारिक समझकर अंगीकृत किया जा सकता है और समाज की वर्तमान बुराइयों को दूर करने का सर्वोत्तम साधन यही है।

लोगों को सरकार में भाग लेने के लिए बाध्य किया जाय, यह कठिन कार्य है; परन्तु उन्हें अनुभव प्रदान करना और उन भावनाओं से, जो सरकार को व्यवस्थित रूप से चलने के लिए आवश्यक हैं, प्रेरित करना और भी कठिन है। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि लोकतन्त्र की प्रवृत्तियाँ परिवर्तनशील हैं, उसके साधन अपरिमार्जित हैं, उसके कानून अपरिपूर्ण हैं, परन्तु यदि ऐसा सत्य है कि प्रजातन्त्र शासन और एक व्यक्ति के शासन के बीच शीघ्र कोई समुचित माध्यम नहीं निकल पाता, तो क्या हम एक व्यक्ति के अधिराज्य के सम्मुख स्वेच्छा से आत्मसमर्पण करने के बजाय प्रजातंत्र की ओर उन्मुख नहीं होते? और यदि पूर्ण समानता हमारे भाग्य में लिखी है तो निरंकुश शासक के स्थान पर स्वतंत्र संस्थाओं द्वारा समानता प्राप्त करना क्या हमारे लिए उचित नहीं है?

इस पुस्तक को पढ़ने के पश्चात् जो लोग यह कल्पना करें कि इस पुस्तक के लिखने का मेरा उद्देश्य यह प्रस्तावित करने का है कि आंग्ल-अमरीकियों के कानून और आचरण समस्त प्रजातान्त्रिक समुदायों के लिए अनुकरणीय हैं, वे महान ग़लती करेंगे। उन्हें मेरे विचार के स्वरूप के बजाय तत्व की ओर अधिक ध्यान देना चाहिए। मेरा उद्देश्य अमरीका के उदाहरण द्वारा यह दर्शाने

का है कि कानून और विशेषतः आचरण प्रजातांत्रिक समाज को स्वतंत्र बनाये रख सकते हैं, परन्तु मेरा यह मत नहीं है कि अमरीकी लोकतंत्र के उदाहरण का अनुकरण करना चाहिए और उन माध्यमों की नकल करनी चाहिए जो उसने इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए अपना रखे हैं; क्योंकि मैं देश की प्रकृति और उसकी पूर्ववर्ती राजनीतिक स्थिति वहाँ के राजनीतिक संघटनों पर जो प्रभाव डालती है, उससे भली प्रकार परिचित हूँ। यदि सारे विश्व में स्वाधीनता समान लक्षणों के साथ स्थित रही, तो मैं इसे मानवता के लिए बड़ा दुर्भाग्य समझूगा।

मेरा ऐसा मत है कि यदि फ्रांस में लोकतांत्रिक संस्थाओं का क्रमिक विकास करने में हम सफल नहीं हुए, यदि हम समस्त नागरिकों में उन विचारों और भावों को, जो पहले उन्हें स्वतंत्रता के लिए तैयार करते हैं और तत्पश्चात् उनका उपयोग करने की अनुमति देते हैं, जगाने में सफल नहीं हुए, तो इसका परिणाम यह होगा कि किसी प्रकार की स्वतन्त्रता न रहेगी, न मध्यम वर्ग या कुलीन लोगों के लिए और न गरीबों या अमीरों के लिए, अपितु सर्वत्र समान रूप से निरंकुशता का प्रभाव छा जायेगा और मेरा अनुमान है कि यदि समय पर बहुमत का शान्तिपूर्ण राज्य हमारे बीच स्थापित नहीं हुआ तो किसी-न किसी दिन हम पर एक व्यक्ति की अपरिमित शक्ति का प्रभुत्व छा जायेगा।

१५—संयुक्त-राज्य अमेरिका की भावी सम्भावनाएँ

मैं अब अपने निरीक्षण के अन्तिम परिणामों की ओर पहुँच रहा हूँ। अब तक मैंने संयुक्त-राज्य अमरीका के भावी प्रारब्ध के विषय में बोलते हुए अपने विषय को विशिष्ट भागों में विभाजित करने का प्रयत्न किया है, ताकि प्रत्येक भाग का अध्ययन अधिक सूक्ष्मता से कर सकें। मैं यहाँ जिन बातों की चर्चा करूँगा वे अधिक विस्तार से नहीं होंगी, परन्तु वे अधिक सुनिश्चित होंगी। यद्यपि मैं प्रत्येक वस्तु का निरीक्षण अधिक सूक्ष्मता से नहीं करूँगा, तथापि मुख्य तथ्यों का अन्वेषण अधिक निश्चितता के साथ करूँगा। जिस प्रकार कोई यात्री, जो अभी-अभी विशाल नगर से प्रस्थान कर, निकट के पर्वतों पर चढ़ रहा है, ज्यों ही कुछ और आगे बढ़ता है, त्योंही वे सारे मनुष्य, जिन्हें वह अभी-अभी छोड़कर आया है, उसकी दृष्टि से ओझल हो जाते हैं, तब उसे

उनके मकान एक घने समूह के रूप में दृष्टिगोचर होते हैं, वह सार्वजनिक चौराहों को स्पष्टता से नहीं देख सकता, और बड़े मार्गों को बड़ी कठिनाई से देख पाता है, परन्तु नगर की चहारदीवारी को सहज ही देख लेता है और उसे प्रथम बार सारे नगर का आकार सम्पूर्ण रूप में दिखायी पड़ता है। ठीक उसी प्रकार मेरी दृष्टि में ब्रिटिश जाति के भावी प्रारब्ध का स्वरूप है, जिसके विस्तृत चित्र की सूक्ष्मताएँ छाया में विलीन हो जाती हैं, परन्तु सम्पूर्ण विषय का एक स्पष्ट चित्र मेरे सामने प्रस्तुत हो जाता है।

संयुक्त-राज्य अमरीका के पास इस समय जो भूमि-क्षेत्र है या उसके अधिकार में है, वह निवास-योग्य पृथ्वी के कुल भाग का बीसवाँ भाग है, परन्तु यह नहीं समझ लेना चाहिए कि सीमाओं का जितना विस्तार अभी है, वही आंग्ल-अमरीकियों की जाति के लिए चिरस्थायी रहेगा। वस्तुतः उनमें पहले से ही विस्तार हो चुका है।

एक समय था, जब हम भी अमरीकी जंगलों में महान् फ्रांस राष्ट्र की स्थापना, नयी दुनिया के भाग्य पर पड़ने वाले अंग्रेजों के प्रभाव को सन्तुलित करने के लिए कर सकते थे। पहले उत्तरी अमरीका में फ्रांस का भूमि-क्षेत्र था, जिसका विस्तार लगभग सारे यूरोप के बराबर था, महाद्वीप की तीन नदियाँ उसके अधिराज्यों में बहती थीं, रेड इण्डियन आदिवासी सेंट लारेन्स के उद्गम और मिस्सीसीपी नदी के डेल्टा के बीच बसे हुए थे, उस जाति को हमारी भाषा के सिवाय और कोई भाषा समझ में नहीं आती थी, उस विस्तृत भूखण्ड पर बसे सारे यूरोपीय उपनिवेशों पर हमारे देश की परम्पराओं की छाप अंकित थी। लुई बर्ग, मॉंट मॉरेंसी, ड्यूक्वेसनी, सेण्ट लुई, विनसेन्स, न्यूओरलियन्स (ऐसे नाम थे उनके) फ्रांस के प्यारे शब्द थे और हमारे कानों को प्रिय थे।

परन्तु एक विशिष्ट घटना-चक्र ने, जिसका ब्योरा देना कठिन होगा, हमें इस महान् उत्तराधिकार से वंचित कर दिया। जहाँ भी फ्रांसीसी उपनिवेशियों की संख्या कम हुई, वहाँ पूर्णरूपेण उपनिवेश न स्थापित होने से उनका लोप हो चुका है। शेष फ्रांसीसी देश के एक छोटे भाग पर बसे हुए हैं और अब वे अन्य कानूनों के अधीन हैं। लोअर कनाडा में बसे ४००,००० फ्रांसीसी वर्तमान समय में उस पुराने राष्ट्र के अवशेष मात्र हैं, जो नये-नये लोगों के बीच विलीन हो चुका है। अब उनके चारों ओर विदेशी जन-संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है, जो पहले से ही देश के भूतपूर्व निवासियों में घुलमिल चुकी है और नगरों में उनकी ही प्रमुखता है। ये ही विदेशी उनकी भाषा को बिगाड़ रहे हैं।

यह जनसंख्या संयुक्त-राज्य अमरीका की जनसंख्या से मिलती-जुलती है। इसलिए मैं सचमुच इस तथ्य पर बल देता हूँ कि ब्रिटिश जाति संघ की सीमाओं में परिसीमित नहीं है, क्योंकि वह पहले से ही पूर्वोत्तर दिशा में अपना फैलाव कर चुकी है। पश्चिमोत्तर में कुछ नगण्य रूसी उपनिवेशों के सिवाय और कुछ नहीं है, परन्तु दक्षिण-पश्चिम में मेक्सिको आंग्ल-अमरीकियों के आगे एक दीवार जैसा है। सच पूछा जाय तो स्पेनियार्ड्स और आंग्ल-अमरीकी—ये ऐसी दो जातियाँ हैं जो नयी दुनिया के आधिपत्य का बँटवारा किये हुए हैं। उनके मध्य विभाजन की सीमाएँ संधि द्वारा निश्चित हुई हैं; यद्यपि सन्धि की शर्तें आंग्ल-अमरीकियों के पक्ष में हैं, मुझे इस बात में किंचित् भी सन्देह नहीं है कि वे शीघ्र ही इसका उल्लंघन करेंगे। वे बड़े प्रान्त, जो संघ की सीमाओं से परे मैक्सिको की ओर फैले हुए हैं, वहाँ आज भी निवासियों का अभाव है। संयुक्त-राज्य अमरीका के निवासी इन एकान्त भू-क्षेत्रों में अधिकृत लोगों के बसने के पहले ही बस जायँगे। वे भूमि पर अधिकार कर वहां सामाजिक संस्थाओं की स्थापना कर लेंगे, ताकि जब अन्त में कानून से अधिकृत व्यक्ति आयेगा, तो पायेगा कि जंगलों में खेती हो चुकी है और आगन्तुक लोग उसके पैतृक भूखण्ड पर चुपचाप बस चुके हैं।

नयी दुनिया के भू-क्षेत्र का स्वामित्व वहाँ सर्वप्रथम बसने वालों का है; फिर भी ये भू-क्षेत्र उनके लिए प्राकृतिक पारितोषिक हैं, जो वहाँ पहुँचने में अग्रणी रहे। यहाँ तक कि उन देशों को भी, जहाँ पहले ही लोग बस चुके हैं, इस हमले से सुरक्षित रहने के लिए कुछ कठिनाई का सामना करना पड़ेगा। मैं प्रसंगान्तर से पहले ही उल्लेख कर चुका हूँ कि टेक्सास प्रान्त में क्या हो रहा है। संयुक्त राज्य अमरीका के निवासी निरंतर टेक्सास में जाकर बसने लगे हैं, जहाँ वे भूमि खरीद लेते हैं और यद्यपि वे देश के कानूनों का पालन करते हैं, तथापि धीरे-धीरे वे वहाँ अपनी भाषा और आचरणों का साम्राज्य स्थापित कर रहे हैं। टेक्सास प्रान्त अभी तक मेक्सिको के अधिराज्यों का भाग है; परन्तु शीघ्र ही वहाँ कोई मैक्सिको-निवासी दिखाई नहीं पड़ेगा। जहाँ कहीं भी आंग्ल-अमरीकी अपने से भिन्न मूल के निवासियों के सम्पर्क में आये, वहीं ऐसा ही हुआ।

मैं इस बात से इनकार नहीं कर सकता कि नयी दुनिया में अन्य यूरोपियन जातियों की तुलना में ब्रिटिश जाति ने आश्चर्यजनक प्रमुखता प्राप्त की है और वह सभ्यता, उद्योग और शक्ति में उनसे बहुत आगे बढ़ चुकी है। जब तक यह जाति केवल मरु प्रदेशों या कम जनसंख्या वाले देशों से घिरी है, तब तक

उसे अपने मार्ग में घनी बस्तियों से शङ्का नहीं पड़ता, जिससे उसकी प्रगति में बाधा होती है, वह निश्चय ही अविराम गति से आगे बढ़ती रहेगी। सन्धियों द्वारा जो सीमाएँ निर्धारित हैं, वे भी उसके मार्ग को नहीं रोक सकेंगी, बल्कि हर क्षेत्र में वह इन काल्पनिक सीमाओं को पार कर लेगी।

नयी दुनिया में ब्रिटिश जाति की भौगोलिक परिस्थिति उसकी शीघ्रगामी वृद्धि के लिए विशेषरूप से अनुकूल है। उसकी उत्तरी सीमाओं से ऊपर ध्रुव का विस्तृत बर्फीला क्षेत्र फैला हुआ है और उसकी दक्षिणी सीमा से कुछ डिग्री नीचे विषुवत-रेखा की उष्ण जलवायु का प्रदेश है; इसलिए आंग्ल-अमरीकी महाद्वीप के अत्यन्त समशीतोष्ण और निवास योग्य क्षेत्र में पड़ गये हैं।

सामान्य रूप से माना जाता है कि संयुक्त-राज्य अमरीका की जनसंख्या की असाधारण वृद्धि स्वतन्त्रता के घोषणा-पत्र के उत्तर काल में हुई है; परन्तु ऐसा समझना गलत है कि औपनिवेशिक पद्धति के अन्तर्गत जनसंख्या की वृद्धि उतनी ही शीघ्रता से हुई, जितनी कि वर्तमानकाल में, अर्थात्—करीब बाइस वर्षों में वह द्विगुणित हो गयी, परन्तु यह अनुपात, जो आज लाखों के लिए निर्धारित किया जाता है, उस समय हजारों पर लागू होता था और यही तथ्य, जो एक शताब्दी पूर्व शायद ही किसी के ध्यान में आया था, आज प्रत्येक निरीक्षक को स्पष्टतः दिखलायी पड़ता है।

सम्राट पर आश्रित कनाडा के अंग्रेजों की वृद्धि और विस्तार, जो रिपब्लिकन सरकार के अधीन हैं, संयुक्त-राज्य अमरीका में बसने वाले ब्रिटिश लोगों की भाँति ही शीघ्रता से हुआ था। यहाँ तक कि स्वातंत्र्य संग्राम के दिनों में भी, जो लगातार आठ वर्ष तक चलता रहा, बिना किसी प्रकार की बाधा के उनकी निरन्तर वृद्धि होती रही। यद्यपि इस समय शक्तिशाली इण्डियन जातियों ने पश्चिमी सीमाओं पर बसे हुए अंग्रेजों से मित्रता बनाये रखी थी, फिर भी पश्चिम की ओर बढ़ते हुए प्रवास को कभी नहीं रोका गया। जब कि शत्रुओं ने अतलान्तिक के तटों को उजाड़ कर दिया था, उस समय केण्टुकी, पेन्सीलवानिया के पश्चिमी भाग, वरमाट के प्रान्त और मेन के राज्य निवासियों द्वारा भर रहे थे। युद्धोत्तर काल की अव्यवस्थित परिस्थिति भी न तो जनसंख्या की वृद्धि को रोक सकी और न उजाड़ प्रदेशों में उसके विस्तार को। अतः कानूनों की विभिन्नता, शान्ति और युद्ध, व्यवस्था या अराजकता की विभिन्न परिस्थितियों ने आंग्ल-अमरीकियों की निरन्तर वृद्धि पर प्रत्यक्ष कुछ भी प्रभाव नहीं डाला। यह तथ्य

सरलता से समझा जा सकता है, क्योंकि इतने विस्तृत भूखण्ड के सारे भाग पर साथ-साथ प्रभाव डालने के लिए कोई भी कारण पर्याप्त नही है। देश का एक भाग हमेशा दूसरे भाग को आक्रान्त करने वाली आपदाओं से बचाने के लिए आश्रय प्रदान करता है और आपदा चाहे कितनी महान् हो, किन्तु उपलब्ध प्रतिकार उससे भी महान् है।

अतः इस प्रकार का अनुमान लगाना कि नयी दुनिया में ब्रिटिश जाति की भावनाओं पर अंकुश लगाया जा सकता है, उचित नहीं है। सघ का विभाजन और विरोध, जो तत्पश्चात् उत्पन्न हो सकते हैं और लोकतांत्रिक संस्थाओं की समाप्ति और निरंकुश सरकार, जो उनकी उत्तराधिकारिणी हो सकती है, इस प्रकार की भावना को रोक सकती हैं; परन्तु वे लोगों को अन्ततः अपने भाग्यों की सिद्धि प्राप्त करने से नहीं रोक सकते। इस पृथ्वी पर कोई भी शक्ति उत्प्रवासियों को उस उर्वर भूखण्ड की ओर आकर्षित होने से नहीं रोक सकती जो सारे उद्योगों के लिए साधन हैं और समस्त अभावों को दूर करने के लिए विभिन्न मार्ग निर्देशित करते हैं। भावी घटनाएं चाहे जो हों, वे अमरीकियों को उनकी जलवायु या उनके भीतरी समुद्र, उनकी महान नदियों या उनके प्रचुर क्षेत्रों से वंचित नहीं कर सकतीं। न निकृष्ट कानून, क्रान्तियाँ और अराजकता ही समृद्धि के प्रति प्रेम और साहसपूर्ण कार्य करने की भावना को, जो उनकी जाति के प्रमुख और विशिष्ट लक्षण हैं, समाप्त कर सकते हैं, न उस ज्ञान को पूर्णतः नष्ट करने में समर्थ हैं जो उनका मार्गदर्शन करता है।

इस प्रकार अनिश्चित भविष्य के बीच कम से-एक घटना सुनिश्चित है। एक समय ऐसा भी होगा, जिसे निकट भी कहा जा सकता है, क्योंकि हम राष्ट्र के समूचे जीवन पर विचार व्यक्त कर रहे हैं। जब अकेले अमरीकी ध्रुव प्रदेशों और उष्ण कटिबन्धों के मध्य, अतलान्तिक महासागर से लेकर प्रशान्त महासागर तक फैले हुए विस्तृत भूखण्ड पर अपना आधिपत्य कर लेंगे। आंग्ल-अमरीकियों के अधिकार में कदाचित् जो भूमि-क्षेत्र होगा, उसका विस्तार यूरोप के तीन चौथाई के बराबर होगा।

सर्वोपरि सघ की जलवायु यूरोप से अच्छी है, और उसके प्राकृतिक लाभ भी बहुत अधिक हैं। इसलिए यह स्पष्ट है कि उसकी जनसंख्या भविष्य में किसी न किसी दिन हमारी जनसंख्या के अनुपात में हो जायगी। यूरोप में, जो इतने अधिक राष्ट्रों में विभाजित है, और जो मध्य युग के बर्बर आचरणों से उत्पन्न निरन्तर युद्धों से विनष्ट हो चुका है, आज भी एक वर्ग लीग में ४१० व्यक्ति निवास

करते हैं। तब कौन-सा कारण है जो संयुक्त-राज्य अमरीका को किसी समय जन संख्या में वृद्धि करने से रोक सकता है!

जब अमरीका में ब्रिटिश जाति की विभिन्न परिस्थितियाँ समान मौलिक स्वरूप नहीं प्रस्तुत कर सकेंगी, उसके पूर्व अनेक युग व्यतीत हो जायँगे और उस काल की, जब परिस्थितियों की स्थायी समानता नयी दुनिया में स्थापित हो सकती है, भविष्यवाणी नहीं की जा सकती। शान्ति या युद्ध से, स्वतंत्रता या दमन से, समृद्धि या अभाव से महान आंग्ल-अमरीकी परिवार के विभिन्न वंशजों के भाग्यों के बीच कितनी ही विभिन्नताएँ उत्पन्न क्यों न हों, वे सब कम-से-कम समान सामाजिक स्थिति को और उस स्थिति को और उस स्थिति से उत्पन्न समान रीति रिवाजों और विचारों को सामान्य रूप से बनाये रखेंगे।

मध्य युग में धर्म का बन्धन ही सभ्यता के अन्तर्गत यूरोप की विभिन्न जातियों को एक सूत्र में बाँध रखने के लिए पर्याप्त रूप से शक्तिशाली था। नयी दुनिया के ब्रिटिश लोगों के पास अन्य इसी प्रकार के हजारों बन्धन हैं— और वे उस काल में रह रहे हैं जब समानता की प्रवृत्ति मानव जाति में व्यापक रूप से देखने में आती है। मध्ययुग का समय ऐसा था, जब प्रत्येक वस्तु विशृंखलित थी, जब प्रत्येक समुदाय, प्रत्येक प्रान्त, प्रत्येक नगर और प्रत्येक परिवार की विशिष्ट प्रवृत्ति अपने व्यक्तित्व को सशक्त बनाने की थी, परन्तु इस समय इसके ठीक विपरीत प्रवृत्ति काम कर रही है और यह एकता की ओर अग्रसर होते दिखायी दे रहे हैं। बौद्धिक संसर्ग के हमारे साधन पृथ्वी के दूरस्थ भागों को संयुक्त करते हैं और मनुष्य एक दूसरे से अपरिचित या विश्व के किसी भाग में क्या घटित हो रहा है, इससे अनभिज्ञ नहीं रह सकते। परिणामतः इस समय यूरोपनिवासियों और नयी दुनिया में रहने वाले उनके वंशजों में बहुत कम विभिन्नता देखने को मिलती है, अपेक्षा उस विभिन्नता के जो तेरहवीं शताब्दी में कतिपय नगरों में, जो नदी द्वारा विभाजित थे, देखने को मिलती थी। बावजूद इसके आज उनके बीच एक महासागर स्थित है। यदि मेल-मिलाप की यह प्रवृत्ति विदेशी राष्ट्रों को एक दूसरे के सन्निकट लाती है, तो निश्चय ही वह एक समाज के वंशजों को परस्पर विरुद्ध होने से रोकेगी।

इसलिए एक समय आयेगा जब पन्द्रह करोड़ मनुष्य उत्तरी अमरीका में समान परिस्थिति में निवास करेंगे। उनका मूल उद्भव एक होने से वे एक ही परिवार के सदस्य होंगे। समान सभ्यता, समान भाषा, समान धर्म, समान

स्वभाव, समान आचरण को सुरक्षित रखेंगे और एक ही स्वरूप के अन्तर्गत प्रचारित समान धारणाओं से ओतप्रोत रहेंगे। शेष सभी कुछ अनिश्चित है, परन्तु यह निश्चित है, यह तथ्य विश्व के लिए नया है और यह एक ऐसा तथ्य है, जिसे कल्पना आसानी से ग्रहण नहीं कर सकती।

इस समय विश्व में दो महान राष्ट्र हैं, जिनका जन्म दो विभिन्न बिन्दुओं से हुआ है, परन्तु वे एक लक्ष्य की ओर उन्मुख प्रतीत होते हैं। प्रकारान्तर से मैं उल्लेख कर चुका हूँ, वे दोनों हैं रूसी और अमरीकी। दोनों की वृद्धि अज्ञात रूप से हुई है और जब मानव जाति का ध्यान कहीं अन्यत्र केन्द्रित था, तब उन्होंने एकाएक राष्ट्रों की प्रथम श्रेणी में स्थान ग्रहण कर लिया और विश्व को उनके अस्तित्व और उनकी महानता का ज्ञान एक ही साथ हुआ।

ऐसा प्रतीत होता है कि सारे राष्ट्र अपनी स्वाभाविक सीमाओं तक पहुँच चुके हैं और अब उन्हें केवल अपनी शक्ति को बनाये रखना है; परन्तु इन दोनों राष्ट्रों का विकास अभी तक हो रहा है। अन्य राष्ट्रों की गति अवरुद्ध हो चुकी है या बड़ी कठिनता से वे आगे बढ़ पा रहे हैं; परन्तु ये अकेले बड़ी सुगमता और तीव्र गति से उस पथ की ओर अग्रसर हो रहे हैं, जिसकी कोई सीमा दिखायी नहीं पड़ती। अमरीकी उन बाधाओं से, जिसको प्रकृति ने उनके सामने प्रस्तुत किया है, संघर्ष कर रहे हैं, जब कि रूसियों को मनुष्यों के विरोध का सामना करना पड़ रहा है। अमरीकी असभ्यता और जंगली जीवन से द्वन्द्व करता है जब कि रूसी को अपनी समस्त सेना के बल पर सभ्यता से संघर्ष करना पड़ता है। जबकि अमरीकी की विजय हल से हुई है, रूसी की तलवार से। एक आंग्ल-अमरीकी अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए व्यक्तिगत हितों पर विश्वास करता है और लोगों की अनिर्देशित शक्ति और सहज बुद्धि को स्वतंत्रता से कार्य करने का अवसर प्रदान करता है। एक रूसी समाज की सारी शक्ति को एक व्यक्ति के हाथों में केन्द्रित करता है। अमरीकी का मुख्य साधन स्वतन्त्रता है, जब कि रूसी की दासता। उनकी शुरुआत का बिन्दु भिन्न है और उनके मार्ग भी समान नहीं हैं—फिर भी उनमें से प्रत्येक यही समझता है कि वह आधी दुनिया के भाग्य का निर्देशन ईश्वर की इच्छा से करता है।

द्वितीय भाग : खण्ड १

१६ – अमरीकियों की दार्शनिक पद्धति

मेरी दृष्टि में सभ्य जगत के किसी भी राष्ट्र में दर्शन शास्त्र पर इतना कम ध्यान नहीं दिया जाता, जितना संयुक्त राज्य अमरीका में। अमरीकियों का अपना कोई दार्शनिक सम्प्रदाय नहीं है और यूरोप में जो दार्शनिक सम्प्रदाय प्रचलित हैं, उनकी वे किंचित् भी परवाह नहीं करते, यहाँ तक कि उनके वास्तविक नामों का भी उनको पता नहीं है। फिर भी, बड़ी सरलता से यह मालूम हो जाता है कि संयुक्त राज्य अमरीका के प्रायः सभी निवासी अपनी बुद्धि का प्रयोग एक ही प्रकार करते हैं और एक ही प्रकार के नियमों से उस पर नियंत्रण रखते हैं—अर्थात् नियमों की व्याख्या करने का वे कभी कष्ट नहीं करते, परन्तु फिर भी सारे समाज के लोग आचरण में सामान्य दार्शनिक पद्धति को काम में लाते हैं। रीति और स्वभाव, पारिवारिक नीतियों, विभिन्न सम्प्रदायों की विचारधाराओं और कुछ अंशों में राष्ट्रीय पूर्वाग्रहों के बन्धनों को तोड़ना, परम्परा को केवल ज्ञान के स्रोत के रूप में और वर्तमान तथ्यों को भावी कार्यों को अच्छे ढंग से सम्पादित करने के लिए मार्गदर्शन के रूप में स्वीकार करना, अपने निमित्त केवल अपने भीतर विवेक के आधारभूत सिद्धान्त को ढूँढना, साधनों से मोह रखे बिना लक्ष्य की ओर प्रवृत्त होना और रूप के माध्यम से तत्व की आकांक्षा करना—ये वे मुख्य लक्षण हैं, जिन्हें मैं अमरीकियों की दार्शनिक पद्धति पुकारता हूँ, परन्तु यदि मैं और अधिक सूक्ष्मता से विचार करूँ और इन लक्षणों में से उस प्रमुख लक्षण को ढूँढने का प्रयत्न करूँ जिसमें शेष सारे लक्षण समा जाते हों, तो मुझे यह मालूम होगा कि मस्तिष्क के अधिकांश कार्यों में प्रत्येक अमरीकी केवल अपनी बुद्धि से किये जाने वाले युद्ध से सम्बन्धित कार्य की ओर ही ध्यान दे पाता है।

अतः अमरीका उन देशों में से है, जहां डेसकार्ट के दर्शन सिद्धान्तों का बहुत ही कम अध्ययन होता है, परन्तु उनका पालन सर्वश्रेष्ठ रीति से होता है। इसमें

आश्चर्य की कोई बात नहीं। अमरीकी डेसकार्ट की पुस्तकों का मनन नहीं करते, क्योंकि उनकी सामाजिक स्थिति ही ऐसी है कि परिकाल्पनिक अध्ययन में उनकी प्रवृत्ति नहीं, परन्तु वे उनके सिद्धान्तों का अनुसरण करते हैं, क्योंकि वही सामाजिक स्थिति उनके मस्तिष्क को स्वभावतः उन सिद्धान्तों को अंगीकार करने के लिए प्रवृत्त करती है। लोकतान्त्रिक समाज को आन्दोलित करने वाले निरन्तर परिवर्तनों के बीच जब एक पीढ़ी को दूसरी पीढ़ी से बाँधने वाला बन्धन शिथिल पड़ जाता है, तब प्रत्येक मनुष्य उस स्थिति में शीघ्र ही अपने पूर्वजों की विचार-परम्परा को विस्मृत कर देता है या उनके प्रति कोई ध्यान नहीं देता। समाज की ऐसी स्थिति में रहने वाले उस वर्ग की विचारधाराओं से अपने विश्वास अर्जित नहीं कर सकते, जिनसे वह स्वयं सम्बन्धित है—अर्थात् कहने का तात्पर्य यह है कि पहले की तरह किसी प्रकार के वर्ग नहीं रह जाते, या ये वर्ग, जो अभी तक अस्तित्व में हैं, वे ऐसे गतिशील तत्वों से निर्मित होते हैं कि समाज अपने सदस्यों पर कभी वास्तविक नियंत्रण नहीं रख सकता। किसी व्यक्ति की बौद्धिकता पर किसी दूसरे व्यक्ति की बौद्धिकता का जो प्रभाव पड़ सकता है, उसका जहाँ तक प्रश्न है, वह उस देश में आवश्यक रूप से बहुत ही सीमित होगी, जहाँ नागरिकों को एक समान स्तर पर रखा जाता है और जहाँ एक दूसरे को निकट से देखने का अवसर मिलता है और जहाँ उन्हें निरंतर सत्य के स्पष्टतम और घनिष्टतम साधन मान लेने के लिए अपने विवेक का ही सहारा लेना पड़ता है, क्योंकि उनमें से किसी में भी निर्विवाद महानता अथवा उच्चता के चिन्ह नहीं दिखायी देते। किसी भी व्यक्ति में जो विश्वास रहता है, केवल वही नष्ट नहीं होता, बल्कि किसी भी व्यक्ति के अधिकार में विश्वास कर लेने की प्रवृत्ति भी नष्ट हो जाती है। हर व्यक्ति अपने भीतर ही अपने को बन्द कर लेता है और विश्व को उसी दृष्टिकोण से देखने लगता है।

अमरीकियों में यह प्रवृत्ति देखने को मिलती है कि वे अकेले अपने में ही अपने निर्णय का मापदण्ड निर्धारित कर लेते हैं, इससे मस्तिष्क की अन्य प्रवृत्तियां उत्पन्न हो जाती हैं। यथा, जब वे देखते हैं कि उन्होंने बिना सहायता के व्यावहारिक जीवन में पैदा होने वाली सभी छोटी-मोटी कठिनाइयों को पार कर लेने में सफलता प्राप्त कर ली है, तो वे शीघ्र ही इस परिणाम पर पहुँच जाते हैं कि विश्व में प्रत्येक वस्तु की व्याख्या की जा सकती है और ऐसी कोई भी वस्तु नहीं है जो समझ की सीमा से बाहर हो। इस प्रकार जिस चीज को वे नहीं समझ सकते, उसको वे मानते ही नहीं, जिसके परिणामस्वरूप प्रत्येक

असाधारण वस्तु में उनका तनिक भी विश्वास नहीं रह जाता और प्रत्येक अलौकिक वस्तु के प्रति उनमें एक अजेय कुरुचि उत्पन्न हो जाती है। चूँकि वे स्वयं अपने ही प्रमाण पर विश्वास करने के अभ्यस्त होते हैं, इसलिए जो वस्तु उनका ध्यान आकर्षित करती है, उसकी छानबीन वे अत्यधिक स्पष्टता से करना पसन्द करते हैं। इसलिए वे उसे ढँके रहने वाले समस्त आवरणों को यथासम्भव अधिकाधिक उतार फेंकते हैं और जो कोई वस्तु उन्हें उससे पृथक रखती है, उससे वे अपना पिण्ड छुड़ा लेते हैं तथा दृष्टि से ओझल करने वाली जो भी बाधाएँ होती हैं, उन्हें हटा देते हैं, जिससे वे उसे अधिक सन्निकटता से और उज्ज्वल रोशनी में देख सकें। इस मनोवृत्ति के कारण वे उन स्वरूपों की निन्दा करने लगते हैं जिन्हें वे अपने और सत्य के बीच रखा हुआ निरर्थक और असुविधाजनक समझते हैं। यही कारण है कि अमरीकियों ने अपनी दार्शनिक पद्धति को पुस्तकों से न प्राप्त करके उसे अपने अनुभवों से अर्जित किया है। यूरोप में जो कुछ घटित हुआ है उसके सम्बन्ध में भी यही बात कही जा सकती है। यूरोप में जिस अनुपात में समाज की स्थिति अधिक समानता की ओर उन्मुख हुई और मनुष्यों में अधिक समानता दिखायी देने लगी, उस अनुपात में यहाँ भी यही पद्धति स्थापित हुई और इसी पद्धति ने लोकप्रियता हासिल की...।

इस बात को कभी नहीं भूलना चाहिए कि आम्ल-अमरीकी समाज का प्रादुर्भाव धर्म से हुआ था। इसलिए संयुक्त राज्य अमरीका में धर्म राष्ट्र के समस्त लोगों की समस्त आदतों तथा उनकी देशभक्ति की समस्त भावनाओं में घुलमिल गया है, जहाँ से वह विशिष्ट प्रकार की शक्ति ग्रहण करता है। इस कारण के साथ उतना ही शक्तिशाली एक दूसरा कारण और भी है। यह कहा जा सकता है कि अमरीका में धर्म ने स्वयं अपनी सीमाओं का निर्धारण कर लिया है। धार्मिक संस्थाएँ पूर्णतः राजनीतिक संस्थाओं से पृथक् रही हैं। इसीलिए पहले के कानून तो शीघ्र ही बदल चुके हैं, किन्तु पूर्व के विश्वास अभी तक उसी तरह अटल हैं। यही कारण है कि अमरीका में ईसाई धर्म लोगों के मस्तिष्क में अभी तक प्रभाव जमाये हुए है। मैं इससे भी अधिक विशेष रूप से कहूँगा कि इसका प्रभाव न केवल उस दार्शनिक सिद्धान्त का प्रभाव है, जिसे कसौटी पर कसे जाने के बाद अंगीकार किया गया है; परन्तु उस धर्म का है जिस पर बिना किसी वादविवाद के विश्वास किया जाता है। ईसाई सम्प्रदाय अनेक मत-मतान्तरों में विभाजित हो गये हैं और निरन्तर बदलते जा रहे हैं; परन्तु ईसाई धर्म स्वयं एक स्थापित और अदम्य सत्य है, जिस पर न तो कोई

प्रहार कर सकता है और जिसका न कोई बचाव करता है। अमरीकियों ने चूँकि ईसाई धर्म के मुख्य सिद्धान्तों को निर्विवाद अंगीकार कर लिया है, इसलिए उस धर्म से उत्पन्न होने वाले और उससे सम्बद्ध अनेक नैतिक सत्यों को स्वीकार कर लेने के लिए वे बाध्य हैं। इसलिए व्यक्तिगत विश्लेषण की गतिविधि सकुचित सीमाओं में बँधी हुई है और अनेक महत्वपूर्ण मानवीय विचारधाराओं को उसके प्रभावों से अलग रखा जाता है।

दूसरी परिस्थिति, जिसका मैं प्रकारान्तर से उल्लेख कर चुका हूँ, यह है कि अमरीकियों की सामाजिक परिस्थिति और विधान लोकतान्त्रिक है, परन्तु उनके यहाँ लोकतान्त्रिक क्रान्ति कभी नहीं हुई। जब वे आये तो उस भूमि की हालत, जो आज उनके अधिकार में है, लगभग वही थी जो आज हम देखते हैं और इस बात का महत्त्व बहुत अधिक है।

ऐसी क्रान्तियाँ नहीं होतीं जो विद्यमान विश्वासों को हिला नहीं देतीं, जो शासन की शक्ति को क्षीण नहीं करतीं और जो सामान्य रूप से स्वीकृत विचारों के सम्बन्ध में शंकाएँ उत्पन्न नहीं करतीं। अतः समस्त क्रान्तियों का न्यूनाधिक रूप से परिणाम यही होता है कि मनुष्य स्वयं के नेतृत्व के सामने झुक जाते हैं और प्रत्येक मनुष्य की बुद्धि के सामने कल्पना का शून्य और प्रायः असीमित क्षेत्र खुल जाता है। जब पुराने समाज का निर्माण करने वाले विभिन्न वर्गों के दीर्घकालीन संघर्ष के बाद स्थितियाँ समान हो जाती हैं तब ईर्ष्या, घृणा, अनुदारता, अहंकार और अतिरंजित आत्म-विश्वास मानव-हृदय पर अधिकार कर लेते हैं और कुछ दिनों के लिए अपने प्रभुत्व को उसमें आरोपित कर देते हैं। यह स्थिति स्वयं समानता से स्वतंत्र होकर मनुष्यों को विभाजित करने में सशक्त रूप से प्रवृत्त होती है और पारस्परिक निर्णय में अविश्वास की भावना को बढ़ावा देती है और उसी से प्रेरित होकर लोग सत्य के प्रकाश को अन्यत्र कहीं नहीं, अपने में ही ढूँढने लगते हैं। तब प्रत्येक व्यक्ति स्वयं ही अपना यथेष्ट मार्गदर्शक बनने का प्रयत्न करता है और समस्त विषयों के सम्बन्ध में निजी मत रखने की गर्वोक्ति करने लगता है। अब मनुष्य विचारों से नहीं, परन्तु हितों से सान्निध्य में बँधते हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि, जैसे मानवीय विचारधाराएँ एक प्रकार के ज्ञान के धूल में परिणत होकर हर स्थान पर बिखर गयी हैं, जिसे एक स्थान पर बटोरना कठिन है और जिसे एक स्थान पर सटाकर रखना दुर्लभ है।

इस प्रकार बुद्धि की वह स्वतंत्रता, जिसके अस्तित्व की कल्पना समानता द्वारा की जाती है, इतनी महान कभी नहीं रहती और न इतनी विपुल प्रतीत होती है, जैसी कि वह उस समय प्रतीत होती है, जब समानता अपनी स्थापना का कार्य प्रारम्भ करती है और जैसी कि वह उस कष्ट-प्रद श्रम की अवधि में प्रतीत होती है, जिसके द्वारा उसकी स्थापना की जाती है। अतः जो बौद्धिक स्वतंत्रता समानता द्वारा प्रतिष्ठित की जाती है, उसमें और क्रान्ति द्वारा उत्पन्न होने वाली अराजकता में अत्यन्त सावधानी के साथ भेद किया जाना चाहिए। इन दोनों में से प्रत्येक पर अलग-अलग रूप से विचार करना चाहिए, ताकि भविष्य की विपुल आशाओं और आशंकाओं के सम्बंध में अतिरंजित कल्पना न की जा सके।

मेरी धारणा है कि जो मनुष्य समाज के नये आदर्शों के अन्तर्गत रहेंगे, वे बहुधा अपने व्यक्तिगत विवेक का प्रयोग करेंगे, परन्तु वे प्रायः इसका दुरुपयोग करेंगे, ऐसा तो मैं सोच नहीं सकता। यह एक ऐसा कारण है जो सभी लोकतांत्रिक राष्ट्रों के सम्बन्ध में अधिक सामान्य रूप से लागू होता है और अन्ततोगत्वा व्यक्तिगत कल्पना की स्वतंत्रता को निश्चित और कभी-कभी संकुचित सीमाओं के भीतर सीमित कर देने की आवश्यकता पड़ेगी। विभिन्न युगों में अन्धविश्वास न्यूनाधिक रूप से प्रचलित रहता है, उसका उदय विभिन्न रूपों में होता है। वह अपना विषय और अपना रूप बदल सकता है, किन्तु किसी भी दशा में उसका अस्तित्व नहीं मिटेगा। दूसरे शब्दों में, यह कहा जा सकता है कि मनुष्य विश्वास के आधार पर तथा बिना वादविवाद के कुछ विचारों को ग्रहण करना कभी नहीं छोड़ेगा। यदि हरेक व्यक्ति अपनी ही राय कायम करने लगेगा और केवल अपने द्वारा बनाये गये एकाकी मार्गों से सत्य की खोज करने लगेगा, तो उसका परिणाम यही होगा कि कभी किसी भी सामान्य विश्वास पर बहुसंख्यक मनुष्य एक मत नहीं होंगे; परन्तु यह बात तो स्पष्ट है कि बिना सामान्य विश्वास के कोई भी समाज विकास नहीं कर सकता, बल्कि कहना यह चाहिए कि किसी भी समाज [redacted] अस्तित्व नहीं रह सकता, क्योंकि बिना सामान्य विचारों के सामान्य कार्रवाई नहीं हो सकती और बिना सामान्य कार्रवाई के मनुष्य भले ही रह सकते हैं, परन्तु किसी भी सामाजिक संस्था का निर्माण नहीं हो सकता। समाज का अस्तित्व बनाये रखने के लिए और प्रबल कारणों से समाज की समृद्धि के लिए यह आवश्यक है कि सभी नागरिकों के मस्तिष्क कतिपय निर्दिष्ट विचारों से एकमत होकर एक साथ जुटे रहें और यह स्थिति उस समय तक नहीं हो

सकती जब तक कि उनमें से हरेक व्यक्ति कभी-कभी किसी सामान्य स्रोत से अपनी राय कायम न करे और कतिपय बातों को पूर्ण निश्चित विश्वासों के आधार पर अंगीकार करना स्वीकार न करे।

यदि मैं अब मनुष्य की एकाकी स्थिति पर विचार करता हूँ तो मुझे यह ज्ञात होता है कि उसे अकेले रहने के लिए भी अन्धविश्वास उतना ही अनिवार्य है, जितना उसे हमजोलियों के साथ मिलकर कार्य करने के योग्य बनाने के लिए है। यदि मनुष्य को उन समस्त सत्यों को, जिन्हें वह प्रतिदिन व्यवहार में लाता है, अपने लिए प्रदर्शित करने के लिए विवश किया जाय तो उसके इस कार्य का कभी अन्त नहीं होगा, उसके प्रारम्भिक प्रदर्शनों में ही उसकी शक्ति का क्षय हो जायगा और वह कभी उनसे आगे नहीं बढ़ सकेगा। जीवन की लघुता के कारण न तो उसके पास समय है और बुद्धि के मर्यादित होने के कारण न उसमें ऐसी योग्यता है। अतः कार्य को पूरा करने के लिए उसे ऐसे अनेक तथ्यों और विचारों पर विश्वास कर लेना पड़ता है, जिनकी पुष्टि स्वयं करने के लिए उनके पास न तो समय था और न शक्ति थी, किन्तु जिनका अनुसंधान अधिक योग्यता वाले व्यक्तियों ने किया है अथवा जिन्हें संसार ने अंगीकार कर लिया है। इस पूर्व प्रतिष्ठित आधार पर वह अपने लिए अपनी विचाराधाराओं का निर्माण करता है। वह स्वेच्छापूर्वक ऐसा नहीं करता, प्रत्युत उसे अपनी परिस्थितियों के कठोर नियमों से विवश होकर ऐसा करना पड़ता है। संसार में इतने अधिक विषयों का कोई दार्शनिक नहीं है, किन्तु वह अन्य लोगों के विश्वास पर लाखों वस्तुओं पर विश्वास करता है और वह जितने सत्यों का निरूपण करता है, उससे बहुत अधिक और सत्यों की कल्पना कर लेता है।

यह आवश्यक ही नहीं, वाञ्छनीय भी है। जो व्यक्ति प्रत्येक वस्तु की छानबीन का कार्य स्वयं करता है, वह प्रत्येक वस्तु के लिए बहुत कम समय और बहुत कम ध्यान दे सकता है। इसका कार्य उसके मस्तिष्क को निरंतर अशान्त बनाये रखेगा, जिसके फलस्वरूप वह किसी भी सत्य की गहराई में नहीं पैठ सकेगा और न उसका मस्तिष्क किसी विश्वास को अच्छी तरह पकड़ सकेगा; उसकी बौद्धिकता शीघ्र ही शक्तिहीन हो जायगी। अतः उसे माननीय विश्वास के विभिन्न पदार्थों में से चुनाव करना चाहिए और बिना किसी विवाद के अनेक विचारधाराओं को मान लेना चाहिए; ताकि वह उन थोड़े विषयों में उचित रीति से खोज कर सके, जिन्हें वह अपनी खोज के लिए अलग रख देता है। यह सत्य है कि जो मनुष्य किसी

दूसरे व्यक्ति के कथन पर अपनी राय कायम करता है, वह अपने मस्तिष्क को दास बना देता है—परन्तु यह कल्याणकारी दासता है, जो उसे स्वतन्त्रता का सदुपयोग करने की स्वाधीनता प्रदान करती है।

इसलिए सभी परिस्थितियों में नैतिक और बौद्धिक जगत के किसी न-किसी भाग में सत्ता का एक सिद्धान्त हमेशा आवश्यक रूप से उपस्थित होता है। उसका स्थान निश्चित नहीं होता, परन्तु उसका स्थान होता अवश्य है। व्यक्तिगत मस्तिष्कों की स्वतंत्रता अधिक हो सकती है या कम हो सकती है; परन्तु वह असीमित नहीं हो सकती। अतः प्रश्न इस तथ्य को जानने का नहीं है कि लोकतन्त्र के युगों में बौद्धिक प्रभुत्व की स्थिति रहती है या नहीं, प्रत्युत केवल यह है कि उसका वास कहाँ है और वह कौन-सा मापदण्ड है, जिससे उसकी नाप-जोख करनी है।

मैंने पूर्व अध्याय में यह बताया है कि परिस्थितियों की समानता किस प्रकार मनुष्यों में, अलौकिक के प्रति एक प्रकार की आन्तर्बौद्धिक अविश्वास जगाती है और किस प्रकार उसके फलस्वरूप मानव बुद्धि के सम्बन्ध में अत्यन्त उच्च और अतिशयोक्तिपूर्ण मत बनता है। यही कारण है कि वे मनुष्य, जो सामाजिक समानता के युग में रहते हैं, उस बौद्धिक प्रभुत्व को, जिसके सामने वे झुकते हैं, मानवता से परे या मानवता से ऊपर सफलतापूर्वक नहीं रख पाते। वे सामान्य रूप से सत्य के स्रोतों को अपने आप में या अपने जैसे ही लोगों में ढूंढ़ते हैं। इससे यह बात पर्याप्त रूप से सिद्ध हो जायगी कि ऐसे कालों में कोई भी नया धर्म स्थापित नहीं हो सकता और ऐसे उद्देश्य की सारी योजनाएँ न केवल अपवित्र होंगी, परन्तु हास्यास्पद और असंगत भी होंगी। यह भविष्यवाणी की जा सकती है कि लोकतान्त्रिक लोग धार्मिक मिशन में सहज ही विश्वास नहीं करेंगे और वे आधुनिक पैगम्बरों पर हँसेंगे और अपने भीतर ही अपने विश्वास के मुख्य निर्णय की खोज करेंगे। वे उसे अपने जैसे लोगों की सीमाओं से बाहर नहीं जाने देंगे।

जब समाज की श्रेणियों में असमानता रहती है और उस स्थिति में जब व्यक्तियों में भी समानता नहीं रहती, तब कुछ व्यक्तियों के पास उच्च बौद्धिकता ज्ञान और प्रकाश की शक्ति रहती है, जबकि अधिकांश लोग अज्ञान और पूर्वाग्रहों में डूबे रहते हैं। इसलिए इन कुलीनवादी युगों में रहने वाले लोग स्वाभाविक रूप से किसी उच्च व्यक्ति के या व्यक्तियों के किसी उच्च वर्ग के मानदण्ड से अपने विचारों का निर्माण करने के लिए प्रेरित होते हैं जबकि वे

यह मानने के लिए प्रस्तुत नहीं होते कि जनसमूह दोषातीत होता है अथवा वह कोई गलती नहीं कर सकता। समानता के युगों में इससे विपरीत बात होती है। लोगों को ज्यों-ज्यों समान और एक-सी स्थिति के सामान्य स्तर के निकट लाया जाता है, त्यों-त्यों वे किसी विशेष व्यक्ति या व्यक्तियों के विशेष वर्ग के विचारों में निर्विवाद विश्वास कर लेने के लिए उद्यत नहीं होते, परन्तु समाज में विश्वास करने की उनकी तत्परता बढ़ जाती है और मत सदा से अधिक विश्व का शासक मान लिया जाता है। न केवल सामान्य मत ऐसा मार्गदर्शक होता है, जिसे व्यक्तिगत निर्णय लोकतांत्रिक समाज में बनाये रखता है, अपितु ऐसे समाज में अन्य स्थानों की अपेक्षा उसकी शक्ति अनन्त रहती है। समानता के युगों में सामान्य समरूपता के कारण मनुष्यों में परस्पर विश्वास नहीं होता, परन्तु यही समरूपता जनता के निर्माण में असीम विश्वास उत्पन्न कर देती है, चूँकि उन सब के पास निर्णयों के समान साधन उपलब्ध हैं, इसलिए ऐसा सम्भव प्रतीत नहीं होता, परन्तु महत्तर बहुसंख्या के पास ही होना चाहिए।

लोकतान्त्रिक देश का निवासी जब व्यक्तिगत रूप से अपनी तुलना अपने से सम्बन्धित सब लोगों के साथ करता है, तब वह गौरव से यह महसूस करता है कि वह उनमें से हर एक के बराबर है, परन्तु जब वह अपने साथियों के समष्टिगत रूप का पर्यवेक्षण और इतने विशाल जनसमूह के साथ अपनी तुलना करने लगता है तब उसी क्षण उसे अनुभव होता है कि वह तो एक तुच्छ और निर्बल प्राणी है—वही समानता जो उसे अपने साथियों में से प्रत्येक से अलग स्वतंत्रता प्रदान करती है, उसे बहुजन के प्रभाव के सामने अकेला और अरक्षित छोड़ देती है। इसलिए लोकतांत्रिक समाज में प्रजा की एकमात्र शक्ति होती है, जिसकी कल्पना कुलीनतांत्रिक राष्ट्र में नहीं कर सकते; क्योंकि वह कुछ निश्चित विचार धाराओं के मानने के लिए अनुनय नहीं करती, परन्तु यह सब लोगों पर दबाव डालती है और एक प्रकार से प्रत्येक के विवेक के आधार पर सब के दिमागों के सम्मिलित विशाल दबाव से उनकी बुद्धि में उन विचार-धाराओं को ठूँस देती है।

संयुक्त-राज्य अमरीका में बहुमत व्यक्तियों के उपयोग के लिए अनेक पूर्व-निर्मित मत प्रदान करने का कार्य अपने हाथ में लेता है और इस प्रकार व्यक्ति अपने मतों का निर्माण स्वयं करने की आवश्यकता से मुक्त हो जाता है। वहाँ हरेक व्यक्ति दर्शन, नीति और राजनीति के अनेक सिद्धान्तों को समाज के विश्वास के आधार पर निर्विवाद रूप से स्वीकार कर लेता है। यदि [illegible] बहुत

ही निकट से देखें तो यह दिखायी पड़ेगा कि वहाँ धर्म का प्रभाव सामान्य रूप से गृहीत मत के रूप में जितना है उससे बहुत कम प्रभाव ईश्वरीय सिद्धान्त के रूप में है।

अमरीकियों के राजनीतिक कानून ऐसे हैं कि बहुमत समाज पर सार्वभौम सत्ता के साथ शासन करता है और यह तथ्य मस्तिष्क पर बहुमत के स्वाभाविक अधिकार को बहुत अधिक बढ़ा देता है। मनुष्य मे अपने ऊपर शासन करने वाले की बुद्धि की श्रेष्ठता को मान्यता देने से बढ़ कर अन्य कोई प्रवृत्ति दिखायी नहीं देती। निस्सन्देह संयुक्त राज्य अमरीका में बहुमत की यह राजनीतिक सर्वशक्ति-सम्पन्नता उस प्रभाव मे वृद्धि कर देती है, जो प्रभाव जनमत समाज के प्रत्येक सदस्य के मस्तिष्क पर इसके बिना डालता। किन्तु उस प्रभाव की नींव इस पर आधारित नहीं होती। इन आधारों की खोज उन लोकप्रिय संस्थाओं मे, जिसका निर्माण उस परिस्थिति के अन्तर्गत रहने वाले लोग अपने आप कर सकते हैं, न करके समानता के सिद्धान्त मे ही करनी चाहिए। राजा द्वारा शासित होने वाले लोकतान्त्रिक समाज में बहुसंख्यकों का बौद्धिक प्रभुत्व उस क्षेत्र के लोगों के बौद्धिक प्रभुत्व से सम्भवतः कम पूर्ण होगा, जहाँ शुद्ध लोकतंत्र प्रतिष्ठित हैं, किन्तु वह सदा अत्यन्त पूर्ण रहेगा और समानता के युगों मे चाहे जैसे राजनीतिक कानूनों से मनुष्यों पर शासन किया जाय, इस बात की पूर्व कल्पना की जा सकती है कि वहाँ जनमत में विश्वास एक प्रकार का धर्म बन जायेगा तथा बहुमत उसको आदेश देने वाला पैगम्बर होता है।

इस प्रकार बौद्धिक प्रभुत्व भिन्न प्रकार का होगा, परन्तु वह कम नहीं होगा और यह सोचना तो बहुत दूर की बात है कि उसका लोप हो जायगा, प्रत्युत मेरा तो अनुमान है कि वह शीघ्र ही अत्यन्त प्रबल हो जायगा और निजी निर्णय के कार्य को मानव जाति की महानता अथवा प्रसन्नता के लिए उपयुक्त सीमाओं की अपेक्षा सकीर्ण सीमाओं में आबद्ध कर देगा। समानता के सिद्धान्त में मुझे दो प्रवृत्तियाँ स्पष्टतः दिखलायी पड़ती हैं। एक प्रवृत्ति तो यह है, जो प्रत्येक मनुष्य की बुद्धि को अन्यबद्धत अथवा अपरीक्षित विचारों की ओर ले जाती है। दूसरी प्रवृत्ति वह है, जो मस्तिष्क में किसी प्रकार के विचार उत्पन्न नहीं होने देती और मैं देखता हूँ कि किस प्रकार कतिपय कानूनों के प्रभुत्व के अन्तर्गत प्रजातंत्र मस्तिष्क की उस स्वतन्त्रता को नष्ट कर देता है, जिसके लिए एक प्रजातान्त्रिक सामाजिक स्थिति अनुकूल होती है, जिससे मानव मस्तिष्क एक बार उन समस्त बन्धनों को, जो उस पर वर्ग द्वारा अथवा मनुष्यों द्वारा लगाये

गये थे, छिन्न-भिन्न कर अधिकतम संख्या की सामान्य इच्छा से घनिष्ठतापूर्वक जकड़ जायगा। जो विभिन्न शक्तियाँ व्यक्तियों के मस्तिष्कों की शक्ति को रोकती अथवा अवरुद्ध करती हैं, उन सभी के स्थान पर यदि प्रजातांत्रिक राष्ट्र बहुमत की निरंकुश सत्ता को स्थापित कर दें, तो इससे केवल बुराई का स्वरूप परिवर्तित हो जायगा। इससे मनुष्यों को स्वतंत्र जीवन का साधन नहीं उपलब्ध होगा, उन्हें केवल दासता के एक नये स्वरूप का पता चलेगा। (और यह कोई सरल कार्य नहीं है।) मैं इस कथन की पुनरावृत्ति बारबार नहीं कर सकता कि जो लोग विचार-स्वातंत्र्य को एक पुनीत वस्तु मानते हैं और जो न केवल अत्याचारी से, अपितु अत्याचार से घृणा करते हैं, उनके लिए यह अत्यधिक विचार करने का विषय है। जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, जब मैं सत्ता के मजबूत हाथों से जकड़ा हुआ अनुभव करता हूँ तब मैं यह जानने की तनिक भी परवाह नहीं करता कि मेरा दमन कौन कर रहा है और केवल इस कारण भी जुए में जुतने की मेरी प्रवृत्ति नहीं होती कि जुए को लाखों व्यक्तियों के हाथों ने पकड़ रखा है।

१७—धर्म पर प्रजातंत्र का प्रभाव

मनुष्य रूढ़िवादी विश्वास के बिना काम नहीं चला सकते और यह अत्यन्त वाञ्छनीय भी है कि इस प्रकार का अन्धविश्वास उन लोगों में बना रहे। समस्त प्रकार के रूढ़िवादी विश्वासों में से मुझे धर्मविषयक रूढ़िवादी विश्वास सर्वाधिक वाञ्छनीय प्रतीत होता है और यह निष्कर्ष इस संसार के हितों की दृष्टि से भी एक स्पष्ट निष्कर्ष है। ऐसा कोई भी मानवीय कार्य नहीं है, चाहे वह कितना ही विशिष्ट क्यों न हो, जिसका उद्गम ईश्वर, मनुष्य जाति के साथ उसके सम्बन्ध, मनुष्यों की आत्मा के स्वरूप और अपने सह-प्राणियों के प्रति मनुष्यों के सम्बन्धों में मनुष्यों द्वारा निर्मित किसी अत्यन्त सामान्य धारणा से न हुआ हो। न कोई वस्तु इन धारणाओं को ऐसा सामान्य स्रोत बनने से ही रोक सकती है, जिससे शेष समस्त धारणाएँ निःसृत होती हैं। इसलिए मनुष्य ईश्वर के विषय में, आत्मा के विषय में, अपने रचयिता और अपने सहप्राणियों के प्रति अपने कर्तव्यों के विषय में निश्चित विचारों को ग्रहण करने में बहुत अधिक रुचि लेते हैं; क्योंकि इन प्राथमिक (मूल) सिद्धान्तों के विषय में उत्पन्न होने

वाले सन्देह उनके समस्त कार्यों को संयोगाधीन बना देंगे और वे किसी-न-किसी रूप में अव्यवस्था और निष्क्रियता के अपराधी हो जायेंगे।

इसलिए यह एक ऐसा विषय है, जिस पर हरेक के लिए निश्चित धारणा बनाना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है और दुःख की बात यह है कि यह एक ऐसा भी विषय है, जो हरेक के लिए कठिन है और कोई भी व्यक्ति स्वतंत्र होकर एकमात्र अपने तर्क की शक्ति से राय कायम नहीं कर सकता। इतने आवश्यक इन सत्यों की गहराई तक केवल वे मस्तिष्क ही पहुँच सकते हैं, जो जीवन की साधारण चिन्ताओं से पूर्णरूपेण मुक्त हों तथा जो मस्तिष्क गहराई तक पहुँचने वाले, सूक्ष्म एवं चिन्तन द्वारा प्रशिक्षित हों, भले ही ऐसा करने में उन्हें बहुत अधिक समय लगे तथा बहुत अधिक सावधानी से काम लेना पड़े। वास्तव में हम देखते हैं कि दार्शनिक लोग भी प्रायः अनिश्चितताओं से घिरे रहते हैं और हर कदम पर नैसर्गिक ज्योति, जो उनके पथ का मार्गदर्शन करती है, अधिक मंद और कम सुरक्षित होती जाती है। हम यह भी देखते हैं कि अपने समस्त प्रयत्नों के बावजूद वे अभी तक केवल कुछ परस्पर-विरोधी विचार ही ढूँढ़ पाये हैं, जिन पर हजारों वर्षों से मानव-मस्तिष्क आन्दोलित होता रहा है, किन्तु वह सत्य को कभी दृढ़तापूर्वक नहीं पकड़ सका अथवा उसकी त्रुटियों में भी नवीनता को नहीं प्राप्त कर सका। इस प्रकार के अध्ययन मनुष्यों की औसत योग्यता से बहुत अधिक ऊपर हैं और यदि मानव-जाति के बहुमत में ऐसी खोज की क्षमता हो भी, तो यह स्पष्ट है कि इस प्रकार की खोजों के लिए समय का अभाव बना ही रहेगा।

मनुष्यों के जीवन के दैनिक व्यवहार के लिए ईश्वर और मानव स्वभाव सम्बन्धी निश्चित विचारों का होना अनिवार्य है, परन्तु उनके जीवन का व्यवहार उन्हें इस प्रकार के विचार ग्रहण करने से रोक देता है, ऐसी कठिनाई और कहीं देखने को नहीं मिलती। विज्ञानों में कुछ तो ऐसे हैं, जो समाज के अधिकांश लोगों के लिए उपयोगी हैं और जिन्हें अधिकांश जनता समझ सकती है, कुछ ऐसे हैं, जो अधिकांश मानव-जाति के लिए उपयोगी हैं और उसकी पहुँच के अन्तर्गत हैं। अन्य विज्ञान ऐसे हैं, जिन तक केवल थोड़े-से व्यक्ति ही पहुँच सकते हैं और जिनका अभ्यास अधिक लोग नहीं करते और जिनके लिए इससे अधिक किसी बात की आवश्यकता नहीं होती कि उनका व्यवहार बहुत अधिक बाद में किया जाय; किन्तु मैं जिस विज्ञान की बात कह रहा हूँ, उसका दैनिक व्यवहार सभी के लिए अनिवार्य है, यद्यपि अधिकांश व्यक्तियों के लिए

उसका अध्ययन पहुँच के बाहर होता है। इसलिए ईश्वर और मानव-स्वभाव के सम्बन्ध में सामान्य विचार सभी अन्य विचारों से ऊपर होते हैं, जिन्हें निजी निर्णय की सहज क्रिया से मुक्त रखना सर्वाधिक उपयुक्त है और जिनमें प्रामाणिकता के एक सिद्धान्त को मान्य कर लेने में लाभ ही लाभ है तथा हानि तनिक भी नहीं।

धर्म का प्रथम उद्देश्य और उसके प्रमुख लाभों में से एक लाभ यह है कि वह इन मूलभूत प्रश्नों में प्रत्येक के लिए एक ऐसा हल प्रस्तुत करता है, जो स्वाभाविक रूप से समाज के जनसमूह के लिए स्पष्ट, सूक्ष्म, बोधगम्य और स्थायी होता है। कुछ ऐसे धर्म हैं, जो मिथ्या और अत्यन्त मूर्खतापूर्ण हैं, परन्तु यह दृढ़तापूर्वक कहा जा सकता है कि कोई भी धर्म, जो उस सीमा के अन्तर्गत रहता है, जिसका मैंने अभी वर्णन किया है और जो उसका अतिक्रमण करने का आडम्बर नहीं रचता, (जैसा कि अनेक धर्मों ने प्रत्येक दिशा में मानव-मस्तिष्क के स्वतंत्र क्रियाकलापों पर प्रतिबन्ध लगाने के उद्देश्य से प्रयत्न किया है) बुद्धि पर स्वस्थ नियंत्रण रखता है और इस बात को स्वीकार करना ही पड़ेगा कि यदि वह परलोक में मनुष्यों की रक्षा नहीं करता, तो कम-से-कम इस संसार में उनकी प्रसन्नता और उनकी महानता के लिए अत्यन्त लाभदायक होता है। यह बात विशेषरूप से स्वतंत्र राष्ट्रों में रहने वाले लोगों के लिए लागू होती है। जब लोगों का धर्म नष्ट हो जाता है, तब सन्देह बुद्धि की उच्चतर शक्तियों को ग्रस्त कर लेता है और अन्य शक्तियाँ आंशिक रूप से क्षीण हो जाती हैं। प्रत्येक मनुष्य, उन विषयों के सम्बन्ध में, जो उसके सहप्राणियों और स्वयं उसके लिए अत्यन्त रुचिकर होते हैं, केवल भ्रमपूर्ण और परिवर्तनशील धारणाएँ बनाने का अभ्यस्त होता है। उसकी धारणाएँ अतर्कपूर्ण और सरलता से त्याज्य होती हैं और जब वह मनुष्य की भाग्य-सम्बन्धी कठिन समस्याओं का हल ढूँढ़ते निराश हो जाता है, तब वह लज्जाजनक रूप से उसके सम्बन्ध में विचार करना ही छोड़ देता है। इस प्रकार की स्थिति आत्मा को दुर्बल बनाने, आत्मबल के स्रोतों को शिथिल करने और लोगों को दासता के लिए तैयार करने के सिवाय और कुछ नहीं कर सकती। इस स्थिति में केवल यही नहीं होता कि वे अपनी स्वतंत्रता को छीन लेने की अनुमति दे देते हैं, प्रत्युत वे बहुधा अपने आप उसे समर्पित कर देते हैं। राजनीति की भाँति ही जब धर्म में भी सत्ता का कोई सिद्धान्त नहीं रह जाता, तब मनुष्य इस असीमित स्वतंत्रता के पहलू से शीघ्र भयभीत हो जाते हैं। चारों ओर की वस्तुओं का निरन्तर आन्दोलन

उन्हें आशंकित और निर्बल कर देता है। चूँकि मस्तिष्क के क्षेत्र में प्रत्येक वस्तु भ्रांतिपूर्ण रहती है, इसलिए वे कम-से कम यह निर्णय कर लेते हैं कि रचना दृढ़ और स्थिर रहेगी और चूँकि वे अपने विश्वासों को ग्रहण नहीं कर सकते, इसलिए वे अपने लिए एक स्वामी चुन लेते हैं।

जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, मुझे इस बात में सन्देह नहीं है कि मनुष्य कभी पूर्ण धार्मिक स्वाधीनता और समग्र राजनीतिक स्वतन्त्रता का एक साथ समर्थन कर सकेगा और मेरा विचार है कि यदि मनुष्य में विश्वास का अभाव है तो वह अवश्य पराधीन होगा और यदि वह स्वतन्त्र है, तो उसमें विश्वास अवश्य होगा।

फिर भी सम्भवतः धर्मों की यह महान उपयोगिता उन राष्ट्रों में जहाँ तमाम परिस्थितियों की स्थापना रहती है, अन्य राष्ट्रों की अपेक्षा और अधिक स्पष्टतः दिखायी पड़ती है। यह मानना ही पड़ेगा कि समानता, जो इस विश्व में महान सुविधाएँ उपलब्ध करती है, फिर भी मनुष्यों को (जैसा कि आगे चलकर बताया जायगा) कुछ अत्यन्त खतरनाक प्रवृत्तियों की ओर संकेत कर देती है। इसकी प्रवृत्ति प्रत्येक मनुष्य को एक दूसरे से विलग करने तथा प्रत्येक मनुष्य के ध्यान को निजी स्वार्थ में केन्द्रित करने की रहती है और वह मन में भौतिक सुखोपभोग के प्रति एक असाधारण मोह पैदा कर देती है। धर्म का सब से बड़ा लाभ यह है कि वह परस्पर-विरोधी सिद्धान्तों को प्रेरित करता है। ऐसा कोई धर्म नहीं है, जो मनुष्य की आकांक्षाओं के प्रयोजन को सांसारिक सुख-भोग से ऊपर और परे न रखता हो और जो स्वाभाविक रूप से उनकी आत्मा को विषयानन्द के क्षेत्र से काफी ऊपर उठा न देता हो और न कोई ऐसा धर्म है, जो मनुष्य के लिए मानव-जाति के प्रति कुछ कर्तव्य न निर्धारित करता हो और इस प्रकार कभी-कभी उसे स्वयं अपने विषय में सोचने से विमुख न करता हो। ऐसा सर्वाधिक मिथ्या और सर्वाधिक खतरनाक धर्मों में होता है।

अतः जिन बातों में प्रजातान्त्रिक राष्ट्र कमजोर होते हैं, उन्हीं बातों में धार्मिक राष्ट्र स्वभावतः अत्यन्त शक्तिशाली होते हैं। इससे यह प्रकट होता है कि परिस्थितियों के अधिक समान होने पर, मनुष्यों के लिए धर्म को सुरक्षित रखना कितना महत्वपूर्ण है।

ईश्वर मनुष्यों के हृदय में धार्मिक विश्वास जगाने के लिए जिन अलौकिक साधनों को व्यवहार में लाता है, उनकी परीक्षा करने का मुझे अधिकार नहीं है और न मेरा ऐसा विचार ही है। मैं यहाँ इस समय धर्म पर केवल मानवीय

दृष्टिकोण से विचार कर रहा हूँ। मेरा उद्देश्य जाँच करने का है कि किन साधनों से लोकतांत्रिक युग में, जिसमें हम प्रवेश कर रहे हैं, धर्म अपनी स्थिति को बनाये रख सकते हैं। यह बताया जा चुका है कि सामान्य सभ्यता और समानता के युग में मानव मस्तिष्क रूढ़िवादी धारणाओं को अनिच्छापूर्वक ही स्वीकार करता है और केवल आध्यात्मिक विषयों में उनकी तीव्र आवश्यकता महसूस करता है। इससे प्रथमतः यह सिद्ध होता है कि ऐसे समय धर्मों को अन्य समयों की अपेक्षा अधिक सावधानी से अपनी निर्दिष्ट सीमाओं में मर्यादित रहना चाहिए। यदि वे धार्मिक विषयों से परे खोज करने के लिए अपनी शक्ति का विस्तार करेंगे, तो उन पर से बिल्कुल ही विश्वास उठ जाने की सम्भावना का खतरा बना रहेगा। इसलिए उस क्षेत्र का, जिसके भीतर उन्हें मानव बुद्धि को मर्यादित रूप से प्रभावित करना है, सतर्कतापूर्वक निर्देशन होना चाहिए और उस निर्दिष्ट सीमा से बाहर मस्तिष्क को अपना मार्गदर्शन स्वयं करने के लिए पूर्णतः मुक्त कर देना चाहिए।

अमरीकियों की दार्शनिक पद्धति के सम्बन्ध में विचार अभिव्यक्त करते समय मैंने बताया था कि समानता के युग में मानव-मन के लिए स्वरूपों की अधीनता से अधिक घृणाजनक और कुछ नहीं है। ऐसे युग में रहने वाले लोग आकृतियों के प्रति बड़े अधीर रहते हैं, उनकी दृष्टि में प्रतीक उस सत्य को छिपाने और मिटाने के लिए प्रयुक्त की जानेवाली कृत्रिमताओं के समान प्रतीत होते हैं, जिन्हें अधिक स्वाभाविक रूप से दिन के प्रकाश में उन्मुक्त रखना चाहिए। इसीलिए वे समारोहात्मक कार्यों से प्रभावित नहीं होते और सार्वजनिक पूजा सम्बन्धी रीतियों को केवल गौण महत्व देते हैं।

लोकतान्त्रिक युग में जिन लोगों को धर्म के बाह्य स्वरूपों को नियमित करना पड़ता है, उन्हें चाहिए कि वे मानव-मन की स्वाभाविक प्रवृत्तियों पर सूक्ष्म ध्यान दें ताकि अनावश्यक रूप से उनका विरोध न करना पड़े।

स्वरूपों की आवश्यकता में मेरा दृढ़ विश्वास है, जो मानव-मस्तिष्क को निराकार सत्य के चिन्तन पर केन्द्रित करते हैं और उन निराकार सत्यों को हार्दिक रूप से ग्रहण करने तथा उन पर दृढ़तापूर्वक अटल बने रहने में उसकी सहायता करते हैं। मैं यह भी नहीं मानता हूँ कि बिना बाह्य आचरणों से किसी धर्म को बनाये रखना सम्भव है, परन्तु दूसरी ओर मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि जिस युग में हम प्रवेश कर रहे हैं, उसमें उनकी अत्यधिक वृद्धि खतरनाक होगी। उस सिद्धान्त को शाश्वत बनाये रखने के लिए, जो धर्म का

मूल्य तत्व है और कर्मकाण्ड जिसका एक स्वरूप मात्र है, जितना नितान्त आवश्यक हो, उसी सीमा तक बाह्य आचरणों को सीमित कर दिया जाना चाहिए। उस समय, जब मनुष्य अधिक समानता की ओर अग्रसर हो रहे हैं, वह धर्म, जिसे अधिक सूक्ष्म, अधिक सुनिश्चित और लघु आचरणों से मुक्त होना चाहिए, शीघ्र ही नास्तिक लोगों के समाज में कुछ धर्मोन्मत्त व्यक्तियों के हाथों में कठपुतली मात्र हो कर रह जायगा।

मैं इस आपत्ति का पूर्व अनुमान करता हूँ कि चूंकि सभी धर्मों का उद्देश्य सामान्य और शाश्वत सत्य की खोज करना है, इसलिए प्रत्येक युग की बदलती हुई प्रवृत्तियों के अनुसार वे अपने आपको नहीं बदल सकते; क्योंकि ऐसा करने पर लोगों की दृष्टि में उनके प्रति जो आस्था है, वह नष्ट हो जायगी। मैं इसका उत्तर पुनः यही देता हूँ कि उन प्रमुख धारणाओं को, जो किसी धर्म का निर्माण करती हैं और जिन्हें आध्यात्मिक पुरुष धर्म के बाध्यकारी सिद्धान्त पुकारते हैं, बड़ी सतर्कतापूर्वक सम्बन्धित सहायक तत्वों से विलग रखना चाहिए। युग की कैसी ही विशिष्ट भावना क्यों न हो, धर्म अपने बाध्यकारी सिद्धान्तों से विलग नहीं होते, परन्तु इस बात की ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है कि वे उसी रूप में सहायक तत्वों से न जुड़े रहें—विशेषतः उस समय जब कि प्रत्येक वस्तु संक्रमण की अवस्था में हो—जब मस्तिष्क मानवीय कार्यों की क्रियाशील तड़क-भड़क से आकर्षित होने का अभ्यस्त हो और जो बड़ी कठिनता से किसी एक विषय में स्थिर हो पाता हो। शाश्वत और सहायक वस्तुओं का निरूपण उसी युग में किया जा सकता है जब स्वयं सभ्य समाज स्थिर हो। इसके सिवाय अन्य परिस्थितियों के अन्तर्गत ऐसा करना मेरे विचार से खतरनाक होगा।

हम देखेंगे कि समानता से उत्पन्न होने वाली या उससे पोषित होने वाली समस्त भावनाओं में एक ऐसी भावना है, जिसे समानता विशेष रूप से प्रबल बना देती है और जिसे वह प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में प्रविष्ट कर देती है, मेरा तात्पर्य सुख-सुविधा के प्रति प्रेम की भावना से है। सुख-सुविधा के प्रति यह अभिरुचि लोकतांत्रिक युग का प्रमुख और अमिट लक्षण है।

ऐसा विश्वास किया जा सकता है कि जो धर्म इतनी बद्धमूल भावना को नष्ट करने का कार्य अपने हाथों में लेगा, वह अन्त में स्वयं उस भावना द्वारा नष्ट हो जायगा और यदि उसने इस जगत की अच्छी वस्तुओं के सम्बन्ध में चिन्तन करने से मनुष्यों को सर्वथा रोकने का प्रयत्न किया, जिससे वे अपनी बुद्धि को

अनन्य रूप से एक दूसरे जगत के विषय में विचार करने में लगा सकें, तो यह भविष्यवाणी की जा सकती है कि अन्त में मनुष्य के मस्तिष्क उसकी पकड़ से मुक्त होकर वर्त्तमान और भौतिक आनन्दों का ही उपभोग करने में तल्लीन हो जायगे। समानता के युग मे मनुष्यो में पायी जाने वाली सुख की अपरिमेय और एकमात्र भावना को, परिशोधित करना, नियमित करना और मर्यादित करना धर्म का मुख्य उद्देश्य है। परन्तु उस पर पूर्ण रूप से विजय प्राप्त करने या उसे समाप्त करने का प्रयत्न करना एक गलत कदम होगा। भौतिक सुखों के प्रति मनुष्य में जो मोह है, उसे मिटाया नहीं जा सकता; परन्तु उन्हें और कुछ नहीं तो पवित्र साधनों को अपनाने के लिए प्रेरित अवश्य किया जा जा सकता है।

इस विश्लेषण से मैं एक अन्तिम निर्णय पर पहुँचता हूँ, जिसमें अन्य सभी बातें सम्मिलित हैं। मनुष्यों की परिस्थितियों में जितनी अधिक समानता आती है और जितनी अधिक वे एक दूसरे से घुलमिल जाती हैं, धर्म के लिए उतनी ही अधिक महत्वपूर्ण बात होती है; जबकि वह सासारिक कार्यों के दैनिक झंझटों से सतर्कतापूर्वक अलग रहता है ताकि उसे आवश्यक रूप से, उन विचारों से, जो सामान्यतः समाज मे प्रचलित रहते हैं या उन स्थायी हितो से, जो समाज के लोगों मे स्थित रहते हैं, प्रतिरोध न करना पड़े; क्योंकि जब जनमत अधिक-से-अधिक प्रबल होता जाता है, तब वर्तमान शक्तियों मे से प्रथम और अधिक अदम्य शक्ति धार्मिक सिद्धान्त को, कोई पर्याप्त शक्तिशाली बाह्य सहारा नहीं मिल पाता, जिससे वह उसके आक्रमणो का निरन्तर सामना करने में समर्थ हो सके। यह बात जिस प्रकार गणतन्त्र के लिए लागू है, उसी प्रकार निरंकुश शासन की लोकतात्रिक प्रजा के लिए भी लागू है। समानता के युगों में बहुधा सम्राट की आज्ञाओं का पालन हो सकता है, किन्तु विश्वास सदा बहुमत में किया जाता है। इसलिए जो बातें धर्म के प्रतिकूल नहीं होती हैं, उन सभी बातों में बहुमत का सम्मान किया जाता है।

मैंने इस पुस्तक के पूर्व भाग में यह बताया है कि किस प्रकार अमरीकी पादरी सासारिक मसलों से अलग रहता है। यह उनके आत्म-संयम का अत्यन्त प्रत्यक्ष उदाहरण है, किन्तु यह एकमात्र उदाहरण नहीं है। अमरीका में धर्म का एक भिन्न क्षेत्र है, जिसका सर्वेसर्वा पादरी है, जो कभी अपनी मर्यादा भंग कर बाहर जाने का प्रयत्न नहीं करता। वह अपनी सीमाओं में सब लोगों का मार्गदर्शक है, परन्तु उन सीमाओं से बाहर मनुष्यों को स्वयं उन्हीं के

भरोसे छोड़ देता है तथा उन्हें और उनके युग से सम्बन्धित स्वाधीनता और अस्थिरता के सामने समर्पित कर देता है। मैंने संयुक्त-राज्य अमरीका को छोड़ कर अन्य कोई ऐसा देश नहीं देखा, जहाँ ईसाई धर्म के इतने कम स्वरूप, सम्प्रदाय और आचार हों या जहाँ वह बुद्धि के सामने इतनी अधिक स्पष्ट, सरल और सामान्य धारणाएँ प्रस्तुत करता हो। यद्यपि अमरीका के ईसाई अनेक मतमतान्तरों में विभाजित हैं, तथापि वे अपने धर्म को एक ही दृष्टि से देखते हैं। यह बात रोमन कैथोलिक तथा अन्य सम्प्रदाय के लोगों के लिए समान रूप से लागू होती है। संयुक्त-राज्य अमरीका के रोमन कैथोलिक पादरियों को छोड़ कर अन्य कोई ऐसे रोमन कैथोलिक पादरी नहीं हैं, जो सूक्ष्म वैयक्तिक आचारों के प्रति तथा मुक्ति के असाधारण या विशिष्ट साधनों के प्रति कम अभिरुचि दिखलाते हों या जिनका झुकाव नियमों की अपेक्षा भावनाओं की ओर अधिक होता हो। ईसाई धर्म, जो ईश्वर मात्र की पूजा का विधान तथा सन्तों की पूजा [redacted] निषेध करता है, वह अमरीका को छोड़ कर अन्यत्र कहीं भी इतना स्पष्ट रूप से नहीं समझा जाता और न कहीं उसका इतना व्यापक प्रभाव [redacted] है। फिर भी अमरीका के रोमन कैथोलिक अत्यन्त विनम्र और ईमानदार हैं।

एक दूसरी बात प्रत्येक सम्प्रदाय के पादरी के लिए लागू होती है। ईसाई मत के अमरीकी पादरी मनुष्य के सभी विचारों को भावी जीवन के प्रति प्रेरित नहीं करते। वे इस संसार की वस्तुओं को गौण समझते हुए भी उन्हें उतने ही महत्वपूर्ण पदार्थ समझते हुए प्रतीत होते हैं और इसलिए वे मनुष्य-हृदय के एक अंश को वर्त्तमान की चिन्ताओं के समक्ष समर्पित कर देने के लिए उद्यत रहते हैं। यदि वे स्वयं उत्पादक श्रम में भाग नहीं लेते तो कम-से-कम उसकी प्रगति में अभिरुचि लेते हैं और उसके परिणामों की प्रशंसा करते हैं; जब कि वे धार्मिक व्यक्ति की भावी आशाओं और आशंकाओं के महान उद्देश्य के रूप में परलोक की ओर इंगित करने से कभी नहीं चूकते, फिर भी उसे ईमानदारी के साथ इस जगत की समृद्धि में भाग लेने से नहीं रोकते। वे कभी यह बताने का प्रयत्न नहीं करते कि ये दोनों चीजें भिन्न और परस्पर विरोधी हैं, बल्कि वे इस बात को जानने का प्रयत्न करते हैं कि किस विषय में वे दोनों अत्यन्त निकट और घनिष्ठतापूर्वक सम्बद्ध हैं।

समस्त अमरीकी पादरी बहुमत की बौद्धिक श्रेष्ठता से परिचित हैं और उसे सम्मान की दृष्टि से देखते हैं। वे कभी आवश्यक संघर्षों को छोड़ कर उसके साथ कोई झगड़ा नहीं पैदा होने देते। वे दलों के विवादों में कोई भाग नहीं लेते,

परन्तु बड़ी शीघ्रता से अपने देश तथा अपने युग की विचारधाराओं को अपना लेते हैं और वे धारणाओं तथा भावों के उस प्रवाह में, जिसमें आसपास की सारी वस्तुएं बह जाती हैं, स्वयं बिना प्रतिरोध के बह जाते हैं। वे अपने समकालीन व्यक्तियों के विचारों में संशोधन करने का पूरा प्रयत्न करते हैं, परन्तु वे यह कार्य बड़ी शान्ति के साथ करते हैं, जिससे उनकी मित्रता बनी रहे। इसीलिए जनमत कभी उनके विरोध में नहीं होता, बल्कि वह उनका समर्थन करता है, उनकी रक्षा करता है तथा उनके विश्वास में जो सत्ता होती है, उसका कारण उस विश्वास की निजी शक्ति तथा बहुमत के विचारों से ग्रहण की गयी बातें, दोनों होती हैं।

इस प्रकार धर्म उन समस्त लोकतान्त्रिक प्रवृत्तियों का, जो एकदम उसके विपरीत नहीं हैं, आदर करके और उनमें से अनेक प्रवृत्तियों का अपने लिए उपयोग करके व्यक्तिगत स्वातंत्र्य की उस भावना के साथ, जो सबसे खतरनाक शत्रु है, सफलतापूर्वक संघर्ष करता है।

इस विश्व में अमरीका अत्यन्त लोकतान्त्रिक देश है और साथ ही साथ (विश्वसनीय रिपोर्ट के अनुसार) वह एक ऐसा देश है, जहाँ रोमन कैथोलिक धर्म बहुत अधिक प्रगति करता है। प्रथम दर्शन में यह बात आश्चर्यजनक लगेगी। समानता की दो प्रवृत्तियाँ हैं, जिनके वास्तविक भेद को पहचानना अत्यन्त आवश्यक है। समानता एक ओर मनुष्यों में अपने निजी विचारों का निर्माण करने की इच्छा जाग्रत करती है, परन्तु इसके साथ ही दूसरी ओर वह उनमें समाज को नियंत्रित करने वाली सत्ता में एकता, सरलता और निष्पक्षता की रुचि और विचार जाग्रत कर देती है। इसलिए लोकतान्त्रिक युग में रहने वाले लोग धार्मिक सत्ता को हिला देने में गहरी अभिरुचि लेते हैं, परन्तु यदि वे स्वयं इस प्रकार की किसी सत्ता के अधीन रहने की सहमति देते हैं तो वे कम से कम यह निर्णय करते हैं कि वह सत्ता एक ही हो और समरूप हो। एक सामान्य केन्द्र से विकीर्ण नहीं होनेवाली धार्मिक शक्तियाँ उनके मस्तिष्क के लिए स्वभावतः अरुचिकर होती हैं और जिस तत्परता से वे यह भी सोचने लगते हैं कि अनेक धर्म होने चाहिए, लगभग उसी तत्परता से वे यह भी सोचने लगते हैं कि धर्म होना ही नहीं चाहिए।

इस समय पिछले युगों से अधिक रोमन कैथोलिक नास्तिकता की ओर झुक रहे हैं और प्रोटेस्टेंट रोमन कैथोलिक धर्म ग्रहण करते जा रहे हैं। यदि रोमन कैथोलिक धर्म पर चर्च की चहारदिवारी के भीतर विचार किया जाय, तो वह

असफल-सा दिखायी पड़ेगा और यदि उसे चहारदिवारी के बाहर रखा जाय, तो वह आगे प्रगति करता हुआ प्रतीत होगा। इस तथ्य का स्पष्टीकरण करना कठिन नहीं है। हमारे युग के लोगों में विश्वास ग्रहण करने की अभिरुचि बहुत कम है, परन्तु ज्योंही उन्हें कोई धर्म आकर्षित कर लेता है, तो एकाएक उनकी अन्तर्हित भावना अचेतन रूप से उन्हें कैथोलिक धर्म की ओर प्रवृत्त करती है। रोमन चर्च के अनेक सिद्धान्त और व्यवहार उन्हें आश्चर्य में डाल देते हैं, परन्तु उसके अनुशासन के प्रति उनके भीतर ही-भीतर एक प्रकार का मोह उत्पन्न हो जाता है और वे उसकी महान एकता के प्रति आकर्षित हुए बिना नहीं रहते। यदि कैथोलिक धर्म उन राजनीतिक शत्रुओं से, जो उसी के द्वारा उत्पन्न हुए हैं, हमेशा के लिए अलग हो जायँ, तो मुझे विश्वास है कि युग की वही भावना, जो उसका इतना विरोध करती रही है, शीघ्र ही उसके इतने पक्ष में हो जायगी कि वह उसकी महान और एकाएक हुई उन्नति को स्वीकार कर लेगी।

मानव बुद्धि की एक अत्यन्त सामान्य कमजोरी यह है कि वह प्रतिकूल सिद्धान्तों को मिलाने का प्रयत्न करती है और तर्क की कीमत पर शान्ति का सौदा करती है। इसलिए ऐसे मनुष्य सदा हुए हैं और सदा होते रहेंगे, जो अपने धार्मिक विश्वास के कुछ अंश सत्ता के सिद्धान्तों के समक्ष समर्पित करने के बाद, अपने धर्म के अन्य कई भागों को उससे मुक्त करने तथा अपने मस्तिष्कों को स्वाधीनता और दासता के बीच निरुद्देश्य इधर-उधर भटकते रखने का प्रयास करेंगे; किन्तु मेरा यह विश्वास है कि ऐसे विचारकों की संख्या अन्य युगों की अपेक्षा लोकतान्त्रिक युग में कम होगी और हमारी भावी पीढ़ी की अधिकाधिक प्रवृत्ति केवल दो भागों में विभाजित होने की रहेगी; कुछ लोग तो ईसाई धर्म का सर्वथा त्याग कर देंगे और कुछ लोग रोमन कैथोलिक धर्म को अंगीकार कर लेंगे।

१८. अनिश्चित पूर्णता

समानता मानव मस्तिष्क को अनेक ऐसे विचार प्रदान करती है, जो अन्य किसी स्रोत से उत्पन्न नहीं हो सकते थे तथा वह पूर्व के प्रायः समस्त विचारों का परिशोधन करती है। उदाहरणार्थ, मैं मानव परिपूर्णतावाद के सिद्धान्त को लेता हूँ, क्योंकि यह उन प्रमुख धारणाओं में से है, जिनकी कल्पना बुद्धि कर

सकती है, क्योंकि वह स्वयं एक महान दार्शनिक सिद्धान्त है, जिसको मानवीय कार्यों के संचालन के परिणामों में सर्वत्र ढूंढा जा सकता है। यद्यपि मनुष्य अनेक बातों में पशुओं से मिलता है, तथापि एक विशिष्ट लक्षण उसका यह है कि वह अपने में सुधार कर सकता है, जबकि पशु सुधार के योग्य नहीं हैं। मनुष्यों ने इस भेद को प्रारम्भ से ही पहचान लिया था। इसीलिए परिपूर्णता का विचार संसार की तरह बहुत पुराना है। यद्यपि समानता ने इस सिद्धान्त को जन्म नहीं दिया, तथापि उसने इस सिद्धांत को नया स्वभाव प्रदान किया है।

जब किसी समाज के नागरिकों का वर्गीकरण पद, व्यवसाय और जन्म के आधार पर किया जाता है और जब सभी मनुष्य जीविकोपार्जन के उस मार्ग को अपनाने के लिए विवश होते हैं, जिसे संयोग ने उनके सामने प्रस्तुत कर रखा है, तब प्रत्येक व्यक्ति यह महसूस करता है कि उसे मानव-शक्ति की उच्चतम सीमाओं को अपने निकट ढूंढना चाहिए और वह यह भी महसूस करता है कि कोई भी व्यक्ति अपने भाग्य के अनिवार्य विधान को किसी भी दशा में बदल नहीं सकता। निश्चय ही कुलीन समाज मनुष्य की आत्मसुधार की क्षमता को पूर्णतः अस्वीकार नहीं करते, परन्तु उसे अनिश्चित मानने को तैयार नहीं होते। वे सुधार का अनुमान कर सकते हैं, परन्तु परिवर्तन का नहीं। वे कल्पना करते हैं कि समाज की भावी स्थिति श्रेष्ठ हो सकती है, परन्तु तत्वतः भिन्न नहीं हो सकती और जबकि वे यह स्वीकार करते हैं कि मानवता ने प्रगति की है और भविष्य में भी कुछ और प्रगति कर सकती है, तब वे पहले से ही उसके लिए कतिपय दुर्गम्य सीमाएँ निर्धारित कर देते हैं।

इस प्रकार वे ऐसा नहीं मानते कि उन्होंने सर्वोच्च कल्याण अथवा परम सत्य को प्राप्त कर लिया है। (क्या कोई भी समाज या कोई भी व्यक्ति कभी इस प्रकार की कल्पना करने का साहस कर सकता है!) परन्तु वे इस विश्वास से चिपटे रहते हैं कि वे महानता और ज्ञान की प्रायः उस सीमा के निकट पहुंच गये हैं, जिसे हमारी अपूर्ण प्रकृति स्वीकार करती है और चूंकि उनके सम्बन्ध में कोई हलचल उन्हें दिखायी नहीं पड़ती, इसलिए वे सहज ही यह कल्पना कर लेते हैं कि प्रत्येक वस्तु अपने सुनिश्चित स्थान पर स्थिर है। ऐसे समय विधायक शाश्वत नियमों की रचना करने का प्रयत्न करता है, सम्राट और राष्ट्र अनश्वर स्मारकों का निर्माण करते हैं तथा वर्तमान पीढ़ी भावी पीढ़ियों को अपने भाग्यों का नियमन करने की चिन्ता से मुक्त रखने का भार अपने हाथ में लेती है।

जिस अनुपात में, जातियाँ विनष्ट होती हैं और समाज के वर्ग एक दूसरे के निकटतम आते हैं, जिस अनुपात में आचार, रीतियाँ और कानून मनुष्यों के कोलाहलपूर्ण समागम से बदलते हैं, नये तत्वों का जन्म होता है, नये सत्यों को प्रकाश में लाया जाता है, जिस अनुपात में प्राचीन धारणाओं का लोप हो जाता है और नयी धारणाएँ उनका स्थान ग्रहण करती हैं, उसी अनुपात में मानव-मन के सामने आदर्श मूर्ति प्रकट होती है; परन्तु वह सदा अस्थिर रहती है। तब प्रत्येक मनुष्य के निरीक्षण के अन्तर्गत प्रत्येक क्षण निरन्तर परिवर्तन होते रहते हैं। कुछ की स्थिति और अधिक खराब हो जाती है और वह भली-प्रकार जान जाता है कि कोई भी समाज और कोई भी व्यक्ति, चाहे कितना ही बुद्धिमान क्यों न हो, पूर्ण होने का दावा नहीं कर सकता। अन्यों की स्थिति सुधरती है, जिससे वह यह निष्कर्ष निकालता है कि मनुष्य में सुधार की असीमित क्षमता है। उसकी विफलताएँ उसे सिखाती हैं कि किसी ने भी परम कल्याण का पता नहीं लगाया है, उसकी सफलता उसे उसके अनुसन्धान में निरन्तर रत रहने के लिए प्रेरित करती है। इस प्रकार वह निरन्तर प्रयत्नशील रह कर, निरन्तर गिरता और उठता रह कर, बहुधा निराश होता हुआ, किन्तु कभी हतोत्साह न होता हुआ, उस असीम महानता की ओर अग्रसर रहता है जो एक लम्बे पथ के अन्तिम छोर पर, जिसे मानवता को अभी पार करना बाकी है, अस्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है।

मनुष्य की अनिश्चित परिपूर्णता के दार्शनिक सिद्धान्त से स्वाभाविक रूप से इतने तथ्यों का प्रादुर्भाव होता है अथवा उसका उन लोगों पर भी, जो केवल कार्य करने के उद्देश्य से जीवित रहते हैं, विचारों के लिए नहीं और जो इसके सम्बन्ध में कुछ भी जाने बिना अपने कार्यों को उसके अनुरूप बनाते हुए प्रतीत होते हैं, इतना शक्तिशाली प्रभाव पड़ता है कि उस पर मुश्किल से विश्वास किया जा सकता है।

मैंने एक अमरीकी नौसैनिक से बात की और पूछा कि उसके देश में जहाज़ों का निर्माण ऐसा क्यों होता है कि वे थोड़े समय के लिए ही उपयोगी रहते हैं। उसने बिना हिचकिचाहट के उत्तर दिया कि नौसंचालन की कला प्रतिदिन इतनी उन्नति करती जा रही है कि अच्छे से-अच्छे जहाज़ कुछ वर्ष के बाद प्रायः अनुपयोगी हो जायंगे। किसी विशिष्ट विषय में बिना सिखाये व्यक्ति के इन शब्दों से, जो अचानक ही निकल पड़े, मुझे उस सामान्य और व्यवस्थित विचार का ज्ञान हो जाता है, जिस पर एक महान जाति का समस्त ध्यान केंद्रित रहता है।

कुलीनतान्त्रिक राष्ट्रों में स्वाभाविक रूप से मानव परिपूर्णतावाद के विस्तार को सकुचित करने की और लोकतान्त्रिक राष्ट्रों में तर्क की सीमा से परे उसका विस्तार करने की प्रवृत्ति होती है।

९. प्रजातांत्रिक जनता में विज्ञान, साहित्य अथवा कला के प्रति अभिरुचि

इस बात को स्वीकार करना पड़ेगा कि आज के सभ्य राष्ट्रों में ऐसा कोई नहीं है, जिसने संयुक्त-राज्य अमरीका की तुलना में उच्चतर विज्ञान की दिशा में कम प्रगति की हो या वहाँ महान कलाकारों, लब्धप्रतिष्ठ कवियों अथवा श्रेष्ठ लेखकों की कमी हो। इस तथ्य से प्रभावित होकर अनेक यूरोपियनों ने उस समानता का स्वाभाविक और अनिवार्य परिणाम समझ लिया है और उन्होंने यह सोचा कि यदि कभी समस्त विश्व में प्रजातान्त्रिक समाज-व्यवस्था और प्रजातान्त्रिक संस्थाएँ प्रचलित हो गयीं, तो शनैः-शनैः मानव-बुद्धि का प्रकाश-स्तम्भ धुँधला हो जायगा और मनुष्य फिर से अन्धकार के गर्त में गिर जायेंगे।

मैं समझता हूँ कि इस प्रकार से तर्क करना कई विचारों को एक में मिला देने के तुल्य है, जिनको विभाजित करना और पृथक्-पृथक् रूप से जिनका परीक्षण करना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यह प्रजातान्त्रिक वस्तु को मात्र अमरीकी वस्तु के साथ, बिना जाने-बूझे, मिश्रित करने के तुल्य है। प्रारम्भिक प्रवासी जिस धर्म को मानते थे और जिसे उन्होंने अपने वंशजों को वसीयत में सौंपा था, उसका स्वरूप सरल था। उसके सिद्धान्त संयमी और प्रायः कठोर थे और वह बाह्य प्रतीकों एवं समारोह पूर्ण आडम्बर के विरुद्ध था। यह धर्म स्वाभाविक रूप से ललितकलाओं के लिए अनुपयुक्त है और केवल अनिच्छापूर्वक ही साहित्य के आनन्दों में समाविष्ट हो सका है। अमरीकी बहुत पुराने हैं, अत्यन्त ज्ञानी हैं, जिन्हें एक नया और विस्तृत देश मिल गया है, जहाँ वे इच्छानुसार अपना विस्तार कर सकते हैं तथा जिसे वे बिना किसी कठिनाई के उर्वर बना सकते हैं। इस प्रकार की स्थिति विश्व के इतिहास में अतुल्य है। अमरीका में प्रत्येक व्यक्ति को अपनी समृद्धि को बनाने और बढ़ाने के लिए अनेक सुविधाएँ मिलती हैं, जो अन्यत्र कहीं नहीं मिलतीं। लाभ उठाने की प्रवृत्ति सदा बढ़ती जाती है और कल्पना तथा बौद्धिक श्रम के आनन्द से

विमुख मानव मस्तिष्क निरन्तर धन प्राप्त करने की भावना में बहता जाता है। संयुक्त-राज्य अमरीका में न केवल उत्पादक वर्ग या व्यावसायिक श्रेणियाँ ही देखने को मिलती हैं, जैसा कि वे अन्य सब देशों को मिलती हैं, प्रत्युत वहाँ एक ऐसी स्थिति देखने को मिलती है, जो और कहीं नहीं मिलती है। वह यह कि समस्त समाज उत्पादक उद्योग और व्यवसाय करने में एक ही साथ व्यस्त रहता है; परन्तु मैं यह मानता हूँ कि यदि अमरीकी अपने पूर्वजों द्वारा अर्जित स्वतं-त्रता और ज्ञान तथा अपने स्वय के भावों के साथ इस ससार में एकाकी रहते, तो वे कदापि यह ज्ञात ज्ञात करने में पीछे नही रहते कि वैज्ञानिक सिद्धान्तों का ज्ञान प्राप्त किये बिना विज्ञानों का व्यावहारिक प्रयोग करने से अधिक दिनों तक प्रगति नहीं की जा सकती तथा समस्त कलाएँ एक दूसरे द्वारा पूर्ण होती हैं और वे अपनी आकाक्षाओं के परम उद्देश्य की खोज में चाहे जितने डूबे होते, इस बात को वे शीघ्र ही स्वीकार कर लेते कि कभी कभी अपने को उससे विलग करने की भी आवश्यकता है, जिससे अन्त में उसे अधिक अच्छी तरह प्राप्त किया जा सके।

इसके अतिरिक्त बौद्धिक आनन्द प्राप्त करने की लालसा सभ्य पुरुष के हृदय की इतनी स्वाभाविक वृत्ति है कि उन उदार राष्ट्रों में भी, जिनमें इन खोजों में अपने आप को खो देने की न्यूनतम प्रवृत्ति होती है, कुछ ऐसे लोग अवश्य मिलेंगे, जो ऐसी खोजों में व्यस्त रहते हैं। इस बौद्धिक लालसा का एक बार अनुभव होने के बाद उसे बहुत शीघ्र पूरा किया जा सकता था, परन्तु जिस समय अमरीकी स्वाभाविक रूप से, केवल उपयोगी कलाओं और जीवन को सुखमय बनाने के साधनों में विज्ञान का विशेष रूप से प्रयोग करने के लिए प्रेरित हुए, उस समय शिक्षित और साहित्यिक यूरोप सत्य के सामान्य तत्वों की खोज में और साथ ही साथ मनुष्य की आकाक्षाओं और आनन्द-वृद्धि के साधनों के सुधार में व्यस्त था।

संयुक्त-राज्य अमरीका के निवासियों ने पुरानी दुनिया के सभ्य राष्ट्रों में सबसे अधिक एक राष्ट्र को विशेष प्रतिष्ठा प्रदान की, जिसके साथ वे सामान्य मूल तथा समान आदतों के कारण घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित थे। इस समाज में उन्हें प्रतिदिन वैज्ञानिक, कुशल कलाकार, प्रसिद्ध साहित्यिक मिले, जिनके कारण बौद्धिक कोषों के सग्रह के लिए श्रम किये बिना ही वे उनका आनन्दोपभोग करने में समर्थ हो गये। यद्यपि यूरोप और अमरीका के मध्य व्यवधान के रूप में एक विशाल सागर लहरा रहा है, परन्तु मैं ऐसा स्वीकार नहीं कर सकता कि

इससे अमरीका यूरोप से अलग हो गया है। मेरे विचार से संयुक्त-राज्य अमरीका के लोग उन्हीं अंग्रेजों में से हैं, जिन्हें नयी दुनिया के जंगलों की खोज करने का कार्य सौंपा गया है, जबकि राष्ट्र के शेष लोग अधिक सुख-सुविधाओं का आनन्द लेते हुए तथा जीवन की कठोरताओं से कम प्रपीड़ित होकर, अपनी शक्तियों को विचार की ओर प्रवृत्त कर सके तथा मस्तिष्क के साम्राज्य का समस्त दिशाओं में विस्तार कर सकें।

इसलिए अमरीकियों की स्थिति सर्वथा अपवाद के रूप में है और ऐसा विश्वास किया जा सकता है कि कोई भी लोकतांत्रिक समाज इस प्रकार की विशिष्ट स्थिति में कभी नहीं होगा। उनका 'प्यूरीटेनिकल' (शुद्धतावादी) मूल-उद्भव—उनकी सब से अलग व्यावसायिक आदतें, यहाँ तक कि वह देश भी, जहाँ वे निवास करते हैं और जो उनके मस्तिष्कों को विज्ञान, साहित्य और कलाओं की खोज से विमुख करता हुआ प्रतीत होता है, यूरोप के साथ घनिष्ठता, जो उन्हें पुनः बर्बरता की ओर न ले जाकर भी उन्हें इन अनुसन्धानों की उपेक्षा करने की अनुमति प्रदान करती है; अन्य हजारों ऐसे विशेष कारण, जिनमें से केवल अत्यन्त महत्वपूर्ण कारणों का ही मैं उल्लेख कर सका हूँ—ये सब ऐसी बातें हैं, जिन्होंने संयुक्त रूप से अमरीकी मस्तिष्क को शुद्ध व्यावहारिक उद्देश्यों की ओर उन्मुख किया है। एक अमरीकी की भावनाएँ, उसकी आवश्यकताएँ, उसकी शिक्षा और उसके आस-पास की प्रत्येक वस्तु एक साथ मिलकर, संयुक्त-राज्य अमरीका के निवासी को सांसारिकता की ओर खींचती हुई प्रतीत होती हैं : अकेला उसका धर्म उसे समय समय पर स्वर्ग की ओर क्षण भर के लिए तथा उदासीनतापूर्वक दृष्टिपात करने के लिए प्रेरित करता है। इसलिए हम अमरीकी लोगों को उदाहरण मान कर समस्त लोकतांत्रिक राष्ट्रों के सम्बन्ध में एक सा दृष्टिकोण नहीं बना सकते, और इसलिए हमें उनके खुद के लक्षणों के साथ सूक्ष्म रूप से उनका पर्यवेक्षण करने का प्रयत्न करना चाहिए।

ऐसे समाज की कल्पना करना सम्भव है, जो जाति या पदों की विभिन्न श्रेणियों में उप-विभाजित न हो, जहाँ कानून किन्हीं विशेषाधिकारों को मान्यता न देता हुआ, पैतृक सम्पत्ति का विभाजन समान भागों में कर देता हो, परन्तु ऐसी स्थिति में वह समाज बिना ज्ञान और स्वतन्त्रता के होना चाहिए। यह कोई खोखला अनुमान मात्र नहीं है। निरंकुश व्यक्ति यह समझ सकता है कि उसका हित प्रजा के लिए समान स्थिति उत्पन्न करने और उन्हें अज्ञान के अंधकार में छोड़ देने में सुरक्षित है ताकि वह बड़ी सरलता से उन्हें दास बनाये रख सके।

इस प्रकार का लोकतांत्रिक समाज न केवल विज्ञान, साहित्य या कला के प्रति उत्कण्ठा या अभिरुचि प्रदर्शित नहीं कर सकेगा, प्रत्युत सम्भवतः वह कभी उनकी प्राप्ति नहीं कर सकेगा। स्वयं उत्तराधिकार क़ानून ही प्रत्येक पीढ़ी में विशाल सम्पत्ति का नाश कर देगा और उन लोगों को हमेशा नयी सम्पत्ति अर्जित करनी पड़ेगी। गरीब व्यक्ति बिना ज्ञान या स्वतन्त्रता के धन प्राप्त करने के ऐसे विचार की कल्पना नहीं कर पायेगा और अमीर आदमी सुरक्षा की भावना के बिना गरीब होने को विवश हो जायगा। समाज के इन दोनों सदस्यों के बीच परिपूर्ण और अजेय समानता शीघ्र ही स्थापित हो जायगी। तब किसी को बौद्धिक आनन्द प्राप्त करने या उसकी खोज करने का न तो अवकाश होगा और न अभिरुचि, किन्तु समस्त मनुष्य सामान्य अज्ञान और समान दासता की स्थिति में शक्तिहीन हो जायगे।

जब मैं इस प्रकार के लोकतांत्रिक समाज की कल्पना करता हूँ, तब मुझे लगता है जैसे मैं स्वयं उनमें से किसी एक निम्न कोटि के संकुचित और अन्धकारमय स्थान में बैठा हूँ, जहाँ बाहर से आनेवाली प्रकाश की किरण शीघ्र ही फीकी पड़ कर विलुप्त हो जाती है।

उस समय एकाएक मुझे किसी बोझ का अनुभव होता है और मैं अन्धे की तरह चारों ओर व्याप्त अन्धकार में एक ऐसे द्वार को ढूँढ़ने के लिए भटकने लगता हूँ जो मुझे पुनः हवा और खुला प्रकाश उपलब्ध कर देगा, परन्तु ये सब उन व्यक्तियों के सम्बन्ध में लागू नहीं होती जो पहले से ही ज्ञान प्राप्त कर चुके होते हैं और जो उन विलक्षण एवं वंशानुगत अधिकारों को, जो कतिपय व्यक्तियों अथवा कतिपय वर्गों के हाथों में सम्पत्ति को शाश्वत बना देते हैं, समाप्त करने के बाद अपनी स्वतंत्रता को बनाये रखते हैं।

लोकतांत्रिक समाज-व्यवस्था में रहनेवाले व्यक्ति जब ज्ञानवान होते हैं, तब वे शीघ्र ही यह मालूम कर लेते हैं कि वे किसी भी सीमा से, जो उन्हें वर्तमान प्रारब्ध से सन्तोष करने के लिए विवश करती है, परिसीमित या आबद्ध नहीं हैं। इसलिए वे सब उसकी वृद्धि की कल्पना करते हैं। यदि वे स्वतंत्र हैं तो सब इसके लिए प्रयत्न करते हैं, परन्तु सभी लोगों को एक ही प्रकार से सफलता प्राप्त नहीं होती। यह सही है कि अब विधान उन्हें विशेषाधिकार प्रदान नहीं करता, परन्तु प्रकृति उन्हें प्रदान करती है। चूंकि प्राकृतिक विषमता अत्यन्त व्यापक है, इस लिए सम्पत्ति भी असमान हो जाती है और इस स्थिति के उत्पन्न होने ही प्रत्येक व्यक्ति अमीर बनने के लिए अपनी सारी शक्ति लगा देता है।

उत्तराधिकार कानून धनी परिवारों की स्थापना में बाधक है, परन्तु वह धनी व्यक्तियों के अस्तित्व को नहीं रोकता। वह निरन्तर समाज के सदस्यों को पुनः उस सामान्य स्तर पर लाता रहता है, जहाँ से वे उतने ही निरन्तर रूप से हटते रहते हैं और जिस अनुपात में उनके ज्ञान का विस्तार होता है एवं उनकी स्वाधीनता में वृद्धि होती है, उसी अनुपात में सम्पत्ति की असमानता में वृद्धि होती है।

एक वर्ग ने, जिसका उदय हमारे समय में हुआ और जो अपनी प्रतिभा और अपव्यय के लिए प्रसिद्ध था, सारी सम्पत्ति को एक ऐसी केन्द्रीय शक्ति के हाथों में केंद्रित कर देने का विचार किया, जिसका कार्य बाद में उस सम्पत्ति को सभी व्यक्तियों में योग्यतानुसार वितरित कर देना होना चाहिए। यह उस परिपूर्ण और शाश्वत समानता से हटने की एक पद्धति होती, जो लोकतान्त्रिक समाज के लिए खतरा प्रतीत होती है; परन्तु सरल और कम खतरनाक उपाय यह होगा कि किसी को भी विशेषाधिकार न दिया जाय और सबको कृषि-उत्पादन के लिए बराबर भूमि और समान अवसर दे दिया जाय और प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं अपनी स्थिति का निर्माण करने के लिए मुक्त कर दिया जाय। इसका परिणाम यह होगा कि स्वाभाविक असमानता का शीघ्र ही लोप हो जायगा और साथ-ही-साथ सम्पत्ति अत्यन्त योग्य व्यक्तियों के हाथों में आ जायगी।

तब स्वतंत्र और लोकतान्त्रिक समाजों में समृद्धि और योग्यता का सुख भोगने वाले व्यक्तियों का एक समूह सदा बना रहेगा। धनी लोगों का पारस्परिक सम्बन्ध समाज के पूर्ववर्ती कुलीन वर्ग के सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्ध की भाँति घनिष्ठ नहीं होगा, उनकी प्रवृत्तियाँ भिन्न होंगी और वे मुश्किल से उतने सुरक्षित अथवा पूर्ण अवकाश का आनन्द उठा सकेंगे; किन्तु उनकी संख्या समाज के उस वर्ग की संख्या से बहुत अधिक होगी।

ये व्यक्ति व्यावहारिक जीवन की चिन्ताओं से ही पूर्णतः आबद्ध नहीं होंगे, वे बौद्धिक आनन्दों का अनुसन्धान करने में समर्थ होंगे; यद्यपि वे भिन्न-भिन्न मात्राओं में ही ऐसा कर सकेंगे। वे उन आनन्दों में सम्मिलित होंगे, क्योंकि एक ओर यदि यह सत्य है कि मानव-मस्तिष्क सीमित, भौतिक और उपयोगी वस्तुओं की ओर झुकता है, तो दूसरी ओर यह भी सत्य है कि वह असीमित, आध्यात्मिक और सुन्दर वस्तुओं की ओर भी झुकता है। भौतिक आवश्यकताएँ उसे पृथ्वी के साथ आबद्ध करती हैं, किन्तु ज्योंही यह बन्धन शिथिल हो जायगा, वह अपने से ऊपर उठ जायगा।

न केवल ऐसे लोगों की संख्या बढ़ जायगी जो मस्तिष्क की सृष्टियों में अभिरुचि ले सकते हैं, प्रत्युत उन लोगों में भी धीरे-धीरे बौद्धिक आनन्द का स्वाद उत्पन्न हो जायगा, जिनके पास कुलीन समाजों के इन आनन्दों में सम्मिलित होने का न तो समय होता है और न योग्यता। जब पैतृक सम्पत्ति, पद का विशेषाधिकार और जन्म का परमाधिकार समाप्त हो जाता है और जब प्रत्येक व्यक्ति केवल खुद के भीतर से अपनी शक्ति ग्रहण करने लगता है तब यह स्पष्ट हो जाता है कि मनुष्यों की सम्पत्ति की असमानता का मुख्य कारण बुद्धि है। जो कोई भी वस्तु मस्तिष्क को शक्तिशाली, विस्तृत एवं सुशोभनीय बनाती है, उसका मूल्य तत्काल ऊँचा उठ जाता है। ज्ञान की उपयोगिता जनसमुदाय की आँखों के सामने भी अत्यधिक स्पष्ट हो जाती है, जिन लोगों में उसके प्रति कोई दिलचस्पी नहीं होती, वे उसके परिणामों से प्रभावित होते हैं और उसे प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करते हैं।

स्वतंत्र और सभ्य लोकतान्त्रिक युग में न तो कोई वस्तु मनुष्यों को एक दूसरे से पृथक् कर सकती है, और न उनको पूर्व स्थिति में रखे रह सकती है। उनका उत्थान या पतन बड़ी शीघ्रता से होता है। सभी वर्ग निरन्तर अपनी महान घनिष्ठता से एक दूसरे से सम्बद्ध रहते हैं। वे प्रतिदिन परस्पर मिलते हैं और बातचीत करते हैं तथा एक दूसरे का अनुकरण करते हैं। इससे समाज में अनेक विचार, धारणाएँ और आकांक्षाएँ उत्पन्न होती हैं, जो सम्भवतः कभी भी नहीं होती, यदि श्रेणीगत भेदभाव निश्चित हो जाता और समाज गतिशील न होकर स्थिर रहता।

इस प्रकार के राष्ट्रों में सेवक कभी अपने मालिक के आनन्द और परिश्रम से अपने को पूर्ण रूप से अनभिज्ञ नहीं समझता और न गरीब आदमी अमीर से अपने को इसी भाँति भिन्न समझता है। गाँव की जनता नगर की जनता से और प्रान्तीय जनता केन्द्रीय जनता से घुलमिल जाती है। कोई भी व्यक्ति जीवन के केवल भौतिक आनन्द में लीन रहने को बड़ी सरलता से प्रेरित नहीं होता और छोटे-से-छोटा कारीगर भी कभी कभी बुद्धि के उच्च क्षेत्रों की ओर उत्सुकतापूर्ण और उड़ती हुई दृष्टि डालता है। लोग उन्हीं विचारों के साथ या उसी तरह से अध्ययन नहीं करते, जैसा कि वे कुलीन समाजों में करते हैं, परन्तु पाठकों का क्षेत्र निरन्तर विस्तृत होता ही रहता है, जब तक कि सभी लोग उसमें सम्मिलित न हो जाय।

ज्योंही जन-समुदाय बौद्धिक श्रमों में रुचि लेना प्रारम्भ करता है, त्योंही उसे

यह ज्ञात होता है कि बुद्धि के इन धर्मों में से कुछ में सबसे आगे बढ़ जाना प्रसिद्धि, शक्ति एवं सम्पत्ति पाने का एक प्रबल साधन है। समानता जिस उत्कट महत्त्वाकांक्षा को जन्म देती है, वह तत्काल इस दिशा को ग्रहण कर लेती है, जिस प्रकार वह अन्य सभी दिशाओं को ग्रहण करती है। विज्ञान, साहित्य और कलाओं में अभिरुचि लेने वाले लोगों की संख्या में अपार वृद्धि हो जाती है। बौद्धिक जगत आश्चर्यजनक कार्य करने लगता है और प्रत्येक व्यक्ति वहाँ अपने लिए मार्ग निर्दिष्ट करने का और जनता के ध्यान को अपनी ओर खींचने का प्रयत्न करता है। संयुक्त-राज्य अमरीका के समाज में कोई विलक्षण बात होने पर उसे राजनीतिक महत्ता प्रदान की जाती है। जो कुछ होता है, वह प्रायः अपूर्ण है, परन्तु उसके लिए असंख्य प्रयत्न होते हैं और यद्यपि व्यक्तिगत प्रयत्नों के फल सामान्यतः बहुत कम होते हैं, परन्तु उनकी कुल संख्या हमेशा बड़ी रहती है। अतः इस प्रकार की धारणा बनाना ठीक नहीं है कि लोकतान्त्रिक युग में रहनेवाले लोग स्वाभाविक रूप से विज्ञान, साहित्य और कला से विमुख होते हैं, परन्तु सच्ची बात तो यह है कि वे उन्हें अपनी रुचि के अनुकूल ढालते हैं और अपनी विशिष्ट योग्यताओं और दुर्बलताओं के अनुसार इस कार्य को पूर्ण करते हैं।

२०. व्यावहारिक विज्ञान की ओर झुकाव

यदि समाज की प्रजातान्त्रिक स्थिति और प्रजातान्त्रिक संस्थाएँ मानव-मस्तिष्क की प्रगति में बाधक नहीं होती हैं तो निश्चय ही वे दूसरे की अपेक्षा उसे एक दिशा की ओर निर्देशित करती हैं। अतः उनके प्रयत्न सीमित रहते हुए भी अब भी महान हैं और इस पर भी उनकी संख्या अत्यधिक है। यदि मैं उनका चिन्तन करने के लिए क्षण भर को ठहरता हूँ, तो मुझे क्षमा किया जाय।

अमरीकियों की दार्शनिक पद्धति पर विचार व्यक्त करते समय हमें अनेक बातों की चर्चा करने का अवसर मिला था, जिनको यहाँ पुनः दोहराना आवश्यक है। समानता मनुष्य में प्रत्येक वस्तु को स्वयं अपने दृष्टिकोण से देखने की प्रवृत्ति उत्पन्न करती है। परिणामतः समस्त वस्तुओं को पार्थिव और यथार्थ रूप में देखने का और परम्परा तथा स्वरूपों का तिरस्कार करने का उसका स्वभाव हो जाता है। इन्हीं सामान्य प्रवृत्तियों पर मुख्यतः प्रकाश डालना इस अध्याय का विशिष्ट विषय है।

प्रजातांत्रिक राष्ट्र में जो लोग विज्ञान का विकास करते हैं, उन्हें हमेशा भय बना रहता है कि वे काल्पनिक विचार से अपना मार्ग भूल जायेंगे। वे रीतियों में विश्वास नहीं करते। वे तथ्यों को सूक्ष्मता से पकड़ते हैं और उनका अध्ययन अपनी बुद्धि से करते हैं। चूँकि वे किसी साथी के नाम मात्र से उसके मत को आसानी से स्वीकार नहीं करते, इसलिए किसी भी मनुष्य के अधिकार पर अवलम्बित रहने की उनकी प्रवृत्ति कभी नहीं होती; परन्तु इसके विपरीत वे अपने पड़ोसियों के सिद्धान्त के कमजोर पक्षों को मालूम करने के लिए जी-तोड़ श्रम करते हैं। उनके लिए वैज्ञानिक दृष्टान्त बहुत कम महत्त्व के होते हैं। वे दीर्घकाल तक विभिन्न मतों की सूक्ष्मताओं पर विश्वास नहीं करते और न कोरी कल्पनाओं के लिए बड़ी बातों को स्वीकार करने के लिए तत्पर रहते हैं। वे जिस विषय में व्यस्त रहते हैं, उसके मुख्य अंगों की यथाशक्य छानबीन करते हैं और साधारण भाषा में उसकी व्याख्या करना पसन्द करते हैं। इसलिए वैज्ञानिक अनुसधानों का मार्ग स्वतंत्र और सुरक्षित रहता है, परन्तु वह कम उत्कृष्ट होता है।

मस्तिष्क, जैसा कि मुझे दिखलायी देता है, विज्ञान को तीन अंगों में विभाजित कर सकता है। प्रथम अंग वह है जिसमें सैद्धान्तिक आदर्श और अधिक काल्पनिक धारणाएँ निहित रहती हैं, जिनका व्यवहार या तो अज्ञात है अथवा दूरवर्ती है। द्वितीय अंग उन सामान्य सत्यों से बना है जो आज भी शुद्ध सिद्धान्त से सम्बन्धित हैं, परन्तु फिर भी वह सीधे और संक्षिप्त मार्ग द्वारा व्यावहारिक परिणामों की ओर प्रवृत्त करता है। व्यवहार की रीतियाँ और निष्पादन के साधन तीसरे अंग का निर्माण करते हैं। विज्ञान के इन तीनों विभिन्न मार्गों में प्रत्येक का अलग से विकास किया जा सकता है; यद्यपि तर्क और अनुभव सिद्ध करते हैं कि उनमें से यदि एक भी दोनों से पूर्णतः विलग हो जाता है, तो उनमें से कोई भी दीर्घकाल तक समृद्धि नहीं कर सकता।

अमरीका में विज्ञान के शुद्ध व्यावहारिक भाग को सराहनीय ढंग से समझा जाता है और सैद्धान्तिक भाग की ओर सावधानी से ध्यान दिया जाता है, जो व्यवहार के लिए तत्काल आवश्यक है। इस मुख्य विषय में अमरीकी सदैव मस्तिष्क की स्पष्ट, स्वतंत्र, मौलिक और आविष्कारक शक्ति प्रदर्शित करते हैं; परन्तु संयुक्त-राज्य अमरीका में शायद ही कोई मानवीय ज्ञान के अनिवार्यतः सैद्धान्तिक और सूक्ष्म भाग की ओर अपने को अनुरक्त रखता है। इस विषय में अमरीकियों में एक उग्र प्रवृत्ति पायी जाती है। मेरे विचार से उनकी

यह प्रवृत्ति सभी प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में, यद्यपि कुछ कम अंश में, देखी जा सकती है।

उत्कृष्ट विज्ञानों के विकास के लिए या विज्ञान के अधिक उन्नत विभागों के लिए चिंतन से बढ़कर अन्य कोई वस्तु इतनी आवश्यक नहीं है और चिंतन के लिए प्रजातांत्रिक समाज के ढाँचे से बढ़कर अन्य कोई चीज कम अनुपयुक्त नहीं है। प्रजातांत्रिक समाज में कुलीन समाज की भाँति हमें दो वर्ग देखने को नहीं मिलते; एक वह वर्ग, जो समृद्धिशाली होने से आराम करता है और दूसरा वह, जो किसी प्रकार की हलचल करने का साहस नहीं करता; क्योंकि वह अपनी परिस्थिति में सुधार न होता देखकर निराश रहता है। प्रजातंत्र में सभी व्यक्ति गतिशील रहते हैं; कुछ शक्ति की खोज में, अन्य लाभ प्राप्ति की आशा में। इस विश्वव्यापक हलचल में—परस्पर हितों के इस अविराम संघर्ष तथा धन के लिए मानव के निरन्तर प्रयास के बीच ऐसी शांति कहाँ मिलती है, जो बुद्धि के गहरे ससर्ग के लिए अनिवार्य है? जब मस्तिष्क के चारों ओर सारी वस्तुएँ चक्कर काटती हैं और मनुष्य स्वयं उन प्रचंड लहरों द्वारा, जो सारी वस्तुओं को अपने प्रवाह में समेट लेती हैं, विवश होकर बह जाता है, तब वह किस प्रकार एक बिन्दु पर स्थिर रह सकता है?

परन्तु उस स्थायी आन्दोलन को, जो प्रशात और व्यवस्थित प्रजातंत्र के भीतर सक्रिय रहता है, उन उपद्रवकारी और क्रान्तिकारी आन्दोलनों से, जो प्रायः प्रजातांत्रिक समाज के जन्म और विकास में सहायता पहुँचाते हैं, भिन्न समझना चाहिए। जब उच्च सभ्य समाज में हिंसात्मक क्रान्ति होती है, तो वह उनकी भावनाओं और विचारों को आकस्मिक प्रेरणा देने में असफल नहीं रहती। यह बात विशेषतः प्रजातांत्रिक क्रान्तियों के लिए अधिक सत्य है, जो समाज का निर्माण करने वाले समस्त वर्गों को तुरन्त उभाड़ देती हैं और साथ-ही-साथ समाज के प्रत्येक सदस्य के मन में अपरिमित महत्वाकांक्षा उत्पन्न करती हैं। फ्रांसवासियों ने ठीक उसी समय, जब वे अपने पूर्व के सामंती समाज के अवशेषों के विनाश का कार्य पूर्ण कर रहे थे, परिपूर्ण विज्ञानों के क्षेत्र में आश्चर्यजनक उन्नति की थी। फिर भी ऐसा नहीं कहा जा सकता कि इस आकस्मिक परिपक्वता का कारण प्रजातंत्र था, बल्कि वह अद्वितीय क्रान्ति थी, जिसने उसके विकास में सहायता पहुँचायी। उस काल में जो कुछ हुआ, वह एक विशिष्ट घटना थी और उसे सामान्य सिद्धांत का प्रमाण मानना बुद्धिमानी न होगी।

अन्य राष्ट्रों की अपेक्षा प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में महान क्रान्तियाँ अधिक सामान्य

नहीं होती हैं। मैं तो यहाँ तक विश्वास करता हूँ कि वे वहाँ बहुत ही कम होती हैं, परन्तु प्रजातान्त्रिक देशों के लोगों में छोटी सी वेदनापूर्ण गति, एक प्रकार की पारस्परिक उछल कूद व्याप्त रहती है, जो मस्तिष्क को, बिना उत्तेजित किये या उभाड़े परेशान और क्षुब्ध करती है।

प्रजातान्त्रिक समाजों में रहने वाले लोग न केवल कदाचित् ही चिंतन करते हैं, बल्कि वे स्वभावतः इसके प्रति बहुत ही कम श्रद्धा रखते हैं। समाज की प्रजातान्त्रिक स्थिति और प्रजातान्त्रिक संस्थाएँ अधिकांश मनुष्यों को निरन्तर क्रियाशील बनाये रखती हैं और मस्तिष्क की प्रवृत्तियाँ, जो सक्रिय जीवन के लिए अनुकूल होती हैं, सर्वदा चिन्तनशील मस्तिष्क के लिए उपयुक्त नहीं रहतीं। *कर्मशील मनुष्य को बहुधा, जो कुछ भी उसे प्राप्त हो सकता है, उसी से संतोष कर लेना पड़ता है; क्योंकि यदि वह परिपूर्णता की प्रत्येक सूक्ष्मता को क्रियान्वित करने का निर्णय करता है, तो वह कभी भी अपने उद्देश्य में सफलता प्राप्त नहीं कर सकता।* उसे उन विचारों पर विश्वास करने के लिए निरन्तर अवसर मिलता है, जिनके मूल में जाकर खोज करने का अवसर उसे नहीं मिला। कारण यह है कि उसे विचार की नितान्त शुद्धता की अपेक्षा उसकी समयानुकूलता से अधिक निरन्तर सहायता मिलती है और कालान्तर में सत्य के आधार पर अपने समस्त सिद्धान्तों का निरूपण करने में समय व्यतीत करने की अपेक्षा कुछ असत्य सिद्धान्तों के प्रयोग में उसे कम जोखिम उठानी पड़ती है। विश्व लम्बे या विद्वत्तापूर्ण प्रदर्शनों से प्रभावित नहीं होता। किन्हीं विशेष घटनाओं पर डाली गयी सरसरी निगाह, जनसमूह के संवेदनशील आवेगों का दैनिक अध्ययन, समय पर घटित होनेवाली दुर्घटनाओं और उनका विवरण तैयार करने की कला का ही विश्व के सभी कार्यों में हाथ रहता है।

इसलिए उस युग में, जहाँ सक्रिय जीवन प्रायः प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवश्यक शर्त है, मनुष्य प्रायः शीघ्रगामी विस्फोटों और बुद्धि की बाह्य धारणाओं को आवश्यकता से अधिक महत्त्व देने लगते हैं। दूसरी ओर ये ही लोग उसके मन्द और गहन श्रम को अत्यन्त ही कम महत्त्व देते हैं। इस प्रकार का जनमत उन मनुष्यों के निर्णय को प्रभावित करता है जो विज्ञानों का विकास करते हैं। उन्हें इस बात का विश्वास दिलाया जाता है कि वे उन खोजों में बिना चिंतन के सफलता पा सकते हैं या उन्हें इस प्रकार की खोजों से, जैसा कि आवश्यक समझा जाता है, रोका जाता है।

विज्ञानों के अध्ययन की अनेक पद्धतियाँ हैं। जनसमूह के मध्य आपको मस्तिष्क

के अनुसंधानों के लिए स्वार्थपूर्ण व्यावसायिक तथा व्यापारिक रुचि देखने को मिलेगी, जिन्हें उस निःस्वार्थ भावना के साथ, जो कुछ लोगों के हृदय में प्रज्वलित हैं, मिश्रित नहीं कर देना चाहिए। ज्ञान के उपयोग की इच्छा एक बात है और ज्ञान प्राप्ति की शुद्ध इच्छा और बात है। मुझे इस बात में सन्देह नहीं है कि कतिपय मस्तिष्कों में और दीर्घ अन्तर्विरागों से, सत्य के प्रति अक्षय प्रेम प्रकट होता है, जो बिना पूर्ण सन्तोष धारण किये आत्मनिर्भर और निरन्तर आनन्दमय होता है। सत्य का यह उत्कट, गौरवपूर्ण और निःस्वार्थ प्रेम मनुष्यों को सत्य के सारभूत तत्वों तक अपने स्वयं का ज्ञान प्राप्त करने के लिए पहुँचा देता है।

यदि पासकल की दृष्टि में कुछ बड़े लाभ के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता या यदि वह केवल ख्याति की लालसा से अनुप्रेरित होता, तो मैं नहीं समझता कि वह अपने मस्तिष्क की समस्त शक्ति केन्द्रित कर सृष्टि-रचयिता के अत्यन्त गुप्त रहस्यों की उत्कृष्ट खोज उस ढग से कर पाता, जैसा कि वह कर सका। जब मैं उसे सही रूप में देखता हूँ, तो मुझे लगता है कि उसने इन खोजों के लिए पूर्णतः समर्पित जीवन की समस्त चिन्ताओं से अपनी आत्मा को मुक्त कर लिया था और देह के ढाचे को जीवन से जोड़नेवाली कड़ियाँ असमय में ही विलग कर दी थीं। तभी वह चालीस वर्ष की उम्र से पहले ही वृद्धता प्राप्त कर चल बसा। मैं स्तब्ध हो कर सोचता हूँ कि कोई भी सामान्य कारण इतने असाधारण प्रयत्नों को उत्पन्न नहीं कर सकता है।

यह बात तो भविष्य ही सिद्ध करेगा कि क्या इतने दुर्लभ और परिणाम-कारक आवेग प्रजातन्त्र में उतनी ही शीघ्रता से और आसानी से उत्पन्न होते और बढ़ते हैं जितने कि कुलीनतान्त्रिक समुदाय में। जहाँ तक मेरा प्रश्न है, मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मैं इस पर इतनी जल्दी विश्वास नहीं करता।

कुलीन समाजों में वह वर्ग, जो मत को मूल स्वरूप प्रदान करता है और समस्त समाज के ऊपर स्थायी और आनुवंशिक रूप से प्रतिष्ठित होकर उसके प्रकार्यों का निर्देशन करता है, स्वाभाविक रूप से स्वयं अपने बारे में और मानव के बारे में उत्कृष्ट विचार धारण कर लेता है। वह बड़ी लगन से उच्च आनन्दों का अन्वेषण करता है और अपनी महत्वाकांक्षा के लिए सुन्दर पदार्थों का निर्माण करता है। कुलीनतंत्र बहुधा अत्यन्त क्रूर और अमानवीय कार्य करते हैं, परन्तु वे कदाचित् ही निम्न कोटि के विचारों का पोषण करते हैं। वे क्षुद्र आनन्द के लिए एक प्रकार से उद्दण्ड तिरस्कार प्रकट करते हैं, उस समय भी, जब कि वे स्वयं उनमें फँसे होते हैं। इससे समाज के सामान्य स्तर को ऊँचा

उठाने में बड़ा प्रभाव पड़ता है। कुलीनतंत्रीय युगों में प्रतिष्ठा, शक्ति और मानव की महानता के सम्बन्ध में महान विचार सामान्य रूप से पाये जाते हैं। ऐसे विचारों का उन व्यक्तियों पर, जो विज्ञानों की खोज में संलग्न रहते हैं, तथा शेष समाज पर भी प्रभाव पड़ता है। वे विचार मस्तिष्क की स्वाभाविक प्रवृत्ति को बड़ी सुगमता से उच्च विचारों की ओर प्रेरित करते हैं और उसे सहज रूप से सत्य के अति उदात्त और प्रायः नैसर्गिक प्रेम को धारण करने के लिए तैयार करते हैं।

परिणामतः ऐसे युग में विज्ञान के प्रवर्तक सिद्धान्त की ओर बढ़ जाते हैं और यहाँ तक कि वे उसके व्यवहार के लिए बहुधा अविचारपूर्ण तिरस्कार प्रकट करने लगते हैं। प्लुटार्च ने कहा है कि "आर्कीमिडिज इतने उच्च विचारों का व्यक्ति था कि युद्ध में काम आने वाले इंजिनों के निर्माण के तरीकों पर निबन्ध लिखने के लिए वह कभी तैयार नहीं हुआ। चूँकि उसके विचार से इंजिनों का निर्माण करने वाला यह विज्ञान और सारे कौशल सामान्यतः व्यवहार में किसी हितकारी उद्देश्य की पूर्ति का दम भरते हैं, परन्तु वस्तुतः अधम, निम्न और भाड़े का टट्टू बनने में मदद करते हैं, इसलिए उसने अपनी प्रतिभा और अपने श्रम-शील समय को केवल उन्हीं विषयों का प्रतिपादन करने में व्यय किया, जिनकी सुन्दरता और कोमलता के साथ आवश्यकता का कोई मिश्रण नहीं था। यह है विज्ञान का कुलीनतान्त्रिक उद्देश्य। प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों में यही उद्देश्य नहीं रह सकता।

इन राष्ट्रों का निर्माण करने वाले लोगों में अधिकांश वास्तविक और भौतिक आनन्द की खोज में अत्यन्त व्यग्र रहते हैं। चूँकि वे सर्वदा अपनी वर्तमान स्थिति से असन्तुष्ट और उसे छोड़ने के लिए सदा स्वतन्त्र रहते हैं, इसलिए वे अपने भाग्य को बदलने या उसमें वृद्धि करने वाले साधनों को छोड़ कर किसी और चीज का ध्यान नहीं करते। अतः इस प्रकार के पूर्वप्रभावित मस्तिष्क के लिए, प्रत्येक नयी प्रणाली, जो धन प्राप्ति के लिए छोटे मार्ग का निर्माण करती है, प्रत्येक मशीन, जो श्रम की बचत करती है, प्रत्येक यंत्र, जो उत्पादन के व्यय को घटाता है और प्रत्येक आविष्कार, जो आनन्द को सुगम बनाता अथवा उसमें वृद्धि करता है, मानव-बुद्धि के उच्चतम प्रयास प्रतीत होते हैं। मुख्यतः इन्हीं उद्देश्यों से प्रजातान्त्रिक समाज अपने को वैज्ञानिक खोजों में संलग्न करता है अर्थात् वह उन्हें समझता है और उनका सम्मान करता है। कुलीनतान्त्रिक युगों में विज्ञान विशेषतः मानसिक आनन्द की और प्रजातान्त्रिक युगों में शारीरिक आनन्द की सृष्टि करता है।

आपको विश्वास होना चाहिए कि राष्ट्र जितना ही अधिक प्रजातांत्रिक, सुसंस्कृत और स्वतंत्र रहता है, उतनी अधिक संख्या वैज्ञानिक प्रतिभाओं को योगदान देनेवालों की होती है और उतना ही अधिक तत्काल उत्पादक उद्योगों में व्यवहृत होनेवाले आविष्कार अपने प्रणेताओं को लाभ, ख्याति और शक्ति भी प्रदान करते हैं। कारण यह है कि प्रजातांत्रिक देशों में श्रमिक वर्ग सार्वजनिक कार्यों में भाग लेता है और सार्वजनिक प्रतिष्ठा और आर्थिक पारिश्रमिक उन लोगों को प्रदान किये जा सकते हैं, जो इसके योग्य होते हैं।

इस प्रकार से सगठित समाज में सरलता से यह देखा जा सकता है कि मानव-मस्तिष्क को बिना किसी चेतना के, सिद्धान्त को उपेक्षित करने की ओर प्रवृत्त किया जा सकता है। इसके विपरीत, उसे अतुल शक्ति से, विज्ञान के या कम-से-कम सैद्धान्तिक विज्ञान के उस भाग के व्यवहार के लिए, जो उन लोगों के लिए आवश्यक है, जो ऐसा व्यवहार करते हैं, उत्तेजित किया जाता है। कुछ अन्तःप्रेरित प्रवृत्तियाँ मस्तिष्क को बुद्धि के उच्चतर क्षेत्रों की ओर प्रवृत्त करने का निरर्थक प्रयत्न करती हैं। स्वार्थ उसे उस मध्य स्तर पर ले आता है, जहाँ वह अपनी समस्त शक्ति और अविराम गतिविधि का विकास कर सकता है और आश्चर्यजनक परिणाम उत्पन्न कर सकता है। इन्हीं अमरीकियों ने, जिन्होंने यन्त्र-विज्ञान के किसी भी सामान्य नियम का आविष्कार नहीं किया, जहाजरानी में एक ऐसे इंजिन का प्रवेश किया है, जो विश्व के स्वरूप को ही बदल देता है।

निश्चय ही मुझे सदेह नहीं होता कि हमारे युग के प्रजातांत्रिक राष्ट्रों के भाग्य में महान मेधावी शक्तियों का लोप हो जाना बदा है, यहाँ तक कि वे कभी भी नये प्रकाश की ज्योति नहीं प्रज्वलित कर सकेंगे। आज के युग में और उत्पादक उद्योगों की सरगर्मी से निरन्तर उत्तेजित अनेक सभ्य राष्ट्रों में विज्ञान के विभिन्न भागों को जोड़ने वाले बन्धन निरीक्षक की दृष्टि में आये बिना नहीं रह सकते और स्वयं व्यावहारिक विज्ञान की प्रवृत्ति, यदि वह ज्ञानवर्धक है तो, मनुष्यों को सिद्धान्त की उपेक्षा नहीं करने देगी।

प्रतिदिन दोहराये जानेवाले विज्ञान के इतने अधिक प्रयोगों के प्रयासों के बीच यह प्रायः असम्भव सा है कि सामान्य विधान निरन्तर प्रकाश में न आये। इससे महान आविष्कार प्रायः होते रहेंगे, यद्यपि महान आविष्कारक बहुत थोड़े होंगे।

जो भी हो, मैं उच्च वैज्ञानिक व्यवसायों में विश्वास करता हूँ। यदि प्रजाताधित सिद्धान्त, एक ओर, मनुष्यों को स्वयं अपने लिए विज्ञान की उन्नति करने को प्रेरित नहीं करता है, तो दूसरी ओर, ऐसे लोगों की संख्या में अपार वृद्धि करता है, जो उसका विकास करते हैं। यह भी विश्वसनीय नहीं है कि केवल सत्य के प्रेम से अनुप्राणित चिन्तनशील प्रतिभाएँ इतने विशाल जनसमूह में समय-समय पर उत्पन्न नहीं होंगी। हमें विश्वास होना चाहिए कि कोई-न-कोई ऐसी प्रतिभा अवश्य उत्पन्न होगी, जो प्रकृति के अत्यन्त गहरे रहस्यों की खोज में डूब जायेगी, भले ही उसके देश और उसके युग की भावना कुछ भी हो। उसे अपने मार्ग में किसी प्रकार की सहायता की आवश्यकता नहीं होगी। उसके मार्ग में बाधाएँ न आयें, बस इतना ही उनके लिए पर्याप्त होगा। यह सब कहने का मेरा अभिप्राय यह है कि परिस्थितियों की स्थायी असमानता से मानव अपने को सूक्ष्म तथ्यों की उद्दण्ड और निष्फल शोध करने तक ही सीमित कर देता है, जब कि सामाजिक स्थिति और प्रजातंत्र की संस्थाएँ उसे विज्ञानों के तात्कालिक और उपयोगी व्यावहारिक परिणामों को प्राप्त करने के लिए तैयार करती हैं। यह प्रवृत्ति स्वाभाविक और अनिवार्य है। उससे परिचित होना एक विलक्षण बात है और उसका बताना आवश्यक हो सकता है।

यदि वे लोग, जिन पर हमारे युग के राष्ट्रों के मार्गदर्शन का उत्तरदायित्व सौंपा जाता है, इन नयी प्रवृत्तियों को, जो शीघ्र ही अजेय हो जायेंगी, काफी दूर से ही स्पष्ट पहचान लें, तो उन्हें इस बात का ज्ञान हो जायगा कि प्रजातांत्रिक युग में रहने वाले मनुष्य, जो शिक्षित और स्वतंत्र रहते हैं, विज्ञान के औद्योगिक भाग को सुधारने में कभी असफल नहीं हो सकते और उसके बाद स्थापित सत्ताओं के सारे प्रयत्नों को शिक्षा की उच्चतम शाखाओं का समर्थन करने और स्वयं विज्ञान के लिए उच्च भावनाओं का पोषण करने में लगा देना पड़ेगा। वर्तमान युग में मानव-मस्तिष्क को सैद्धान्तिक अध्ययनों में संलग्न होने के लिए बाध्य किया जाना चाहिए। उसके बाद वह अपने आप व्यावहारिक उपयोगों की ओर प्रवृत्त होगा। उसके गौण प्रभावों का निरन्तर सूक्ष्म परीक्षण करने के बजाय कभी-कभी उसका मार्ग बदल देना उचित होगा ताकि मूल कारणों पर विचार करने के लिए उसे ऊँचा उठाया जा सके...।

२१. कला के प्रति अमरीकियों की भावना

यदि मैं यह दिखाने का प्रयत्न करूँ कि किस प्रकार सम्पत्ति के सामान्यतः मध्यम कोटि के होने के कारण, अत्यधिक और अनावश्यक धन के अभाव के कारण, सुख की सर्वव्यापी इच्छा के कारण तथा उसे प्राप्त करने के लिए निरन्तर किये जानेवाले प्रयत्नों के कारण, मनुष्य के हृदय में विद्यमान सौन्दर्य-प्रेम पर उपयोगी वस्तुओं के प्रति रुचि का आधिपत्य हो जाता है, तो यह पाठकों का और स्वयं मेरा समय नष्ट करने के तुल्य होगा। अतः जिन प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में ये सभी वस्तुएँ विद्यमान होती हैं, वे जीवन को शोभा सम्पन्न बनानेवाली कलाओं की अपेक्षा जीवन को सरल बनानेवाली कलाओं को अधिक पसन्द करेंगे। वे अभ्यासवश सुन्दर वस्तुओं की अपेक्षा उपयोगी वस्तुओं को अधिक पसन्द करेंगे और उनकी इच्छा यह होगी कि सुन्दर वस्तुएँ उपयोगी भी हों।

सामान्यतः ऐसा होता है कि विशेषाधिकार के युगों में लगभग समस्त कलाओं का अभ्यास एक विशेषाधिकार बन जाता है तथा प्रत्येक व्यवसाय एक पृथक् क्षेत्र बन जाता है, जिसमें प्रवेश करने की अनुमति सभी को नहीं होती। उत्पादन-शील उद्योग के स्वतंत्र होने पर भी कुलीनतांत्रिक राष्ट्रों का निश्चित स्वरूप शनैः शनैः उन समस्त व्यक्तियों को पृथक् कर देता है जो एक ही कला का अभ्यास करते हैं। ऐसा तब तक होता रहता है, जब तक उनका एक ऐसा पृथक् वर्ग नहीं बन जाता जिसमें सदा वही परिवार सम्मिलित रहते हैं, जिनके सदस्य एक दूसरे से परिचित होते हैं और जिनके मध्य शीघ्र ही एक निजी जनमत और एक प्रकार के सामूहिक गर्व का विकास हो जाता है। इस प्रकार के वर्ग अथवा समूह में प्रत्येक शिल्पकार को न केवल अपनी सम्पत्ति का अर्जन करना होता है, प्रत्युत उसे अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा भी करनी पड़ती है। उसे मात्र अपने अथवा ग्राहक के हित पर ही ध्यान नहीं देना पड़ता, प्रत्युत उसे उस समाज के हित पर ध्यान देना पड़ता है, जिसका वह सदस्य होता है तथा उस समाज का हित यह होता है कि प्रत्येक शिल्पकार यथासम्भव सर्वोत्कृष्ट शिल्प-कौशल का प्रदर्शन करे। अतः कुलीनतांत्रिक युगों में कलाओं का उद्देश्य सुन्दर वस्तुओं का निर्माण करना होता है, न कि अधिकतम शीघ्रता से अथवा न्यूनतम मात्रा में निर्माण करना।

इसके विपरीत, जब प्रत्येक व्यवसाय सभी के लिए मुक्त रहता है, जब

असंख्य व्यक्तियों का समूह निरन्तर उसे ग्रहण करता है और उसका परित्याग करता रहता है और जब उसके अनेक सदस्य एक दूसरे से अपरिचित तथा उदासीन रहते हैं, *तथा अपनी संख्या के कारण एक दूसरे को देख नहीं पाते*, तब सामाजिक बन्धन छिन्न-भिन्न हो जाता है और प्रत्येक कारीगर अकेला रह जाता है और केवल इस बात का प्रयास करता है कि निम्नतम व्यय पर अधिकतम धन प्राप्त किया जाय। तब उसकी एकमात्र सीमा ग्राहक की इच्छा रहती है, किन्तु साथ-ही साथ ग्राहक में भी उसी प्रकार का परिवर्तन होता है। जिन देशों में धन तथा सत्ता कुछ थोड़े-से व्यक्तियों के हाथ में केन्द्रित होती है, वहाँ थोड़े-से व्यक्ति ही, जो सदा वही होते हैं, इस संसार की अधिकांश वस्तुओं का प्रयोग करते हैं। आवश्यकता, जनमत तथा साधारण इच्छाओं के कारण अन्य सभी व्यक्ति उनके आनन्दोपभोग से वंचित हो जाते हैं। चूँकि यह अभिजात वर्ग महानता के जिस शिखर पर खड़ा रहता है, उसी पर स्थिर रहता है और उसमें कमी अथवा वृद्धि नहीं होती, अतः उसकी इच्छा-आकांक्षाएँ समान रहती हैं और वह उनसे एक ही प्रकार से प्रभावित होता है। जिन व्यक्तियों से इस वर्ग का निर्माण होता है, उन व्यक्तियों में स्वभावतः अपनी उच्चतर एवं वंशानुगतिक स्थिति से स्थायी एवं सुनिर्मित वस्तुओं के प्रति रुचि उत्पन्न हो जाती है। *इसका प्रभाव कला के सम्बन्ध में राष्ट्र की सामान्य* विचार-प्रणाली पर पड़ता है। ऐसे समाजों में बहुधा ऐसा होता है कि किसान भी अपनी अभीप्सित वस्तु को अपूर्णता की स्थिति में प्राप्त करने की अपेक्षा उसके बिना रह जाना अधिक पसन्द करता है। अतः कुलीनतांत्रिक समाजों में शिल्पकार केवल ऐसी सीमित संख्या वाले ग्राहकों के लिए काम करते हैं, जिनकी रुचि को संतुष्ट कर सकना कठिन होता है; वे जिस लाभ की आशा करते हैं, वह मुख्यतः उनकी कारीगरी की उत्कृष्टता पर निर्भर करता है।

जब *समस्त विशेषाधिकार नष्ट कर दिये जाते हैं*, श्रेणियाँ एक दूसरे में मिल जाती हैं और मनुष्य निरन्तर एक सामाजिक तुला पर ऊपर नीचे होते रहते हैं, तब इस प्रकार की स्थिति नहीं रह जाती। प्रजातांत्रिक समाज में ऐसे नागरिक सदा बने रहते हैं, जिनकी पैतृक संपत्ति विभक्त और कम होती रहती है। ये अधिक समृद्धिमय परिस्थितियों में कतिपय ऐसी आकांक्षाएं बना लेते हैं, जो इस प्रकार की आकांक्षाओं की पूर्ति के साधनों के समाप्त हो जाने पर भी बनी रहती हैं, और ये चिन्तापूर्वक किसी ऐसी पद्धति की खोज करते रहते हैं *जिसके द्वारा चोरी चोरी इन आकांक्षाओं की पूर्ति की जा सके।* दूसरी ओर

प्रजातंत्रों में सदा भारी संख्या में ऐसे व्यक्ति रहते हैं, जिनकी समृद्धि वृद्धि पर रहती है, किन्तु जिनकी इच्छाएँ उनकी समृद्धि से भी तीव्रतर गति से बढ़ती रहती हैं और जो सम्पत्ति के वरदानों के साधन प्राप्त करने से बहुत पहले उनकी पूर्व कल्पना करके उनकी ओर शरारतभरी प्रसन्नता की दृष्टि से देखते हैं। ये व्यक्ति उन सुखों तक, जो पहले से ही लगभग उनकी पहुँच के अन्तर्गत हैं, शीघ्र पहुँचने के लिए उत्सुक रहते हैं। इन दो कारणों के मिलन का परिणाम यह होता है कि प्रजातंत्रों में सदा ऐसे व्यक्ति विद्यमान रहते हैं, जिनकी आकांक्षाएँ उनके साधनों से परे रहती हैं और जो अपनी इच्छा का पूर्ण रूप से परित्याग कर देने की अपेक्षा अपूर्ण सन्तोष प्राप्त करने के लिए अत्यन्त लालायित रहते हैं। कारीगर इन प्रबल भावनाओं को तत्काल समझ लेता है, क्योंकि वह स्वयं इस प्रकार की प्रबल भावनाएँ रखता है। कुलीनतंत्र में वह अपनी कारीगरी को ऊँचे मूल्य पर थोड़े से व्यक्तियों को बेचने का प्रयत्न करता है। अब वह देखता है कि शीघ्र धनवान बन जाने का मार्ग यह है कि अपनी कारीगरी की वस्तुओं को कम मूल्य पर सभी को बेचा जाए, किन्तु सामग्रियों के मूल्य में कमी करने के केवल दो मार्ग हैं। प्रथम मार्ग यह है कि उनके उत्पादन की कोई अधिक अच्छी, अधिक शीघ्रतापूर्ण तथा अधिक चतुरतापूर्ण प्रणाली ढूँढ निकाली जाय। दूसरा मार्ग यह है कि अधिक परिमाण में वस्तुओं का, जो लगभग समान हों, किन्तु जिनका मूल्य अपेक्षाकृत कम हो, निर्माण किया जाय। प्रजातांत्रिक देश में कारीगर की सारी बुद्धि इन दो उद्देश्यों की पूर्ति में लगी रहती है। वह ऐसी पद्धतियों के आविष्कार करने के प्रयत्न में रहता है जिनके द्वारा वह न केवल अधिक अच्छा, प्रत्युत शीघ्रतापूर्वक और अधिक सस्ता काम कर सके, अथवा यदि वह इसमें सफल नहीं हो सकता, तो वह अपने द्वारा निर्मित होने वाली वस्तुओं की आन्तरिक अच्छाई में कमी कर देने का प्रयास कर देता है, किन्तु साथ ही साथ वह उन वस्तुओं को पूर्णतया अनुपयुक्त नहीं बना देता। जब केवल धनियों को छोड़कर और किसी के पास घड़ियाँ नहीं होती थीं, तब लगभग सभी घड़ियाँ बहुत अच्छी होती थीं; अब बहुत कम अच्छी घड़ियाँ बनायी जाती हैं, किन्तु प्रत्येक व्यक्ति की जेब में एक घड़ी होती है। इस प्रकार प्रजातांत्रिक सिद्धान्त न केवल मानव मस्तिष्क को उपयोगी कलाओं की ओर प्रवृत्त करता है, प्रत्युत वह कारीगर को अधिक शीघ्रता से अनेक अपूर्ण वस्तुओं का निर्माण करने के लिए तथा ग्राहक को इन वस्तुओं से संतोष कर लेने की ओर प्रेरित करता है।

ऐसी बात नहीं है कि प्रजातान्त्रिक देशों में कलाओं में आवश्यकता उपस्थित होने पर चमत्कारपूर्ण वस्तुओं का निर्माण करने की क्षमता नहीं होती। यदि ऐसे ग्राहक आ जायँ, जो ऐसी वस्तुओं के निर्माण में लगने वाले समय और कष्ट का मूल्य चुकाने के लिए तैयार हों तो कभी कभी चमत्कारपूर्ण वस्तुओं का निर्माण हो सकता है। प्रत्येक प्रकार के उद्योग की इस प्रतियोगिता में विशाल प्रतिद्वन्द्विता और इन असंख्य प्रयोगों के मध्य कुछ उच्च कोटि के शिल्पकार मिलते हैं, जो अपने शिल्प-कौशल की चरम सीमा पर पहुँच जाते हैं; किन्तु उन्हें अपने कौशल के प्रदर्शन का अवसर बहुत कम मिलता है। वे जानबूझ कर अपनी शक्ति का प्रयोग नहीं करते; वे एक परिपूर्ण उदासीनता की स्थिति में रहते हैं, जो अपने सम्बन्ध में स्वयं निर्णय करती है और जिसमें यद्यपि लक्ष्य से आगे सन्धान करने की क्षमता होती है, तथापि जो उसी वस्तु का लक्ष्य बनाती है, जिसका वह सन्धान करती है। इसके विपरीत कुलीनतान्त्रिक देशों में कारीगर सदा अपनी पूरी क्षमता के साथ काम करते हैं और जब वे रुकते हैं तो इस कारण रुकते हैं कि वे अपनी कला की चरम सीमा पर पहुँच जाते हैं।

जब मैं किसी ऐसे देश में आता हूँ, जहाँ मुझे कला की कतिपय सर्वोत्कृष्ट कृतियाँ देखने को मिलती हैं, तब मुझे इस तथ्य से उस देश की सामाजिक स्थिति अथवा राजनीतिक संविधान के विषय में कोई ज्ञान नहीं प्राप्त होता; किन्तु जब मैं देखता हूँ कि कलाकृतियाँ सामान्यतः निम्न कोटि की प्रचुर मात्रा में तथा अत्यन्त सस्ती हैं तो मुझे विश्वास हो जाता है कि जिस देश में ऐसा होता है, वहाँ विशेषाधिकार ह्रासोन्मुख है, श्रेणियों का अन्तर्मिश्रण प्रारम्भ हो रहा है तथा शीघ्र ही वे एक दूसरे में मिल जानेवाली हैं।

प्रजातान्त्रिक युगों के शिल्पकार अपनी उपयोगी कृतियों को समस्त समाज की पहुँच के अन्तर्गत लाने का ही प्रयत्न नहीं करते, बल्कि वे अपनी समस्त सामग्रियों में वह आकर्षण लाने का प्रयत्न करते हैं, जो वास्तव में उसमें नहीं होता। समस्त श्रेणियों के मिल जाने पर प्रत्येक व्यक्ति अपने को ऐसे रूप में दिखाने की आशा रखता है कि जो रूप उसका नहीं होता और इस उद्देश्य में सफल होने के लिए वह महान प्रयास करता है। निश्चय ही इस भावना की सृष्टि, जो मानव हृदय के लिए अत्यन्त स्वाभाविक होती है, प्रजातान्त्रिक सिद्धान्त से नहीं होती, किन्तु वह सिद्धान्त इसे भौतिक पदार्थों पर लागू करता है। पुण्य का ढोंग प्रत्येक युग में होता है, किन्तु विलास का ढोंग विशेष रूप से प्रजातंत्र के युग में होता है।

कला मानवीय अहम् की इन लालसाओं की परितृप्ति के लिए हर प्रकार की छलनाओं से काम लेती है और कभी-कभी ये कृत्रिम उपाय इतने आगे बढ़ जाते हैं कि वे अपने ही उद्देश्य को विफल बना देते हैं। आजकल ऐसे नकली हीरे बनाये जाते हैं, जिन्हें आसानी के साथ असली हीरे मान लेने की भूल की जा सकती है और ज्योंही नकली हीरे बनाने की कला इतनी पूर्ण हो जायगी कि नकली और असली हीरों में भेद न किया जा सकेगा, त्योंही यह सम्भव है कि दोनों का परित्याग कर दिया जायगा और वे पुनः कंकड़ पत्थर मात्र समझे जाने लगेंगे।

इसके बाद मैं उन कलाओं का वर्णन करूँगा, जिन्हें भेद करने की दृष्टि से ललित कलाएँ कहा जाता है। मैं यह विश्वास नहीं करता कि जो लोग ललित कलाओं का अभ्यास करते हैं, उनकी संख्या में प्रजातान्त्रिक सामाजिक स्थिति और प्रजातान्त्रिक संस्थाओं के प्रभाव के कारण आवश्यक रूप से कमी हो जाती है; किन्तु जिस ढंग से इन कलाओं का अभ्यास किया जाता है, उस पर इन कारणों का शक्तिशाली प्रभाव पड़ता है। जिन लोगों में ललित कलाओं के प्रति पहले से ही एक रुचि विकसित हो चुकी होती है, उनमें से अनेक निर्धन हो जाते हैं। दूसरी ओर जो लोग अभी धनी नहीं हो पाये हैं, उनमें से अनेक कम-से-कम अनुकरण द्वारा उस रुचि को धारण करना प्रारम्भ कर देते हैं; उपभोक्ताओं की संख्या बढ़ जाती है, किन्तु समृद्ध और ऐसे उपभोक्ता, जिनकी रुचि की परितुष्टि कठिनता से होती है, अधिक दुर्लभ हो जाते हैं। तब उपयोगी कलाओं के विषय में मैं पहले ही जो कुछ कह चुका हूँ, उससे मिलती-जुलती कुछ बात ललित कलाओं के सम्बन्ध में भी होती है। कलाकारों की कृतियों की संख्या अधिक होती है, किन्तु प्रत्येक कृति की विशिष्टता घट जाती है; उसमें महानता तक पहुँचने की योग्यता नहीं रह जाती और वे तुच्छ एवं रोचक कृतियों का उत्पादन करने लगती हैं और वास्तविकता की अपेक्षा बाह्य रूप पर अधिक ध्यान दिया जाने लगता है।

कुलीनतांत्रिक व्यवस्था में थोड़े-से महान चित्रों की सृष्टि की जाती है, प्रजातान्त्रिक देशों में अधिकाधिक संख्या में महत्त्वहीन चित्रों का निर्माण किया जाता है। कुलीनतान्त्रिक व्यवस्था में कांस्य मूर्तियों का निर्माण किया जाता है; प्रजातान्त्रिक देशों में उनका निर्माण पलस्तर से किया जाता है।

जब मैं अटलान्टिक महासागर के उस भाग से, जिसे ईस्ट रिवर (पूर्व नदी) के नाम से पुकारा जाता है, प्रथम बार न्यूयार्क में पहुँचा, तब मुझे नगर से

कुछ दूर तट पर सफेद संगमरमर के कई छोटे छोटे महलों को देखकर आश्चर्य हुआ। इनमें से अनेक महलों की स्थापत्य कला प्राचीन युग की थी। जब मैं दूसरे दिन एक महल का, जिसने मेरा ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट किया था, अधिक निकटता से निरीक्षण करने गया, तब मैंने देखा कि उसकी दीवारें सफेदी की हुई ईंटों से निर्मित थीं तथा उसके स्तम्भ रंगी हुई लकड़ी के बने हुए थे—एक रात पूर्व मैंने जिन भवनों की प्रशंसा की थी, वे सब एक ही प्रकार के थे।

इसके अतिरिक्त प्रजातंत्र की सामाजिक स्थिति तथा संस्थाएँ समस्त अनुकरणात्मक कलाओं को कतिपय विलक्षण मनोवृत्तियाँ प्रदान करती हैं, जिनकी ओर इंगित करना सरल है। वे बहुधा उन्हें आत्मा की रेखाओं से दूर कर देती हैं और मात्र शरीर से आबद्ध कर देती हैं और वे भावना एवं विचार के प्रतिनिधित्व के स्थान पर गति और प्रत्यक्ष अनुभव के प्रतिनिधित्व को स्थापित कर देती हैं; एक शब्द में, आदर्श के स्थान पर यथार्थ को स्थापित करती हैं।

मुझे इस बात में सन्देह है कि हमारे युग के चित्रकारों ने मानव-शरीर-रचना की सूक्ष्म बारीकियों का जितना गहन अध्ययन किया है, उतना गहन अध्ययन राफेल ने किया था अथवा नहीं। वह अपने विषय को एकदम ठीक-ठीक रखने को उतना महत्व नहीं देता था, जितना हमारे युग के चित्रकार देते हैं; क्योंकि वह प्रकृति का अतिक्रमण करने की महत्वाकांक्षा रखता था। वह मनुष्य को मनुष्य से उच्चतर बनाने का प्रयत्न करता था और स्वयं सौंदर्य को सुन्दर बनाने का प्रयत्न करता था। इसके विपरीत डेविड और उसके शिष्य जितने अच्छे चित्रकार थे, उतने ही अच्छे वे शरीर-रचना विज्ञान के ज्ञाता थे। वे अपने नेत्रों के सामने उपस्थित माडलों को आश्चर्यजनक रूप से चित्रित करते थे, किन्तु वे उनके परे मुश्किल से कोई कल्पना कर पाते थे। वे ईमानदारी के साथ प्रकृति का अनुगमन करते थे, जबकि राफेल प्रकृति से भी सुन्दरतर सृष्टि करने का प्रयास करता था। दूसरे कलाकार हमारे लिए मनुष्य का ठीक ठीक चित्रण कर गये हैं, जब कि राफेल की कृतियों में हमें ईश्वरीयता के दर्शन मिलते हैं।

किसी विषय के निरूपण की पद्धति के सम्बन्ध में कही गयी यह बात उस विषय के चयन के सम्बन्ध में भी उतनी ही लागू होती है। पुनर्जागरण (रेनांसा) युग के चित्रकार सामान्यतः अपने आप से बहुत ऊपर और अपने

समय से दूर शक्तिशाली विषयों की खोज करते थे, जिससे उनकी कल्पना को असीम क्षेत्र प्राप्त होता था। हमारे युग के चित्रकार बहुधा अपनी प्रतिभा का उपयोग निजी जीवन के विवरणों का यथातथ्य अनुकरण करने में करते हैं, जो उनकी आंखों के समक्ष सदा विद्यमान रहते हैं और वे सदा तुच्छ पदार्थों की अनुकृति करते रहते हैं जिनके मूलरूप प्रकृति में अत्यधिक संख्या में मिलते हैं।

२२. प्रजातान्त्रिक युग की साहित्यिक विशिष्टताएँ

जब कोई यात्री संयुक्त-राज्य अमरीका में किसी पुस्तक-विक्रेता की दूकान में प्रवेश करता है और खानों में रखी हुई अमरीकी पुस्तकों का निरीक्षण करता है, तब उसे पुस्तकों की संख्या बहुत अधिक प्रतीत होती है। जब कि इसके विपरीत सुज्ञात लेखकों की रचनाओं की संख्या अत्यन्त कम प्रतीत होती है। उसे सर्वप्रथम मानवीय ज्ञान के प्रारम्भिक सिद्धान्तों की शिक्षा देने वाले अनेक प्राथमिक निबन्ध दिखायी देंगे। इनमें से अधिकांश पुस्तकें यूरोप में लिखी होती हैं; अमरीकी उन्हें अपने उपयोग के योग्य बनाकर पुनर्मुद्रित करते हैं। उसके बाद विशाल संख्या में धार्मिक पुस्तकें, बाइबिलें, उपदेश, धार्मिक भावनाओं को सुदृढ़ बनाने वाले कथानक, विवादास्पद धर्मग्रन्थ और दातव्य संस्थाओं के प्रतिवेदन मिलेंगे; अन्त में राजनीतिक पुस्तिकाओं की एक लम्बी सूची दिखायी देती है। अमरीका में पार्टियाँ एक दूसरे के मतों का खण्डन करने के लिए पुस्तकें नहीं लिखती हैं; अपितु वे पुस्तिकाएं लिखती हैं, जो एक दिन के लिए अविश्वसनीय तीव्रता के साथ प्रसारित होती हैं और तत्पश्चात् समाप्त हो जाती हैं।

मानव-मस्तिष्क की इन समस्त अज्ञात कृतियों के मध्य थोड़े-से लेखकों की अधिक उल्लेखनीय रचनाएँ दिखायी देती हैं, जिनके नाम यूरोप-निवासियों को ज्ञात हैं अथवा ज्ञात होने चाहिए।

यद्यपि हमारे युगों में अमरीका सम्भवतः वह सभ्य देश है जिसमें साहित्य पर न्यूनतम ध्यान दिया जाता है, फिर भी, वहाँ काफी व्यक्ति मस्तिष्क की सृष्टियों में रुचि रखते हैं और उन्हें यदि जीवन का अध्ययन नहीं, तो कम-से-कम अपने अवकाश के क्षणों का आमोद अवश्य बनाते हैं; किन्तु ये पाठक जो पुस्तकें चाहते हैं, उनमें से अधिकांश पुस्तकें उन्हें इंग्लैण्ड से

प्राप्त होती हैं। लगभग समस्त महत्त्वपूर्ण अंग्रेजी पुस्तकें संयुक्त राज्य अमरीका में पुनः प्रकाशित होती हैं। ग्रेट ब्रिटेन की साहित्यिक प्रतिभा अब भी नव विश्व के अरण्यों के आन्तरिक भागों में अपनी किरणें प्रसारित करती है। ऐसा कोई घर मुश्किल से मिलेगा जहाँ शेक्सपियर के इक्के दुक्के नाटक न मिलें। मुझे याद है कि मैंने हेनरी पंचम का सामन्ती नाटक सर्वप्रथम लकड़ी से बनी एक झोपड़ी में पढ़ा था।

न केवल अमरीकी अंग्रेजी साहित्य की निधि का निरन्तर उपयोग करते हैं, प्रत्युत सच्चाई के साथ कहा जा सकता है कि वे इंग्लैण्ड के साहित्य को अपनी भूमि पर पनपता हुआ देखते हैं। संयुक्त राज्य अमरीका में जो थोड़े-से व्यक्ति साहित्यिक कृतियों की रचना में लगे हैं, उनमें से अधिकांश सारतः और उससे भी अधिक स्वरूपतः अंग्रेज हैं। इस प्रकार वे प्रजातंत्र के मध्य उन विचारों और साहित्यिक फैशनों को प्रविष्ट करते हैं, जो उस कुलीनतान्त्रिक राष्ट्र में प्रचलित हैं, जिन्हें उन्होंने अपना आदर्श बनाया है। वे विदेशी प्रणालियों से उधार लिये गये रंगों से चित्र बनाते हैं और चूँकि वे अपने जन्म के देश के वास्तविक रूप का प्रतिनिधित्व मुश्किल से करते हैं, इसलिए वे वहाँ बहुत ही कम लोकप्रिय होते हैं।

संयुक्त राज्य अमरीका के नागरिकों को स्वयं इस बात का, कि पुस्तकों का प्रकाशन उनके लिए नहीं होता, इतना अधिक विश्वास होता है कि जिस प्रकार किसी मूल चित्र का निर्माता उस चित्र की प्रतिलिपि की विशेषता के विषय में निर्णय करने के लिए योग्य अधिकारी माना जाता है, उसी प्रकार अमरीकी नागरिक अपने लेखकों में से किसी लेखक की विशेषता के सम्बन्ध में निर्णय करने से पूर्व सामान्यतः तब तक प्रतीक्षा करते हैं, जब तक उसकी प्रसिद्धि की सम्पुष्टि इंग्लैण्ड में नहीं हो जाती। अतः ठीक ठीक कहा जाय तो सम्प्रति संयुक्त राज्य अमरीका के निवासियों के पास कोई साहित्य नहीं है। केवल पत्रकार ही ऐसे लेखक हैं, जिन्हें मैं अमरीकी लेखकों के रूप में मान्य करता हूँ। निश्चय ही ये महान लेखक नहीं हैं, किन्तु ये अपने देश की भाषा बोलते हैं और उनकी बातें सुनी जाती हैं। अन्य लेखक विदेशी हैं, वे अमरीकियों के लिए उसी प्रकार हैं जिस प्रकार ज्ञान के पुनरुत्थान के समय यूनानियों और रोमनों के अनुकरणकर्त्ता हमारे लिए थे—अर्थात् वे सामान्य सहानुभूति के नहीं, प्रत्युत उत्सुकता के पात्र हैं। वे मस्तिष्क का अनुरंजन करते हैं, किन्तु वे जनता की रीति-नीतियों को प्रभावित नहीं करते।

मैं पहले ही कह चुका हूँ कि इस स्थिति का उद्भव केवल प्रजातंत्र में नहीं होता तथा इसके कारणों की खोज प्रजातान्त्रिक सिद्धान्त से पृथक् अनेक विलक्षण परिस्थितियों में करनी होगी। अमरीकियों के जो कानून और जो सामाजिक स्थिति है, उसे बनाये रखते हुए भी यदि उनका मूल भिन्न प्रकार का होता, तो मुझे सन्देह नहीं कि उनके पास एक साहित्य होता। मुझे विश्वास है कि वे जैसे हैं, वैसा होते हुए भी अन्ततोगत्वा उनके पास एक साहित्य हो जायगा, किन्तु उसका स्वरूप हमारे युग की अमरीकी साहित्यिक कृतियों के स्वरूप से भिन्न होगा और वह स्वरूप विशिष्ट रूप से उसका निजी स्वरूप होगा। इस स्वरूप का पहले से ही पता लगा लेना असम्भव नहीं है।

मैं एक ऐसे कुलीनतान्त्रिक जन समुदाय की कल्पना करता हूँ, जिसमें साहित्य का अभ्यास किया जाता है। वहाँ मस्तिष्क के तथा राज्य के भी कार्यों का संचालन समाज के एक शासक-वर्ग द्वारा किया जाता है। साहित्यिक और राजनीतिक जीवन लगभग पूर्णरूपेण इस वर्ग तक ही अथवा पद की दृष्टि से उसके निकटतम वर्ग तक सीमित रहता है। ये बातें शेष बातें समझने के लिए पर्याप्त हैं।

जब एक ही प्रकार के थोड़े-से व्यक्ति एक ही समय एक ही प्रकार के कार्य में लगे होते हैं, तब वे सरलतापूर्वक एक दूसरे से मिलते हैं और कतिपय ऐसे प्रधान नियमों को स्वीकार करते हैं, जिससे वे भी शासित रहते हैं। यदि इन व्यक्तियों के ध्यान को आकृष्ट करने वाली वस्तु साहित्य हो तो वे भी शीघ्र ही मस्तिष्क की सृष्टियों को ऐसे सुनिश्चित सिद्धान्त में आबद्ध कर देंगे, जिनसे विचलित होने की अनुमति नहीं रह जायगी। यदि देश में ऐसे व्यक्तियों की वंशानुगत स्थिति हो, तो स्वभावतः वे अपने लिए न केवल कतिपय सुनिश्चित नियम स्वीकार करने की ओर उन्मुख होंगे, प्रत्युत उन नियमों पर चलने की ओर भी उन्मुख होंगे, जिन्हें उनके पूर्वजों ने अपने पथ-प्रदर्शन के लिए निर्धारित किया था। उनका व्यवहार एक साथ ही कठोर और परम्परागत होगा। चूँकि वे आवश्यक रूप से जीवन की दैनिक चिन्ताओं में तल्लीन नहीं होते—जैसा कि वे अपने पूर्वजों से तनिक भी अधिक इन चिन्ताओं से ग्रस्त नहीं रहे हैं—इसलिए पिछली कई पीढ़ियों से उन्होंने मानसिक श्रमों में रुचि लेना सीखा है। उन्होंने साहित्य को एक कला के रूप में समझना, अन्त में साहित्य के लिए साहित्य से प्रेम करना तथा उसके नियमों का पालन करने वाले व्यक्तियों को देखकर विद्वान सदृश सन्तोष का अनुभव करना सीखा है। इतना ही सब कुछ नहीं है; जिन व्यक्तियों की बात मैं करता हूँ उन्होंने अपना

जीवन विघ्न-हीन अथवा समृद्धिमय परिस्थितियों में प्रारम्भ किया था और ऐसी ही परिस्थितियों में उनके जीवन का अन्त होगा। अतः स्वभावतः उनमें उत्कृष्ट कोटि के सन्तोषों के प्रति रुचि एवं परिष्कृत तथा कोमल आनन्दों के प्रति प्रेम उत्पन्न हो गया है। इतना ही नहीं, दीर्घ काल तक और शान्तिपूर्वक इतनी अधिक समृद्धि का आनन्दोपभोग करने से बहुधा उनमें जो एक प्रकार की मानसिक एवं हार्दिक कोमलता आ जाती है, उसके परिणामस्वरूप वे अपने आनन्द से भी उन वस्तुओं को पृथक् कर देते हैं, जो अत्यन्त उत्तेजनाकारी अथवा अत्यधिक तीव्रतापूर्ण होती हैं। वे अत्यधिक उत्तेजित होने की अपेक्षा मनोरञ्जन को अधिक पसन्द करते हैं, वे रुचि के लिए इच्छुक होते हैं, किन्तु भावाभिभूत हो जाने के इच्छुक नहीं होते।

मैंने अभी-अभी जिन व्यक्तियों का वर्णन किया है, उनकी साहित्यिक कृतियों अथवा उनके लिए निर्मित साहित्यिक कृतियों की एक भारी संख्या की यदि हम कल्पना करें, तो हमें तत्काल एक ऐसी साहित्यिक शैली के दर्शन मिलेंगे, जिसमें प्रत्येक वस्तु नियमित और पूर्वव्यवस्थित होगी। छोटी से छोटी कृति के छोटे-से-छोटे विवरणों की भी सावधानीपूर्वक परीक्षा की जायगी। प्रत्येक वस्तु में कला और श्रम के स्पष्ट दर्शन मिलेंगे। प्रत्येक प्रकार के लेखन में उसके निजी नियम होंगे; जिन नियमों से विचलित होने की अनुमति नहीं होगी तथा जो नियम उसे अन्य समस्त प्रकार की लेखन-शैलियों से पृथक् करते हैं। शैली को विचार के समान ही महत्वपूर्ण समझा जायगा तथा रूप पर विषय वस्तु के समान ही ध्यान दिया जायगा। शब्दावली सुरुचिपूर्ण, नपीतुली और एकरूप होगी। मस्तिष्क का स्वर सदा गौरवपूर्ण होगा, वह बहुत कम उत्तेजनापूर्ण होगा तथा लेखक अपनी कृतियों की संख्या में वृद्धि करने की अपेक्षा उन्हें पूर्ण बनाने की अधिक चिन्ता करेंगे। कभी कभी ऐसा होगा कि अपने मध्य ही जीवन व्यतीत करने वाले तथा केवल अपने लिए लिखने वाले साहित्यिक वर्ग के सदस्य शेष संसार से पूर्णतया विमुख हो जायंगे, जिससे उनकी शैली मिथ्या एवं श्रमसाध्य हो जायगी। वे मात्र अपने प्रयोग के लिए सूक्ष्म साहित्यिक नियम निर्धारित करेंगे, जिसके परिणामस्वरूप वे अनजाने ही सामान्य बुद्धि के मार्ग से विपथ हो जायगे और अन्त में प्रकृति की सीमाओं का अतिक्रमण कर जायंगे। वार्तालाप की एक ऐसी पद्धति के लिए, जो अश्लील से भिन्न हो, प्रयास करते करते वे एक ऐसी अभिजात्य शब्दावली पर पहुँच जायंगे जो मुश्किल से जनता की टूटी-फूटी बोली की अपेक्षा शुद्ध भाषा से कम

दूर होगी। कुलीनतंत्रियों के मध्य साहित्य के ये स्वाभाविक खतरे हैं। अपने को जनता से पूर्णतः पृथक् रखने वाला प्रत्येक कुलीनतंत्र निर्वीर्य हो जाता है—यह तथ्य साहित्य में भी उतना ही सत्य है, जितना कि राजनीति में।

अब हम चित्र को घुमा कर उसके दूसरे पहलू पर विचार करें। हम अपने को एक प्रजातंत्र के मध्य ले चलें, जो प्राचीन परम्पराओं तथा वर्तमान संस्कृति द्वारा मस्तिष्क के सुखों में सम्मिलित होने के लिए अप्रस्तुत न हो। वहाँ श्रेणियाँ अन्तर्मिश्रित और अव्यवस्थित होती हैं; ज्ञान और सत्ता दोनों के अनन्त उपविभाग होते हैं और, यदि मैं ऐसा कह सकूँ, वे प्रत्येक दशा में बिखरे होते हैं। अतः यहाँ एक ऐसा मिलाजुला जनसमूह होता है, जिसकी बौद्धिक आवश्यकताओं की पूर्ति करनी होती है। मानसिक आनन्द के इन सभी उपासकों को एक ही प्रकार की शिक्षा नहीं मिली होती, वे अपने पिताओं से नहीं मिलते; उनका रूप निरन्तर बदलता रहता है, क्योंकि वे निरन्तर स्थान-परिवर्तन, भावना-परिवर्तन और सम्पत्ति-परिवर्तन की स्थिति में रहते हैं। अतः प्रत्येक का मस्तिष्क परम्परा अथवा समान आदतों द्वारा अपने साथियों के मस्तिष्क के साथ सम्बद्ध नहीं रहता और एक साथ संगठित होने की शक्ति प्रेरणा अथवा समय उन्हें कभी नहीं मिला। फिर भी इसी विभिन्नता मूलक और आन्दोलित जन समूह के मध्य से लेखक उत्पन्न होते हैं और उसी स्रोत से उनके लाभ तथा उनकी ख्याति का वितरण होता है।

मैं बिना कठिनाई के समझ सकता हूँ कि उन परिस्थितियों के अन्तर्गत ऐसे व्यक्तियों के साहित्य में मुझे कुलीनतांत्रिक युगों के पाठकों और लेखकों द्वारा स्वीकृत कठोर परम्परागत नियमों को कम संख्या में ही देखने की आशा करनी चाहिए। यदि ऐसी बात हो जाय कि किसी एक युग के व्यक्ति इस प्रकार के किन्हीं नियमों से सहमत थे, तो इससे परवर्ती युग के सम्बन्ध में कुछ भी प्रमाणित नहीं होगा; क्योंकि प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में प्रत्येक नयी पीढ़ी के लोग नये ही प्रकार के होते हैं। अतः इस प्रकार के राष्ट्रों में साहित्य को सरलतापूर्वक कठोर नियमों में आबद्ध नहीं किया जा सकता, और इस प्रकार के नियमों का स्थायी होना असम्भव है।

ऐसी बात नहीं है कि प्रजातंत्रों में जो लोग साहित्य का अभ्यास करते हैं, उन सभी को साहित्यिक शिक्षा प्राप्त हुई हो और जिन्हें सत्साहित्य से थोड़ा अनुराग होता है उनमें से अधिकांश व्यक्ति या तो राजनीति में या किसी ऐसे व्यवसाय में लगे रहते हैं, जिससे उन्हें कभी-कभी और छुप छिप कर ही

मस्तिष्क के आनन्द का अवसर मिल पाता है। अतः ये आनन्द उनके जीवन के मुख्य आकर्षण नहीं होते, प्रत्युत उन्हें जीवन के कठिन श्रम के मध्य एक क्षणभंगुर और आवश्यक मनोविनोद के रूप में समझा जाता है। इस प्रकार के व्यक्ति कभी साहित्य की कला का इतना पर्याप्त घनिष्ठ ज्ञान नहीं प्राप्त कर सकते, जिससे वे साहित्य के अधिक मर्मस्पर्शी सौन्दर्य की सराहना कर सकें और उनकी समझ में अभिव्यक्ति की सूक्ष्मताएँ आ भी नहीं सकतीं। चूँकि वे साहित्य में अत्यन्त कम समय लगा पाते हैं, अतः वे इस सारे समय का सर्वोत्तम उपयोग करने का प्रयत्न करते हैं। वे ऐसी पुस्तकों को पसन्द करते हैं, जिन्हें आसानी से प्राप्त किया जा सके, शीघ्रतापूर्वक पढ़ा जा सके और जिन्हें समझने के लिए विद्वत्तापूर्ण गवेषणाओं की आवश्यकता नहीं होती। वे ऐसा सौन्दर्य चाहते हैं, जो स्वतः प्रस्तुत हो जाय और जिसका आनन्द सरलतापूर्वक लिया जा सके। सर्वोपरि बात यह है कि उन्हें अप्रत्याशित और नयी वस्तु चाहिए। व्यावहारिक जीवन के संघर्ष एवं एकरसता के अभ्यास होने के कारण उन्हें प्रबल एवं तीव्र भावनाओं, विस्मयकारी परिच्छेदों तथा ऐसे सत्यों एवं त्रुटियों की आवश्यकता होती है, जो इतने प्रतिभाशाली ढंग से लिखे गये हों कि उन्हें उत्तेजित कर दें और उन्हें तत्काल, मानों उग्रता के साथ विषय के मध्य ढकेल दें।

इससे अधिक कहने की मुझे आवश्यकता ही क्या है—अथवा मेरे कहने से पूर्व ही कौन इस बात को नहीं समझता कि आगे क्या कहा जाने वाला है? सब कुछ कहने का सारांश यह है कि कुलीनतंत्र के युगों की भाँति प्रजातांत्रिक युगों में साहित्य व्यवस्था, नियमितता, विज्ञान और कला के महत्त्व को कभी प्रस्तुत नहीं कर सकता; इसके विपरीत साधारणतः उसके रूप विधान का अपमान किया जायेगा, और कभी-कभी उससे घृणा की जायेगी। शैली बहुधा अवास्तविक, अशुद्ध, अतिबोझिल और शिथिल होगी—वह लगभग सदा प्रचण्ड और साहसिक होगी। लेखक विवरण को पूर्णतया प्रदान करने की अपेक्षा रचना को शीघ्र समाप्त करना अपना लक्ष्य बनायेंगे। मोटे मोटे ग्रन्थों की अपेक्षा छोटी-छोटी पुस्तकें अधिक सामान्य हो जायेंगी। विद्वत्ता की अपेक्षा बुद्धिकौशल अधिक होगा; ज्ञान की गहनता की अपेक्षा कल्पना अधिक होगी और साहित्यिक कृतियों में विचार के अशिक्षित एवं रूक्ष बल के चिह्न होंगे—बहुधा उनमें अत्यधिक विविधता और बहुलता होगी—लेखकों का उद्देश्य आनन्दित करना नहीं—अपितु विस्मित करना, रुचि को आकृष्ट करने से अधिक भावनाओं को उत्तेजित करना मात्र होगा।

निश्चय ही यत्र-तत्र ऐसे लेखक असंदिग्ध रूप से मिलेंगे, जो एक भिन्न मार्ग को चुनेंगे और यदि वे श्रेष्ठ योग्यता से सम्पन्न हों तो अपनी त्रुटियों अथवा अपनी उच्चतर योग्यताओं के बावजूद पाठकों को प्राप्त करने में सफल हो सकते हैं, किन्तु ये अपवाद दुर्लभ होंगे और जो लेखक अपनी रचनाओं के मुख्य विषय में प्रचलित पद्धति से इस प्रकार हटेंगे, वे भी अपेक्षाकृत छोटी-छोटी बातों में सदा ही पुनः उसी मार्ग पर चलने लगेंगे।

मैंने अभी दो चरम-स्थितियों का चित्रण किया है, कोई राष्ट्र जिस क्रमगम द्वारा एक स्थिति से दूसरी स्थिति में गुजरता है, वह आकस्मिक नहीं होता—प्रत्युत वह क्रमिक होता है और उसमें अत्यन्त विभिन्न गहनता की छायाएँ रहती हैं। किसी राष्ट्र को एक स्थिति से दूसरी स्थिति में पहुँचने में जो समय लगता है, उस समय में सदा एक क्षण ऐसा होता है कि जिसमें प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों की साहित्यिक प्रतिभा का कुलीनतान्त्रिक राष्ट्रों की साहित्यिक प्रतिभा के साथ संगम होता है और दोनों मानव-मस्तिष्क पर संयुक्त आधिपत्य स्थापित करने का प्रयत्न करती हैं। इस प्रकार के युग क्षणिक किन्तु अत्यन्त उज्ज्वल होते हैं। उनमें उर्वरता होती है, किन्तु बहुलता नहीं; उत्तेजना होती है, किन्तु भ्रान्ति नहीं। अठारहवीं शताब्दी का फ्रांसीसी साहित्य उदाहरण का काम दे सकता है।

यदि मैं बलपूर्वक यह कहना चाहूँ कि किसी राष्ट्र का साहित्य सदा उसकी सामाजिक स्थिति और उसके राजनीतिक संविधान के अधीनस्थ होता है—तो मुझे अपने आशय से अधिक कहना चाहिए। मैं इस बात से अवगत हूँ कि इन कारणों से स्वतंत्र अनेक ऐसे कारण हैं, जो साहित्यिक कृतियों को कतिपय विशिष्टताएँ प्रदान करते हैं, किन्तु वे कारण मुझे प्रमुख प्रतीत होते हैं। किसी जाति की सामाजिक और राजनीतिक स्थिति तथा उसके लेखकों की प्रतिभा के मध्य सदा अनेक सम्बन्ध विद्यमान रहते हैं, जो कोई भी एक सम्बन्ध को जानता है, वह कभी दूसरे सम्बन्ध से पूर्णतया अपरिचित नहीं रहता।

२३. प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में कविता के कतिपय स्रोत

'कविता' शब्द के भिन्न भिन्न अर्थ लगाये गये हैं। यदि मैं इस प्रश्न पर विचारविमर्श करूँ कि इन परिभाषाओं में से किसको चुना जाय तो इससे मेरे

पाठक थक जायेंगे। मैं उन्हें तत्काल बता देना पसन्द करता हूँ कि मैंने किस परिभाषा को चुना है। मेरे मतानुसार आदर्श के अन्वेषण तथा रेखांकन का नाम कविता है।

कवि वह है, जो अस्तित्वशील वस्तु के एक भाग का दमन कर चित्र में कतिपय काल्पनिक स्पर्शों की वृद्धि कर और कतिपय ऐसी वास्तविक परिस्थितियों को, जो यथार्थतः एकत्र नहीं होतीं, संयुक्त कर, प्रकृति के कार्य को पूर्ण करता है और उसका विस्तार करता है। इस प्रकार कविता का लक्ष्य सत्य का प्रतिनिधित्व करना नहीं, अपितु इसको आकर्षक बनाना और मस्तिष्क के समक्ष उच्चतर कल्पना को उपस्थित करना होता है। पद्य, जिसे भाषा का आदर्श सौन्दर्य समझा जाता है, अत्यधिक कवित्वपूर्ण हो सकता है, किन्तु पद्य अपने आप में कविता नहीं होता।

अब मैं इस बात का पता लगाने के लिए अग्रसर होता हूँ कि प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों के कार्यों, भावनाओं और मतों में क्या कुछ ऐसे हैं, जो आदर्श की कल्पना कराते हैं और इस कारण जिन्हें कविता का प्राकृतिक स्रोत समझा जा सकता है।

सर्वप्रथम इस बात को मान्य करना ही होगा कि आदर्श सौन्दर्य के प्रति रुचि तथा उसकी अभिव्यक्ति से प्राप्त होने वाला आनन्द कुलीनतान्त्रिक जनता में जितना प्रबल अथवा व्यापक होता है, उतना प्रबल अथवा व्यापक वह प्रजातान्त्रिक जनता के मध्य नहीं होता। कुलीनतान्त्रिक राष्ट्रों में कभी-कभी ऐसा होता है कि शरीर मानों स्वतः स्फूर्त कार्य करता है, जब कि उच्चतर शक्तियाँ निष्क्रियता से आबद्ध एवं बोझिल होती हैं। इन राष्ट्रों में जनता बहुधा कवित्वमय रुचियों का प्रदर्शन करती है और कभी-कभी उसकी कल्पना उसकी आसपास की स्थिति का अतिक्रमण कर उससे बहुत ऊपर चली जाती है।

किन्तु प्रजातान्त्रिक देशों में भौतिक सुख के प्रति प्रेम, अपनी स्थिति में सुधार करने का विचार, प्रतियोगिता की उत्तेजना पूर्वकल्पित सफलता का आकर्षण जैसी अनेक प्रेरणाएँ होती हैं, जो मनुष्यों को एक क्षण के लिए भी पथ से विचलित होने की अनुमति दिये बिना उन्हें उन सक्रिय व्यवसायों में आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करती हैं, जिन्हें वे ग्रहण करते हैं। बुद्धि द्वारा मुख्यतः इसी बात पर बल दिया जाता है। कल्पना निःशेष नहीं होती, किन्तु उसका मुख्य कार्य उपयोगी वस्तुओं की सृष्टि करना तथा यथार्थ का प्रतिनिधित्व करना होता है। समानता का सिद्धान्त न केवल मनुष्यों को आदर्श सौन्दर्य के

वर्णन से विमुख कर देता है, वह उन पदार्थों की संख्या में भी कमी कर देता है, जिनका वर्णन करना होता है।

कुलीनतंत्र निश्चित धर्मों की सुदृढ़ता और दीर्घ जीवन के लिए तथा राजनीतिक संस्थाओं के स्थायित्व के लिए भी अनुकूल होता है; क्योंकि वह समाज को एक निश्चित स्थिति में रखता है। वह न केवल मानव-मस्तिष्क को विश्वास के निश्चित क्षेत्र के अंतर्गत रखता है, बल्कि वह एक दूसरे धर्म की अपेक्षा एक ही धर्म को स्वीकार करने के लिए पूर्ण रूप से तैयार कर देता है। कुलीनतांत्रिक जनता सदैव परमात्मा और मनुष्य के मध्य मध्यस्थ शक्तियों को रखने की ओर उन्मुख होती है। इस सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि कुलीनतांत्रिक तत्व कविता के लिए अनुकूल होता है। जब जगत में ऐसे अप्राकृतिक प्राणी निवास करते हैं, जिनका अनुभव इन्द्रियों द्वारा नहीं किया जा सकता, प्रत्युत जिनका पता मस्तिष्क द्वारा लगाया जाता है, तब कल्पना स्वतंत्र उड़ान भर सकती है और कवियों को वर्णन के लिए हजारों विषय तथा उनकी कृतियों में रुचि लेने वाले असंख्य पाठक मिलते हैं। इसके विपरीत प्रजातांत्रिक युगों में कभी-कभी ऐसा होता है कि मनुष्य धर्म के मामलों में भी उतने ही अस्थिर रहते हैं जितने अपने कानूनों के मामलों में। तब संशय कवियों की कल्पना को पुनः पृथ्वी पर खींच लाता है तथा उन्हें यथार्थ एवं दृश्य जगत में आबद्ध कर देता है। जब समानता का सिद्धान्त धार्मिक विश्वास को विक्षुब्ध नहीं करता, तब भी उसकी प्रवृत्ति उसका सरलीकरण करने, गौण अभिकर्ताओं से ध्यान हटाने तथा उसे मुख्यतः सर्वोच्च सत्ता पर आधारित करने की होती है।

कुलीनतंत्र स्वभावतः मानव मस्तिष्क को भूतकाल पर विचार करने की दिशा में ले जाता है। उसे वहीं जमा देता है। इसके विपरीत प्रजातंत्र मनुष्यों में प्राचीनता के प्रति एक आन्तरिक अरुचि उत्पन्न कर देता है। इस सम्बन्ध में कुलीनतंत्र कविता के अत्यधिक अनुकूल होता है; क्योंकि जो वस्तुएँ जितनी अधिक दूर होती हैं वे उतनी ही अधिक बड़ी और अस्पष्ट हो जाती हैं और इन दो कारणों से वे आदर्श के रेखांकन के लिए अधिक उपयुक्त होती हैं। कविता को भूतकाल से वंचित करने के पश्चात् समानता का सिद्धान्त अंशतः उसे वर्तमान से भी वंचित कर देता है। कुलीनतांत्रिक राष्ट्रों में विशेषाधिकार-प्राप्त कतिपय ऐसे व्यक्ति होते हैं, जिनकी स्थिति मनुष्य की स्थिति के बाहर और उससे परे कही जा सकती है। इन व्यक्तियों के पास सत्ता, सम्पत्ति, ख्याति, बुद्धि, संस्कार और सभी बातों में एक विलक्षण विशिष्टता प्रतीत होती है। फलस्वरूप उन्हें

कभी अत्यन्त निकटता से नहीं देख पाता, अथवा वह उनका निरीक्षण सूक्ष्मता-पूर्वक नहीं कर पाता और ऐसे व्यक्तियों के वर्णन को कवित्वमय बनाने के लिए किसी भी बात की आवश्यकता नहीं होती। दूसरी ओर, उन्हीं व्यक्तियों के मध्य आपको ऐसे अज्ञान, निम्न और पराधीनता के पाश में बँधे हुए वर्ग मिलेंगे जो अपने अपसंस्कार और दयनीयता के कारण उतने ही उपयुक्त विषय होते हैं, जितने कि पहले वर्ग के व्यक्ति अपनी महत्ता और सत्कार के कारण होते हैं। इसके अतिरिक्त जिन विभिन्न वर्गों से कुलीनतान्त्रिक समाज का निर्माण होता है, वे एक दूसरे से पृथक् एवं इतने अपूर्ण रूप से परिचित होते हैं कि उनकी वास्तविक स्थिति में कुछ जोड़ कर अथवा कुछ घटा कर कल्पना द्वारा सदा उनका प्रतिनिधित्व किया जा सकता है।

प्रजातान्त्रिक समुदायों में, जहाँ सभी व्यक्ति महत्त्वहीन और बहुत अधिक समान होते हैं, प्रत्येक व्यक्ति, जब वह अपना सर्वेक्षण करता है, अपने समस्त साथियों को तत्काल देख लेता है। अतः प्रजातान्त्रिक युगों के कवि कभी किसी व्यक्ति विशेष को अपनी कविता का विषय नहीं बना सकते; क्योंकि कोई अल्प महत्त्ववाला और सर्वत्र स्पष्टतापूर्वक दिखायी देने वाला पदार्थ कभी आदर्श कल्पना का विषय नहीं बन सकता।

इस प्रकार विश्व में जिस प्रकार समानता के सिद्धान्त की प्रतिष्ठा हुई है, उसी अनुपात में कविता के अधिकांश प्राचीन स्रोत शुष्क हो गये हैं। अब हम यह दिखाने का प्रयत्न करेंगे कि वह कितने नवीन स्रोतों को जन्म दे सकता है।

जब संशयवाद के कारण स्वर्ग वीरान बन गया और समानता की प्रगति के कारण मनुष्य तुच्छतर और अधिक ज्ञानवान बन गया, तब कवियों ने, जिन्हें अभी तक इस बात का पता नहीं था कि वे कुलीनतन्त्र के साथ ही नष्ट हो जाने वाली महान विषय-वस्तुओं का स्थान किस वस्तु को दे सकते हैं, निर्जीव प्रकृति की ओर दृष्टिनिक्षेप किया। चूँकि देवता और वीर उनकी दृष्टि से ओझल हो गये, तब वे नदियों और पर्वतों का वर्णन करने की ओर प्रवृत्त हुए। इसी से विगत शताब्दी में उस प्रकार की कविता का जन्म हुआ, जिसे भेद करने की दृष्टि से इतिवृत्तात्मक कविता की संज्ञा प्रदान की गयी है। कुछ ने यह मत व्यक्त किया है कि आच्छादित करने वाले समस्त भौतिक एवं निर्जीव पदार्थों का यह सौन्दर्यमय चित्रण प्रजातान्त्रिक युगों की विशिष्ट प्रकार की कविता है, किन्तु मेरा विश्वास है कि यह एक प्रकार की भूल है और यह केवल एक संक्रमणकालीन कविता है।

मेरी मान्यता है कि अन्त में प्रजातंत्र कल्पना को समस्त पदार्थों से हटा कर मनुष्य की ओर ले आता है और उसे केवल मनुष्य पर केन्द्रित कर देता है। प्रजातांत्रिक राष्ट्र प्रकृति की सृष्टियों पर विचार कर कुछ क्षणों तक अपना मनोरंजन कर सकते हैं, किन्तु वास्तव में उन्हें प्रेरणा केवल अपने ही सर्वेक्षण से मिलती है। इस प्रकार के राष्ट्रों में कविता के वास्तविक स्रोत यहाँ और केवल यहीं मिल सकते हैं और यह विश्वास किया जा सकता है कि जो कवि यहाँ से अपनी प्रेरणाएँ नहीं प्राप्त करेंगे, उनका उन मस्तिष्कों पर कोई प्रभाव नहीं रह जायगा, जिन्हें वे मुग्ध करेंगे और अन्त में भावनाहीन दर्शकों के अतिरिक्त उनकी कृतियों को पढ़ने वाला कोई नहीं रह जायगा।

मैं बता चुका हूँ कि किस प्रकार प्रजातांत्रिक युगों में प्रगति और मानव-जाति की अनिश्चित पूर्णता की धारणाएँ मिलती हैं। प्रजातांत्रिक राष्ट्र भूतकाल की तनिक भी चिन्ता नहीं करते, किन्तु भविष्य की कल्पनाओं में सदा तल्लीन रहते हैं; इस दिशा में उनकी अपरिसीम कल्पना उनकी समस्त सीमाओं का अतिक्रमण कर जाती है। अतः यहाँ कवियों की प्रतिभा के लिए व्यापकतम क्षेत्र मिलता है; जिससे वे अपनी रचनाओं को दृष्टि से पर्याप्त दूर ले जाते हैं। प्रजातंत्र, जो कवि के दृष्टि-पथ से भूतकाल को विलुप्त कर देता है, भविष्य को उसके समक्ष खोल कर रख देता है।

चूँकि प्रजातांत्रिक समाज का निर्माण करने वाले समस्त नागरिक समान और सदृश होते हैं, इसलिए कवि उनमें से किसी एक का वर्णन नहीं कर सकता, अपितु वह अपनी प्रतिभा का उपयोग स्वयं राष्ट्र के लिए करता है। व्यक्तियों की सामान्य एकरूपता के कारण, जिससे उन में से कोई एक व्यक्ति पृथक् रूप से कविता का उचित विषय नहीं बन सकता, कवि उन सभी व्यक्तियों को एक ही कल्पना-चित्र में सम्मिलित कर लेता है और स्वयं समाज का सामान्य सर्वेक्षण करता है। अपने सम्बन्ध में प्रजातांत्रिक राष्ट्रों की दृष्टि अन्यों की अपेक्षा स्पष्टतर होती है और इतना प्रभावोत्पादक यह दृ आदर्श के चित्रांकन के लिए सराहनीय रूप से उपयुक्त होता है।

मैं निस्संकोच रूप से स्वीकार करता हूँ कि अमरीकियों में कवि नहीं हैं; मैं इस बात को स्वीकार नहीं कर सकता कि उनमें कवित्व की भावनाएँ नहीं हैं। यूरोप में लोग अमरीका के जंगलों के विषय में बहुत अधिक बातें करते हैं, किन्तु अमरीकी स्वयं उनके विषय में कुछ नहीं सोचते। वे निर्जीव प्रकृति के चमत्कारों के प्रति उदासीन हैं और यह कहा जा सकता है कि वे अपने चारों

और स्थित प्रचण्ड वनों को तब तक नहीं देखते, जब तक उन्हें काटा नहीं जाता। उनकी आँखें एक दूसरे दृश्य पर जमी रहती हैं। अमरीकी जनता इन जंगलों के मध्य अपने अभिमान को ही—दलदलों का सुखाया जाना, नदियों का मार्ग-परिवर्तन, निर्जन स्थानों का बसाया जाना और प्रकृति को वशीभूत करना—देखती है। अपने सम्बन्ध में अमरीकियों का यह कल्पना-चित्र उनके समक्ष केवल कभी-कभी उपस्थित नहीं होता। यह कहा जा सकता है कि वह प्रत्येक अमरीकी के कम से-कम तथा अधिक से अधिक महत्त्वपूर्ण कार्यों में परिलक्षित होता है तथा उसके मस्तिष्क के सामने सदा घूमता रहता है।

संयुक्त-राज्य अमरीका में एक व्यक्ति का जीवन तुच्छ, नीरस, क्षुद्र स्वार्थों से ओत-प्रोत अर्थात् एक शब्द में कवित्वहीन होता है। उतनी कवित्वहीन वस्तु की कल्पना नहीं की जा सकती; किन्तु वह जिन विचारों की ओर इंगित करता है, उनमें से कोई-न-कोई विचार सदा ऐसा होता है, जो कविता से सदा ओतप्रोत होता है और यही वह गुप्त स्नायु है जो समस्त शरीर को स्फूर्ति प्रदान करता है।

कुलीनतान्त्रिक युगों में प्रत्येक समुदाय तथा प्रत्येक व्यक्ति अन्य समस्त समुदायों तथा व्यक्तियों से पृथक् और असम्बद्ध रहता है। प्रजातान्त्रिक युगों में मनुष्यों के तीव्र आरोहावरोह तथा उनकी अभिलाषाओं की अधीरता उन्हें निरन्तर आगे बढ़ाती रहती है, जिससे विभिन्न देशों के निवासी आपस में मिलते हैं, एक दूसरे को देखते-सुनते हैं तथा एक दूसरे से आदान-प्रदान करते हैं। अतः केवल एक समुदाय के सदस्यों में ही अधिक समानता का विकास नहीं होता, स्वयं समुदाय एक दूसरे में विलीन हो जाते हैं और यह समस्त समूह दर्शक की आँखों के समक्ष एक विशाल प्रजातन्त्र का दृश्य उपस्थित करता है, जिसका प्रत्येक नागरिक एक राष्ट्र होता है। यह मानव जाति के स्वरूप को प्रथम बार अधिकतम प्रकाश में प्रदर्शित करता है। जो कुछ समस्त मानव जाति के अस्तित्व, उसके उतार-चढ़ाव और उसके भविष्य से सम्बन्ध रखता है, वह कविता का एक प्रचुर कोष बन जाता है।

कुलीनतान्त्रिक युगों में रहने वाले कवि किसी समाज अथवा व्यक्ति के जीवन की कतिपय घटनाओं का वर्णन करने में अत्यधिक सफल हुए हैं, किन्तु उनमें से किसी ने अपनी कृतियों में मानव जाति के भाग्य को सम्मिलित करने का कभी साहस नहीं किया—यह एक ऐसा कार्य है जिसके लिए प्रजातान्त्रिक युगों में लिखने वाले कवि प्रयत्न कर सकते हैं।

जिस समय प्रत्येक व्यक्ति अपनी आँखों को अपने देश से ऊपर उठाकर समस्त मानव जाति को विस्तारपूर्वक देखना प्रारम्भ कर देता है, उसी समय ईश्वर अपनी पूर्ण एवं समस्त महिमा के साथ मानव-मस्तिष्क के समक्ष अधिक सुस्पष्ट हो जाता है। यदि प्रजातान्त्रिक युगों में सत्वार्थक धर्म में विश्वास बहुधा डिग जाता है और मध्यस्थ अभिकर्ताओं में, चाहे उन्हें जिस नाम से पुकारा जाय, विश्वास अधिक बढ़ जाता है, तो दूसरी ओर मनुष्यों में स्वयं ईश्वर की एक अत्यधिक व्यापक कल्पना करने की प्रवृत्ति भी होती है और मानवीय कार्यों में उसका हस्तक्षेप उनकी दृष्टि के समक्ष एक नूतन एवं अधिक प्रभावोत्पादक रूप में उपस्थित होता है। मानव जाति को एक अखण्ड समुदाय के रूप में देखते हुए वे सरलतापूर्वक इस बात को समझते हैं कि नियतियाँ एक ही विधान से नियमित होती हैं और वे प्रत्येक व्यक्ति के कार्यों में उस सार्वजनीन एवं शाश्वत योजना का चिह्न देखते हैं, जिस योजना द्वारा ईश्वर हमारी जाति पर शासन करता है। इस विचार को प्रजातान्त्रिक युगों में कविता का एक दूसरा प्रभूत स्रोत माना जा सकता है।

यदि प्रजातान्त्रिक कवि देवताओं, दानवों और देवदूतों को साकार रूप प्रदान करने और पृथ्वी की सर्वोच्चता को अस्वीकार करने के लिए स्वर्ग से उन्हें नीचे खींच कर लाने का प्रयत्न करेंगे, तो वे सदा उपहासास्पद एवं नीरस प्रतीत होंगे; किन्तु वे जिन महान घटनाओं को समारोहपूर्वक स्मरण करते हैं, उनको यदि विश्व पर शासन करने वाले सामान्य ईश्वरीय विधानों के साथ सम्बद्ध करने का प्रयत्न करें तथा सर्वोच्च शासक के अस्तित्व को दिखाये बिना सर्वोच्च मस्तिष्क के विचारों का रहस्योद्घाटन करें, तो उनकी रचनाओं को समझा जायगा और उनकी सराहना की जायगी, क्योंकि उनके समकालीन व्यक्तियों की कल्पना स्वेच्छापूर्वक इसी दिशा को ग्रहण करती है।

इसी प्रकार इस बात की पूर्व कल्पना की जा सकती है कि प्रजातान्त्रिक युगों में रहने वाले कवि व्यक्तियों और सफलताओं का वर्णन करने की अपेक्षा भावनाओं और विचारों के वर्णन को अधिक पसन्द करेंगे। प्रजातंत्रों में मनुष्यों की भाषा, वेशभूषा और दैनिक कार्य आदर्श की कल्पनाओं के लिए अरुचिकर होते हैं। ये वस्तुएँ अपने आप में कवित्वमय नहीं होतीं और यदि बात इससे भिन्न होती, तो उसका स्वरूप वही नहीं रह जाता; क्योंकि कवि जिन व्यक्तियों के समक्ष उनका वर्णन करेगा वे इन वस्तुओं से अधिक परिचित होते हैं। इससे बाध्य होकर कवि इन्द्रियों के लिए बोधगम्य बाह्य आवरण के नीचे निरन्तर

अनुसंधान करता रहता है, जिससे वह अन्तरात्मा को पढ़ सके और मनुष्य की यथार्थिव प्रकृति की गुप्त गहराइयों का अध्ययन-निरीक्षण आदर्श के चित्रांकन के लिए जितना उपयुक्त होता है, उतनी उपयुक्त कोई वस्तु नहीं होती। विरोधाभासों, महत्ता और क्षुद्रता, गहन अंधकार और विस्मयजनक प्रकाश से युक्त एक ऐसे आश्चर्यजनक पदार्थ का, जो एक साथ ही उत्तेजनाजनक दया, प्रशंसा और भय तथा घृणा की सृष्टि करने की क्षमता रखता हो, पता लगाने के लिए मुझे पृथ्वी और आकाश के एक छोर से दूसरे छोर तक जाने की आवश्यकता नहीं है। मुझे केवल अपने पर दृष्टिपात करने की आवश्यकता है। मनुष्य शून्य से उत्पन्न होता है, समय को पार करता है और सदा के लिए परमात्मा में विलीन हो जाता है। वह केवल एक क्षण के लिए दो अतल खन्दकों के तट पर विचरण करता हुआ दिखायी पड़ता है और वहीं खो जाता है।

यदि मनुष्य अपने से पूर्णतया अपरिचित होता तो उसमें कोई कविता नहीं होती; क्योंकि मस्तिष्क जिस वस्तु की कल्पना नहीं करता, उसका वर्णन करना असम्भव है। यदि मनुष्य स्वयं अपनी प्रकृति को स्पष्ट देख पाता तो उसकी कल्पना निष्क्रिय हो जाती और चित्र में कुछ भी वृद्धि नहीं कर पाती, किन्तु मनुष्य की प्रकृति उसके लिए इतने पर्याप्त रूप में प्रकट होती है कि वह अपने विषय में कुछ समझ सके, किन्तु अन्य सभी के लिए वह इतनी अन्धकारमय होती है कि उसके अस्तित्व के विषय में कुछ अधिक पूर्ण धारणा बनाने के लिए गहन अंधकार में प्रवेश करना पड़ता है, जिसमें वह सदा निष्फल भटकता रहता है।

प्रजातांत्रिक समाज में कविता काल्पनिक कथाओं अथवा प्राचीन परम्पराओं के स्मारकों पर आधारित नहीं होगी। कवि जगत में अतिमानवीय प्राणियों को, जिनमें उसके पाठकों का तथा स्वयं उसका विश्वास नहीं रह गया है, बसाने का प्रयत्न नहीं करेगा; न वह पुण्य और पाप को, जिन्हें उनके अपने ही स्वरूप में अधिक अच्छी तरह ग्रहण किया जाता है, शुष्क रीति से साकार बनायेगा। ये सभी साधन उसके किसी काम नहीं आते; किन्तु मनुष्य बना रहता है और कवि को इससे अधिक की आवश्यकता नहीं है। मानव-जाति का भविष्य—अपने देश और अपने युग से पृथक और अपनी भावनाओं, अपने संशयों, अपनी दुर्लभ समृद्धि और कल्पनातीत दयनीयता के साथ प्रकृति और परमात्मा की उपस्थिति में खड़ा मनुष्य स्वयं इन राष्ट्रों में कविता का एकमात्र नहीं, तो प्रमुख विषय बन जायगा।

यदि हम विश्व में प्रजातंत्र की स्थापना होने के बाद उत्पन्न हुए महानतम कवियों की कृतियों पर विचार करें, तो अनुभव द्वारा इस कथन की पुष्टि हो सकती है। हमारे युग के जिन लेखकों ने फास्ट, चाइल्ड, हैरोल्ड, रैने और जोसलिन की आकृतियों का इतने सराहनीय ढंग से रेखांकन किया है, उन्होंने किसी व्यक्ति के कार्यों को अभिलिखित करने का नहीं, प्रत्युत मानव-हृदय के कतिपय अधिक अन्धकारमय कोनों को विस्तृत करने तथा उन पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया।

ऐसी होती हैं प्रजातंत्र की कविताएँ। अतः समानता का सिद्धान्त कविता के समस्त विषयों को नष्ट नहीं करता; यह उनकी संख्या को कम, किन्तु उनको विशालतर बना देता है।

२४. अमरीकी लेखकों और वक्ताओं की अतिरेकपूर्ण शैली

मैंने अनेक बार कहा है कि जो अमरीकी व्यवसाय में स्पष्ट, सीधी-सादी, समस्त आडम्बरों से रहित और इतनी अधिक सरल भाषा काम में लाते हैं, जो बहुधा रूक्ष हो जाती है, वे ही ज्योंही अधिक कवित्वमय शब्दावली का प्रयोग करने का प्रयत्न करते हैं, त्योंही वे अतिरेकपूर्ण हो जाते हैं। तब वे भाषण के एक सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक अपने आडम्बर का प्रदर्शन करते हैं और उन्हें प्रत्येक अवसर पर प्रचुर मात्रा में कल्पना-चित्रों की सृष्टि करते हुए सुन कर यह कल्पना की जा सकती है कि वे कभी सरल भाषा में कोई बात नहीं करते।

अंग्रेज इस प्रकार की त्रुटियाँ अपेक्षाकृत कम करते हैं। इसका कारण बिना विशेष कठिनाई के बताया जा सकता है। प्रजातांत्रिक समुदायों में प्रत्येक व्यक्ति अभ्यासवश एक अत्यन्त क्षुद्र पदार्थ के विषय में अर्थात् स्वयं अपने विषय में सोचने में तल्लीन रहता है। यदि वह कभी अपनी दृष्टि को ऊपर ले जाता है, तो वह केवल विशाल समाज के विशाल आकार को अथवा मानव जाति के उससे भी अधिक प्रभावोत्पादक रूप को देखता है। उसके समस्त विचार या तो अत्यन्त सूक्ष्म और स्पष्ट होते हैं या अत्यन्त सामान्य एवं अस्पष्ट होते हैं; बीच में जो कुछ होता है, वह शून्य होता है। अतः जब वह अपने निजी क्षेत्र से बाहर खींच लाया जाता है, तब वह सदा यह आशा

करता है कि उसके ध्यान में कोई आश्चर्यजनक वस्तु लायी जायगी और केवल इन शर्तों पर ही वह एक क्षण के लिए अपने को उन तुच्छ, जटिल चिन्ताओं से पृथक् करना स्वीकार करता है, जिनसे उसके जीवन में आकर्षण एवं उत्तेजना की सृष्टि होती है।

मेरी समझ में इससे इस बात का पर्याप्त रूप से स्पष्टीकरण हो जाता है कि प्रजातंत्रों में मनुष्य, जिनकी चिन्ताएँ सामान्यतः इतनी तुच्छ होती हैं, क्यों अपने कवियों को इतनी विशाल कल्पनाओं और इतने असीमित वर्णन के लिए कहते हैं। जहाँ तक लेखकों का सम्बन्ध है, वे उस प्रवृत्ति के अनुसार कार्य करने में पीछे नहीं रहते, जो प्रवृत्ति स्वयं उनकी भी होती है और उनका विस्तार सीमाओं के पार करते हुए वे बहुधा वृहदाकार तक पहुँचने के लिए महान का परित्याग कर देते हैं। इन साधनों द्वारा वे समूह की दृष्टि को आकृष्ट करने तथा उसे सरलतापूर्वक स्वयं अपने ऊपर केन्द्रित कर लेने की आशा रखते हैं; उनकी आशाएँ निष्फल भी नहीं होतीं, क्योंकि चूँकि समूह कविता में विशाल सीमाओं वाले पदार्थों के अतिरिक्त और कुछ नहीं ढूँढता, इसलिए उसके पास न तो इतना समय होता है कि वह अपने समक्ष उपस्थित किये गये समस्त पदार्थों के स्वरूप की सही-सही माप कर सके, न उसके पास इतनी शुद्ध रुचि होती है कि वह तत्काल इस बात को देख सके कि वे पदार्थ कहाँ सीमा से बाहर हो गये हैं। लेखक और जनता एक साथ ही एक दूसरे को दोषपूर्ण बनाते हैं।

हमने यह भी देखा है कि प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों में कविता के स्रोत वैभवपूर्ण होते हैं, किन्तु प्रचुर मात्रा में नहीं होते। वे स्रोत शीघ्र ही समाप्त हो जाते हैं और कवियों को चूँकि यथार्थ एवं सत्य में आदर्श के तत्त्व नहीं मिलते, इसलिए वे उनका पूर्ण रूप से परित्याग कर देते हैं और दानवों की सृष्टि करते हैं। मुझे इस बात का भय नहीं है कि प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों की कविता नीरस सिद्ध होगी अथवा उसकी उड़ान पृथ्वी के अत्यन्त निकट होगी; बल्कि मुझे यह आशंका है कि वह सदा बादलों में लुप्त होती रहेगी तथा अन्त में उसकी पहुँच विशुद्ध काल्पनिक क्षेत्रों तक ही सीमित होगी। मुझे आशंका है कि प्रजातान्त्रिक कवियों की रचनाएँ बहुधा प्रभूत एवं असम्बद्ध कल्पना-चित्रों से अतिरंजित वर्णनों और विचित्र प्राणियों से ओतप्रोत होंगी तथा उनके मस्तिष्क के काल्पनिक प्राणियों के कारण हमें कभी-कभी यथार्थ जगत पर खेद प्रगट करना पड़ सकता है।

२५. प्रजातांत्रिक इतिहासकारों की कतिपय विशिष्टताएँ

कुलीनतानिक युगों में लिखने वाले इतिहासकार समस्त घटनाओं का कारण कतिपय व्यक्तियों की किसी विशेष इच्छा और चरित्र को बताते हैं और उनकी प्रवृत्ति सर्वाधिक महत्वपूर्ण क्रान्तियों का कारण तुच्छ घटनाओं को बताने की होती है। वे तुच्छतम कारणों का पता अत्यंत दूरदर्शिता से लगाते हैं और बहुधा महानतम कारणों को अदृष्ट ही छोड़ देते हैं।

प्रजातांत्रिक युगों में रहने वाले इतिहासकारों में इसके ठीक विपरीत विशिष्टताएँ दिखायी देती हैं। उनमें से अधिकांश जाति के भविष्य पर व्यक्ति का अथवा जनता के भाग्य पर नागरिकों का कोई प्रभाव मुश्किल से बताते हैं, किन्तु दूसरी ओर वे छोटी छोटी घटनाओं के महान सामान्य कारण बताते हैं। इन विरोधी प्रवृत्तियों से एक दूसरे का स्पष्टीकरण हो जाता है।

जब कुलीनतानिक युगों का इतिहासकार विश्व के दृश्य का सर्वेक्षण करता है, तब वह तत्काल ऐसे अत्यन्त थोड़े प्रमुख अभिनेताओं को देखता है, जो समस्त भूमिकाओं को सम्पन्न करते हैं। ये महान व्यक्ति, जो रंगमंच के अग्रभाग में स्थित होते हैं, ध्यान को आकृष्ट कर लेते हैं और उसे अपने ही ऊपर केन्द्रित कर लेते हैं। जब कि इतिहासकार उन गुप्त उद्देश्यों का अनुसंधान करने के लिए सन्नद्ध रहता है जिन उद्देश्यों से ये व्यक्ति बोलते और कार्य करते हैं, अन्य उद्देश्य उसके ध्यान में नहीं आते। कतिपय व्यक्ति जिन कार्यों को करते हुए देखे जाते हैं, उनके महत्व से वह एक व्यक्ति के शक्य प्रभाव के विषय में अतिरंजित अनुमान लगाता है और उसके परिणामस्वरूप वह स्वभावतः यह सोचने लगता है कि समूह की आरम्भिक प्रेरणाओं का स्पष्टीकरण करने के लिए यह आवश्यक है कि उनका कारण किसी एक व्यक्ति के विशेष प्रभाव को बताया जाय।

इसके विपरीत जब समस्त नागरिक एक दूसरे से स्वतंत्र होते हैं और उनमें से प्रत्येक व्यक्तिगत रूप से दुर्बल होता है, तब समुदाय के ऊपर महान अथवा उससे भी कम स्थायी प्रभाव रखता हुआ नहीं दिखाई देता। प्रथम दृष्टि में उसके ऊपर व्यक्तियों का कोई प्रभाव नहीं प्रतीत होता और समाज उन सभी व्यक्तियों के, जिनसे उसका निर्माण होता है, स्वतंत्र एवं ऐच्छिक कार्य से अकेला आगे बढ़ता हुआ प्रतीत होगा। इससे स्वभावतः मस्तिष्क को उस सामान्य कारण की खोज करने की प्रेरणा मिलती है, जो एक साथ ही एक ही दिशा में ले जाता है।

मुझे इस बात का भली-भाँति विश्वास है कि प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में भी कतिपय व्यक्तियों की प्रतिभा, अवगुण अथवा गुण किसी जाति के इतिहास के स्वाभाविक प्रवाह को अवरुद्ध करते हैं अथवा उसके मार्ग को प्रशस्त करते हैं, किन्तु कुलीनतांत्रिक युगों की अपेक्षा, इतिहासकारों का काम केवल सामान्य घटनाओं के समूह से एक व्यक्ति अथवा थोड़े-से व्यक्तियों के विशेष प्रभाव को पृथक् कर देना है। समानता के युगों में इस प्रकार के गौण एवं आकस्मिक कारण अनन्त रूप से अधिक विभिन्न, अधिक गुप्त, अधिक जटिल, कम प्रबल होते हैं और परिणामतः उनका पता लगा सकना कम सरल होता है। समानता के युगों में इतिहासकार शीघ्र ही इस श्रम से थक जाता है, उसका मस्तिष्क इस भूल भुलैया में खो जाता है और व्यक्तियों के प्रभाव को स्पष्टतापूर्वक देख सकने अथवा उसकी ओर स्पष्टतापूर्वक इंगित कर सकने में असमर्थ होने के कारण वह इस प्रभाव को ही अस्वीकार करने लगता है। वह जाति की विशिष्टताओं, देश के भौतिक निर्माण अथवा सभ्यता की श्रेष्ठता के विषय में बात करना अधिक पसन्द करता है, जिससे उसके श्रम में कमी हो जाती है और उसके पाठक को कम मूल्य पर अधिक संतोष प्राप्त होता है।

एम. डी लफायत ने अपने संस्मरणों में किसी स्थान पर कहा है कि सामान्य कारणों की अतिरंजित पद्धति द्वितीय श्रेणी के राजनेताओं को आश्चर्यजनक सन्तोष प्रदान करती है। इसमें इतना मैं और जोड़ दूँगा कि इसके प्रभाव द्वितीय श्रेणी के इतिहासकारों के लिए कम सन्तोषदायक नहीं होते, वह पद्धति उनके कार्य के कठिनतम भाग से उन्हें मुक्ति दिलाने के लिए सदा कुछ शक्तिशाली कारण प्रदान कर सकती है और वह उनके दिमाग की निष्क्रियता अथवा अयोग्यता को मुक्त कर देती है, जबकि वह उन्हें गम्भीर चिन्तक होने का सम्मान प्रदान करती है।

जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, मेरा मत है कि सभी समय इस संसार की घटनाओं के एक बड़े भाग को अत्यंत सामान्य तथ्यों से उद्भूत तथा एक दूसरे भाग को विशेष प्रभावों से उद्भूत सिद्ध किया जा सकता है। ये दो प्रकार के कारण सदा कार्यरत रहते हैं, केवल उनके अनुपात भिन्न-भिन्न होते हैं। कुलीनतांत्रिक युगों की अपेक्षा प्रजातांत्रिक युगों में सामान्य तथ्यों द्वारा अधिक बातों का स्पष्टीकरण किया जाता है और तब बहुत कम बातों का कारण व्यक्तिगत प्रभावों को बताया जाता है। कुलीनतन्त्र के युगों में इसके विपरीत बात होती है। विशेष प्रभाव प्रबलतर होते हैं, सामान्य कारण निर्बलतर होते हैं, निश्चय

ही यदि हम स्वयं स्थिति की विषमता के तथ्य को, जिससे कतिपय व्यक्ति शेष समस्त कारणों की स्वाभाविक प्रवृत्तियों को भूल जाते हैं, एक सामान्य कारण न मानते हों।

अतः जो इतिहासकार प्रजातांत्रिक समाजों मे होने वाली घटनाओं का वर्णन करने का प्रयत्न करते हैं, उनका इनमें से अधिकांश घटनाओं को सामान्य कारणों से उत्पन्न बताना तथा अन्य सामान्य कारणों को ढूँढने पर प्रमुख ध्यान देना ठीक है, किन्तु उनका व्यक्तियों के विशेष प्रभाव को पूर्णरूप से अस्वीकृत करना गलत है, क्योंकि वे सफलतापूर्वक उसका अनुसंधान अथवा अनुसरण नहीं कर सकते।

प्रजातांत्रिक युगों के इतिहासकारों में न केवल प्रत्येक घटना का एक महान कारण बताने की प्रवृत्ति होती है, प्रत्युत उनमे घटनाओं को एक साथ सम्बद्ध करने की प्रवृत्ति होती है, जिससे उनसे एक पद्धति का निर्माण किया जा सके। कुलीनतांत्रिक युगों मे इतिहासकारों का ध्यान चूँकि निरंतर व्यक्तियों की ओर आकृष्ट रहता है, इसलिए वे घटनाओं के सम्बन्ध पर ध्यान नहीं दे पाते अथवा यह कहा जा सकता है कि वे इस प्रकार के किसी सम्बन्ध में विश्वास नहीं कर सकते। उनके लिए इतिहास का सूत्र प्रत्येक क्षण मनुष्य के चरणों से उल्लंघित एवं टूटा हुआ प्रतीत होता है। इसके विपरीत प्रजातांत्रिक युगों में चूँकि इतिहासकार अभिनेताओं की अपेक्षा कार्यों को बहुत अधिक देखता है, इसलिए वह कार्यों के मध्य सफलतापूर्वक किसी-न-किसी प्रकार के सम्बन्ध और व्यवस्थित क्रम की स्थापना कर सकता है।

प्राचीन साहित्य में, जो सुन्दर ऐतिहासिक रचनाओं से इतना अधिक ओतप्रोत है, एक भी महान ऐतिहासिक पद्धति नहीं, जबकि निर्धनतम आधुनिक साहित्यों में उसकी भरमार है। ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे इतिहास लेखक जिन सामान्य सिद्धान्तों की अति करने के लिए सदा प्रस्तुत रहते हैं, उनका पर्याप्त उपयोग प्राचीन इतिहासकारों ने नहीं किया।

प्रजातांत्रिक युगों में लिखने वालों में एक दूसरी अधिक खतरनाक प्रवृत्ति होती है। जब राष्ट्रों पर व्यक्तिगत कार्य के चिह्न लुप्त हो जाते हैं, तब बहुधा ऐसा होता है कि विश्व आगे बढ़ने लगता है, यद्यपि आगे बढ़ाने वाली शक्ति का पता नहीं लगाया जा सकता। समाज के प्रत्येक सदस्य की इच्छा को पृथक्-पृथक् रूप से प्रभावित करते हुए जो कारण अन्त में एक साथ मिलकर समस्त समुदाय में आन्दोलन उत्पन्न कर देते हैं, उन कारणों को देखना और उनकी विवेचना

करना चूँकि अत्यन्त कठिन हो जाता है, इसलिए मनुष्य यह विश्वास करने लगते हैं कि यह आन्दोलन ऐच्छिक नहीं है तथा समाज अचेतन रूप से अपने ऊपर शासन करने वाली किसी उच्चतर शक्ति का आज्ञा-पालन करते हैं; किन्तु समस्त व्यक्तियों की निजी इच्छा पर शासन करने वाले सामान्य तथ्य का पृथ्वी पर अनुसंधान कर लिये जाने की कल्पना कर लेने पर भी मानव की स्वतंत्र इच्छा का सिद्धान्त सुरक्षित नहीं हो पाता। एक ऐसा कारण, जो इतना अधिक व्यापक हो कि एक साथ ही लक्ष-लक्ष मनुष्यों को प्रभावित कर सके और जो इतना अधिक शक्तिशाली हो कि उन सभी को एक ही दिशा में एक साथ मोड़ सके, अदम्य प्रतीत हो सकता है। यह देख लेने पर कि मानव जाति को उसके सामने झुकना ही पड़ता है, मस्तिष्क यह निष्कर्ष निकाल लेता है कि मानव जाति उसका प्रतिरोध नहीं कर सकती।

अतः प्रजातांत्रिक युगों में रहने वाले इतिहासकार न केवल इस बात को अस्वीकार करते हैं कि थोड़े से व्यक्तियों में समाज के भविष्य को प्रभावित करने की कोई शक्ति होती है, अपितु वे स्वयं जनता को ही अपनी स्थिति में सुधार करने की शक्ति से वंचित कर देते हैं और वे उसे या तो एक अटल ईश्वरीय विधान के या किसी परिहार्य स्थिति के अधीनस्थ बना देते हैं। उनके कथनानुसार प्रत्येक राष्ट्र कुछ हद तक अपनी स्थिति, अपने मूल, अपने भूतकाल और अपने चरित्र से घनिष्ठतापूर्वक आबद्ध रहता है, जिसमें कभी परिवर्तन नहीं हो सकता। वे पीढ़ी-दर-पीढ़ी को सम्मिलित करते हैं और इस प्रकार एक युग से दूसरे युग तक और एक स्थिति से दूसरी स्थिति तक और फिर विश्व के आरम्भ तक जाकर वे एक ऐसी निकट एवं विशाल शृंखला का निर्माण करते हैं, जो मानव जाति को आवेष्टित एवं आबद्ध कर लेती है। वे इतना ही दिखा देना पर्याप्त नहीं समझते कि कौन-सी घटनाएँ घटित हुई हैं; वे यह दिखाने का प्रयत्न करते हैं कि इन घटनाओं का दूसरा रूप हो ही नहीं सकता था। वे एक ऐसे राष्ट्र को लेते हैं, जो अपने इतिहास की निश्चित अवस्था में पहुँच चुका होता है और घोषित करते हैं कि वह जिस मार्ग द्वारा वहाँ पहुँचा, उसके अतिरिक्त दूसरे मार्ग पर वह चल ही नहीं सकता था। यह सिद्ध करने की अपेक्षा कि राष्ट्र एक अधिक अच्छे मार्ग पर चल सकता था, इस प्रकार की घोषणा करना अधिक सरल कार्य है।

कुलीनतांत्रिक युगों के और विशेषतः प्राचीनकाल के इतिहासकारों के ग्रन्थों को पढ़ने से विदित होगा कि मनुष्य कभी अपने भाग्य का स्वामी बन सकता

है और अपने सह-प्राणियों पर शासन कर सकता है, जब वह स्वयं अपना स्वामी हो। हमारे युग में लिखे गये ऐतिहासिक ग्रन्थों को पढ़ने से यह विदित होगा कि मनुष्य का अपने ऊपर तथा अपने आस-पास की समस्त वस्तुओं पर कोई अधिकार नहीं है। प्राचीन काल के इतिहासकार शासन करने की शिक्षा देते थे, हमारे युग के इतिहासकार केवल आज्ञा-पालन सिखाते हैं, उनकी रचनाओं में लेखक बहुधा महान प्रतीत होता है, किन्तु मानवता सदा अत्यन्त तुच्छ प्रतीत होती है।

प्रजातान्त्रिक युगों के इतिहासकारों को इतना आकर्षक प्रतीत होनेवाला आवश्यकता का यह सिद्धान्त यदि लेखकों से गुजर कर उनके पाठकों तक पहुँच जाय और समस्त समुदाय में व्याप्त होकर जन-मन पर अधिकार कर ले, तो वह शीघ्र ही आधुनिक समाज की गतिविधि को नष्ट कर देगा और ईसाइयों को तुर्कों के स्तर पर ला देगा।

मेरा यह भी मत है कि हम जिस युग में पहुँच गये हैं, उस युग में इस प्रकार के सिद्धान्त विशेष रूप से खतरनाक हैं। हमारे समकालीन व्यक्तियों में मानव की स्वतंत्र इच्छा में सन्देह करने की प्रवृत्ति बहुत अधिक है; क्योंकि उनमें से प्रत्येक व्यक्ति प्रत्येक दिशा में अपनी ही दुर्बलताओं से जकड़ा हुआ अनुभव करता है, किन्तु वे अब भी समाज में संयुक्त मनुष्यों की शक्ति और स्वतंत्रता को स्वीकार करने के लिए प्रस्तुत हैं। इस सिद्धान्त को आँखों से ओझल नहीं होने देना चाहिए; क्योंकि हमारे युग का महान उद्देश्य मनुष्यों की विशिष्टताओं का विकास करना है, उनके पतन को पूर्णता तक पहुँचाना नहीं।

२६. स्वतंत्रता की अपेक्षा समानता के प्रति प्रबलतर एवं अधिक स्थायी प्रेम

मुझे यह बताने की कोई आवश्यकता नहीं है कि समानता से जो सर्वप्रथम और प्रबलतम भावना उत्पन्न होती है, वह समानता के प्रति प्रेम की भावना होती है। अतः यदि मैं इस भावना का वर्णन सबसे पहले करूँ, तो मेरे पाठकों को कोई आश्चर्य नहीं होगा।

प्रत्येक व्यक्ति ने कहा है कि हमारे समय में और विशेषतः फ्रांस में समानता

के प्रति यह प्रबल भावना मानव-हृदय में प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। सैकड़ों बार यह बात कही जा चुकी है कि हमारे समकालीन व्यक्ति स्वतंत्रता के प्रति जितना अनुराग एवं प्रेम रखते हैं, उससे बहुत अधिक और प्रबलतर प्रेम वे समानता के प्रति रखते हैं, किन्तु चूँकि मुझे ऐसा नहीं दिखाई देता कि इस तथ्य के कारणों का पर्याप्त रूप से विवेचन किया गया है, इसलिए मैं उन कारणों की ओर इंगित करने का प्रयत्न करूँगा।

एक ऐसे सुदूरवर्ती बिन्दु की कल्पना की जा सकती है, जहाँ स्वतंत्रता एवं समानता का मिलन होगा और वे एक दूसरे में मिल जायंगी। आइए, हम इस बात की कल्पना करें कि समस्त व्यक्ति सरकार में भाग लेते हैं तथा उनमें से प्रत्येक व्यक्ति को सरकार में भाग लेने का समान अधिकार है। चूँकि कोई भी व्यक्ति अपने साथियों से भिन्न नहीं है, इसलिए कोई भी व्यक्ति अत्याचार नहीं कर सकता; मनुष्य पूर्णतया स्वतंत्र होंगे, क्योंकि वे सभी पूर्णतया समान हैं और वे सभी पूर्णतया समान होंगे, क्योंकि वे पूर्णतया स्वतंत्र हैं। प्रजातान्त्रिक राष्ट्र इस आदर्श स्थिति की ओर उन्मुख होते हैं। समानता पृथ्वी पर केवल यही पूर्ण रूप ग्रहण कर सकती है, किन्तु हजारों अन्य रूप भी हैं, जिनकी कामना वे राष्ट्र समान रूप से पूर्ण न होते हुए भी कम नहीं करते।

राजनीतिक जगत में परिव्याप्त न होते हुए भी समानता के सिद्धान्त की स्थापना नागरिक समाज में की जा सकती है। एक ही प्रकार के सुखों का उपभोग करने, एक ही प्रकार का व्यवसाय अपनाने तथा एक ही प्रकार के स्थानों पर आने-जाने के अर्थात् एक शब्द में एक ही प्रकार से जीवन-यापन करने तथा एक ही प्रकार के साधनों द्वारा सम्पत्ति अर्जित करने में समान अधिकार रह सकते हैं, यद्यपि सरकार में सभी व्यक्तियों का समान भाग नहीं होता। राजनीतिक जगत में भी एक प्रकार की समानता की स्थापना की जा सकती है। कोई व्यक्ति, केवल एक को छोड़कर, अपने समस्त देशवासियों के समान हो सकता है और वह एक देशवासी बिना भेद-भाव के समस्त देशवासियों का स्वामी होता है और उनके मध्य से अपनी सत्ता के समस्त अभिकर्ताओं का समानतापूर्वक चयन करता है। ऐसे अन्य अनेक संयोगों की कल्पना सरलतापूर्वक की जा सकती है, जिनके द्वारा न्यूनाधिक मात्रा में स्वतंत्र संस्थाओं के साथ अथवा स्वतंत्रता से बिलकुल रहित संस्थाओं के साथ भी अधिक समानता संयुक्त होगी।

यद्यपि मनुष्य पूर्ण स्वतंत्रता के बिना पूर्ण रूप से समान नहीं बन सकते और परिणामस्वरूप समानता अपनी चरम सीमा पर पहुँच कर स्वतंत्रता में

विलीन हो सकती है, तथापि दोनों में अन्तर करने के लिए पर्याप्त कारण है। स्वतन्त्रता और समानता के प्रति मनुष्यों की जो अभिरुचियाँ होती हैं, वे दो भिन्न वस्तुएँ होती हैं और मैं इतना और जोड़ देने में भय का अनुभव नहीं करता कि प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों में वे दो असमान वस्तुएँ होती हैं।

सूक्ष्म रूप से निरीक्षण करने पर इस बात का पता चलेगा कि प्रत्येक युग में एक विशिष्ट एवं सर्वोपरि तथ्य होता है, जिसके साथ अन्य सभी तथ्य सम्बद्ध होते हैं। यह तथ्य लगभग सदा ही किसी अर्थगम्भीर विचार अथवा किसी सर्वोपरि भावना को जन्म देता है, जो युग की समस्त भावनाओं और विचारों को अपनी ओर आकृष्ट करती है और उन्हें अपने साथ बहा ले जाती है। वह एक महान प्रवाह के तुल्य होती है, जिसकी दिशा में आसपास की प्रत्येक धारा प्रवाहित होती हुई प्रतीत होती है।

स्वतन्त्रता विश्व के विभिन्न युगों में और विभिन्न रूपों में प्रकट हुई है। वह किसी एक सामाजिक स्थिति के साथ ही सम्बद्ध नहीं रही है और वह प्रजातंत्रों तक ही सीमित नहीं होती। अतः स्वतंत्रता प्रजातान्त्रिक युगों की विशिष्टता नहीं बन सकती। उन युगों को उल्लेखनीयता प्रदान करने वाला विशिष्ट और सर्वोपरि तथ्य स्थिति की समानता होती है। उन युगों में इस समानता के प्रति प्रेम की भावना मनुष्यों में प्रबलतम होती है। यह न पूछिए कि प्रजातान्त्रिक युगों में मनुष्य समान होने में कौन सा एकमात्र आकर्षण देखते हैं अथवा समाज उन्हें जो अन्य लाभ प्रदान करता है, उन लाभों की अपेक्षा समानता के साथ इतनी दृढ़ता से उनके चिपके रहने के कौन-से विशेष कारण होते हैं। समानता उनके युग की विशिष्टता होती है। इसीसे यह बात पर्याप्त रूप से स्पष्ट हो जाती है कि वे अन्य सभी बातों की अपेक्षा इसे अधिक पसन्द करते हैं, किन्तु इस कारण के अतिरिक्त अन्य अनेक कारण भी हैं जो सभी युगों में मनुष्य को स्वभावतः स्वतंत्रता की अपेक्षा समानता को अधिक पसन्द करने के लिए प्रेरित करेंगे।

यदि कोई जाति समानता को, जो अपने ही शरीर में व्याप्त रहती है, नष्ट करने में अथवा कम करने में भी, कभी सफल हो सकती है, तो वह दीर्घकालीन एवं श्रमसाध्य प्रयासों द्वारा ही ऐसा कर सकती है। इसके लिए उस जाति की सामाजिक स्थिति में परिवर्तन करना, उसके कानूनों को रद्द करना, उसके विचारों का दमन करना, उसकी आदतों में परिवर्तन करना और उसके तौर-तरीकों को बिगाड़ना आवश्यक है; किन्तु राजनीतिक स्वतंत्रता अधिक सरलता से लुप्त हो

जाती है, यदि उस पर दृढ़ न रहा जाय, तो वह चली जाती है। अतः मनुष्य समानता से केवल इसलिए नहीं लिपटे रहते कि वह उन्हें प्यारी होती है, प्रत्युत वे इससे इसलिए भी चिपके रहते हैं कि वे सोचते हैं कि यह सदा बनी रहेगी। संकीर्ण एवं विचार शून्य व्यक्ति भी इस बात को स्पष्ट रूप से जानते हैं कि राजनीतिक स्वतंत्रता की अति हो जाने पर व्यक्तियों की शान्ति, सम्पत्ति, एवं जीवन के लिए खतरा उपस्थित हो सकता है। इसके विपरीत केवल सावधान और स्पष्ट दृष्टि रखनेवाले व्यक्ति ही समानता के खतरों को देख सकते हैं और वे सामान्यतः उन खतरों की ओर इंगित करने से दूर रहते हैं। वे जानते हैं कि उन्हें जिन विपत्तियों की आशंका है, वे दूर हैं तथा वे इस बात से सन्तोष करते हैं कि वे केवल भावी पीढ़ियों को ही, जिनके लिए वर्तमान पीढ़ी तनिक भी चिन्ता नहीं करती, अपना शिकार बनायेंगी। कभी-कभी स्वतंत्रता अपने साथ जो बुराइयाँ लेकर आती है, वे तात्कालिक होती हैं। उन्हें सभी देखते हैं और उनसे न्यूनाधिक मात्रा में सभी व्यक्ति प्रभावित होते हैं। आत्यन्तिक समानता से उत्पन्न होनेवाली बुराइयाँ धीरे-धीरे प्रकट होती हैं; वे समाज के ढाँचे में धीरे-धीरे प्रवेश करती हैं, वे कभी-कभी ही दिखाई देती हैं। उस समय पहले से ही बनी हुई आदत के कारण उनका अनुभव नहीं किया जाता।

स्वतंत्रता से जो लाभ होते हैं, वे समय व्यतीत होने पर ही दिखाई देते हैं और जिन कारणों से वे लाभ उत्पन्न होते हैं, उनके विषय में सदा सरलतापूर्वक गलती की जा सकती है। समानता के लाभ तात्कालिक होते हैं और उनके स्रोत का पता सदा लगाया जा सकता है।

राजनीतिक स्वतंत्रता समय-समय पर कतिपय नागरिकों को आत्यन्तिक आनन्द प्रदान करती है। समानता प्रतिदिन प्रत्येक व्यक्ति को कुछ तुच्छ आनन्द प्रदान करती है। समानता के आकर्षणों का अनुभव प्रति क्षण किया जाता है और उनका सुख-लाभ सभी कर सकते हैं, उच्चतम व्यक्ति भी उनसे विमुख नहीं रहते और निकृष्टतम प्राणी उनसे अत्यधिक प्रसन्न होते हैं। अतः समानता जिस भावना की सृष्टि करती है, वह अवश्य ही प्रबल और सामान्य होगी। मनुष्य कुछ बलिदान किये बिना राजनीतिक स्वतंत्रता का आनन्दोपभोग नहीं कर सकते और महान प्रयास किये बिना वे उसे कदापि नहीं प्राप्त करते; किन्तु समानता के आनन्द अपने-आप प्राप्त हो जाते हैं; जीवन की प्रत्येक क्षुद्र घटना में वे आनन्द प्राप्त होते हुए प्रतीत होते हैं तथा उनका रसास्वादन करने के लिए केवल जीने की आवश्यकता होती है।

प्रजातांत्रिक राष्ट्र सदा समानता के प्रेमी होते हैं, किन्तु कुछ युग ऐसे होते हैं, जब उनका समानता-प्रेम उन्माद की चरम सीमा पर पहुँच जाता है। ऐसा उस समय होता है, जब दीर्घ काल से संकटग्रस्त पुरानी समाज-व्यवस्था एक उग्र आंतरिक संघर्ष के पश्चात् उखाड़ फेंकी जाती है और श्रेणीगत बन्धनों को छिन्न भिन्न कर दिया जाता है। ऐसे अवसरों पर मनुष्य समानता पर उसी प्रकार टूट पड़ते हैं, जिस प्रकार लूट की सामग्री पर और वे उससे उसी प्रकार चिपक जाते हैं, मानो वह कोई ऐसा मूल्यवान खजाना हो, जिसके खो जाने की उन्हें आशंका हो। समानता के प्रति प्रबल भावना मनुष्यों के हृदयों में सभी दिशाओं से प्रवेश करती है, वहाँ वह अपना विस्तार करती है और उन्हें पूर्ण रूप से ओत-प्रोत कर देती है। उनसे यह मत कहिए कि वे अकेली भावना के समक्ष इस अन्ध आत्मसमर्पण द्वारा अपने प्रियतम स्वार्थों के लिए खतरा उपस्थित करते हैं; क्योंकि वे कुछ सुनने की स्थिति में नहीं होते। उन्हें यह मत बताइए कि जिस समय वे एक दूसरी दिशा में देख रहे हैं, तब स्वतंत्रता उनकी पकड़ से बाहर होती जा रही है; क्योंकि वे कुछ देख सकने की स्थिति में नहीं होते अथवा यों कहा जा सकता है कि वे जगत में केवल एक अभीप्सित पदार्थ को देख सकते हैं।

मैंने जो कुछ कहा है, वह समस्त प्रजातांत्रिक राष्ट्रों के सम्बन्ध में चरितार्थ होता है; मैं जो कुछ कहने जा रहा हूँ, वह केवल फ्रांसीसियों से सम्बन्धित है। अधिकांश आधुनिक राष्ट्रों में और विशेषतः यूरोपीय महाद्वीप के समस्त राष्ट्रों में जिस समय सामाजिक स्थितियाँ समानता की ओर उन्मुख हो रही थीं, उसी समय और उसी समानता के परिणामस्वरूप स्वतंत्रता की रुचि और भावना का अस्तित्व एवं विकास प्रारम्भ हुआ। सर्वसत्तासम्पन्न राजा अपनी प्रजा में श्रेणियों को समान बनाने में सर्वाधिक कुशल थे। इन राष्ट्रों में स्वतंत्रता से पहले समानता की स्थापना हुई। अतः समानता एक ऐसा तथ्य था, जो कुछ काल से चला आ रहा था, जबकि स्वतंत्रता अभी तक एक नवीनता ही थी। समानता पहले ही अपनी प्रथाओं, विचारों और कानूनों की सृष्टि कर चुकी थी, जबकि स्वतंत्रता अकेली और प्रथम बार वास्तविक अस्तित्व में आयी। इस प्रकार स्वतंत्रता अभी तक रुचि और मत का विषय मात्र थी, जबकि समानता पहले ही जनता की आदतों में प्रवेश कर चुकी थी, उनके तौर तरीकों पर अधिकार जमा चुकी थी तथा उनके जीवन के तुच्छतम कार्यों को एक विशेष दिशा में मोड़ चुकी थी। क्या इस बात पर आश्चर्य प्रकट किया जा सकता है

कि हमारे युग के मनुष्य एक को दूसरे की अपेक्षा अधिक पसंद करते हैं ?

मेरा विचार है कि प्रजातांत्रिक समुदायों में स्वतंत्रता के प्रति स्वाभाविक रुचि होती है। यदि उन्हें स्वयं अपने ऊपर छोड़ दिया जाय, तो वे उसके लिए प्रयास करेंगे, उसकी कामना करेंगे तथा उससे किसी भी प्रकार वंचित होने पर दुःखी होंगे; किन्तु समानता के प्रति उनकी भावना प्रबल, अतृप्त, शाश्वत और अजेय होती है। वे स्वतंत्रता में समानता चाहते हैं और यदि वे उसे नहीं प्राप्त कर सकते, तो वे दासता में भी समानता चाहते हैं। वे निर्धनता, दासता और बर्बरता को सहन कर लेंगे, किन्तु वे कुलीनतंत्र को नहीं सहन करेंगे।

यह बात सभी युगों के लिए सत्य है और हमारे युग के लिए विशेष रूप से सत्य है। यह अदम्य भावना अपना सामना करने का प्रयत्न करने वाले समस्त व्यक्तियों और शक्तियों को उखाड़ फेंकेगी और नष्ट कर डालेगी। हमारे युग में इसके बिना स्वतंत्रता की स्थापना नहीं हो सकती और स्वयं निरंकुशता इसके समर्थन के बिना शासन नहीं कर सकती।

२७. प्रजातांत्रिक देशों में व्यक्तिवाद

मैंने बताया है कि किस प्रकार समानता के युगों में प्रत्येक व्यक्ति अपने ही भीतर अपने मतों की खोज करता है। अब मैं यह बतानेवाला हूँ कि किस प्रकार उन्हीं युगों में उसकी समस्त भावनाएँ अकेले उसी की ओर उन्मुख होती हैं। 'व्यक्तिवाद' एक अभिनव शब्द है, जिसका जन्म एक अभिनव भावना से हुआ है। हमारे पूर्वज केवल 'अहम्‌वाद' (स्वार्थपरता) से परिचित थे। अपने प्रति प्रबल एवं अतिरंजित प्रेम को स्वार्थपरता कहते हैं, जिसके परिणामस्वरूप मनुष्य प्रत्येक वस्तु को अपने से ही सम्बद्ध करता है तथा अपने को विश्व की प्रत्येक वस्तु से अधिक पसन्द करता है। व्यक्तिवाद एक परिपक्व एवं शान्त भावना है, जो समाज के प्रत्येक सदस्य को अपने साथियों के समूह से अपने को विलग कर लेने तथा अपने परिवार एवं मित्रों से पृथक् हो जाने के लिए प्रेरित करती है, जिससे इस प्रकार अपना निजी एक छोटा-सा क्षेत्र बना लेने के बाद वह स्वेच्छापूर्वक समाज को उसी के ऊपर छोड़ देता है। स्वार्थपरता का जन्म अन्धी अन्तःप्रकृति से होता है; व्यक्तिवाद विकृत भावनाओं की अपेक्षा त्रुटिपूर्ण विवेक से अधिक उत्पन्न होता है; वह हृदय की विकृति से

जितना उत्पन्न होता है, उतना ही मस्तिष्क की दुर्बलताओं से भी उत्पन्न होता है।

स्वार्थपरता समस्त पुण्यों के तत्व को नष्ट कर डालती है; व्यक्तिवाद सर्वप्रथम केवल सार्वजनिक जीवन की अच्छाइयों को समाप्त करता है, किन्तु अन्ततोगत्वा वह अन्य समस्त अच्छाइयों पर प्रहार करके उन्हें नष्ट कर डालता है और पूर्ण रूप से स्वार्थपरता में विलीन हो जाता है। स्वार्थपरता एक ऐसी बुराई है, जो उतनी ही पुरानी है, जितना पुराना विश्व है। यह किसी एक ही समाज में नहीं होती। व्यक्तिवाद का जन्म प्रजातन्त्र में हुआ है और स्थिति की समानता के ही अनुपात में उसके फैलने का भी खतरा है।

कुलीनतान्त्रिक राष्ट्रों में चूँकि परिवार शताब्दियों तक एक ही स्थिति में और बहुधा एक ही स्थान पर रहते हैं, इसलिए सभी पीढ़ियाँ मानो समसामयिक हो जाती हैं। व्यक्ति लगभग सदा अपने पूर्वजों को जानता है और उनका सम्मान करता है। वह सोचता है कि वह अपने भावी वंशजों को पहले से ही देख रहा है और वह उनसे प्यार करता है। वह स्वेच्छापूर्वक अपने पूर्वजों और भावी वंशजों के प्रति उत्तरदायित्व स्वीकार कर लेता है और वह बहुधा अपने पूर्व पुरुषों तथा अपनी भावी पीढ़ियों के लिए अपने व्यक्तिगत सुखों ■ बलिदान करेगा। इसके अतिरिक्त कुलीनतान्त्रिक संस्थाएँ प्रत्येक व्यक्ति को उसके कई सहनागरिकों के साथ घनिष्ठतापूर्वक सम्बद्ध करती हैं। चूँकि कुलीनतान्त्रिक समाज के वर्ग अत्यन्त पृथक् एवं अस्थायी होते हैं, इसलिए प्रत्येक वर्ग के सदस्य उसे एक प्रकार ■ छोटा-सा देश मानते हैं, जो देश की अपेक्षा अधिक स्पर्शनीय और अधिक प्रिय होता है। चूँकि कुलीनतान्त्रिक समुदायों में समस्त नागरिकों की स्थिति, एक के ऊपर दूसरी निर्धारित होती है, इसलिए प्रत्येक नागरिक सदा अपने ऊपर एक को देखता है, जिसका संरक्षण उसके लिए आवश्यक होता है और अपने नीचे वह एक दूसरे व्यक्ति को देखता है, जिसके सहयोग के लिए वह दावा कर सकता है। अतः कुलीनतान्त्रिक युगों में रहने वाले व्यक्ति लगभग सदा किसी ऐसी वस्तु के साथ घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध होते हैं, जो उनके निजी क्षेत्र से बाहर रखी होती है और उनमें बहुधा अपने आप को भूल जाने की प्रवृत्ति होती है। यह सच है कि इन युगों में मानवीय सौहार्द की भावना अस्पष्ट होती है और मनुष्य मानव जाति के लिए अपना बलिदान करने की बात बहुत कम सोचते हैं, किन्तु वे बहुधा दूसरे व्यक्तियों के लिए अपना बलिदान कर देते हैं। इसके विपरीत प्रजातान्त्रिक युगों में, जब जाति के प्रति प्रत्येक व्यक्ति के कर्त्तव्य बहुत अधिक स्पष्ट रहते हैं, किसी एक व्यक्ति की निष्ठा-पूर्ण सेवा अधिक दुर्लभ हो जाती है,

मानवीय प्रेम का बन्धन विस्तृत हो जाता है, किन्तु वह शिथिल होता है।

प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में नये परिवार निरन्तर प्रकट होते हैं, अन्य परिवार निरन्तर लुप्त होते रहते हैं और जो शेष बच जाते हैं, वे अपनी स्थिति बदल देते हैं। समय का ताना प्रतिक्षण टूटता रहता है और पीढ़ियों का पथ विलुप्त हो जाता है। पूर्ववर्ती पीढ़ियों का शीघ्र विस्मरण कर दिया जाता है; भावी पीढ़ियों के सम्बंध में कोई कुछ भी नहीं जानता। मनुष्य की रुचि केवल उन व्यक्तियों तक सीमित रहती है, जो उसके अत्यन्त निकट होते हैं। चूँकि प्रत्येक वर्ग अन्य वर्गों के अत्यन्त निकट होता है और उनके साथ मिल जाता है, इसलिए उसके सदस्य एक दूसरे के प्रति उदासीन और एक दूसरे के लिए अपरिचित के समान हो जाते हैं। कुलीनतंत्र ने कृषक से लेकर राजा तक समाज के समस्त सदस्यों की एक कड़ी बना रखी थी; प्रजातंत्र उस कड़ी को तोड़ देता है और उसके जोड़-जोड़ को पृथक् कर देता है।

जब सामाजिक स्थितियाँ अधिक समान हो जाती हैं, तब उन व्यक्तियों की संख्या बढ़ने लगती है, जो अपने साथियों पर कोई महान प्रभाव डालने के लिए पर्याप्त रूप से धनी अथवा शक्तिशाली न होने हुए भी, अपनी निजी आकांक्षाओं की परितुष्टि के लिए पर्याप्त शिक्षा और धन से सम्पन्न होते हैं। वे किसी व्यक्ति के ऋणी नहीं होते, वे किसी से कुछ पाने की आशा नहीं रखते। उनमें अपने को सदा अकेला समझने की आदत पड़ जाती है और उनमें यह कल्पना करने की प्रवृत्ति होती है कि हमारा सारा भाग्य हमारे ही हाथों में है।

इस प्रकार प्रजातंत्र में न केवल व्यक्ति अपने पूर्वजों को भूल जाता है, अपितु प्रजातंत्र उसके भावी वंशजों को छिपा रखता है तथा उसके समकालीनों को उससे पृथक् कर देता है, वह उसे सदा के लिए स्वार्थी बना देता है तथा अन्त में उसे पूर्णतया अपने हृदय के एकान्त में सीमित कर देने का खतरा उत्पन्न कर देता है।

२८. व्यक्तिवाद के प्रभावों का प्रतिकार अमरीकी स्वतंत्र संस्थाएँ द्वारा करते हैं

निरंकुशता, जो स्वभाव से अत्यन्त दुर्बल-हृदय होती है, उस समय सबसे अधिक सुरक्षित रहती है, जब वह मनुष्यों को पृथक्-अलग रख सकने की क्षमता

रखती है और सामान्यतः वह अपने समस्त प्रभाव का उपयोग इसी उद्देश्य के लिए करती है। मानव-हृदय की कोई भी बुराई उसे स्वार्थपरता जितनी ग्राह्य नहीं होती। निरंकुश शासक अपने प्रति प्रेम न रखने के लिए अपने प्रजाजनों को सरलतापूर्वक क्षमा कर देता है, बशर्ते वे एक दूसरे से प्रेम न करते हों। वह राज्य के शासन में उनसे सहायता नहीं मांगता। उसके लिए इतना ही पर्याप्त है कि वे स्वयं अपने ऊपर शासन करने की महत्वाकांक्षा न रखें। वह उन लोगों को अशांतिजनक और उपद्रवकारी तत्व कह कर कलंकित करता है, जो समुदाय की समृद्धि के लिए संयुक्त रूप से प्रयास करते हैं और शब्दों के स्वाभाविक अर्थ को विकृत बना कर वह उन लोगों को अच्छा नागरिक बताता है, जो केवल अपने को छोड़ कर अन्य किसी के प्रति कोई सहानुभूति नहीं रखते।

इस प्रकार निरंकुशता उन्हीं असत्प्रवृत्तियों को उत्पन्न करती है, जिन्हें समानता प्रोत्साहित करती है। ये दोनों वस्तुएँ पारस्परिक एवं घातक रूप से एक दूसरे की पूरक एवं सहायिका हैं। समानता में मनुष्य बिना किसी सामान्य बन्धन के एक दूसरे के पार्श्व में रहते हैं; निरंकुशता उन्हें पृथक् रखने के लिए अवरोधों का निर्माण करती है। समानता में मनुष्यों में अपने सहप्राणियों के विषय में विचार न करने की प्रवृत्ति पहले से ही होती है, निरंकुशता सामान्य उदासीनता को एक सार्वजनिक सद्गुण बना देती है।

अतः प्रजातांत्रिक युगों में निरंकुशता की, जो सदा खतरनाक होती है, विशेष आशंका रहती है। यह बात आसानी से देखी जा सकती है कि इन्हीं युगों में मनुष्यों को स्वतंत्रता की सर्वाधिक आवश्यकता रहती है। जब किसी समुदाय के सदस्य सार्वजनिक कार्यों में भाग लेने के लिए विवश हो जाते हैं, तब आवश्यक रूप से उन्हें उनके निजी हितों के क्षेत्र से लिया जाता है और कभी कभी उन्हें *आत्म-पर्यवेक्षण से घसीट लाया जाता है।* ज्यों ही कोई व्यक्ति सार्वजनिक कार्यों को सार्वजनिक रूप से करना आरम्भ करता है, उसे यह विदित होने लगता है कि वह अपने साथियों से उतना स्वतंत्र नहीं है, जितना स्वतंत्र होने की उसने पहले कल्पना की थी तथा उनका समर्थन प्राप्त करने के लिए उसे बहुधा उनके साथ सहयोग करना ही पड़ेगा।

जब जनता का शासन होता है, तब ऐसा कोई व्यक्ति नहीं मिलेगा, जो सार्वजनिक सद्भावना के महत्व का अनुभव न करता हो तथा जो उन व्यक्तियों का, जिनके मध्य उसे रहना है, सम्मान एवं स्नेह प्राप्त कर उस सद्भावना को प्राप्त

करने का प्रयास न करता हो। उस समय मानव-हृदयों को कठोर बनाने वाली एवं पृथक् रखने वाली अनेक भावनाएँ विवश हो कर निष्क्रिय हो जाती हैं तथा धरातल के नीचे छिप जाती हैं। उस समय अभिमान छद्म वेश धारण कर लेता है; घृणा प्रकट होने का साहस नहीं करती; स्वार्थपरता अपने आपसे डरने लगती है। स्वतंत्र सरकार के अन्तर्गत चूँकि अधिकांश सार्वजनिक पद निर्वाचनात्मक होते हैं, इसलिए जिन व्यक्तियों के उच्च मस्तिष्क अथवा महत्वाकांक्षापूर्ण आशाएँ निजी जीवन में अत्यधिक सीमित रहती हैं, वे निरन्तर अनुभव करते हैं कि वे अपने आसपास के व्यक्तियों के बिना नहीं रह सकते। ऐसे समयों में मनुष्य महत्वाकांक्षापूर्ण उद्देश्यों से अपने साथियों के विषय में सोचने का ढंग सीखते हैं और एक प्रकार से वे अपना विस्मरण कर देने में बहुधा अपना कल्याण देखते हैं।

यहाँ निर्वाचन-कुचक्रों, उम्मीदवारों की नीचता और उनके विरोधियों की निन्दाओं पर आधारित एक आपत्ति की जा सकती है। ये शत्रुतापूर्ण अवसर होते हैं, जो उतनी ही जल्दी-जल्दी आते हैं, जितनी जल्दी-जल्दी चुनाव आते हैं। इस प्रकार की बुराइयाँ निस्सन्देह बड़ी होती हैं, किन्तु वे क्षणिक होती हैं, जबकि उनके साथ जो लाभ आते हैं, वे बने रहते हैं। निर्वाचित होने की अभिलाषा के परिणामस्वरूप कुछ व्यक्ति कुछ समय तक के लिए अत्यधिक शत्रुता रखने लगते हैं, किन्तु इसी अभिलाषा के परिणामस्वरूप अन्ततोगत्वा सभी व्यक्ति एक दूसरे का समर्थन करने लगते हैं और यदि संयोगवश कभी किसी चुनाव के फलस्वरूप दो मित्र अलग हो जाते हैं, तो निर्वाचन-पद्धति अनेक नागरिकों को स्थायी रूप से एकत्र भी कर देती है जो अन्यथा एक दूसरे से सदा अपरिचित ही बने रहते। स्वतन्त्रता निजी शत्रुताओं को जन्म देती है, किन्तु निरंकुशता से सामान्य उदासीनता की सृष्टि होती है।

अमरीकियों ने स्वतन्त्र संस्थाओं द्वारा मनुष्यों को पृथक् रखने की समानता की प्रवृत्ति का प्रतिरोध किया है और उन्होंने उसे वशवर्ती बना लिया है। अमरीकी विधायकों ने यह कल्पना नहीं की थी कि प्रजातान्त्रिक समाज के ढाँचे के लिए इतनी स्वाभाविक और इतनी घातक अव्यवस्था का निराकरण करने के लिए समस्त राष्ट्र को सामान्य प्रतिनिधित्व प्रदान कर देना पर्याप्त होगा। उन्होंने यह भी सोचा कि देश के प्रत्येक भाग में राजनीतिक जीवन का संचार करना अच्छा होगा, जिससे समाज के समस्त सदस्यों के लिए संगठित रूप से कार्य करने के सुअवसरों का अनन्त विस्तार हो सके तथा वे निरन्तर इस बात को अनुभव करते

रहें कि वे परस्पर एक दूसरे पर निर्भर करते हैं। यह योजना बुद्धिमत्तापूर्ण थी। प्रमुख राजनीतिज्ञों का ध्यान केवल देश के सामान्य कार्यों की ओर आकृष्ट होता है, जो समय-समय पर एक ही स्थान पर मिलते हैं और बाद में वे चूँकि एक दूसरे की आँखों से ओझल हो जाते हैं, इसलिए उनके मध्य कोई स्थायी सम्बन्ध नहीं स्थापित हो पाता; किन्तु यदि उद्देश्य यह हो कि किसी जिले के स्थानीय कार्यों का संचालन वहाँ के निवासियों द्वारा ही हो, तो उन व्यक्तियों का सम्पर्क सदा बना रहता है और वे, एक प्रकार से, एक दूसरे से परिचित होने तथा अपने को एक दूसरे के अनुकूल बनाने के लिये विवश हो जाते हैं।

राज्य के भाग्य-निर्माण में रुचि लेने के लिए किसी व्यक्ति को उसके निजी क्षेत्र से बाहर खींच लाना कठिन होता है, क्योंकि वह इस बात को साफ-साफ नहीं समझता कि स्वयं उसके भाग्य पर राज्य के भाग्य का क्या प्रभाव पड़ेगा, किन्तु यदि उसके राज्य के सिरे से होकर एक सड़क का निर्माण करने का प्रस्ताव किया जाय, तो उसे एक दृष्टि में ही मालूम हो जायगा कि इस छोटे-से सार्वजनिक कार्य और उसके बड़े-से-बड़े निजी कार्यों के मध्य एक सम्बन्ध है और बिना बताये ही उसे निजी हित तथा सामान्य हित को संयुक्त करने वाली घनिष्ठ कड़ी का पता चल जायगा। इस प्रकार नागरिकों को महत्वपूर्ण कार्यों का नियंत्रण सौंपने की अपेक्षा उनके हाथों में छोटे-छोटे कार्यों का प्रशासन सौंप कर सार्वजनिक कल्याण में उनकी बहुत अधिक रुचि उत्पन्न की जा सकती है तथा उन्हें इस बात का विश्वास दिलाया जा सकता है कि इस सार्वजनिक कल्याण के लिए उन्हें एक दूसरे की निरन्तर आवश्यकता है। किसी महान सफलता द्वारा आप एक बारगी ही जनता का समर्थन प्राप्त कर सकते हैं, किन्तु आपके आस-पास रहने वाली जनसंख्या का प्रेम एवं सम्मान प्राप्त करने के लिए अनेक छोटी-छोटी सेवाओं और अज्ञात अच्छे कार्य—निरन्तर उदारता बरतने की आदत और निस्स्वार्थता की स्थापित प्रतिष्ठा—की आवश्यकता होती है। अतः स्थानीय स्वतंत्रता, जिसके परिणामस्वरूप नागरिक भारी संख्या में अपने पड़ोसियों और उनके प्रियजनों के प्रेम को मूल्यवान मानते हैं, शाश्वत रूप से मनुष्यों में एकता लाती है तथा पृथक्तावादी प्रवृत्तियों के बावजूद उन्हें एक दूसरे की सहायता करने के लिए बाध्य करती है।

संयुक्त-राज्य अमरीका में अधिक समृद्ध व्यक्ति इस बात का अधिक ध्यान रखते हैं कि वे जनता से पृथक न हो जायं, इसके विपरीत वे निम्नतर वर्गों के साथ निरन्तर अच्छे सम्बन्ध बनाये रखते हैं। वे उनकी

बातें सुनते हैं, प्रति दिन उनसे वार्तालाप करते हैं। वे जानते हैं कि प्रजातंत्रों में धनिकों को सदा निर्धनों की आवश्यकता बनी रहती है तथा प्रजातान्त्रिक युगों में निर्धन व्यक्ति लाभ की अपेक्षा आपके व्यवहार द्वारा आपसे अधिक प्रेम रखता है। इस प्रकार के लाभों की अतिशयता, जो स्थिति के अन्तर को दूर कर देती है, उन लोगों में गुप्त क्रोध उत्पन्न करती है, जो उनसे लाभान्वित होते हैं; किन्तु सरल व्यवहार का आकर्षण लगभग अदम्य होता है। मधुर व्यवहार मनुष्य को अपने प्रवाह में बहा ले जाता है और परिष्कार का अभाव भी सदा अप्रसन्नताजनक नहीं होता। यह सत्य धनिकों के मस्तिष्क में अपनी जड़ें एकदम नहीं जमा लेता। जब तक प्रजातान्त्रिक क्रान्ति जारी रहती है, वे सामान्यतः इसका प्रतिरोध करते हैं और वे क्रान्ति के सफल हो जाने के तत्काल बाद ही इसे स्वीकार नहीं कर लेते। वे जनता की भलाई करने के लिए बहुत अधिक तैयार रहते हैं, किन्तु फिर भी वे जनता को दूर ही देखते हैं; वे इसे पर्याप्त समझते हैं, किन्तु यह उनकी भूल है। इस प्रकार वे अत्यधिक धन व्यय कर देंगे, किन्तु इससे उनके आस-पास रहनेवाले लोगों के हृदयों में उनके प्रति प्रेम नहीं उत्पन्न होगा; जनता उनसे अपने धन का त्याग करने के लिए नहीं, प्रत्युत अपने दर्प का परित्याग करने के लिए कहती है।

ऐसा प्रतीत होता है कि अमरीका में प्रत्येक कल्पना का उपयोग जनता की सम्पत्ति में वृद्धि तथा उसकी आकांक्षाओं की पूर्ति करने के साधनों का आविष्कार करने के लिए किया जाता है। प्रत्येक जिले के सर्वोत्तम ज्ञान रखनेवाले निवासी अपने ज्ञान का उपयोग निरंतर ऐसे सत्यों का अनुसंधान करने में करते हैं, जिससे सामान्य समृद्धि में वृद्धि हो सके और वे यदि ऐसा कोई अनुसंधान कर लेते हैं, तो वे उत्सुकतापूर्वक इन अनुसंधानों को जनता को समर्पित कर देते हैं।

अमरीका में जो लोग शासन करते हैं, उनके द्वारा बहुधा प्रदर्शित दुर्गुणों और त्रुटियों की जब सावधानीपूर्वक परीक्षा की जाती है, तब जनता की समृद्धि को देख कर आश्चर्य होता है, किन्तु यह आश्चर्य अनुचित होता है। अमरीकी प्रजातंत्र निर्वाचित मजिस्ट्रेटों के कारण नहीं पनपता, वह इसलिए पनपता है कि मजिस्ट्रेटों का निर्वाचन किया जाता है।

यह मान लेना अनुचित होगा कि प्रत्येक अमरीकी, जो देशभक्ति और अपने सहनागरिकों के कल्याण के प्रति जो उत्साह दिखाता है, वह पूर्णतया अवास्तविक होता है। यद्यपि अमरीका में तथा अन्य स्थानों पर भी अधिकांश मानवीय

कार्य निजी हित द्वारा प्रेरित होते हैं तथापि निजी हित समस्त मानवीय कार्यों का नियमन नहीं करता। मैं इतना अवश्य कहूंगा कि मैंने बहुधा अमरीकियों को सार्वजनिक कल्याण के लिए महान और वास्तविक त्याग करते हुए देखा है और मैंने ऐसे सैकड़ों उदाहरणों का वर्णन किया है, जब वे एक दूसरे की निष्ठापूर्वक सहायता करने में विफल नहीं हुए। संयुक्त-राज्य अमरीका की स्वतंत्र संस्थाएं तथा वे राजनीतिक अधिकार, जिनका वे इतना अधिक प्रयोग करते हैं, प्रत्येक नागरिक को हजारों प्रकार से इस बात की याद दिलाते रहते हैं कि वे समाज में रहते हैं। वे प्रत्येक क्षण उसके मस्तिष्क में यह बात जमाते रहते हैं कि अपने साथियों के लिए अपने को उपयोगी बनाना मनुष्यों का कर्तव्य है तथा इसी में उनका कल्याण भी है और जब वह उनके प्रति शत्रुता रखने का कोई विशेष कारण नहीं देखता, क्योंकि वह न तो उनका स्वामी और न उनका दास होता है, तब उसका हृदय उदारता की ओर तत्परतापूर्वक झुक जाता है। मनुष्य पहले आवश्यकतावश और बाद में सोच-विचार कर जनता के हितों पर ध्यान देते हैं। जो कार्य जान-बूझ कर किया जाता है, वह अन्तःप्रेरणा बन जाता है और अपने सहनागरिकों के कल्याण के लिए कार्य करते-करते उनकी सेवा करने की आदत बन जाती है और अन्त में इसके प्रति रुचि जाग्रत हो जाती है।

फ्रांस में अनेक व्यक्ति स्थिति की समानता को पहली बुराई और राजनीतिक स्वतंत्रता को दूसरी बुराई मानते हैं। जब वे स्थिति की समानता को स्वीकार करने के लिए बाध्य हो जाते हैं, तब वे कम-से-कम राजनीतिक स्वतंत्रता से भागने का प्रयत्न करते हैं, किन्तु मेरी दलील है कि समानता से उत्पन्न होने वाली बुराइयों का सामना करने के लिए एकमात्र प्रभावशाली उपाय है राजनीतिक स्वतंत्रता।

२९. नागरिक जीवन में सार्वजनिक संघों का प्रयोग

मैं उन राजनीतिक संघों के विषय में कुछ नहीं कहना चाहता, जिनकी सहायता से मनुष्य बहुमत के अत्याचार अथवा राज शक्ति के आक्रमण से अपनी रक्षा करने का प्रयत्न करते हैं। उस विषय का वर्णन मैं पहले ही कर चुका हूँ। चूँकि प्रत्येक नागरिक अकेला होने पर अधिक दुर्बल और परिणाम-

स्वयं अकेले अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा करने के लिए अधिक अक्षम हो जाता है, इसलिए, यदि वह उसकी रक्षा के लिए अपने सह-नागरिकों के साथ संयुक्त होना नहीं सीखेगा, तो यह स्पष्ट है कि अत्याचार समानता के साथ-साथ अनिवार्य रूप से बढ़ेगा।

यहाँ केवल उन्हीं संघों का उल्लेख किया गया है, जिनका निर्माण नागरिक जीवन में बिना किसी राजनीतिक उद्देश्य के किया जाता है। संयुक्त-राज्य अमरीका में जो राजनीतिक संस्थाएँ विद्यमान हैं, वे उस देश में विद्यमान असंख्य संस्थाओं के बीच एक लघु अंश में हैं। सभी अवस्थाओं, सभी स्थितियों और सभी प्रवृत्तियों के अमरीकी निरन्तर संस्थाओं का निर्माण करते रहते हैं। वहाँ न केवल ऐसी व्यावसायिक और औद्योगिक कम्पनियाँ हैं, जिनमें सभी भाग लेते हैं, प्रत्युत धार्मिक, नैतिक, गम्भीर, निरर्थक, सामान्य अथवा सीमित, विशाल अथवा तुच्छ, अन्य हजारों प्रकार की संस्थाएँ भी हैं। अमरीकी मनोरंजन प्रदान करने, धार्मिक विद्यालयों की स्थापना करने, सरायें बनाने, गिरजाघरों का निर्माण करने, पुस्तकों का प्रचार करने, ध्रुवों पर मिशनरी भेजने के लिए संस्थाएँ बनाते हैं; इसी प्रकार वे अस्पताल, कारागारों और विद्यालयों की भी स्थापना करते हैं। यदि किसी महान आदर्श के प्रोत्साहन द्वारा किसी सत्य की शिक्षा देने अथवा किसी भावना को बढ़ावा देने का विचार किया जाता है, तो अमरीकी एक संस्था बना लेते हैं। फ्रांस में आप जहाँ किसी नये कार्य का नेतृत्व करते हुए सरकार को अथवा इंग्लैण्ड में किसी ऊँचे ओहदे वाले व्यक्ति को देखेंगे, वहाँ अमरीका में निश्चित रूप से आपको एक संस्था दिखायी देगी।

अमरीका में मैंने अनेक प्रकार की संस्थाएँ देखीं, जिनके सम्बन्ध में मुझे पहले से कुछ भी ज्ञान नहीं था तथा संयुक्त राज्य अमरीका के निवासी जिस कुशलता के साथ एक सामान्य लक्ष्य के लिए प्रयास करने के निमित्त अनेक व्यक्तियों को प्रेरित करने में सफल होते हैं तथा उन्हें स्वेच्छापूर्वक उस लक्ष्य की पूर्ति की दिशा में आगे बढ़ने की ओर प्रवृत्त करते हैं, उसकी मैंने बहुधा सराहना की है।

इसके बाद मैंने इंग्लैण्ड की यात्रा की, जहाँ से अमरीकियों ने अपने कतिपय कानूनों तथा अपने अनेक रीति-रिवाजों को ग्रहण किया है और मुझे प्रतीत हुआ कि उस देश में संघ के सिद्धान्त का प्रयोग इतने अनवरत रूप से अथवा इतनी कुशलता के साथ नहीं किया गया। अनेक बहुधा अकेले ही महान

कार्य सम्पन्न करते हैं, जब कि अमरीकी छोटे से-छोटे कार्य के लिए भी सघों का निर्माण करते हैं। यह स्पष्ट है कि अंग्रेज सघ को कार्य करने का एक शक्तिशाली साधन मानते हैं, जबकि अमरीकी ऐसा मानते हुए प्रतीत होते हैं कि सघ उनके पास कार्य करने का एकमात्र साधन है।

इस प्रकार ससार का सर्वाधिक प्रजातात्रिक देश वह है, जिसमें मनुष्यों ने, हमारे युग में, अपनी सामान्य इच्छाओं के लक्ष्य की पूर्ति सामान्य रूप से करने की कला को पूर्णता की चरम सीमा तक पहुँचा दिया है तथा इस नये विज्ञान का उपयोग अधिकतम कार्यों में किया है। क्या यह एक सयोग की बात है अथवा सघ के सिद्धान्त तथा समानता के सिद्धान्त के मध्य वास्तव में कोई आवश्यक सम्बन्ध है?

कुलीनतात्रिक समुदायों में, सत्ताहीन व्यक्तियों के समूह के मध्य, सदा थोड़े-से ऐसे शक्तिशाली और धनवान व्यक्ति होते हैं, जिनमें से प्रत्येक अकेले ही महान कार्य सम्पन्न कर सकता है। कुलीनतात्रिक समाजों में मनुष्यों को कार्य करने के लिए सयुक्त होने की आवश्यकता नहीं रहती; क्योंकि वे सुदृढ़ रूप से एक दूसरे के साथ आबद्ध रहते हैं। प्रत्येक धनवान और शक्तिशाली नागरिक एक स्थायी और अनिवार्य सघ का प्रमुख होता है। इस सघ में सभी व्यक्ति ऐसे होते हैं, जो उसके आश्रित रहते हैं अथवा जिनसे वह अपनी इच्छाओं की पूर्ति करता है।

इसके विपरीत प्रजातात्रिक राष्ट्रों में समस्त नागरिक स्वतन्त्र और निर्बल होते हैं। वे स्वय कोई कार्य मुश्किल से कर सकते हैं तथा उनमें से कोई भी अपने सहनागरिकों को अपनी सहायता करने के लिए विवश नहीं कर सकता। अतः यदि वे स्वेच्छापूर्वक एक दूसरे की सहायता करना नहीं सीखते, तो वे सभी शक्तिहीन बन जाते हैं। यदि प्रजातात्रिक देशों में निवास करने वाले व्यक्तियों के पास राजनीतिक उद्देश्यों के लिए संगठित होने का अधिकार और प्रवृत्ति न होती, तो उनकी स्वतन्त्रता महान संकट में पड़ जाती, किन्तु वे अपनी सम्पत्ति और ज्ञान को दीर्घकाल तक सुरक्षित रख पाते; जब कि यदि वे सामान्य जीवन में सघ-निर्माण की आदत कभी नहीं डालते, तो स्वयं सभ्यता के लिए संकट उपस्थित हो जाता। जिस जाति के व्यक्तियों में अकेले ही महान कार्य सम्पन्न करने की शक्ति नहीं रह जायगी तथा संयुक्त प्रयासों द्वारा महान कार्य करने का साधन भी नहीं रह जायगा, वह शीघ्र ही बर्बरता के युग में चली जायगी।

यह दुःख की बात है कि सामाजिक स्थिति के कारण प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में संघ इतने आवश्यक होते हैं, वही सामाजिक स्थिति अन्य समस्त राष्ट्रों की अपेक्षा प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में संघ के निर्माण को अधिक कठिन बना देती है। जब किसी कुलीन वर्ग के अनेक सदस्य संगठित होना स्वीकार करते हैं, तब वे सरलतापूर्वक ऐसा करने में सफल हो जाते हैं। चूँकि उनमें से प्रत्येक सदस्य इस भागीदारी में भारी शक्ति के साथ सम्मिलित होता है, इसलिए उसके सदस्यों की संख्या अत्यन्त सीमित हो सकती है और जब किसी संघ के सदस्यों की संख्या सीमित होती है, तब वे सरलतापूर्वक एक दूसरे से परिचित हो सकते हैं, एक दूसरे को समझ सकते हैं तथा निश्चित नियमों की स्थापना कर सकते हैं। प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में यही सुविधाएँ नहीं उपलब्ध होतीं। वहाँ संबद्ध सदस्यों की संख्या इतनी अधिक होती है कि उनके संघ के पास कोई शक्ति नहीं रह जाती। मैं इस बात से अवगत हूँ कि मेरे अनेक देशवासी इस कठिनाई से चिन्तित नहीं हैं। वे यह तर्क प्रस्तुत करते हैं कि नागरिक जितने ही अधिक निर्बल एवं अक्षम होंगे, सरकार को उतना ही अधिक योग्य एवं सक्रिय होना चाहिए, जिससे व्यक्ति जिस कार्य को सम्पन्न नहीं कर सकते, उसे समस्त समाज सम्पन्न कर सके। उनका विश्वास है कि इससे सारी कठिनाई का निराकरण हो जाता है, किन्तु मेरा विचार है कि वे गलती पर हैं।

एक सरकार कतिपय विशालतम अमरीकी कम्पनियों का कार्य सम्पन्न कर सकती है और कई राज्यों तथा संघ के सदस्य पहले ही ऐसा करने का प्रयत्न कर चुके हैं; किन्तु संघ के सिद्धान्त की सहायता से अमरीकी नागरिक प्रतिदिन विशाल मात्रा में जो अपेक्षाकृत छोटे कार्य करते हैं, उन कार्यों को क्या कभी कोई राजनीतिक शक्ति कर सकती है? इस बात की सरलतापूर्वक भविष्यवाणी की जा सकती है कि वह समय निकट आ रहा है, जब मनुष्य में, अकेले, जीवन की सामान्यतम आवश्यकताओं का उत्पादन करने की योग्यता न्यून से न्यूनतर हो जायगी। अतः शासक-सत्ता के कार्य में शाश्वत वृद्धि होगी और उसके प्रयत्नों से ही प्रतिदिन उसका विस्तार होता जायगा। वह जितना ही अधिक संघों का स्थान ग्रहण करेगी, एक साथ संयुक्त होने की भावना से रहित व्यक्तियों को उसकी सहायता की उतनी ही अधिक आवश्यकता होगी। ये कारण और कार्य हैं, जो अनवरत रूप से एक दूसरे की वृद्धि करते रहते हैं। क्या देश का प्रशासन अन्ततोगत्वा उन समस्त उत्पादनों का प्रबन्ध अपने हाथ में ले लेगा, जिनका प्रबन्ध कोई भी नागरिक अकेले नहीं कर सकता? और

अन्त में यदि ऐसा समय आ जाय, जब भूसम्पत्ति के उपविभाजन के चरम सीमा पर पहुँच जाने के परिणामस्वरूप भूमि के असंख्य ऐसे छोटे-छोटे टुकड़े हो जायें कि उन पर केवल कृषकों की कम्पनियों द्वारा ही कृषि की जा सके, तब क्या यह आवश्यक होगा कि सरकार या प्रमुख राज्य के कार्यों का परित्याग कर हल की मुठिया पकड़े? यदि सरकार ने कभी पूर्णतः निजी कम्पनियों के स्थान पर अधिकार कर लिया, तो प्रजातांत्रिक जनता की नैतिकता और प्रतिभा के लिए उतना ही अधिक संकट उत्पन्न हो जायगा, जितना उसके व्यवसाय एवं उत्पादनों के लिए। जब मनुष्यों का एक दूसरे पर पारस्परिक प्रभाव पड़ता है, तभी भावनाओं और मतों में स्वस्थता आती है, हृदय में विशालता आती है तथा मानव-मस्तिष्क का विकास होता है। मैंने दिखाया है कि प्रजातान्त्रिक देशों में इन प्रभावों का प्रायः अस्तित्व ही नहीं होता, अतः कृत्रिम रूप से उनका निर्माण करना आवश्यक होता है और यह कार्य केवल संघों द्वारा ही सम्पन्न हो सकता है।

जब किसी कुलीनतान्त्रिक समुदाय के सदस्य किसी नये विचार को ग्रहण करते हैं अथवा किसी नयी भावना की कल्पना करते हैं, तब वे उस उच्च आसन पर, जिस पर वे खड़े रहते हैं, अपने पार्श्व में उसे स्थान प्रदान करते हैं और जो विचार अथवा भावनाएँ समूह की दृष्टि के समक्ष इतनी अधिक स्पष्ट रहती हैं, उन्हें सरलतापूर्वक समस्त व्यक्तियों के मस्तिष्कों और हृदयों में प्रविष्ट किया जा सकता है। प्रजातान्त्रिक देशों में अकेली शासक सत्ता ही स्वभावतः इस प्रकार का कार्य कर सकने की स्थिति में होती है, किन्तु यह देख सकना सरल है कि उसका कार्य सदा अपर्याप्त और बहुधा खतरनाक होता है। जिस प्रकार कोई सरकार उत्पादनशील उद्योग की अवकल्पनाओं (सट्टों) की व्यवस्था नहीं कर सकती, उसी प्रकार इतने एक महान जाति के मध्य विचारों और भावनाओं के संचार को जीवित रखने तथा उसका पुनः नवीनीकरण करने की क्षमता नहीं हो सकती। ज्योंही कोई सरकार अपने राजनीतिक क्षेत्र से बाहर जाने तथा इस नये मार्ग पर चलने का प्रयत्न करती है, त्योंही वह अनजाने ही एक ऐसा अत्याचार करती है, जिसका समर्थन नहीं किया जा सकता, क्योंकि कोई सरकार केवल कठोर नियमों का आदेश दे सकती है, वह जिन विचारों का समर्थन करती है, उन्हें कठोरतापूर्वक कार्य रूप में परिणत किया जाता है तथा उसके परामर्श एवं उसके आदेशों में विभेद करना कभी सरल कार्य नहीं होता। यदि सरकार

वास्तव में यह विश्वास रखती हो कि वह विचारों के समस्त प्रचार को अवरुद्ध करने में रुचि रखती है, तो स्थिति और भी अधिक बुरी हो जायगी; तब वह ऐच्छिक निष्क्रियता के मारीपन से पीड़ित और गतिहीन हो जायगी। अतः सरकारों को ही एकमात्र सक्रिय शक्ति नहीं होनी चाहिए; प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों में उन शक्तिशाली निजी व्यक्तियों के स्थान पर, जिन्हें स्थितियों की समानता बहा ले गयी है, संघों को खड़ा होना चाहिए।

जैसे ही संयुक्त राज्य अमरीका के कुछ निवासी किसी ऐसे विचार अथवा भावना को ग्रहण करते हैं, जिनका प्रचार वे विश्व में करना चाहते हैं, वैसे ही वे पारस्परिक सहायता के लिए दृष्टि दौड़ाते हैं और ज्यों ही वे एक दूसरे को पा लेते हैं, त्यों ही वे संयुक्त हो जाते हैं। उस क्षण से वे पृथक् एवं असम्बद्ध नहीं रह जाते, प्रत्युत वे दूर से एक शक्ति के रूप में दिखायी देते हैं, जिनके कार्य एक उदाहरण के रूप में होते हैं और जिनकी बातों को सुना जाता है। जब मैंने पहले-पहल अमरीका में सुना कि एक लाख व्यक्तियों ने मद्यपान न करने की सार्वजनिक रूप से प्रतिज्ञा की है, तब मुझे यह बात एक गम्भीर प्रतिज्ञा के बजाय एक मजाक प्रतीत हुई और तत्काल मेरी समझ में यह बात नहीं आयी कि इन मद्यपान-विरोधी नागरिकों ने अपनी अँगीठियों के पास बैठकर पानी पीने से ही सन्तोष क्यों नहीं कर लिया? अन्त में मैंने समझा कि इन एक लाख अमरीकियों ने अपने आस-पास मद्यपान की प्रगति से सन्त्रस्त हो कर मद्य निषेध का समर्थन करने का संकल्प किया था। उन्होंने उसी प्रकार का कार्य किया, जिस प्रकार कोई उच्च पदस्थ व्यक्ति विलास के प्रति निम्न वर्ग के व्यक्तियों में घृणा उत्पन्न करने के लिए अत्यन्त सीधा-सादा वस्त्र पहिनता है। यह सम्भव है कि यदि वे एक लाख व्यक्ति फ्रांस में रहे होते, तो उनमें से प्रत्येक ने पृथक् पृथक् रूप से सरकार के पास स्मरणपत्र भेजा होता कि समस्त राज्य में सार्वजनिक मद्यपान-गृहों की निगरानी रखी जाय।

मेरे मतानुसार, अमरीका के बौद्धिक और नैतिक संघों पर जितना ध्यान देने की आवश्यकता है, उतना अन्य किसी वस्तु पर नहीं। उस देश के राजनीतिक और औद्योगिक संघ हमें बरबस अपनी ओर आकृष्ट करते हैं, किन्तु अन्य संघों को हम देख नहीं पाते अथवा यदि हम उनका पता लगा लेते हैं, तो हम उन्हें पूर्ण रूप से नहीं समझ पाते, क्योंकि हमने मुश्किल से कभी इस प्रकार की वस्तु को देखा है। फिर भी, इस बात को स्वीकार करना होगा कि अमरीकी जनता के लिए वे राजनीतिक और औद्योगिक संघों के समान ही,

सम्भवतः उनसे भी अधिक, आवश्यक हैं। प्रजातांत्रिक देशों में संघ-विधान विज्ञान का जनक होता है। इसी की प्रगति पर शेष समस्त विज्ञानों की प्रगति निर्भर करती है।

मानव-समाज को शासित करने वाले विधानों में एक ऐसा विधान है, जो अन्य समस्त विधानों की अपेक्षा अधिक ठीक एवं स्पष्ट प्रतीत होता है। यदि मनुष्यों को सभ्य बने रहना अथवा सभ्य बनना है, तो यह आवश्यक है कि जिस अनुपात में स्थितियों की समानता में वृद्धि हो, उसी अनुपात में एक साथ संघबद्ध होने की कला में भी विकास एवं सुधार हो।

३०. सार्वजनिक संघों एवं समाचारपत्रों के सम्बन्ध

जब मनुष्य दृढ़ और स्थायी सम्बन्धों द्वारा पारस्परिक एकता के सूत्र में आबद्ध नहीं रह जाते, तब किसी बड़ी संख्या में उनका सहयोग प्राप्त करना तब तक असम्भव ही रहता है, जब तक आप ऐसे प्रत्येक व्यक्ति को, जिसकी सहायता की आपको आवश्यकता है, यह विश्वास न दिला दें कि उसका निजी हित अपने प्रयत्नों को अन्य सभी व्यक्तियों के प्रयत्नों के साथ संयुक्त कर देने में ही निहित है। यह विश्वास केवल समाचारपत्र के साधन द्वारा ही सुविधा-जनक रीति से तथा स्वाभाविक रीति से उत्पन्न किया जा सकता है; समाचारपत्र के अतिरिक्त अन्य कोई भी वस्तु एक ही विचार को एक ही समय हजारों मस्तिष्कों में प्रविष्ट नहीं करा सकती। समाचारपत्र ऐसा परामर्शदाता है, जिसे खोजने की आवश्यकता नहीं पड़ती, किन्तु जो स्वयं आ उपस्थित होता है और आपके निजी कार्यों से आपका ध्यान हटाये बिना प्रतिदिन संक्षिप्त रूप से सामान्य हित के प्रश्नों के सम्बन्ध में आपके साथ बातचीत करता है।

अतः जिस अनुपात से मनुष्यों की समानता में वृद्धि होती है, उसी अनुपात में समाचारपत्रों की आवश्यकता भी बढ़ जाती है और व्यक्तिवाद अधिक भयजनक बन जाता है। यह सोचना कि वे केवल स्वतन्त्रता की रक्षा करते हैं, उनके महत्व को कम करने के तुल्य होगा; वे सभ्यता को कायम रखते हैं। मैं इस बात से इनकार नहीं करूँगा कि प्रजातान्त्रिक देशों में समाचारपत्र बहुधा अत्यन्त अव्यवस्थित योजनाओं को नागरिकों को एक साथ मिल कर प्रारम्भ करने के लिए प्रेरित करते हैं, किन्तु यदि समाचारपत्र न होते, तो सम्मिलित

गतिविधि भी न होती। अतः उनसे जो बुराइयाँ उत्पन्न होती हैं, वे उन बुराइयों से बहुत कम होती हैं, जिन्हें वे दूर करते हैं।

समाचारपत्र का कार्य केवल यह नहीं होता कि वह अनेक व्यक्तियों के समक्ष एक ही उद्देश्य को प्रस्तुत करे, प्रत्युत उसका कार्य व्यक्तियों द्वारा पृथक्-पृथक् रूप से सोची गयी योजनाओं को संयुक्त रूप से कार्यान्वित करने के लिए साधन प्रदान करना है। कुलीनतांत्रिक देश में निवास करने वाले प्रमुख नागरिक दूर से एक दूसरे को देखते हैं और यदि वे अपनी शक्तियों को संयुक्त करने की इच्छा करते हैं, तो वे अपने पीछे मनुष्यों का एक समूह लेकर एक दूसरे की ओर बढ़ते हैं। इसके विपरीत प्रजातांत्रिक देशों में बहुधा ऐसा होता है कि संयुक्त होने की कामना अथवा इच्छा रखने वाले अनेक व्यक्ति संयुक्त नहीं हो सकते, क्योंकि अत्यन्त महत्वहीन और भीड़ में खोये हुए होने के कारण वे एक दूसरे को देख नहीं सकते और न यही जान सकते हैं कि एक दूसरे को कहाँ पाया जा सकता है। तब समाचारपत्र उस धारणा अथवा भावना को ग्रहण करते हैं, जो उनमें से प्रत्येक के मन में एक ही समय, किन्तु पृथक्-पृथक् रूप से उत्पन्न हुई थी। तब सभी तत्काल इस मार्गदर्शक प्रकाश की ओर उन्मुख हो जाते हैं और दीर्घ काल से एक दूसरे को अन्धकार में ढूँढ़ने वाले ये भटकते हुए मस्तिष्क अन्त में मिलकर संयुक्त हो जाते हैं। समाचारपत्र ने उनको एक स्थान पर एकत्र किया और समाचारपत्र अब भी उनको संयुक्त रखने के लिए आवश्यक है।

प्रजातांत्रिक जनता के मध्य कोई संघ तभी शक्तिशाली हो सकता है, जब उसके सदस्यों की संख्या अधिक हो। अतः जिन व्यक्तियों से संघ का निर्माण होता है, वे एक व्यापक क्षेत्र में बिखरे रहते हैं और उनमें से प्रत्येक व्यक्ति अपनी आमदनी की अल्पता के कारण अथवा उन अनवरत क्षुद्र प्रयासों के कारण, जिनके द्वारा वह अपनी आय का अर्जन करता है, अपने निवास-स्थान में ही आबद्ध रहता है। अतः एक दूसरे को देखे बिना प्रतिदिन वार्तालाप करने तथा बिना मिले हुए संयुक्त रूप से कदम उठाने के साधनों को ढूँढ़ना आवश्यक है। इस प्रकार किसी भी प्रजातांत्रिक संघ का काम समाचारपत्रों के बिना मुश्किल से चल सकता है।

फलस्वरूप, सार्वजनिक संघों और समाचारपत्रों के मध्य एक आवश्यक सम्बन्ध है: समाचारपत्र संघों का निर्माण करते हैं और यदि यह कथन सत्य है कि मनुष्यों की स्थितियों की समानता में वृद्धि के साथ संघों की संख्या में

भी वृद्धि होगी, तो यह बात भी कम निश्चित नहीं है कि जिस अनुपात में संघों की संख्या में वृद्धि होती है, उसी अनुपात में समाचारपत्रों की संख्या में भी वृद्धि होती है। इस प्रकार हम अमरीका में एक ही समय संघों और समाचारपत्रों की अधिकतम संख्या देखते हैं।

समाचारपत्रों और संघों की संख्या के मध्य इस सम्बन्ध के फलस्वरूप हमें पत्र-पत्रिकाओं की स्थिति और किसी देश के प्रशासन के स्वरूप के मध्य एक और सम्बन्ध का पता चलता है और यह विदित होता है कि प्रजातान्त्रिक जनता के मध्य प्रशासन जिस अनुपात में अधिक अथवा कम केन्द्रित होगा, उसी अनुपात में समाचारपत्रों की संख्या में भी कमी अथवा वृद्धि अवश्य होगी, क्योंकि प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों में, कुलीनतंत्रों की भाँति, स्थानीय अधिकारों का प्रयोग समाज के प्रमुख सदस्यों के हाथों में नहीं सौंपा जा सकता। उन अधिकारों को या तो अनिवार्यतः समाप्त कर दिया जायगा, या उन्हें बहुत अधिक व्यक्तियों के हाथों में दे दिया जायगा। ये व्यक्ति वास्तव में एक निश्चित क्षेत्र का प्रशासन कार्य करने के लिए कानून द्वारा स्थायी रूप से स्थापित एक संघ के सदस्य होते हैं और उनकी निजी छोटी-मोटी चिन्ताओं के मध्य उनके सार्वजनिक हित का समाचार उनके पास प्रतिदिन पहुँचाने के लिए एक पत्र की आवश्यकता होती है। स्थानीय अधिकारों की संख्या जितनी ही अधिक होती है, उतनी ही अधिक संख्या उन व्यक्तियों की होती है, जिनके हाथों में ये अधिकार कानून द्वारा सौंपे गये होते हैं और चूँकि इस आवश्यकता का अनुभव प्रति क्षण किया जाता है, इसलिए समाचारपत्रों की संख्या बहुत अधिक होती है।

अमरीकी समाचारपत्रों की विशाल संख्या का कारण देश की महान राजनीतिक स्वतन्त्रता और प्रेस की पूर्ण स्वतन्त्रता उतना नहीं है, जितना कि प्रशासनिक सत्ता का असाधारण उपविभाजन। यदि संघ के समस्त निवासियों को मताधिकार प्राप्त होता—किन्तु ऐसा मताधिकार, जो काँग्रेस में विधायकों के निर्वाचन तक ही सीमित हो—तो उन्हें थोड़े-से समाचारपत्रों की ही आवश्यकता होती; क्योंकि उन्हें केवल अत्यन्त महत्त्वपूर्ण, किन्तु अत्यन्त दुर्लभ अवसरों पर ही एक साथ मिल कर कार्य करना होता, किन्तु महान राष्ट्रीय संघ के अंतर्गत स्थानीय प्रशासन के कार्यों के लिए प्रत्येक काउन्टी, प्रत्येक नगर और निश्चय ही प्रत्येक ग्राम में कानून द्वारा छोटे-छोटे संघों की स्थापना की गयी है। इस प्रकार देश के कानून प्रत्येक अमरीकी को अपने जीवन के प्रत्येक दिन एक सामान्य उद्देश्य के लिए अपने कतिपय सह-नागरिकों के साथ सहयोग

करने के लिए विवश करता है और समस्त अन्य व्यक्तियों के कार्यों की सूचना देने के लिए उनमें से प्रत्येक को एक समाचारपत्र की आवश्यकता होती है।

मेरा मत है कि राष्ट्रीय प्रतिनिधि सभाओं से रहित, किन्तु अनेक छोटे-छोटे स्थानीय अधिकारों से सम्पन्न प्रजातान्त्रिक राष्ट्र में अन्त में समाचारपत्रों की संख्या एक केन्द्रीकृत प्रशासन और एक निर्वाचित विधानमंडल द्वारा शासित होने वाले राष्ट्र की अपेक्षा अधिक होगी। संयुक्त राज्य अमरीका में दैनिक पत्रों की अत्यधिक बिक्री का सर्वोत्तम कारण मुझे यह प्रतीत होता है कि मुझे अमरीकियों में सब प्रकार की स्थानीय स्वतन्त्रता के साथ अधिकतम राष्ट्रीय स्वतन्त्रता दिखायी देती है।

फ्रांस और इंगलैण्ड में एक प्रचलित मत है कि प्रेस पर लगाये गये करों को हटा देने से समाचारपत्रों की बिक्री में असीमित वृद्धि हो जायगी। इस प्रकार के सुधार के प्रभावों का यह अत्यन्त अतिरंजित अनुमान है। समाचार-पत्रों की संख्या में उनके सस्तेपन के कारण नहीं, प्रत्युत उस आवश्यकता के कारण वृद्धि होती है, जिसका अनुभव मनुष्य बहुधा न्यूनाधिक मात्रा में पारस्परिक विचारविनिमय और संगठन के लिए करते हैं।

इसी प्रकार मेरे मतानुसार दैनिक पत्रों के बढ़ते हुए प्रभाव के कारण, इसके लिए सामान्यतः बताये जाने वाले कारणों की अपेक्षा अधिक सामान्य हैं। कोई समाचारपत्र तभी जीवित रह सकता है, जब वह मनुष्यों की एक विशाल संख्या की भावनाओं अथवा सिद्धांतों को प्रकाशित करे। अतः एक समाचार-पत्र सदा अपने अभ्यस्त पाठकों द्वारा निर्मित एक संघ का प्रतिनिधित्व करता है। यह संघ न्यूनाधिक रूप में स्पष्ट हो सकता है, न्यूनाधिक रूप में सीमित हो सकता है, न्यूनाधिक रूप में अधिक सदस्य-संख्या वाला हो सकता है, किन्तु समाचारपत्र के जीवित रहने का तथ्य इस बात का प्रमाण है कि उसके पाठकों के मस्तिष्कों में कम से कम इस प्रकार के संघ के अंकुर विद्यमान हैं।

इसके परिणामस्वरूप मैं एक ऐसे अन्तिम निष्कर्ष पर पहुँचता हूँ, जिसके साथ मैं इस अध्याय को समाप्त करूँगा। मनुष्यों की स्थितियों में जितनी अधिक समानता आती है और व्यक्तिगत रूप से मनुष्य जितने कम शक्तिशाली होते हैं, उतनी ही अधिक सरलता के साथ वे समूह के प्रवाह में बह जाते हैं और समूह द्वारा परित्यक्त मत पर अटल बने रहना उनके लिए उतना ही अधिक कठिन हो जाता है। एक समाचारपत्र एक संघ का प्रतिनिधित्व करता है; यह कहा जा सकता है कि वह अपने प्रत्येक पाठक को अन्य समस्त पाठकों के नाम पर

सम्बोधित करता है और उनकी व्यक्तिगत निर्बलता के अनुपात में उन पर अपना प्रभाव डालता है। अतः मनुष्यों की सामाजिक स्थितियों की समानता में वृद्धि होने पर समाचारपत्र की शक्ति में अवश्य वृद्धि होगी।

३१. नागरिक और राजनीतिक संघों का सम्बन्ध

इस पृथ्वी पर एक ही ऐसा देश है, जहाँ राजनीतिक कार्यों के लिए नागरिकों को संघ निर्माण की अबाध स्वतंत्रता प्राप्त है। यही देश विश्व में एक मात्र ऐसा देश है, जहाँ नागरिक-जीवन में संघ के अधिकार का निरंतर प्रयोग किया जाता है और जहाँ इसके माध्यम से वे सभी लाभ प्राप्त किये जाते हैं, जिन्हें सभ्यता प्रदान कर सकती है।

उन समस्त देशों में, जहाँ राजनीतिक संघों पर प्रतिबन्ध लगा होता है, नागरिक-संघ दुर्लभ होते हैं। इस बात की सम्भावना बहुत कम है कि यह संयोग का परिणाम है, बल्कि इससे यह निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए कि इन दो प्रकार के संघों के मध्य एक स्वाभाविक और सम्भवतः आवश्यक सम्बन्ध है।

किसी विषय में कतिपय व्यक्तियों की समान अभिरुचि होती है; या तो किसी व्यवसाय का प्रबन्ध करना होता है, या उत्पादन विषयक किसी अनुमान की परीक्षा करनी होती है : वे मिलते हैं, वे संयुक्त होते हैं और इस प्रकार वे शनैः-शनैः संघ के सिद्धान्त से अवगत होते हैं। छोटे-छोटे कार्यों की संख्या जितनी ही अधिक होती है, मनुष्यों में महान कार्यों को संयुक्त रूप से सम्पन्न करने की क्षमता, न जानते हुए भी, उतनी ही अधिक उत्पन्न होती है।

अतः नागरिक संघ राजनीतिक संघों के निर्माण को सरल बनाते हैं, किन्तु दूसरी ओर राजनीतिक संघ नागरिक कार्यों के लिए निर्मित संघों की शक्ति में अत्यधिक वृद्धि करता है और उनमें अत्यधिक सुधार करता है। मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि नागरिक-जीवन में प्रत्येक व्यक्ति यह कल्पना कर सकता है कि वह स्वयं अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकता है, राजनीति में वह ऐसी कोई कल्पना नहीं कर सकता। अतः सार्वजनिक जीवन का तनिक भी ज्ञान रखने वाली जाति में प्रतिदिन समस्त समुदाय के मस्तिष्कों में संघ की धारणा और संयुक्त होने की कामना उपस्थित होती रहती है। मनुष्यों को सामूहिक रूप से कार्य करने से रोकने वाले चाहे जो भी प्राकृतिक विकर्षण

हों, वे दल के निमित्त संयुक्त होने के लिए सदा तत्पर रहेंगे। इस प्रकार राजनीतिक जीवन, संघ के प्रति प्रेम और संघ आचरण को अधिक सामान्य बना देता है; वह मिलन की इच्छा को जाग्रत करता है तथा मनुष्यों को, जो अन्यथा सदा पृथक्-पृथक् रहते हैं, संयुक्त होने के साधन सिखाता है।

राजनीति न केवल बहुसंख्यक संघों को, प्रत्युत बहुत बड़े-बड़े संघों को जन्म देती है। नागरिक जीवन में ऐसे अवसर बहुत कम आते हैं, जब बहुत अधिक व्यक्ति एक साथ मिलकर किसी एक हित के लिए कार्य करते हैं, इस प्रकार के हित को अस्तित्व में लाने के लिए अत्यधिक कौशल की आवश्यकता होती है, किन्तु राजनीति में सुअवसर स्वयमेव प्रतिदिन उपस्थित रहते हैं। अब, केवल बड़े संघों में ही संघ के सिद्धान्त के सामान्य मूल्य का प्रदर्शन होता है। व्यक्तिगत रूप से शक्तिहीन नागरिक स्पष्ट रूप से उस शक्ति की पूर्व कल्पना नहीं कर सकते, जिसे वे एक साथ संयुक्त होकर प्राप्त कर सकते हैं। उन्हें यह शक्ति दिखानी पड़ेगी, तभी वे इसको समझ सकते हैं। अतः किसी सार्वजनिक कार्य के लिए थोड़े व्यक्तियों की अपेक्षा समूह को एकत्र करना बहुधा सरलतर होता है; एक हजार नागरिक इस बात को नहीं समझते कि एक साथ संयुक्त होने में उनका क्या हित है; दस हजार नागरिक इससे पूर्णरूपेण अवगत होंगे। राजनीति में मनुष्य बड़े बड़े कार्यों के लिए संयुक्त होते हैं और महत्वपूर्ण कार्यों में वे संघ के सिद्धान्त का जो प्रयोग करते हैं, वह व्यवहारतः उन्हें इस बात की शिक्षा देता है कि कम महत्व के कामों में एक दूसरे की सहायता करना उनके लिए हितकारी है। राजनीतिक संघ अनेक व्यक्तियों को एक ही समय उनके निजी क्षेत्र से बाहर खींच लाता है; आयु, बुद्धि और सम्पत्ति ने स्वाभाविक रूप से उन्हें चाहे जितना पृथक् रखा हो, राजनीतिक संघ उन्हें एक दूसरे के निकटतर लाता है और उनके मध्य सम्पर्क स्थापित करता है। एक बार मिल जाने पर उनमें सदा पुनर्मिलन हो सकता है।

बहुत कम ऐसी भागीदारियाँ हैं, जिनमें मनुष्य अपनी सम्पत्ति के एक भाग को खतरे में डाले बिना सम्मिलित हो सकते हैं; उत्पादन और व्यापार करने वाली समस्त कम्पनियों के साथ ऐसा ही होता है। जब मनुष्यों को संघ की कला का तनिक भी ज्ञान नहीं होता और वे उसके प्रमुख नियमों से अपरिचित रहते हैं, तब वे प्रथम बार इस प्रकार संयुक्त होने पर महँगा अनुभव प्राप्त करने में भयभीत रहते हैं। अतः वे सफलता के एक शक्तिशाली साधन के प्रयोग में निहित खतरे को उठाने की अपेक्षा उस साधन से अपने को वंचित रखना

अधिक पसन्द करते हैं। फिर भी, वे उन राजनीतिक संघों में, जो उन्हें बिना खतरे के दिखायी देते हैं, सम्मिलित होने में अपेक्षाकृत कम अनिच्छा प्रकट करते हैं, क्योंकि वे राजनीतिक संघों में कोई धन नहीं लगाते। किन्तु यह पता लगाये बिना ही कि मनुष्यों की एक भारी संख्या के मध्य किस प्रकार व्यवस्था कायम रखी जाती है और किस प्रकार एक ही लक्ष्य की ओर एकसाथ तथा विधिपूर्वक आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया जाता है, वे इन संघों में अधिक दिनों तक नहीं रह सकते। इस प्रकार वे अपनी निजी इच्छा को शेष समस्त व्यक्तियों की इच्छा के समक्ष समर्पित करना तथा अपने निजी प्रयासों को सामान्य प्रेरणा के अधीनस्थ करना सीखते हैं—ये ऐसी चीजें हैं, जिनका जानना नागरिक एवं राजनीतिक संघों में कम आवश्यक नहीं है। अतः राजनीतिक संघों को बड़ा नि:शुल्क स्कूल माना जा सकता है, जहाँ समुदाय के समस्त सदस्य संघ के सामान्य सिद्धान्त की शिक्षा ग्रहण करने के लिए जाते हैं।

किन्तु यदि राजनीतिक संघ नागरिक संघ की प्रगति में प्रत्यक्ष योगदान न भी करे तो भी राजनीतिक संघ को नष्ट करना नागरिक संघ को निर्बल बनाने के तुल्य होगा। जब नागरिक कतिपय कार्यों के लिए केवल सार्वजनिक रूप से मिल सकते हैं, तब वे इस प्रकार की सभाओं को एक ऐसी विचित्र कार्रवाई मानते हैं, जो कभी कभी ही होती है और वे इसके सम्बन्ध में बहुत कम सोचते हैं। जब उन्हें समस्त कार्यों के लिए स्वतन्त्रतापूर्वक मिलने की अनुमति दी जाती है तब वे अंततोगत्वा सार्वजनिक संघ को मनुष्यों के विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति का सार्वजनिक अथवा एक प्रकार से एकमात्र साधन समझने लगते हैं। प्रत्येक नयी आवश्यकता तत्क्षण इस विचार को पुनरुज्जीवित कर देती है। तब संघ-निर्माण की कला, जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ, कार्य की जननी बन जाती है, जिसका अध्ययन और व्यवहार सभी करते हैं।

जब कुछ प्रकार के संघों पर प्रतिबन्ध लगा होता है और अन्य प्रकार के संघों की फिर अनुमति प्राप्त होती है, तब पूर्व रूप से प्रतिबन्धित और अप्रतिबन्धित संघों के मध्य भेद करना कठिन हो जाता है। सन्देह की इस स्थिति में मनुष्य उनसे एकदम अलग रहते हैं और एक प्रकार का ऐसा जनमत प्रचलित हो जाता है, जिसमें किसी भी संघ को साहसपूर्ण और लगभग अवैध प्रयास समझने की प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है।

अतः यह सोचना अवास्तविक है कि संघ की भावना किसी विषय में दबा दिये जाने के बावजूद अन्य समस्त मामलों में उसी सबलता के साथ प्रकट

होगी और यदि मनुष्यों को कतिपय कार्यों को मिलजुल कर सम्पन्न करने के लिए अनुमति दी जाय, तो उनमें जुट जाने के लिए उनके लिए यह पर्याप्त होगा। जब किसी समुदाय के सदस्यों को समस्त कार्यों के लिए संयुक्त होने की अनुमति रहती है और वे इसके अभ्यस्त रहते हैं तब वे छोटे कार्यों के लिए भी उतनी ही तत्परता के साथ संयुक्त होंगे, जितनी तत्परता से वे अधिक महत्वपूर्ण कार्यों के लिए संयुक्त होते हैं; किन्तु यदि उन्हें छोटे कार्यों के लिए संयुक्त होने की स्वतंत्रता हो तो, न तो उनमें संयुक्त होने की प्रवृत्ति होगी और न वे संयुक्त हो सकेंगे। उन्हे संयुक्त रूप से अपना व्यवसाय चलाने के लिए पूर्णतया स्वतंत्र छोड़ देना निरर्थक ही होगा। आपने उन्हें जो अधिकार प्रदान किये हैं, उनसे लाभान्वित होने की वे तनिक भी चिन्ता नहीं करेंगे और प्रतिबन्धित संघों का दमन करने के निरर्थक प्रयासों में अपनी शक्ति को समाप्त कर लेने के बाद आपको यह देखकर आश्चर्य होगा कि आप उन्हें उन संघों का निर्माण करने के लिए राजी नहीं कर सकते, जिन संघों को आप प्रोत्साहित करते हैं। मैं यह नहीं कहता कि जिस देश में राजनीतिक संघ पर प्रतिबन्ध लगा होता है, वहाँ नागरिक संघ हो ही नहीं सकते, क्योंकि कतिपय सामान्य कार्यों में भाग लिए बिना मनुष्य समाज में कभी नहीं रह सकते किन्तु मेरा मत है कि इस प्रकार के देश में नागरिक संघों की संख्या सदा कम रहेगी, उनकी योजना त्रुटिपूर्ण होगी, उनका प्रबन्ध अकुशलतापूर्ण होगा, वे कभी विशाल योजनाओं का निर्माण नहीं करेंगे अथवा वे उनके कार्यान्वय में विफल हो जायेंगे।

इसके परिणामस्वरूप मैं स्वभावतः यह सोचने के लिए प्रेरित हो जाता हूँ कि राजनीतिक मामलों में संघ निर्माण की स्वतन्त्रता सार्वजनिक शान्ति के लिए उतनी खतरनाक नहीं है, जितनी कि उसे समझा जाता है तथा सम्भवतः कुछ समय तक समाज को आन्दोलित करने के पश्चात् अन्त में वह राज्य को शक्तिशाली बना सकती है। यों कहा जा सकता है कि प्रजातात्रिक देशों में राजनीतिक संघों में सम्मिलित व्यक्ति राज्य पर शासन करने की महत्वाकांक्षा रखने वाले एकमात्र शक्तिशाली व्यक्ति होते हैं। तदनुसार हमारे युग की सरकारें इस प्रकार के संघों को उसी दृष्टि से देखती हैं जिस प्रकार मध्य युगों में राज-सिंहासन के बड़े-बड़े अधीनस्थ सरदारों को देखते थे; वे उनके प्रति एक प्रकार की आन्तरिक घृणा रखती हैं और सभी अवसरों पर उनका प्रतिकार करती हैं। इसके विपरीत उनमें नागरिक संघों के प्रति स्वाभाविक सद्भावना

होती है; क्योंकि उन्हें तत्काल इस बात का पता चल जाता है कि ये संस्थाएँ समाज के मस्तिष्क को सार्वजनिक कार्यों की ओर ले जाने के स्थान पर उसे इस प्रकार के विचारों से विमुख करने का कार्य करती हैं तथा जिन उद्देश्यों की पूर्ति सार्वजनिक शान्ति के बिना नहीं हो सकती, उन उद्देश्यों में समाज के मस्तिष्क को अधिकाधिक व्यस्त रखकर ये उसे क्रान्तियाँ करने से रोकती हैं; किन्तु ये सरकारें इस तथ्य पर ध्यान नहीं देतीं कि राजनीतिक संघों में नागरिक संघों की वृद्धि करने तथा उनके निर्माण को सुविधाजनक बनाने की आश्चर्यजनक प्रवृत्ति होती है तथा एक खतरनाक बुराई से बचने में वे अपने को एक प्रभावशाली उपाय से वंचित कर लेती हैं।

जब आप अमरीकियों को किसी राजनीतिक सिद्धान्त का प्रचार करने, एक व्यक्ति को कार्याध्यक्ष बनाने तथा दूसरे व्यक्ति की सत्ता छीनने के उद्देश्य से स्वतंत्रतापूर्वक और अनवरत रूप से संघों का निर्माण करते हुए देखते हैं, तब आपको यह समझने में कोई कठिनाई नहीं होती है कि किस प्रकार इतने स्वतंत्र व्यक्ति निरन्तर स्वतंत्रता का दुरुपयोग नहीं करते। दूसरी ओर, यदि आप अमरीका में कार्य करने वाली व्यापारिक कम्पनियों की असीमित संख्या का सर्वेक्षण करें और देखें कि अमरीकी प्रत्येक दिशा में महत्वपूर्ण और कठिन योजनाओं के कार्यान्वय में अनवरत लगे हुए हैं, जो छोटी से छोटी क्रान्ति द्वारा भी गड़बड़ा जायँगी, तो आपकी समझ में तत्काल यह बात आ जायगी कि इतनी अच्छी तरह से कार्यरत व्यक्ति क्यों राज्य में अशान्ति उत्पन्न करने की तनिक भी इच्छा नहीं करते, न वे सार्वजनिक शान्ति को, जिससे वे सभी लाभान्वित होते हैं, नष्ट करने की इच्छा रखते हैं।

क्या इन वस्तुओं का पर्यवेक्षण पृथक् पृथक् रूप से करना पर्याप्त है अथवा क्या हमें उन्हें जोड़ने वाली प्रच्छन्न कड़ी का पता नहीं लगाना चाहिए? अपने राजनीतिक संघों में सभी स्थितियों, बुद्धियों और अवस्थाओं के सभी अमरीकी प्रतिदिन संघ के प्रति एक सामान्य अभिरुचि ग्रहण करते हैं और उसका प्रयोग करने के अभ्यस्त बनते हैं। वहाँ वे भारी संख्या में एक दूसरे से मिलते हैं; वे एक दूसरे से वार्तालाप करते हैं, एक दूसरे की बातें सुनते हैं और वे पारस्परिक रूप से सब प्रकार के कार्य करने के लिए प्रेरित होते हैं। इस प्रकार वे जिन विचारों को प्राप्त करते हैं, उन्हें बाद में वे नागरिक जीवन में स्थानान्तरित करते हैं और उन्हें हजारों कार्यों में प्रयुक्त करते हैं। इस प्रकार एक खतरनाक स्वतंत्रता के आनन्दोपभोग द्वारा अमरीकी स्वतंत्रता के खतरों को अपेक्षाकृत

कम करने की कला सीखते हैं।

यदि किसी राष्ट्र के जीवन में किसी निश्चित क्षण को चुन लिया जाय तो यह सिद्ध करना सरल है कि राजनीतिक संघ राज्य में अशान्ति उत्पन्न करते हैं तथा उद्योग को पंगु बना देते हैं, किन्तु यदि एक जाति के सम्पूर्ण जीवन को लीजिए और तब सम्भवतः इस बात को सिद्ध करना सरल होगा कि राजनीतिक मामलों में संघ-निर्माण की स्वतंत्रता समाज की समृद्धि और शान्ति के लिए भी अनुकूल है।

मैंने इस पुस्तक के पूर्व भाग में कहा था—"राजनीतिक संघ की अबाध स्वतंत्रता को प्रेस की स्वतंत्रता में पूर्ण रूप से समाविष्ट नहीं किया जा सकता। प्रथम दूसरे की अपेक्षा कम है और अधिक खतरनाक है। कोई राष्ट्र उस पर अपना आधिपत्य बनाये रखते हुए उसे कतिपय सीमाओं के अन्तर्गत आबद्ध कर सकता है और कभी-कभी अपनी सत्ता को कायम रखने के लिए, वह ऐसा करने के लिए विवश हो सकता है" और मैंने पुनः कहा था—"इस बात को अस्वीकृत नहीं किया जा सकता कि राजनीतिक उद्देश्यों के लिए संघ-निर्माण की अबाध स्वतंत्रता की वह अन्तिम सीमा होती है, जिसकी योग्यता किसी राष्ट्र में होती है। यदि यह उन्हें अराजकता का शिकार नहीं बनाती, तो यह उन्हें निरंतर अराजकता के तट पर लाती रहती है।" इस प्रकार मैं यह नहीं सोचता कि कोई राष्ट्र अपने नागरिकों को राजनीतिक उद्देश्यों के लिए संघ निर्माण की पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान करने के लिए सदा स्वतंत्र होता है और मुझे इस बात में संदेह है कि किसी देश में अथवा किसी युग में संघ स्वतंत्रता के लिए कोई सीमा नहीं निर्धारित करना बुद्धिमत्तापूर्ण होगा।

कहा जाता है कि यदि संघ निर्माण के अधिकार को संकीर्ण सीमाओं के अन्तर्गत आबद्ध न रखा जाय तो कोई राष्ट्र समाज में शांति की रक्षा नहीं कर सकता, कानूनों का वह सम्मान नहीं करवा सकता अथवा एक स्थायी सरकार की स्थापना नहीं कर सकता। निस्सन्देह ये वरदान अमूल्य हैं। मैं इस बात की कल्पना कर सकता हूँ कि उन्हें प्राप्त करने अथवा उन्हें सुरक्षित रखने के लिए राष्ट्र अपने ऊपर अस्थायी कठोर प्रतिबन्ध लगा सकता है; फिर भी राष्ट्र के लिए यह जानना उचित है कि इन वरदानों को किस मूल्य पर खरीदा जाता है। मैं इस बात को समझ सकता हूँ कि किसी मनुष्य के जीवन की रक्षा करने के लिए उसकी भुजा को काट डालना वाछनीय हो सकता है, किन्तु यह कहना हास्यास्पद होगा कि वह उतना ही कुशल होगा, जितना कुशल वह भुजा काटे जाने के पहले था।

३२. अमेरिका में भौतिक कल्याण के प्रति रुचि

अमेरिका में भौतिक कल्याण के प्रति भावना की प्रबलता सदा विशेष नहीं होती, किन्तु वह सामान्य होती है और यदि सभी उसका अनुभव समान रीति से नहीं करते तो भी उसका अनुभव सभी द्वारा किया जाता है। शरीर की छोटी से छोटी आवश्यकताओं की पूर्ति भी सावधानीपूर्वक करना तथा जीवन की तुच्छ सुविधाओं की व्यवस्था करना प्रत्येक व्यक्ति के मस्तिष्क में सर्वोपरि होता है। यूरोप में कुछ-कुछ इसी प्रकार की चीज अधिकाधिक प्रत्यक्ष है। दोनों गोलार्द्धों में जो कारण इन परिणामों की सृष्टि करते हैं, उन कारणों में से अनेक का मेरे विषय से इतना सम्बध है कि उन पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

जब सम्पत्ति परिवारों में वंशानुगत रूप से स्थिर रहती है, तब भारी संख्या में मनुष्य जीवन के आनन्दों का उपयोग, उन आनन्दों के प्रति विशेष रुचि का अनुभव किये बिना करते हैं। मनुष्य का हृदय किसी बहुमूल्य वस्तु पर अबाध अधिकार की भावना से उतना अधिक अभिभूत नहीं रहता, जितना उस पर अधिकार करने की इच्छा से, जिसकी अभी पूर्ण रूप से तृप्ति नहीं हुई है और उसे खो देने के भय से निरन्तर अभिभूत रहता है। कुलीनतान्त्रिक समुदायों में धनिक व्यक्तियों को चूँकि अपनी स्थिति से भिन्न स्थिति का कभी अनुभव नहीं होता, इसलिए उन्हें उसके परिवर्तन का कोई भय नहीं रहता। इस प्रकार की स्थितियों के अस्तित्व का अनुभव उन्हें मुश्किल से होता है। वे जीवित के सुखों को जीवन का लक्ष्य नहीं, प्रत्युत एक जीवन-पद्धति मान मानते हैं; वे उन्हें स्वत अस्तित्व मानते हैं—जिनका उपयोग किया जाता है, किन्तु जिनके विषय में बहुत कम सोचा जाता है। चूँकि इस प्रकार उस स्वाभाविक एवं आन्तरिक अभिरुचि की परितुष्टि बिना कष्ट और बिना भय के हो जाती है, जिस अभिरुचि का अनुभव मनुष्य सुखी होने के प्रति करते हैं, इसलिए उनकी प्रतिभा दूसरी ओर उन्मुख होती है और उसका उपयोग मनुष्यों के मस्तिष्क को प्रेरित एवं तल्लीन करने वाले कठोरतर एवं उच्चतर कार्यों के लिए किया जाता है।

अतः भौतिक सुखों के मध्य में ही कुलीन तंत्र के सदस्य बहुधा इन सुखों के ही प्रति एक प्रबल घृणा का प्रदर्शन करते हैं, तथा उनसे वंचित हो जाने पर अपूर्व सहनशक्ति का परिचय देते हैं। कुलीनतन्त्रों को हिला अथवा नष्ट कर

देने वाली समस्त क्रान्तियों ने सिद्ध कर दिया है कि अतिशय विलासप्रिय व्यक्ति कितनी सरलता के साथ जीवन की आवश्यक वस्तुओं के बिना भी काम चला सकते हैं, जबकि कठोर श्रम द्वारा क्षमता अर्जित करने वाले व्यक्ति उसके खो जाने पर मुश्किल से जीवित रह सकते हैं।

जब मैं उच्चतर वर्गों से दृष्टि हटाकर निम्नतर वर्गों का पर्यवेक्षण करता हूँ, तब मुझे विरोधी कारणों से समान प्रभाव उत्पन्न होते दिखायी देते हैं। ऐसे राष्ट्रों में जहाँ समाज पर कुलीनतंत्र का आधिपत्य होता है और समाज स्थिर रहता है, अन्त में लोग निर्धनता के उसी प्रकार अभ्यस्त बन जाते हैं जिस प्रकार धनी व्यक्ति अपनी समृद्धि के अभ्यस्त बन जाते हैं।

धनी व्यक्ति अपने भौतिक सुखों के लिए तनिक भी चिन्ता नहीं करते, क्योंकि वे उनका उपभोग बिना किसी प्रयास के करते हैं; निर्धन व्यक्ति ऐसी वस्तुओं के बारे में नहीं सोचते, जिन्हें प्राप्त करने की वे तनिक भी आशा नहीं रखते तथा जिनके विषय में वे तनिक भी नहीं जानते, जिससे उनमें अपने लिए कोई इच्छा ही नहीं जाग्रत होती। इस प्रकार के समुदायों में निर्धन व्यक्तियों की कल्पना एक दूसरे ही संसार की खोज में उड़ान भरती है। वास्तविक जीवन की पीड़ाएँ उनकी कल्पना को चारों ओर से घेरे रहती हैं; किन्तु वह उनके नियंत्रण से बच निकलती है और दूर, बहुत दूर जाकर अपना आनन्द प्राप्त करने के लिए उड़ान भरती है।

इसके विपरीत जब श्रेणी-भेद आपस में मिले रहते हैं और विशेषाधिकार नष्ट कर दिये जाते हैं—जब वंशानुगत सम्पत्ति का उपविभाजन हो जाता है और शिक्षा तथा स्वतंत्रता का व्यापक प्रसार हो जाता है, तब विश्व के सुखों को प्राप्त करने की इच्छा निर्धन व्यक्तियों की कल्पना को वशवर्ती कर लेती है और उन सुखों से वंचित होने का भय धनिकों की कल्पना पर अधिकार कर लेता है। अनेक क्षुद्र सम्पत्तियाँ प्रकट होती हैं। जिनके पास ये होती हैं, उन्हें इतना पर्याप्त भौतिक सुख प्राप्त होता है कि वे इन सुखों के स्वाद की कल्पना कर सकते हैं, किन्तु इस स्वाद की परितुष्टि करने के लिए वह पर्याप्त नहीं होता। वे बिना प्रयास के उन्हें कभी प्राप्त नहीं करते और बिना भय के वे कभी उनका उपभोग भी नहीं करते। अतएव वे इन सुखद, अपूर्ण एवं अस्थिर सुखों की प्राप्ति अथवा उन्हें बनाये रखने के लिए सदा प्रयास करते रहते हैं।

यदि मुझे इस बात का पता लगाना हो कि जो व्यक्ति निम्न वर्ग में अपने

अवरुद्ध गति हो जाते हैं, उनमें कौन-सी भावना सर्वाधिक स्वाभाविक होती है, तो भौतिक समृद्धि के प्रति इस प्रेम की अपेक्षा उनकी स्थिति के लिए अधिक अनुकूल किसी भी भावना का पता मुझे नहीं मिल सकता। भौतिक सुखों के प्रति जो प्रबल प्रेम होता है, वह मुख्यतः मध्यम वर्गों की भावना होती है; उन वर्गों में इसका विकास एवं विस्तार होता है, उन्हीं में इसका बाहुल्य होता है; उनसे यह समाज के उच्चतर भागों में पहुँचती है और उन्हीं से यह जनसाधारण में पहुँचती है।

मुझे अमरीका में कोई इतना निर्धन नागरिक नहीं मिला, जो धनिकों के सुखों की ओर आशा और ईर्ष्या की दृष्टि से न देखता हो अथवा जो उन अच्छी चीजों की कल्पना न करता हो जिससे भाग्य ने उसे अभी तक वंचित कर रखा है।

दूसरी ओर, अमरीका के अधिक समृद्ध निवासियों में मुझे भौतिक सुखों के प्रति वह गर्वपूर्ण घृणा कभी नहीं दिखलायी दी, जो कभी-कभी अत्यन्त समृद्ध और शिथिल कुलीनतंत्रों में भी देखने को मिलती है। इन धनी व्यक्तियों में से अधिकांश किसी समय निर्धन थे। उन्होंने अभाव की पीड़ा का अनुभव किया है; वे बहुत दिनों तक भाग्य की प्रतिकूलता के शिकार रहे हैं और अब विजय प्राप्त हो जाने पर वे भावनाएँ बनी हुई हैं, जो संघर्ष के समय विद्यमान थीं; उनके मस्तिष्क उन तुच्छ सुखों से मदोन्मत्त हैं, जिनका उपभोग उन्होंने चालीस वर्षों तक किया है।

ऐसी बात नहीं है कि अन्य स्थानों की भांति संयुक्त-राज्य अमरीका में कतिपय ऐसे समृद्धिशाली व्यक्ति नहीं, जिन्होंने अपनी सम्पत्ति को उत्तराधिकार द्वारा प्राप्त किया है और जिन्होंने बिना प्रयास के समृद्धि प्राप्त की है, जिसका उन्होंने अर्जन नहीं किया है; किन्तु ये व्यक्ति भी भौतिक जीवन के सुखों के प्रति कम मोह नहीं रखते। सुख के प्रति प्रेम अब राष्ट्र की सर्व प्रमुख भावना बन गयी है, मानवीय भावना की महान धारा इसी मार्ग से प्रवाहित होती है और अपने मार्ग की सभी वस्तुओं को बहा ले जाती है। अभी जो कुछ कहा है, उससे यह कल्पना की जा सकती है कि भौतिक सुख के प्रति प्रेम की भावना अमरीकियों को निरन्तर नैतिक अनियमितताओं की ओर प्रेरित करती रहती होगी, परिवारों की शान्ति को भंग करती होगी तथा समस्त समाज की सुरक्षा को खतरा पहुँचाती रहती होगी, किन्तु ऐसी बात नहीं है। भौतिक सुखों के प्रति प्रबल भावना प्रजातंत्रों में जो प्रभाव उत्पन्न करती है, वह उस प्रभाव से अत्यन्त भिन्न होता है, जो कुलीनतांत्रिक राष्ट्रों में उत्पन्न होता है।

कभी-कभी ऐसा होता है कि सार्वजनिक कार्यों से क्लान्त तथा समृद्धि से पूर्ण सन्तुष्ट, धार्मिक विनाश तथा राज्य के ह्रास के मध्य कुलीनतंत्र का हृदय शनैः शनैः केवल ऐन्द्रिक सुख की खोज के लिए प्रेरित हो सकता है। अन्य समयों में राजा की शक्ति अथवा जनता की दुर्बलता, उनकी साम्पत्तिक महत्ता को कम किये बिना उन्हें कार्यों के प्रशासन से अलिप्त रहने के लिए बाध्य करती है और जब कि शक्तिशाली अध्यवसाय का मार्ग बन्द रहता है, उन्हें उनकी निजी इच्छाओं की अशान्ति पर छोड़ देती हैं, तब वे स्वयं अपने ऊपर ही अत्यधिक निर्भर करने लगते हैं तथा शारीरिक सुखों में भूतपूर्व महानता को भुलाने का प्रयत्न करते हैं।

इस प्रकार जब किसी कुलीनतांत्रिक संस्था के सदस्य भौतिक सुखों की खोज में विशेष रूप से दत्तचित्त होते हैं, तब वे सामान्यतः सत्ता के अपने दीर्घकालीन अनुभव से प्राप्त समस्त शक्ति को उस दिशा में लगा देते हैं। इस प्रकार के व्यक्ति सुख से सन्तुष्ट नहीं होते; उन्हें विलासपूर्ण अनाचार और शानदार भ्रष्टाचार की आवश्यकता होती है। वे वैभव की अत्यधिक पूजा करते हैं, और स्वयं अपनी ही प्रकृति को अधोमुखी बनाने की कल्पना में वे एक दूसरे से होड़ करते हैं। जो कुलीनतन्त्र जितना ही अधिक शक्तिशाली, प्रसिद्ध और स्वतंत्र रहा है, उसका उतना ही अधिक पतन होगा और उसके सद्गुणों की आभा चाहे जितनी अधिक रही हो, मैं यह भविष्यवाणी करने का साहस करता हूँ कि उसके दुर्गुणों की दमक सदा अधिक रहेगी।

भौतिक सुखों का प्रेम प्रजातान्त्रिक जनता को इस प्रकार की किसी अति की ओर नहीं ले जाता। वहाँ सुख के प्रति प्रेम की भावना का प्रदर्शन स्थिर, विशेष और सार्वजनिक भावना के रूप में किया जाता है, किन्तु उसका विस्तार सीमित होता है। विशाल प्रासादों के निर्माण, प्रकृति पर विजय अथवा उसके अनुकरण मनुष्य की भावनाओं को सन्तुष्ट करने के लिए विश्व को विध्वस्त करने का विचार नहीं किया जाता, अपितु आपके खेत में कुछ भूमि-खण्ड को जोड़ने, फलोद्यान लगाने, मकान का विस्तार करने, जीवन को सदा सुखदायक और सुविधा-जनक बनाते रहने, कष्ट से बचने तथा बिना प्रयास तथा बिना व्यय के छोटी आवश्यकताओं की पूर्ति करने का विचार किया जाता है। ये छोटी बातें हैं, किन्तु आत्मा इनमें रमी रहती है; आत्मा इन बातों पर प्रति दिन सोचती रहती है, जब तक दोष संसार को विलग नहीं कर देतीं और कभी-कभी आत्मा और स्वर्ग के बीच व्यवधान नहीं उपस्थित कर देतीं।

यह कहा जा सकता है कि यह केवल समाज के निम्न वर्ग के सदस्यों के सम्बन्ध में चरितार्थ हो सकता है; अधिक धनी व्यक्ति उसी प्रकार की रुचि का का प्रदर्शन करेंगे, जिस प्रकार की रुचि का प्रदर्शन कुलीनतान्त्रिक युगों में धनिक व्यक्ति करते थे। मैं इस कथन से सहमत नहीं हूँ: जहाँ तक भौतिक सुखों का सम्बन्ध है, प्रजातान्त्रिक समाज के समृद्धतम सदस्य जनता से बहुत भिन्न रुचि का प्रदर्शन नहीं करेंगे; चाहे इसका कारण यह हो कि जनता के मध्य से आने के कारण उनकी रुचि भी वास्तव में जनता की ही रुचि होती है अथवा यह हो कि वे जनता की रुचि के समक्ष झुकना अपना कर्त्तव्य समझते हैं। प्रजातान्त्रिक समाज में जनता की सांसारिकता ने एक मध्यम एवं शान्तिपूर्ण मार्ग को ग्रहण किया है, जिस पर चलने के लिए सभी बाध्य हैं। दुर्गुणों द्वारा सामान्य नियम से विचलित होना उतना ही कठिन है, जितना कि सद्गुणों द्वारा। अतः प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों में रहने वाले धनी व्यक्ति असाधारण सुखों का उपयोग करने की अपेक्षा अपनी क्षुद्रतम आवश्यकताओं की पूर्ति करने पर विशेष ध्यान देते हैं। वे भावना को अत्यधिक अनियमित बनाये बिना अनेक तुच्छ भावनाओं को सन्तुष्ट करते हैं। इस प्रकार उनके अनैतिक होने की अपेक्षा निष्क्रिय होने की सम्भावना अधिक होती है।

प्रजातान्त्रिक युगों में मनुष्यों में भौतिक सुखों के प्रति जो विशेष रुचि होती है, वह स्वभावतः सार्वजनिक व्यवस्था के सिद्धान्तों के विरुद्ध नहीं होती; उसे बहुधा व्यवस्था की आवश्यकता होती है, जिससे उसका परितोष हो सके। न यह रुचि नैतिकता की नियमितता के प्रतिकूल होती है, क्योंकि सदाचार सार्वजनिक शान्ति में योग प्रदान करते हैं और उद्योग के लिए अनुकूल होते हैं। उसे बहुधा एक प्रकार की धार्मिक नैतिकता के साथ भी संयुक्त किया जा सकता है; मनुष्य परलोक में अपने सुअवसर को खोये बिना इस लोक में अधिक से अधिक सुख के साथ रहने की कामना करते हैं। कतिपय भौतिक सुखों का उपभोग अपराध किये बिना नहीं किया जा सकता; इस प्रकार के भौतिक सुखों से मनुष्य बहुत बचते हैं। अन्य सुखों के उपयोग के लिए धर्म और नैतिकता द्वारा अनुमति प्रदान की गयी है; इन सुखों की प्राप्ति के लिए हृदय, कल्पना और स्वयं जीवन तक की सारी शक्ति को दे दिया जाता है, जब तक कि मनुष्य इन अल्पतर सुखों के लिए उन अधिक मूल्यवान वस्तुओं का विस्मरण नहीं कर देते, जो मानव जाति को गरिमा एवं महानता प्रदान करती है।

मैं समानता के सिद्धान्त की निन्दा इसलिए नहीं करता कि यह मनुष्यों को

निषिद्ध सुखों की खोज के लिए प्रेरित करता है, प्रत्युत मैं उसकी निन्दा इसलिए करता हूँ कि वह उन्हें स्वीकृत सुखों की खोज में पूर्णतया निमग्न कर देता है। इन साधनों से अन्ततोगत्वा विश्व में एक प्रकार के पुण्यात्मक भौतिकवाद की स्थापना हो सकती है, जो आत्मा को भ्रष्टाचारी नहीं बनायेगा, किन्तु उसे निष्क्रिय बना देगा और बिना शोरगुल के कर्म स्रोतों को निष्क्रिय बना देगा।

३३. किन कारणों से लगभग समस्त अमरीकी औद्योगिक-वृत्तियाँ ग्रहण करते हैं ?

समस्त उपयोगी कलाओं में सम्भवतः कृषि ही ऐसी कला है, जिसमें प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में मन्दतम गति से सुधार होता है। वास्तव में वह बहुधा स्थिर एवं गतिहीन प्रतीत होती है, क्योंकि अन्य कलाएँ पूर्णता की ओर तीव्र गति से अग्रसर होती रहती हैं। दूसरी ओर स्थिति की समानता से जितनी रुचियों एवं आदतों की उत्पत्ति होती है, वे लगभग समस्त रुचियाँ और आदतें मनुष्यों को स्वभावतः व्यावसायिक एवं औद्योगिक पेशों की ओर उन्मुख करती हैं।

एक ऐसे व्यक्ति की कल्पना कीजिये, जो सक्रिय, शिक्षित, स्वतंत्र एवं योग्य है, किन्तु इच्छाओं से भरा हुआ है। वह इतना निर्धन है कि आलस्यमय जीवन नहीं व्यतीत कर सकता; वह इतना धनी है कि वह अपने को अभाव के तात्कालिक भय से सुरक्षित अनुभव करता है और वह सोचता है कि मैं अपनी स्थिति को अच्छी किस प्रकार बना सकता हूँ। इस व्यक्ति ने भौतिक सुखों के प्रति, जिनका उपभोग उसके चारों ओर हजारों व्यक्ति करते हैं, रुचि की एक कल्पना कर रखी है। उसने स्वयं इन सुखों का आनंद लेना प्रारम्भ कर दिया है, और वह इन रुचियों को अत्यधिक पूर्णता के साथ सन्तुष्ट करने के अपने साधनों में वृद्धि करने के लिए लालायित है, किन्तु जीवन व्यतीत होता जा रहा है, समय महत्त्वपूर्ण है—वह किस वस्तु की ओर उन्मुख हो ! भूमि पर कृषि करने से उसके प्रयासों का फलीभूत होना निश्चित-सा है, किन्तु ये फल धीरे-धीरे प्राप्त होते हैं; धैर्य और श्रम के बिना मनुष्य कृषि द्वारा धनी नहीं बनते। अतः कृषि केवल उन्हीं व्यक्तियों के उपयुक्त है, जिनके पास पहले से ही अत्यधिक धन हो, अथवा जो अपनी निर्धनता के कारण जीविका मात्र उपार्जित करने की

कामना रखते हैं। हमने जिस प्रकार के व्यक्ति की कल्पना की है, वह शीघ्र निर्णय कर लेता है, वह अपनी भूमि को बेच देता है, अपने स्थान को छोड़ देता है और किसी कठिन, किन्तु अधिक धन प्रदान करने वाले पेशे को ग्रहण करता है।

प्रजातांत्रिक समुदायों में इस प्रकार के व्यक्तियों की अधिकता रहती है और इस अनुपात में स्थितियों की समानता में वृद्धि होती है, उसी अनुपात में उनकी संख्या में भी वृद्धि होती है। इस प्रकार प्रजातंत्र में न केवल श्रमिकों की संख्या में वृद्धि होती है; प्रत्युत उसमें मनुष्य एक प्रकार के श्रम की अपेक्षा दूसरे प्रकार के श्रम को अधिक पसन्द करने लगते हैं और जबकि प्रजातंत्र कृषि की ओर से ध्यान हटाता है, वह व्यवसाय और उद्योगों के प्रति मनुष्यों की रुचि को प्रोत्साहित करता है।

इस भावना को समाज के समृद्धतम व्यक्तियों में भी देखा जा सकता है, प्रजातान्त्रिक देशों में कोई व्यक्ति चाहे जितना समृद्ध समझा जाता हो, उसे अपनी सम्पत्ति के सम्बन्ध में लगभग सदा ही असन्तोष बना रहता है, क्योंकि वह देखता है कि वह अपने पिता की अपेक्षा कम धनी है और वह इस बात से भयभीत रहता है कि उसके पुत्र उससे भी कम धनी होंगे। अतः प्रजातंत्रों में अधिकांश धनी व्यक्ति निरन्तर धन प्राप्ति की इच्छा से अभिभूत रहते हैं और वे स्वभावतः व्यापार एवं उद्योग की ओर उन्मुख होते हैं, जो सफलता के सुलभतम एवं सरलतम और सर्वोत्तम साधन प्रतीत होते हैं। इस सम्बन्ध में उनकी भावनाएँ वही होती हैं, जो निर्धनों की होती हैं; यद्यपि वे निर्धनों की भाँति आवश्यकताओं का अनुभव नहीं करते, अथवा यों कहा जा सकता है कि वे संसार में डूब न जाने की सर्वाधिक कष्टदायक आवश्यकता का अनुभव करते हैं।

कुलीनतंत्रों में धनी व्यक्तियों के हाथ में शासन-सत्ता भी होती है। महत्त्वपूर्ण सार्वजनिक कार्यों पर वे जो निरन्तर ध्यान देते रहते हैं, वह उन्हें उन तुच्छ चिन्ताओं से मुक्त रखता है, जो चिन्ताएँ व्यापार और उत्पादन में करनी पड़ती हैं, किन्तु यदि कोई व्यक्ति अपना ध्यान व्यवसाय की ओर लगाता है, तो वह संस्था, जिसका वह सदस्य होता है, तत्काल उसे ऐसा करने से रोक देगी; क्योंकि मनुष्य संख्या के शासन का चाहे जितना विरोध करें, वे उससे पूर्णरूपेण बच नहीं सकते और राष्ट्रीय बहुमत के अधिकारों को हठपूर्वक अमान्य करने वाले कुलीनतंत्रों में भी एक निजी बहुमत का निर्माण किया जाता है, जो शेष लोगों पर शासन करता है।

प्रजातांत्रिक देशों में जहाँ धनी व्यक्ति अपने धन के कारण राजनीतिक सत्ता नहीं प्राप्त किया करते, प्रत्युत बहुधा उससे दूर हो जाते हैं, धनिक व्यक्ति यह नहीं जानते कि अपने अवकाश को किस प्रकार व्यतीत किया जाय। वे अपनी इच्छाओं की अशान्ति और महानता द्वारा, अपने साधन-स्रोतों की विशालता द्वारा और असाधारणता के प्रति रुचि द्वारा जिसका अनुभव वे लोग लगभग सदा करते हैं, जो किसी भी साधन से भीड़ से ऊपर उठ जाते हैं, सक्रिय जीवन में प्रवेश करते हैं। उनके लिए एक मात्र व्यापार का ही मार्ग खुला रहता है। प्रजातंत्र में व्यवसाय से बढ़कर महान अथवा प्रतिभा का कार्य कोई नहीं होता। वह जनता का ध्यान आकृष्ट करता है और जन-समूह की कल्पना पर छा जाता है; समस्त उत्साहपूर्ण भावनाओं को उसी ओर प्रवृत्त किया जाता है। व्यवसाय में लगने से धनियों को न तो उनके पूर्वाग्रह और न किसी अन्य व्यक्ति के पूर्वाग्रह ही रोक सकते हैं। प्रजातन्त्रों के धनी सदस्य कभी ऐसी संस्था का निर्माण नहीं करते, जिसके निजी ढंग और निजी नियम हों, उनके वर्ग के विशेष मत उन्हें रोकते नहीं और उनके देश के सामान्य मत उन्हें प्रेरित करते हैं। इसके अतिरिक्त चूँकि प्रजातान्त्रिक समाज में समस्त विशाल सम्पत्तियाँ, व्यवसाय द्वारा अर्जित की गयी होती हैं, इसलिए सम्पत्ति-स्वामियों द्वारा व्यवसाय की आदतों का पूर्ण परित्याग किये जाने में कई पुश्तों का गुजर जाना आवश्यक होता है।

राजनीति द्वारा निर्धारित संकीर्ण सीमाओं में आबद्ध धनी व्यक्ति प्रजातंत्रों में उत्सुकतापूर्वक व्यावसायिक अध्यवसाय की ओर प्रवृत्त होते हैं; वहाँ वे अपने प्राकृतिक गुणों का उपयोग एवं विस्तार कर सकते हैं और निश्चय ही उनके साहस एवं उनके औद्योगिक सट्टों की विशालता से भी हम इस बात का पता लगा सकते हैं कि यदि उनका जन्म कुलीनतंत्र में हुआ होता तो वे उत्पादनशील उद्योग का कितना कम सम्मान करते।

प्रजातंत्रों में रहने वाले समस्त व्यक्तियों के सम्बन्ध में, चाहे वे निर्धन हों अथवा धनी, इसी प्रकार की बात चरितार्थ होती है। जो लोग प्रजातान्त्रिक आरोहावरोहों के मध्य रहते हैं, उनकी दृष्टि के समक्ष सदैव संयोग की मूर्ति उपस्थित रहती है, और वे उन समस्त कार्यों को पसन्द करने लगते हैं, जिनमें संयोग [illegible] हाथ होता है। अतः वे न केवल लाभ के लिए, जो व्यवसाय से प्राप्त होता है, प्रत्युत उससे प्राप्त होनेवाली अनवरत उत्तेजना के लिए भी व्यवसाय में लगते हैं।

संयुक्त-राज्य अमरीका केवल आधी शताब्दी पहले ब्रिटेन की औपनिवेशिक अधीनता से मुक्त हुआ था; वहाँ बड़ी-बड़ी सम्पत्तियों की संख्या कम है और पूँजी अभी तक दुर्लभ है। फिर भी, अमरीकियों ने व्यापार और उत्पादन के क्षेत्र में जितनी तीव्र गति से प्रगति की है, उतनी तीव्र प्रगति संसार के किसी अन्य देश ने नहीं की है, सम्प्रति अमरीका संसार का दूसरा सबसे बड़ा समुद्री राष्ट्र है और यद्यपि उनके उत्पादनों को लगभग अजेय प्राकृतिक बाधाओं से संघर्ष करना पड़ा, तथापि वे प्रतिदिन महान प्रगति करते जा रहे हैं।

संयुक्त-राज्य अमरीका में महानतम कार्य और छोटे बिना कठिनाई के सम्पन्न होते हैं, क्योंकि समस्त जनसंख्या उत्पादक उद्योग में लगी हुई है और समाज के निर्धन से निर्धन तथा धनी से धनी सदस्य इन उद्देश्यों के हेतु संयुक्त रूप से प्रयास करने के लिए तत्पर रहते हैं। परिणाम यह होता है कि ऐसे राष्ट्र द्वारा जिसके सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि वहाँ धनी व्यक्ति नहीं हैं, कार्यान्वित किये जाने वाले विशाल सार्वजनिक कार्यों को देखकर नवागन्तुक व्यक्ति आश्चर्यचकित हो जाता है। अमरीकी जिस क्षेत्र में निवास करते हैं, उस क्षेत्र में उनका आगमन कल ही हुआ था और उन्होंने पहले ही अपने लाभ के लिए प्रकृति की समस्त व्यवस्था में परिवर्तन कर डाला है, उन्होंने हडसन को मिस्सीसिपी के साथ मिला दिया है और अतलान्तक महासागर और मेक्सिको की खाड़ी के मध्य, जिनमें पन्द्रह सौ मील का अन्तर है, यातायात प्रारम्भ कर दिया है। अभी तक जो रेल-मार्ग निर्मित किये गये हैं उनमें सर्वाधिक लम्बे रेल-मार्ग अमरीका में हैं।

किन्तु संयुक्त-राज्य अमरीका में छोटे-छोटे कार्यों की अगणित संख्या को देख कर मुझे जितना विस्मय होता है, उतना कतिपय कार्यों की चमत्कारिक शान को देखकर नहीं होता। अमरीका के लगभग समस्त किसान कृषि के साथ कोई न कोई व्यापार करते हैं; उनमें से अधिकांश कृषि को ही स्वयं व्यापार का रूप प्रदान कर देते हैं। ऐसा बहुत कम होता है कि अमरीकी किसान उसी भूमि पर बस जाता है, जिस पर वह कृषि करता है; विशेषतः सुदूर पश्चिम के जिलों में वह भूमि पर कृषि करने के लिए नहीं, प्रत्युत उसे बेच डालने के लिए खेत के अन्तर्गत लाता है; वह इस अनुमान से एक खलिहान का निर्माण करता है कि चूँकि जन-संख्या में वृद्धि के कारण शीघ्र ही देश की स्थिति में परिवर्तन हो जायगा, इसलिए उसका अच्छा मूल्य प्राप्त हो सकेगा।

प्रतिवर्ष लोग भारी संख्या में उत्तर से दक्षिणी राज्यों में आते हैं और वहाँ बसते हैं, जहाँ कपास और गन्ने की खेती होती है। ये लोग इस उद्देश्य से भूमि पर कृषि करते हैं कि थोड़े वर्षों में ही उससे इतनी अधिक उपज हो जाय कि वे धनी हो जायं और वे पहले से ही उस समय की प्रतीक्षा करने लगते हैं, जब वे इस प्रकार क्षमता प्राप्त कर आनन्द उठाने के लिए घर वापस लौटेंगे। इस प्रकार अमरीकी अपनी व्यावसायिक प्रतिभा को कृषि में भी ले जाते हैं और उनके अन्य कार्यों की भाँति कृषि में भी उनकी व्यापारिक भावनाओं का प्रदर्शन होता है।

अमरीकी उत्पादनशील उद्योग में महान प्रगति करते हैं, क्योंकि वे सभी तत्काल इसमें तल्लीन हो जाते हैं और इसी कारण उन्हें अप्रत्याशित एवं प्रचण्ड बाधाओं का सामना करना पड़ता है। चूँकि वे सभी वाणिज्य में लगे रहते हैं, इसलिए उनके व्यावसायिक कार्यों पर ऐसे विविध एव जटिल कारणों का प्रभाव पड़ता है कि कठिनाइयों की पूर्व कल्पना कर सकना असम्भव होता है। चूँकि वे सभी न्यूनाधिक मात्रा में उत्पादक उद्योग में लगे रहते हैं, इसलिए व्यवसाय पर होने वाले मामूली आघात से भी समस्त निजी सम्पत्तियाँ एक साथ ही संकट में पड़ जाती हैं और राज्य हिल उठता है। मेरा विश्वास है कि हमारे युग के प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में एक संक्रामक रोग की भाँति इन व्यावसायिक संकटों की पुनरावृत्ति होती ही रहती है। इसे कम खतरनाक बनाया जा सकता है, किन्तु इसको दूर नहीं किया जा सकता; क्योंकि यह आकस्मिक परिस्थितियों से नहीं, प्रत्युत इन राष्ट्रों की प्रवृत्तियों से उत्पन्न होता है।

२४. उत्पादनों (उद्योग) द्वारा कुलीनतंत्र की सृष्टि किस प्रकार हो सकती है?

मैं यह बता चुका हूँ कि किस प्रकार प्रजातंत्र उत्पादनों के विकास के लिए अनुकूल होता है और उसमें उत्पादक वर्गों की संख्या में असीमित वृद्धि होती है; अब हम यह देखते हैं कि किस पार्श्व मार्ग द्वारा उत्पादन सम्भवतः कुलीन-तंत्र की पुनः स्थापना कर सकता है।

यह एक मानी हुई बात है कि जब कोई श्रमिक प्रतिदिन एक ही कार्य

है, तब समस्त सामग्री का उत्पादन अधिक सरलता, शीघ्रता और मितव्ययिता के साथ होता है। इसी प्रकार यह बात भी मानी हुई है कि जिस संस्थान में तैयार वस्तुओं का उत्पादन किया जाता है, उस संस्थान के आकार और नियोजित अथवा साख की पूँजी की राशि द्वारा तैयार वस्तुओं के उत्पादन-व्यय में कमी होती है। इन सत्यों को दीर्घकाल से अपूर्ण रूप से देखा जाता रहा है, किन्तु हमारे युग में वे सिद्ध हो गये हैं। उन्हें अत्यन्त महत्वपूर्ण उत्पादनों में पहले ही काम में लाया जा चुका है और शनैः शनैः छोटा से छोटा उत्पादन भी उनसे शासित होगा। मुझे राजनीति में किसी ऐसी वस्तु का ज्ञान नहीं है, जिस पर विधायक ध्यान देने की आवश्यकता हो जितना कि उत्पादन-विज्ञान के इन दो नये सिद्धान्तों पर।

जब कोई व्यक्ति एक वस्तु के निर्माण में अनवरत एवं विशेष रूप से लगा होता है तब वह अन्ततोगत्वा अपना कार्य चरम कौशल्य के साथ करने लगता है, किन्तु साथ ही साथ वह कार्य के निर्देशन में अपने मस्तिष्क के उपयोग करने के गुण को खो देता है। वह प्रतिदिन अधिक कुशल और कम उद्योगशील बनता है, जिससे उसके सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि जिस अनुपात में श्रमिक में सुधार होता है, उसी अनुपात में मनुष्य का पतन होता है। उस मनुष्य से क्या आशा की जा सकती है, जिसने अपने जीवन के बीस वर्ष पिनों के सिरे बनाने में व्यतीत किये हैं और पिनों के सिरे बनाने का सर्वोत्तम तरीका ढूँढ निकालने के अतिरिक्त उसमें उस शक्तिशाली मानवीय प्रतिभा का उपयोग, जिसने बहुधा विश्व को झकझोर दिया है, और किस बात के लिए किया जा सकता है! जब कोई मनुष्य अपने जीवन का पर्याप्त भाग इस प्रकार व्यतीत कर चुका होता है, तब उसके विचार सदा के लिए उस वस्तु पर केन्द्रित हो जाते हैं, जिसके निर्माण के लिए वह प्रतिदिन श्रम करता है। उसके शरीर की कतिपय आदतें बन जाती हैं, जिनका परित्याग वह कभी नहीं कर सकता: एक वाक्य में यह कहा जा सकता है कि वह अपने अधीन नहीं, प्रत्युत अपने पेशे के अधीन हो जाता है। इस प्रकार के व्यक्ति के चारों ओर की बाधाओं को समाप्त करने तथा प्रत्येक ओर उसके लिए सम्पत्ति के हजारों विभिन्न मार्ग प्रशस्त करने का कष्ट कानूनों और व्यवहारों ने व्यर्थ ही उठाया है। व्यवहारों और कानूनों से अधिक शक्तिशाली उत्पादन का एक सिद्धान्त उसे एक शिल्प के साथ और बहुधा एक स्थान के साथ आबद्ध रखता है, जिसे वह छोड़ नहीं सकता। वह उसे समाज में एक निश्चित स्थान प्रदान करता है, जिसके आगे वह नहीं जा

सकता। सर्वव्यापी गतिशीलता के मध्य उसने उसे गतिहीन बना दिया है।

श्रम विभाजन के सिद्धान्त का प्रयोग जितनी ही अधिक व्यापकता के साथ किया जाता है, श्रमिक उतना ही अधिक कमज़ोर, संकीर्ण विचारों वाला और पराधीन बन जाता है। कला आगे बढ़ती है, कलाकार पीछे हटता है। दूसरी ओर, यह बात जितनी स्पष्ट होती है कि उतनी ही अधिक संख्या में वस्तुओं का उत्पादन होता है और जितनी अधिक पूँजी लगायी जाती है, उतनी ही अधिक वे सस्ती और अच्छी होती हैं। उतने ही अधिक धनी और शिक्षित व्यक्ति उत्पादन में, जिसे अभी तक निर्धन और अशिक्षित शिल्पकारों के हाथों में छोड़ दिया गया था, लगते हैं। आवश्यक प्रयासों की विशालता तथा प्राप्त होनेवाले परिणामों का महत्त्व उन्हें आकृष्ट करते हैं। इस प्रकार जिस समय उत्पादन का विज्ञान श्रमिक वर्ग को पतनोन्मुख बनाता है, उसी समय वह स्वामियों के वर्ग का उत्थान करता है।

जब कि श्रमिक एक ही वस्तु के अध्ययन पर अपनी प्रतिभा को अधिकाधिक केन्द्रित करता है, स्वामी विस्तृत समग्रता का सर्वेक्षण करता है, और जिस अनुपात में स्वामी के मस्तिष्क का विस्तार होता है, उसी अनुपात में श्रमिक का मस्तिष्क संकीर्ण बनता है। थोड़े ही समय उपरान्त एक को बिना प्रतिभा के शारीरिक शक्ति के अतिरिक्त अन्य किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं रह जायगी, और दूसरे को सफलता प्राप्त करने के लिए विज्ञान की एवं प्रतिभा की आवश्यकता होगी। यह व्यक्ति एक विशाल साम्राज्य के प्रशासक के साथ बहुत अधिक मिलता-जुलता है—वह व्यक्ति नहीं, एक पशु होता है।

अतः यहाँ स्वामी और श्रमिक में कोई समानता नहीं होती और उनके मध्य केवल उसी प्रकार का सम्बन्ध होता है, जिस प्रकार का सम्बन्ध एक लम्बी शृंखला के दोनों छोरों की कड़ियों के मध्य होता है। प्रत्येक उस स्थान की पूर्ति करता है, जो उसके लिए निर्धारित होता है और जिसे वह छोड़ता नहीं। श्रमिक निरंतर घनिष्ठ रूप से और आवश्यक रूप से स्वामी के आश्रित रहता है और प्रतीत होता है कि वह स्वामी की आज्ञाओं का पालन करने के लिए ही उत्पन्न होता है, जिस प्रकार स्वामी आदेश देने के लिए उत्पन्न हुआ प्रतीत होता है। यह कुलीनतंत्र नहीं है तो और क्या है?

राष्ट्र में रहने वाले मनुष्यों की स्थितियाँ जैसे-जैसे अधिकाधिक समान होती जाती हैं, वैसे वैसे तैयार वस्तुओं की माँग अधिक सामान्य और व्यापक होती जाती है और सस्तापन, जिसके कारण ये वस्तुएँ कम सम्पत्ति वाले व्यक्तियों के

लिए भी सुलभ हो जाती हैं, सफलता का एक महान तत्व बन जाता है। अतः उत्पादनों में अपनी सम्पत्ति और ज्ञान का उपयोग करने वाले अत्यधिक समृद्ध और शिक्षित व्यक्तियों की संख्या प्रतिदिन बढ़ती जाती है। ये व्यक्ति बड़े-बड़े संस्थानों की स्थापना तथा श्रम का कठोर विभाजन कर सब ओर से की जाने वाली नयी माँगों की पूर्ति का प्रयास करते हैं। इस प्रकार जिस अनुपात में राष्ट्र की जनता प्रजातंत्र की ओर उन्मुख होती है, उसी अनुपात में उत्पादनों में लगा हुआ विशेष वर्ग अधिक कुलीनतांत्रिक बनता है। प्रजातंत्र में मनुष्यों में अधिक समानता आती है, कुलीनतंत्र में उनमें अधिक अन्तर होता है, और समाज में जिस अनुपात में असमानता में कमी होती है, उसी अनुपात में वह अल्पसंख्यक वर्ग में बढ़ती है। अतः तह तक पता लगाने पर प्रतीत होगा कि कुलीनतंत्र स्वभावतः प्रजातंत्र से उत्पन्न होगा; किन्तु इस प्रकार का कुलीनतंत्र किसी भी भाँति पूर्वकालीन कुलीनतंत्रों के समतुल्य नहीं है। इस बात को तत्काल देखा जा सकता है कि चूँकि यह विशेष रूप से उत्पादन तथा कतिपय उत्पादन-विषयक पेशों के सम्बन्ध में लागू होती है, इसलिये यह समाज के सामान्य पहलू में एक भीषण अपवाद है। हमारे युग के व्यापक प्रजातंत्र में कतिपय उत्पादकों द्वारा निर्मित छोटे कुलीनतांत्रिक समाजों में भूतपूर्व युगों के महान कुलीनतंत्रों की भाँति थोड़े-से व्यक्ति अत्यंत समृद्ध और अधिकांश व्यक्ति अत्यंत निर्धन होते हैं। निर्धनों के पास अपनी स्थिति से मुक्ति पाने को तथा धनी बनने के बहुत कम साधन होते हैं, किन्तु धनी निरन्तर निर्धन बनते जाते हैं अथवा सम्पत्ति अर्जित कर लेने पर वे व्यवसाय का परित्याग कर देते हैं। इस प्रकार निर्धन वर्ग का निर्माण करनेवाले तत्व निश्चित होते हैं, किंतु धनी वर्ग का निर्माण करनेवाले तत्व ऐसे नहीं होते। सच बात तो यह है कि यद्यपि धनी व्यक्ति होते हैं, किन्तु धनी वर्ग का अस्तित्व नहीं होता; क्योंकि इन धनी व्यक्तियों की सामान्य भावनाएँ अथवा उद्देश्य, पारस्परिक परम्पराएँ अथवा पारस्परिक आशाएँ नहीं होतीं अतः व्यक्ति तो होते हैं, किन्तु कोई निश्चित वर्ग नहीं होता।

न केवल धनी व्यक्ति आपस में सुदृढ़ रूप से संगठित नहीं होते, प्रत्युत उनके और निर्धनों के मध्य कोई वास्तविक सम्बन्ध नहीं होता। उनकी सापेक्षिक स्थिति स्थायी नहीं होती; वे निरंतर अपने हितों द्वारा एक दूसरे से मिलते अथवा अलग होते हैं। श्रमिक सामान्यतः स्वामी के आश्रित होता है, किन्तु वह किसी विशेष स्वामी के आश्रित नहीं होता। ये दोनों व्यक्ति

फैक्टरी में मिलते हैं, किन्तु अन्यत्र एक दूसरे को नहीं जानते और जब कि एक विषय में वे एक दूसरे के सम्पर्क में आते हैं, अन्य समस्त विषयों में एक दूसरे से बहुत दूर रहते हैं। उत्पादक श्रमिक से उसके श्रम के अतिरिक्त कुछ नहीं मांगता, श्रमिक उससे अपनी मजदूरी के अतिरिक्त और किसी वस्तु की आशा नहीं रखता। एक पर रक्षा करने का कोई उत्तरदायित्व नहीं होता, न दूसरे पर प्रतिरक्षा का कोई उत्तरदायित्व होता है और वे या तो आदत द्वारा या कर्तव्य द्वारा स्थायी रूप से सम्बद्ध रहते हैं। व्यवसाय द्वारा निर्मित कुलीनतंत्र उत्पादन करने वाली जन संख्या के मध्य जिसका वह निर्देशन करता है, बहुत कम जमता है। उद्देश्य उस जनसंख्या पर शासन करने का नहीं, प्रत्युत उसका प्रयोग करने का होता है। इस प्रकार निर्मित कुलीनतंत्र का उन व्यक्तियों के ऊपर महान प्रभाव नहीं हो सकता, जिनसे वह काम कराता है और यदि वह एक समय उन्हें वश में करने में सफल भी हो जाय, तो दूसरे ही क्षण वे बच निकलते हैं। वह सकल्प करना नहीं जानता और वह कार्य नहीं कर सकता।

भूतपूर्व युगों का क्षेत्रीय कुलीनतंत्र अपने सेवकों की सहायता करने और उनकी विपत्ति को दूर करने के लिए या तो कानून द्वारा बाध्य था, अथवा वह प्रथा द्वारा अपने को बाध्य समझता था, किन्तु हमारे युग का उत्पादक कुलीनतंत्र अपने लिए कार्य करने वाले व्यक्तियों को पहले निर्धन एवं पतित बना देता है और तत्पश्चात् उन्हें जनता की उदारता पर छोड़ देता है। पहले जो कुछ कहा गया है, उसका यह स्वाभाविक परिणाम है। श्रमिक और स्वामी के मध्य बहुधा सम्बन्ध स्थापित होते रहते हैं, किन्तु उनके मध्य वास्तविक एकता नहीं होती।

कुल मिलाकर मेरा यह मत है कि हमारी आँखों के सामने जिस उत्पादक कुलीनतंत्र का विकास हो रहा है, वह विश्व के कुलीनतंत्रों में कठोरतम है; किन्तु साथ ही साथ वह अत्यंत सीमित और कम से कम खतरनाक है। फिर भी, प्रजातंत्र के हितैषियों को इस ओर बराबर सावधानी के साथ नजर रखनी चाहिये, क्योंकि यदि कभी विश्व में स्थितियों की विषमता और कुलीनतंत्र का पुनः प्रवेश हुआ, तो यह भविष्यवाणी की जा सकती है कि इसी द्वार से उनका प्रवेश होगा।

३५. प्रजातंत्र अमरीकियों के स्वभावगत सम्बन्ध को किस प्रकार साधारण एवं सरल बनाता है।

प्रजातंत्र में मनुष्यों का एक दूसरे के साथ सुदृढ़ सम्बन्ध नहीं होता, किन्तु वह उनके स्वभावगत सम्बन्ध को सरलतर आधार पर ला देता है।

यदि दो अंग्रेज सयोगवश ध्रुवों पर मिल जायं, जहाँ वे ऐसे विचित्र प्राणियों से घिरे हों, जिनकी भाषा और आचरणों से वे प्रायः अपरिचित हैं, तो वे सर्वप्रथम काफी उत्सुकता से और एक प्रकार की गुप्त बेचैनी से एक दूसरे को देखेंगे, तत्पश्चात् वे मुँह मोड़ लेंगे, अथवा यदि एक दूसरे को बुलाया तो वे अत्यन्त महत्वहीन विषयों पर दबी हुई जबान में तथा अन्यमनस्क भाव से बातचीत करेंगे। फिर भी, इन व्यक्तियों में कोई शत्रुता नहीं होती; उन्होंने एक दूसरे को पहले कभी नहीं देखा है और प्रत्येक दूसरे को एक सम्मानित व्यक्ति समझता है। फिर वे, एक दूसरे से इतनी सजगता से विलग क्यों रहते हैं? इसका कारण जानने के लिए हमें इंगलैण्ड में जाना पड़ेगा।

जब समाज में मनुष्यों का वर्गीकरण सम्पत्ति से स्वतंत्र केवल जन्म के आधार पर होता है, तब प्रत्येक व्यक्ति ठीक ठीक जानता है कि सामाजिक स्तर पर उसकी निजी स्थिति क्या है, वह ऊपर उठने का प्रयास नहीं करता; वह नीचे गिरने से भयभीत नहीं होता। इस प्रकार संगठित समाज में विभिन्न जातियों के व्यक्ति एक दूसरे से बहुत कम सम्बन्ध रखते हैं; किन्तु यदि वे संयोगवश मिल जाते हैं, तो वे अपनी निजी स्थिति को खोने की आशा अथवा आशंका के बिना बातचीत करने के लिए प्रस्तुत रहते हैं। उनका सम्बन्ध समानता के आधार पर नहीं होता, किन्तु वह सीमित नहीं होता है।

जब जन्मना कुलीनतन्त्र का स्थान धन पर आधारित कुलीनतन्त्र ग्रहण कर लेता है, तब स्थिति बदल जाती है। कुछ व्यक्तियों के विशेषाधिकार अब भी बहुत अधिक होते हैं, किन्तु उन विशेषाधिकारों को प्राप्त करने की सम्भावना सभी के लिए रहती है इससे यह निष्कर्ष निकलता है, जिनके पास ये विशेषाधिकार रहते हैं, वे उनके खो जाने अथवा दूसरे व्यक्तियों द्वारा भी उनके प्राप्त कर लिये जाने के भय से सदा संत्रस्त रहते हैं। जिन व्यक्तियों को ये विशेषाधिकार अभी तक उपलब्ध नहीं होते, वे उन्हें किसी भी मूल्य पर प्राप्त करने की कामना करते हैं, अथवा यदि वे विफल हो जाते हैं, तो कम से कम ऐसा

दिखाते हैं कि उनके पास वे विशेषाधिकार हैं, जो असम्भव नहीं हैं। चूँकि मनुष्यों का सामाजिक महत्व प्रत्यक्ष एवं स्थायी रूप से रक्त द्वारा निर्धारित नहीं होता और सम्पत्ति के अनुसार उनमें अत्यधिक भिन्नता रहती है, इसलिए श्रेणियाँ बनी ही रहती हैं; किन्तु इन श्रेणियों को एक ही दृष्टि में साफ साफ पहचान लेना सरल नहीं होता। तब समाज में गुप्त विरोध उत्पन्न हो जाते हैं, व्यक्तियों की एक श्रेणी असख्य उपायों द्वारा अपने से ऊपर के व्यक्तियों की श्रेणी में प्रवेश करने का प्रयत्न करती है अथवा प्रवेश करती हुई प्रतीत होने [redacted] प्रयत्न करती है। एक दूसरी श्रेणी अपने अधिकारों का अपहरण करने वाले इन व्यक्तियों के विरुद्ध निरन्तर सघर्षरत रहती है। अथवा यह कहा जा सकता है कि एक ही व्यक्ति एक ही साथ ये दोनों कार्य करता है और जब कि वह उच्चतर वर्ग में प्रविष्ट होने का प्रयास करता है, वह अपने निम्नतर व्यक्तियों के अपने वर्ग में प्रवेश के विरुद्ध निरन्तर बचाव करता रहता है।

सम्प्रति इंगलैण्ड की स्थिति इसी प्रकार की है और मेरा मत है कि अभी जिस विशिष्ट बात का उल्लेख किया गया है, उसका मुख्य कारण यह स्थिति ही है। चूँकि अंग्रेजों में अब भी कुलीनतात्रिक गर्व बहुत अधिक है और चूँकि कुलीनतन्त्र की सीमाओं की ठीक-ठीक परिभाषा नहीं हुई है, इसलिए प्रत्येक व्यक्ति निरन्तर भयभीत रहता है, जिससे उसके परिचय से लाभ न उठाया जाय। अंग्रेज जिन लोगों से मिलता है, उनकी सामाजिक स्थिति के सम्बन्ध में तत्काल निर्णय करने में असमर्थ होने के कारण वह बुद्धिमत्तापूर्वक उनसे किसी प्रकार का सम्पर्क स्थापित करने से बचता है। मनुष्य इस बात से भयभीत रहते हैं कि कहीं छोटी-सी सेवा के कारण उन्हें किसी अनुपयुक्त परिचय में न फँस जाना पड़े, वे नागरिक शिष्टाचार से भयभीत रहते हैं और वे किसी नवागतुक की अवाछित कृतज्ञता से उसी प्रकार बचते हैं, जिस प्रकार उसकी घृणा से।

अनेक व्यक्ति अंग्रेजो की इस विशिष्ट समाज विरोधी प्रवृत्ति तथा संयमित और मौन स्वभाव का कारण विशुद्ध भौतिक बताते है। मैं स्वीकार करता हूँ कि उनकी जाति में कुछ अंशो में यह बात विद्यमान है, किन्तु अधिकांशतः इसका कारण उनकी सामाजिक स्थिति है, जो अमरीकियो के विरोधाभाव से सिद्ध होती है।

अमरीका में जहाँ जन्मगत विशेषाधिकारो का भी अस्तित्व नहीं था और जहाँ सम्पत्ति के कारण सम्पत्ति स्वामियो को कोई विशेषाधिकार नहीं प्राप्त होते,

एक दूसरे से अपरिचित व्यक्ति एक ही स्थान पर बहुधा आने के लिए अत्यन्त तत्पर रहते हैं, और उन्हें स्वतत्रतापूर्वक विचारों का आदान-प्रदान करने में न तो कोई खतरा दिखायी देता है, और न कोई लाभ दिखायी देता है। यदि वे सयोगवश मिल जाते हैं, तो वे न तो सम्पर्क स्थापन का प्रयास करते हैं, और न उससे बचते हैं; अतः उनका व्यवहार स्वाभाविक, स्पष्ट और उन्मुक्त होता है। इस बात को देख सकना सरल है कि वे मुश्किल से एक दूसरे से कोई आशा रखते हैं, अथवा भय करते हैं, और वे विश्व में अपनी स्थिति का प्रदर्शन करने अथवा उसे छिपाने की तनिक भी परवाह नहीं करते। यदि उनका व्यवहार बहुधा रूखा एवं गम्भीर होता है, तो भी वह कभी उद्दण्डतापूर्ण अथवा सयमित नहीं होता, और यदि वे बातचीत नहीं करते तो इसका कारण यह नहीं होता कि वे मौन रहने में अपना हित समझते हैं, प्रत्युत इसका कारण यह होता है कि वे बातचीत करने की मनःस्थिति में नहीं रहते।

किसी विदेशी देश में दो अमरीकी केवल अमरीकी होने के कारण तत्काल मित्र बन जाते हैं। उनमें कोई पूर्वाग्रह नहीं होता, वे अपना देश एक ही होने के कारण एक दूसरे की ओर आकृष्ट होते हैं। दो अंग्रेजों के लिए एक ही देश का होना पर्याप्त नहीं है, उन्हें एक ही वर्ग का भी होना चाहिए; तभी वे एक साथ मिल सकते हैं। फ्रांसासियों के समान ही अमरीकी भी अंग्रेजों की इस असामाजिक मनोवृत्ति का उल्लेख करते हैं, और इससे उन्हें कम आश्चर्य नहीं होता। फिर भी अमरीकी अपने उद्भव, धर्म, भाषा और अंशतः आचरण द्वारा इंग्लैण्ड के साथ सम्बन्धित हैं; केवल उनकी सामाजिक स्थिति में अन्तर है। अतः यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अँग्रेजों के सयम का कारण उनके देश के निवासियों के गठन की अपेक्षा बहुत अधिक उनके देश का संविधान है।

३६. अमरीकी स्वयं अपने देश में इतने कम और यूरोप में इतने अधिक भावुक क्यों होते हैं ?

समस्त गम्भीर और विचारवान राष्ट्रों की भाँति अमरीकियों का स्वभाव भी प्रतिशोधात्मक होता है। वे मुश्किल से कभी किसी प्रहार को भूलते हैं, किन्तु उन पर प्रहार करना सरल नहीं है और उनकी क्रोधाग्नि को प्रज्वलित करना उतना ही कठिन है, जितना उसको शान्त करना।

कुलीनतांत्रिक समाजों में, जहाँ थोड़े-से व्यक्तियों के हाथों में समस्त वस्तुओं की व्यवस्था है, मनुष्यों का बाह्य सम्पर्क निश्चित परम्परागत नियमों के अधीनस्थ होता है। तब प्रत्येक व्यक्ति यह सोचता है कि वह जानता है कि उसे कितने सम्मान अथवा सौजन्य का प्रदर्शन करना चाहिए और किसी भी व्यक्ति को शिष्टाचार के विज्ञान से अपरिचित नहीं समझा जाता। समाज में प्रथम श्रेणी की प्रथाएँ बाद में दूसरों के लिए उदाहरण का काम करती हैं। इसके अतिरिक्त दूसरे वर्गों का प्रत्येक वर्ग अपनी निजी आचार संहिता का निर्माण करता है और इन वर्गों के समस्त सदस्य इस संहिता का पालन करने के लिए बाध्य होते हैं। इस प्रकार नम्रता के नियम विधि-निर्माण की एक जटिल प्रणाली का निर्माण करते हैं, जिसे पूर्ण रूप से हृदयंगम कर लेना कठिन होता है, किन्तु जिससे विचलित होना किसी के लिये भी खतरनाक होता है, जिससे मनुष्य निरंतर अनिच्छापूर्वक कठोर प्रहार करते रहते हैं अथवा ग्रहण करते रहते हैं।

किन्तु जब श्रेणीगत विभेद समाप्त हो जाते हैं, शिक्षा और जन्म की दृष्टि से भिन्न-भिन्न व्यक्ति एक ही स्थान पर मिलते हैं और सम्पर्क में आते हैं, तब कुलीनता के नियमों से सहमत होना लगभग असम्भव हो जाता है। चूँकि इसके कानून अनिश्चित रहते हैं, इसलिए जो लोग उनको जानते हैं, उनकी दृष्टि में भी उनकी अवहेलना करना अपराध नहीं होता। मनुष्य स्वरूप की अपेक्षा इच्छाओं को अधिक महत्त्व देते हैं, और वे कम सभ्य हो जाते हैं, किन्तु साथ ही साथ उनमें झगड़ालूपन की प्रवृत्ति भी कम हो जाती है।

ऐसी कितनी ही छोटी-छोटी बातें हैं, जिनके सम्बन्ध में अमरीकी तनिक भी परवाह नहीं करता। वह सोचता है कि उससे उन बातों की अपेक्षा नहीं की जा सकती अथवा वह मान लेता है कि उनके अपेक्षणीय होने का ज्ञान नहीं है। अतः या तो वह रूक्षता को देखता नहीं या उसे क्षमा कर देता है, उसके

व्यवहार कम शिष्टाचारपूर्ण हो जाते हैं और उसका चरित्र अधिक स्पष्ट एवं पौरुषेय हो जाता है।

अमरीकी जिस पारस्परिक क्षमाशीलता का प्रदर्शन करते हैं, और वे जिस पौरुष-पूर्ण विश्वास के साथ एक दूसरे से व्यवहार करते हैं, उसका एक अन्य गहरा और अधिक सामान्य कारण भी है, जिसका उल्लेख मैं पहले ही पूर्व अध्याय में कर चुका हूँ। संयुक्त-राज्य अमरीका में नागरिक समाज में श्रेणीगत भेद बहुत कम हैं, राजनीतिक समाज में वे बिल्कुल नहीं हैं, अतः अमरीकी अपने सह नागरिकों के प्रति विशेष ध्यान देने के लिए बाध्य नहीं हैं, न उसे उनकी ओर से अपने प्रति ऐसे विशेष ध्यान की आवश्यकता होती है। चूँकि वह इस बात को नहीं देखता कि अपने देशवासियों का साथ प्राप्त करने के प्रयास में उसका हित निहित है, इसलिए वह इस बात को बहुत विलम्ब से समझता है कि उसके साथ की भी कामना नहीं की जाती। अपनी स्थिति के कारण किसी से घृणा न करते हुए वह इस बात की कल्पना नहीं करता कि उसी के कारण कोई भी उससे घृणा कर सकता है और जब तक वह किसी अपमानजनक बात को स्पष्ट रूप से नहीं देख लेता, तब तक वह इस बात की कल्पना नहीं करता कि जानबूझकर अपमान किया गया है। अमरीकी अपनी सामाजिक स्थिति के कारण स्वभावतः छोटी छोटी बातों में अपमानित अनुभव न करने के अभ्यस्त बन जाते हैं, और दूसरी ओर उन्हें जो प्रजातांत्रिक स्वतन्त्रता प्राप्त होती है, वह स्वभाव की इस नम्रता को राष्ट्रीय चरित्र का अंग बना देती है।

संयुक्त-राज्य अमरीका में राजनीतिक संस्थाएँ सभी वर्गों के नागरिकों को निरन्तर सम्पर्क में लाती रहती हैं और उन्हें सामूहिक रूप से महान कार्य करने के लिए बाध्य करती हैं। इस प्रकार के व्यक्तियों को शिष्टाचार की छोटी छोटी बातों पर ध्यान देने का समय मुश्किल से मिल पाता है और इसके अतिरिक्त एकतापूर्वक रहने में उनकी रुचि इतनी अधिक रहती है कि वे इस प्रकार की बातों पर अड़े नहीं रह सकते। अतः शीघ्र ही उनमें ऐसी आदत हो जाती है कि वे जिन लोगों से मिलते हैं, उनके व्यवहार की अपेक्षा उनकी भावनाओं और मतों पर अधिक ध्यान देने लगते हैं और वे छोटी छोटी बातों से क्षुब्ध नहीं होते।

मैंने बहुधा कहा है कि संयुक्त-राज्य अमरीका में किसी व्यक्ति को यह समझाना आसान काम नहीं है कि उसकी उपस्थिति की आवश्यकता नहीं है, उसे हटाने के लिए संकेत सदा पर्याप्त सिद्ध नहीं होते। किसी अमरीकी को यह

बताने के लिए कि मैं उसकी बातचीत से ऊब चुका हूँ, मैं उसके प्रत्येक शब्द का खण्डन करता हूँ, वह तत्काल नयी जिद के साथ मुझे विश्वास दिलाने का प्रयत्न करने लगता है। मैं एक दम से मौन धारण कर लेता हूँ और वह सोचता है कि वह जिन सत्यों का वर्णन कर रहा है, उन पर मैं गम्भीरतापूर्वक विचार कर रहा हूँ, अन्त में मै उस का साथ छोड़कर जल्दी से उठ जाता हूँ और वह समझेगा कि किसी महत्वपूर्ण कार्य से मुझे अन्यत्र कहीं जल्दी में जाना पड़ रहा है। यह व्यक्ति कभी इस बात को नहीं समझेगा की वह मुझे उबा कर मार डालता है, जब तक मैं उसे ऐसा बता न दूँ कि उससे मुक्ति पाने का एक मात्र उपाय है कि मैं जीवन भर के लिए उसे अपना शत्रु बना लूँ।

प्रथम दृष्टि मे यह बात आश्चर्यजनक प्रतीत होती है कि वही व्यक्ति जब यूरोप में आता है, तब वह अकस्मात् इतना भावुक और छिद्रान्वेषी बन जाता है कि मुझे बहुधा उसका अपमान करने से बचना उतना ही कठिन लगता है, जितना कि अमरीका मे उसकी संगति से बचना। इन दो विरोधी बातो का एक ही कारण है। प्रजातान्त्रिक संस्थाएँ सामान्यतः मनुष्यों में, उनके देश और स्वयं उनके विषय में उच्च धारणाएँ उत्पन्न करती हैं। अमरीकी गर्व से फूला हुआ हृदय लेकर अपने देश से बाहर निकलता है, यूरोप में आने पर उसे तत्काल इस बात का पता चलता है कि अमरीका और उसमें निवास करने वाले महान लोगों में हम उतनी रुचि नहीं रखते, जितनी उसने कल्पना की थी और इससे वह क्षुब्ध होने लगता है। उसे सूचित किया गया है कि विश्व के जिस भाग में हम रहते हैं, वहाँ सामाजिक स्थितियाँ समान नहीं हैं और वह देखता है कि यूरोप के राष्ट्रों में श्रेणी के अवशेष समाप्त नहीं हुए हैं तथा अब भी सम्पत्ति और जन्म के आधार पर कतिपय विशेषाधिकार कायम हैं, जो बलात् उसकी दृष्टि के समक्ष उपस्थित हो जाते हैं, यद्यपि इनकी परिभाषा नहीं की जा सकती। अतः उसे इस बात का बिलकुल पता नहीं चलता कि वर्गों की इस अर्द्ध-नष्ट तुला में उसका स्थान क्या होना चाहिए! ये वर्ग एक दूसरे से घृणा करने के लिए पर्याप्त रूप से स्पष्ट होते हैं, किन्तु अमरीकी के लिए वे इतने समान होते हैं कि वह सदा भ्रम में बना रहता है। वह अपने को अत्युच्च श्रेणी में रखने से डरता है और अत्यन्त निम्न श्रेणी में रखे जाने से वह और अधिक डरता है। यह दोहरा खतरा निरन्तर उसके दिमाग़ को परेशान किये रहता है और वह जो कुछ कहता अथवा करता है, उसमें परेशानी की झलक होती है।

परम्परा से उसे इस बात का ज्ञान होता है कि यूरोप में विभिन्न श्रेणियों के

अनुसार समारोहात्मक व्यवहारों में अनन्त विभिन्नता थी। भूतपूर्व युगों की यह स्मृति उसकी परेशानी को पूर्ण बना देती है, और उसे जो सम्मान प्राप्त होना चाहिए, उसे न प्राप्त करने का भय उसे अधिक बना रहता है, क्योंकि वह नहीं जानता कि वह सम्मान किन बातों में निहित होता है। उसकी स्थिति ऐसे व्यक्ति के तुल्य होती है, जो चारों ओर से जाल में घिरा हो; समाज उसके लिए मनोरंजन का स्थान नहीं, प्रत्युत कठिन श्रम का स्थान होता है। वह आपके छोटे-से छोटे कार्य को तौलता है, आप की निगाहों की ओर प्रश्न-सूचक दृष्टि से देखता है और आप जो कुछ करते हैं, उसकी जाँच-पड़ताल करता है, जिससे कहीं गुप्त रूप से उसका अपमान न हो जाय। मुझे सन्देह है कि उसके समान शुद्ध नस्ल का कोई प्रान्तीय व्यक्ति भी कभी हुआ होगा। वह शिष्टाचार के छोटे से-छोटे नियमों पर ध्यान देने का प्रयत्न करता है और अपने सम्बन्ध में उनमें से किसी भी नियम का उल्लंघन नहीं होने देता। वह विवेक से भरा होता है, और साथ ही साथ आडम्बरों से भी भरा होता है; वह बहुत कुछ करने की इच्छा करता है, किन्तु बहुत अधिक करने से डरता है और चूँकि वह एक अथवा दूसरे की सीमाओं को भलीभाँति नहीं जानता, इसलिए वह सयम की उद्दण्डतापूर्ण एवं सशक्त मुद्रा बनाये रखता है।

किन्तु यही सब कुछ नहीं है, यह मानवीय हृदय का दूसरा प्रतिरूप है। अमरीकी अमरीका की सराहनीय समानता के विषय में सदा बात किया करता है; प्रत्यक्ष रूप में इसे वह अपने देश के लिए गर्व की बात बताता है, किन्तु गुप्त रूप से वह अपने लिए इस पर खेद प्रकट करता है और वह यह दिखाने का प्रयत्न करता है कि जहाँ तक उसका सम्बन्ध है, वह उस सामान्य स्थिति का जिसकी वह प्रशंसा करता है, अपवाद है। ऐसा अमरीकी मुश्किल से ही मिलेगा, जो उपनिवेशों के प्रथम संस्थापकों के साथ किसी दूर के सम्बन्ध का दावा न करता हो और जहाँ तक इंगलैण्ड के सरदार परिवारों के वंशजों का सम्बन्ध है, मुझे अमरीका में उनकी भरमार प्रतीत हुई। जब कोई समृद्ध अमरीकी यूरोप में आता है, तब वह सर्वप्रथम सम्पत्ति के समस्त विलासों से अपने को घेर लेने की चिन्ता करता है। वह प्रजातंत्र का एक साधारण नागरिक समझा जाने से इतना अधिक डरता है कि वह आपके समक्ष अपनी सम्पत्ति का कोई नया उदाहरण प्रतिदिन प्रस्तुत करने के लिए सैकड़ों विकृत उपाय करता है। उसका मकान नगर के सर्वाधिक फैशनेबुल भाग में होगा, वह सदा नौकर-चाकरों से घिरा रहेगा। मैंने एक अमरीकी को यह शिकायत करते सुना है कि पेरिस के

सर्वोत्तम घरों में समाज एक प्रकार से मिला-जुला था, वहाँ जो रुचि प्रचलित है, वह उसके लिए पर्याप्त रूप से शुद्ध नहीं थी और उसने यह संकेत दिया कि उसके मतानुसार व्यवहार में लालित्य का अभाव था, वह इस प्रकार के आडम्बर-हीन स्वरूपों के नीचे छिपी हुई प्रतिमा को देखने का अभ्यस्त नहीं बन सका।

इन विरोधाभासों से हमें आश्चर्यचकित नहीं होना चाहिए। यदि संयुक्त-राज्य अमरीका में भूतपूर्व कुलीनतात्रिक श्रेणियों के अवशेष इतने पूर्ण रूप से नष्ट नहीं हो गये होते, तो अमरीकी अपने देश में कम सीधे और कम सहिष्णु होते तथा हमारे देश में उन्हें उधार लिये व्यवहारों की कम आवश्यकता होती, तथा उनके प्रति उनकी रुचि भी कम होती।

२७. मज़दूरी पर प्रजातंत्र का प्रभाव

जब सामाजिक श्रेणियाँ कम हो जाती हैं, जब बड़े लोगों का ह्रास एवं निम्न वर्गों का उत्थान होता है और निर्धनता तथा समृद्धि दोनों में से कोई वंशानुगत नहीं रह जाती, तब श्रमिक और स्वामी को पृथक् रखने वाली दूरी भी, वास्तविकता एवं विचार दोनों की दृष्टियों से, प्रतिदिन कम हो जाती है। श्रमिक अपने अधिकारों, अपने भविष्य और स्वयं अपने विषय में उच्चतर विचार रखने लगता है; वह नयी महत्त्वाकांक्षा और नयी इच्छाओं से ओत प्रोत हो जाता है, वह नये अभावों और आवश्यकताओं से संत्रस्त रहता है। वह प्रत्येक क्षण अपने स्वामी के लाभ की ओर आकांक्षाभरी दृष्टि से देखता है और उन लाभों को प्राप्त करने के लिए वह अपने श्रम को उच्चतर मूल्य पर बेचने का प्रयास करता है और अन्ततोगत्वा वह सामान्यतः अपने प्रयत्न में सफल हो जाता है।

प्रजातान्त्रिक देशों में तथा अन्य स्थानों पर भी उत्पादक उद्योग की अधिकांश शाखाएँ कम व्यय से ऐसे व्यक्तियों द्वारा सचालित होती हैं, जो अपनी सम्पत्ति अथवा शिक्षा द्वारा उन व्यक्तियों के स्तर से तनिक भी ऊपर के स्तर के नहीं होते, जिन्हें वे काम पर लगाते हैं। इन उत्पादनकर्त्ता सटोरियों की संख्या बहुत अधिक होती है, उनके हित भिन्न भिन्न होते हैं; अतः वे सरलतापूर्वक संगठित एवं संयुक्त प्रयास नहीं कर सकते। दूसरी ओर श्रमिकों के पास कुछ निश्चित साधन

होते हैं, जो उन्हें इस योग्य बनाते हैं कि वे अपने श्रम का अपने मतानुसार उचित मूल्य न मिलने पर काम करने से इनकार कर देते हैं। मज़दूरी के लिए इन दो वर्गों में जो निरन्तर संघर्ष चलता रहता है, उसमें यह शक्ति विभक्त हो जाती है और सफलता कभी एक वर्ग को तथा कभी दूसरे वर्ग को मिलती है।

यह भी सम्भव है कि अन्ततोगत्वा श्रमिक वर्ग के हित का प्राधान्य हो जायगा; क्योंकि उन्होंने पहले ही जो ऊँची मजदूरी प्राप्त कर ली है, उससे वे प्रतिदिन अपने स्वामियों के कम आश्रित होते जाते हैं और वे जैसे-जैसे अधिक स्वाधीन होते जायेंगे, वैसे वैसे और अधिक मज़दूरी प्राप्त करने की उनकी सुविधाएँ बढ़ती जायंगी।

उदाहरण के लिए, मैं उत्पादक उद्योग की उस शाखा को लूँगा, जो अभी तक, वर्तमान युग में, फ्रांस और विश्व के प्रायः समस्त देशों में सर्वाधिक सामान्य रूप से प्रचलित है—मेरा तात्पर्य भूमि की कृषि से है। फ्रांस में अधिकांश खेतिहर मज़दूर स्वयं कतिपय भूमि-खण्डों के स्वामी होते हैं, जिनसे वे दूसरों की मज़दूरी किये बिना किसी न किसी प्रकार जीविकोपार्जन कर सकते हैं। जब ये मजदूर पड़ोसी जमींदार अथवा किसान के यहाँ मज़दूरी करने के लिए जाते हैं, तब यदि वह एक निश्चित दर पर उन्हें मज़दूरी देने से इनकार करता है, तो वे अपनी निजी छोटी सम्पत्ति पर लौट जाते हैं और दूसरे सुअवसर की प्रतीक्षा करने लगते हैं।

मैं सोचता हूँ कि कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि मज़दूरी में शनैः शनैः एवं क्रमिक वृद्धि प्रजातांत्रिक समाजों का एक सामान्य विधान है। जिस अनुपात में सामाजिक स्थितियाँ अधिक समान बनती हैं, उसी अनुपात में मजदूरी में वृद्धि होती है और जब मज़दूरी में वृद्धि होती है, तब सामाजिक स्थितियाँ अधिक समान होती हैं।

किन्तु हमारे युग में एक महान और निराशाजनक अपवाद उपस्थित होता है। मैं पूर्ववर्ती अध्याय में बता चुका हूँ कि राजनीतिक समाज से निष्कासित होकर कुलीनतंत्र ने उत्पादक उद्योग के कतिपय विभागों में आश्रय ग्रहण कर लिया है और वहाँ एक दूसरे रूप में अपना आधिपत्य जमा लिया है। यह बात मज़दूरी की दर पर प्रबल प्रभाव डालती है।

मैं जिन बड़े-बड़े उत्पादन-अध्यवसायों का उल्लेख कर रहा हूँ, उन्हें प्रारम्भ करने के लिए चूँकि भारी पूँजी की आवश्यकता होती है, इसलिए उनमें प्रवेश करनेवाले व्यक्तियों की संख्या अत्यधिक सीमित होती है, चूँकि उनकी संख्या

कम होती है, इसलिए वे सरलतापूर्वक संगठित हो जाते हैं और अपनी मर्जी के अनुसार मज़दूरी की दर निर्धारित कर सकते हैं।

इसके विपरीत उनके श्रमिकों की संख्या सदा बढ़ती रहती है, क्योंकि समय-समय पर व्यवसाय में असाधारण तेजी आती है, जब मज़दूरी असाधारण रूप से ऊँची होती है, जो आसपास के लोगों को फैक्टरियों की ओर खींच लाती है। किन्तु हम पहले ही देख चुके हैं कि जब मनुष्य एक बार उस जीवन पद्धति को ग्रहण कर लेते हैं, तब वे उसका परित्याग नहीं कर सकते; क्योंकि शीघ्र ही उनके शरीर और मस्तिष्क की ऐसी आदतें बन जाती हैं, जो उन्हें अन्य किसी प्रकार के श्रम के लिए अयोग्य बना देती हैं। सामान्यतः इन व्यक्तियों की शिक्षा और उद्योग बहुत कम होते हैं और उनके साधन थोड़े होते हैं; इसलिए वे प्रायः अपने मालिक की दया पर आश्रित रहते हैं।

जब प्रतियोगिता अथवा अन्य प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण मालिक के लाभ में कमी हो जाती है, तब वह अपनी खुशी के अनुसार अपने श्रमिकों की मजदूरी में कमी कर सकता है और व्यवसाय के संयोगों से उसे जो घाटा होता है, उसकी पूर्ति मज़दूरों से कर सकता है। यदि मजदूर हड़ताल करें, तो मालिक, जो बहुत धनी होता है, बिना नष्ट हुए तब तक भली-भाँति प्रतीक्षा कर सकता है, जब तक आवश्यकता मजदूरों को पुनः उसके पास आने के लिए बाध्य न कर दे। किन्तु मजदूरों को दिन प्रति-दिन काम करना ही पड़ेगा, अन्यथा वे मर जायेंगे, क्योंकि उनकी एकमात्र सम्पत्ति उनके हाथों में होती है। दीर्घ काल तक दमन द्वारा वे निर्धन हो जाते हैं और वे जितने अधिक निर्धन होते हैं, उतनी ही तेज़ी से उनका दमन किया जा सकता है। कारण और फल के इस घातक वृत्त से बचकर वे कभी नहीं निकल सकते।

अतः यह बात आश्चर्यजनक नहीं है कि कभी कभी आकस्मिक वृद्धि के बाद उत्पादक उद्योग की इस शाखा में मजदूरी की दर को स्थायी रूप से घटा दिया जाता है; जब कि अन्य देशों में श्रम का मूल्य, जिसमें सामान्यतः तनिक भी वृद्धि नहीं होती, फिर भी निरन्तर बढ़ता रहता है।

हमारे युग की उत्पादक जनसंख्या के एक भाग की पराधीनता और दयनीयता की यह स्थिति समाज के शेष समस्त व्यक्तियों की स्थिति के विपरीत सामान्य नियम का अपवाद है, किन्तु इसी कारण से विधायक द्वारा विशेष ध्यान दिये जाने के लिए कोई परिस्थिति इससे अधिक महत्त्वपूर्ण अथवा अधिक योग्य नहीं है, क्योंकि जब सारा समाज आगे बढ़ रहा हो, तब किसी

एक वर्ग को स्थिर रख सकना कठिन होता है और जब अधिकांश व्यक्ति सम्पत्ति के नये पथ प्रशस्त कर रहे हों, तब थोड़े से व्यक्तियों से शान्तिपूर्वक अपनी आवश्यकताओं और इच्छाओं की पूर्ति करने के लिए कहना कम कठिन कार्य नहीं होता।

३८. परिवार पर प्रजातंत्र का प्रभाव

प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में और विशेषतः अमरीकियों के मध्य समाज के अनेक सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्धों में स्थितियों की समानता से जो परिवर्त्तन उत्पन्न होते हैं, उनकी जाँच पड़ताल मैंने अभी-अभी की है। अब मैं और अधिक गहराई में जाऊँगा तथा परिवार के घनिष्ठतर सम्बन्धों की जाँच करूंगा। यहाँ मेरा उद्देश्य नये सत्यों की खोज करना नहीं, प्रत्युत यह दिखाना है कि किस प्रकार पूर्व विदित तथ्यों का मेरे विषय के साथ सम्बन्ध है।

यह बात सार्वजनिक रूप से कही गयी है कि हमारे युग में परिवार के अनेक सदस्यों का एक दूसरे के साथ बिल्कुल ही नये प्रकार का सम्बन्ध होता है तथा पहले पिता और पुत्र के मध्य जो दूरी होती थी, वह कम हो गयी है और पैतृक सत्ता यदि नष्ट नहीं हो गयी है, तो वह अवरुद्ध हो गयी है।

अमरीका में कुछ-कुछ इसी प्रकार की, बल्कि इससे भी अधिक स्पष्ट बात देखने को मिलती है। रोमन और कुलीनतांत्रिक अर्थ में अमरीका में परिवार [redacted] अस्तित्व नहीं है। इसके थोड़े-से अवशेष बाल्यावस्था के प्रथम वर्षों में दिखायी देते हैं, जब पिता बिना विरोध के उस सर्वोच्च घरेलू सत्ता का प्रयोग करता है जिसे उसके बालकों की दुर्बलता आवश्यक बना देती है और जो बालकों के हित तथा स्वयं पिता की निर्विवाद श्रेष्ठता के लिए वांछनीय है। किन्तु ज्योंही अमरीकी किशोर पुरुषत्व प्राप्त कर लेता है, त्योंही बाल्यकालीन अनुशासन के बन्धन दिन-प्रति-दिन शिथिल होने लगते हैं; अपने विचारों का स्वामी बनकर वह शीघ्र ही अपने आचरण का भी स्वामी बन जाता है। ठीक-ठीक कहा जाय, तो अमरीका में किशोरावस्था नहीं होती; बाल्यावस्था के अन्त में पुरुष प्रकट हो जाता और स्वयं अपना मार्ग निर्माण करने लगता है।

यह कल्पना करना भूल होगी कि इसके पूर्व घरेलू संघर्ष होता है, जिसमें पुत्र ने एक प्रकार की नैतिक हिंसा द्वारा उस स्वतंत्रता को प्राप्त कर लिया है, जिसे

देने से उसके पिता ने अस्वीकार कर दिया था। जो आदतें और जो सिद्धान्त पुत्र को अपनी स्वतंत्रता पर बल देने के लिए प्रेरित करते हैं, उन्हीं आदतों और सिद्धान्तों द्वारा पिता उस स्वतंत्रता के प्रयोग को एक निर्विवाद अधिकार समझने लगता है। पुत्र उन कटुतापूर्ण अनियमित भावनाओं का प्रदर्शन नहीं करता, जो स्थापित सत्ता का परित्याग कर देने के बाद मनुष्यों को दीर्घ काल तक परेशान करती रहती हैं। पिता उस कटु एवं क्रोधपूर्ण खेद का अनुभव नहीं करता, जो सत्ता के चले जाने के बाद बना रहता है। पिता बहुत पहले ही अपनी सत्ता की सीमाओं को देख लेता है और जब समय आता है, तब वह बिना संघर्ष के इस सत्ता को समर्पित कर देता है। पुत्र उस अवधि की ओर देखता है, जब वह स्वयं अपना स्वामी होगा और वह अपनी स्वतंत्रता बिना प्रयास के प्राप्त कर लेता है, मानो वह उसकी निजी सम्पत्ति हो, जिसे उससे छीनने का कोई प्रयास नहीं करता।

सम्भवतः यह बताना लाभदायक हो सकता है कि किस प्रकार पारिवारिक सम्बन्धों में होने वाले ये परिवर्तन स्वय हमारी आँखों के सामने अपनी पूर्णता पर पहुँचने वाली सामाजिक और राजनीतिक क्रान्ति के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध रखते हैं।

कतिपय ऐसे महान सामाजिक सिद्धान्त होते हैं, जिन्हें कोई जाति या तो सर्वत्र प्रचलित करती है, या जिन्हें वह कहीं भी सहन नहीं करती। श्रेणियों के समस्त क्रमवाले कुलीनतान्त्रिक देशों में सरकार कभी शासित व्यक्तियों से प्रत्यक्ष अपील नहीं करती। चूँकि मनुष्य एक साथ संयुक्त होते हैं, इसलिए अगुओं का नेतृत्व करना पर्याप्त होता है, शेष अनुगमन करेंगे। यह बात परिवार तथा समस्त कुलीनतन्त्रों के सम्बन्ध में लागू होती है, जिनका एक प्रमुख होता है। कुलीन-तान्त्रिक राष्ट्रों में सामाजिक संस्थाएँ वास्तव में परिवार में पिता को छोड़कर अन्य किसी को मान्य नहीं करतीं। समाज बालकों को उसके हाथ से स्वीकार करता है, समाज उस पर शासन करता है, वह बालकों पर शासन करता है। इसलिए उन पर शासन करने का पिता को न केवल प्राकृतिक अधिकार होता है, प्रत्युत वह एक राजनीतिक अधिकार भी प्राप्त कर लेता है। वह अपने परिवार का रचयिता और परिपालक होता है, किन्तु वह उसका सांविधानिक शासक भी होता है।

प्रजातन्त्रों में, जहाँ सरकार समाज के सामान्य कानूनों के अधीनस्थ बनाने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को समूह में से पृथक्-पृथक् रूप से चुनती है, इस प्रकार के

किसी मध्यस्थ व्यक्ति की आवश्यकता नहीं होती। वहाँ कानून की दृष्टि में पिता समाज का एक सदस्य मात्र होता है, जो अपने पुत्रों से अधिक आयु का और उनकी अपेक्षा अधिक धनी होता है।

जब जीवन की अधिकांश स्थितियाँ अत्यन्त विषमतापूर्ण होती हैं और इन स्थितियों की विषमता स्थायी होती है, तब मनुष्यों की कल्पना में एक उच्चतर व्यक्ति की धारणा विकसित होने लगती है; यदि कानून उसे कोई विशेषाधिकार नहीं प्रदान करता, तो रीति रिवाज और जनमत उसे ये विशेषाधिकार प्रदान कर देगा। इसके विपरीत जब मनुष्यों में एक दूसरे से तनिक भी अन्तर नहीं रहता और जीवन की स्थितियाँ सदा असमान नहीं रहती, तब उच्चतर व्यक्ति की सामान्य धारणा अधिक निर्बल और कम स्पष्ट हो जाती है। आज्ञा पालन करने वाले को आज्ञा देने वाले के बहुत नीचे रखने का प्रयास करना विधायक के लिए निरर्थक है; युग के व्यवहार दोनों व्यक्तियों को एक दूसरे के निकट लाते हैं और प्रतिदिन उन्हें एक ही स्तर की ओर लाते रहते हैं।

यद्यपि किसी कुलीनतांत्रिक देश के कानून में परिवारों के प्रमुखों को विलक्षण विशेषाधिकार नहीं दिये जाने चाहिए, तथापि मुझे इस बात का विश्वास कम नहीं होगा कि प्रजातंत्र की अपेक्षा कुलीनतंत्र में उनके अधिकार का अधिक सम्मान किया जायगा, तथा वह अधिक व्यापक होगा; क्योंकि मैं जानता हूँ कि कानून चाहे कुछ भी हो, प्रजातंत्रों में श्रेष्ठतर व्यक्ति सदा उच्चतर प्रतीत होंगे तथा निम्नतर व्यक्ति निम्नतर प्रतीत होंगे।

जब मनुष्य अपने वर्तमान की चिन्ता करने की अपेक्षा अपने भूतकाल का स्मरण अधिक करते हैं, और जब वे स्वयं अपने सम्बन्ध में सोचने की अपेक्षा अपने पूर्वजों के विचारों पर अधिक ध्यान देते हैं, तब पिता स्वभावतः और आवश्यक रूप से भूत और वर्तमान के बीच एक कड़ी होती है—एक ऐसी कड़ी, जो इन दोनों शृंखलाओं के सिरों को जोड़ती है। इस प्रकार कुलीनतंत्रों में पिता न केवल परिवार का प्रमुख नागरिक होता है, प्रत्युत वह उसकी परम्पराओं का अंग, उसकी प्रथाओं का प्रतिपादक और उसके व्यवहारों का निर्णायक होता है। उसकी शर्तें श्रद्धापूर्वक सुनी जाती है, उसे सम्मान के साथ सम्बोधित किया जाता है और उसके प्रति जिस प्रेम का अनुभव किया जाता है, वह सदा भय-मिश्रित होता है।

जब समाज की दशा प्रजातांत्रिक बन जाती है और मनुष्य इस बात को अपने सामान्य सिद्धान्त के रूप में स्वीकार कर लेते हैं कि पूर्व पिताओं को धार्मिक

नियम न मानकर जानकारी का एक साधन मात्र मानते हुए सभी बातों पर स्वयं विचार करना चाहिए, तो पुत्रों के मतों पर पिता के मतों का जो प्रभाव पड़ता है, उसमें तथा उसकी कानूनी सत्ता में न्यूनता आ जाती है।

पिता और उसके पुत्रों के मध्य विद्यमान सम्बन्धों में जो परिवर्तन आता है, उसमें प्रजातंत्र में होने वाला संपत्ति का उपविभाजन सम्भवतः अन्य किसी भी वस्तु की अपेक्षा अधिक योग प्रदान करता है। जब परिवार में पिता की सम्पत्ति नगण्य होती है, तब उसका पुत्र तथा वह निरन्तर एक ही स्थान पर रहते हैं, उनका पेशा एक ही होता है; आदत और आवश्यकता उन्हें एक स्थान पर लाती है और उन्हें निरन्तर सम्पर्क रखने के लिए बाध्य करती है। इसका अनिवार्य परिणाम एक प्रकार की सुपरिचित घनिष्ठता होती है, जो सत्ता को कम पूर्ण बना देती है और जिसका मेल सम्मान के बाह्य स्वरूपों के साथ नहीं बैठ सकता।

अब प्रजातांत्रिक देशों में छोटी सम्पत्ति रखने वालों का वर्ग ही वह वर्ग होता है जो समाज की धारणाओं को शक्तिशाली बनाता है तथा उसके व्यवहारों को एक विशेष दिशा प्रदान करता है। वह वर्ग अपनी इच्छा के समान ही अपने मतों को व्यापक रूप से अतिशायी बनाता है और उसके आदेशों का प्रतिरोध करने की अधिकतम प्रवृत्ति रखने वाले भी अन्त में उसके उदाहरण के प्रवाह में प्रवाहित हो जाते हैं। मैं प्रजातंत्र के ऐसे उत्सुक विरोधियों को जानता हूँ, जिन्होंने अपने बालकों को अपने को पूर्ण समानता के साथ सम्बोधित करने की अनुमति प्रदान की।

इस प्रकार, जिस समय कुलीनतंत्र की शक्ति का ह्रास होता है, उसी समय पिता के अधिकार के कठोर, परम्परागत और कानूनी अंश की भी समाप्ति हो जाती है और घर में एक प्रकार की समानता का राज्य हो जाता है। कुल मिलाकर मैं यह नहीं जानता कि इस परिवर्तन से समाज की हानि होती है अथवा नहीं, किन्तु मैं यह विश्वास करने के लिए प्रस्तुत हूँ कि व्यक्तिगत रूप से मनुष्य इससे लाभान्वित होता है। मेरा विचार है कि जिस अनुपात में व्यवहार और कानून अधिक प्रजातांत्रिक बनते हैं, उसी अनुपात में पिता और पुत्र का सम्बन्ध घनिष्ठतर तथा अधिक स्नेहपूर्ण बनता है; नियमों और सत्ता की बात कम की जाती है, विश्वास और कोमलता में बहुधा वृद्धि हो जाती है और ऐसा प्रतीत होगा कि जिस अनुपात में सामाजिक बन्धन शिथिल होता है, उसी अनुपात में प्राकृतिक सम्बन्ध घनिष्ठतर हो जाता है।

· प्रजातांत्रिक परिवार में पिता स्नेह एवं आयुगत अनुभव द्वारा प्राप्त अधिकार के अतिरिक्त अन्य किसी अधिकार का प्रयोग नहीं करता, उसके आदेशों की सम्भवतः अवहेलना कर दी जायगी, किंतु उसका परामर्श अधिकांशतः अधिकार-मूलक होता है। भले ही उसके प्रति समारोहात्मक सम्मान न व्यक्त किया जाता हो, किन्तु उसके पुत्र कम-से-कम उसे विश्वासपूर्वक पुकारते हैं; उसे सम्बोधित करने के लिए उनके पास कोई निश्चित सम्बोधन नहीं होता, किन्तु वे उससे निरन्तर बोलते रहते हैं तथा प्रतिदिन उससे परामर्श करने के लिए प्रस्तुत रहते हैं। स्वामी और शासक का लोप हो जाता है; पिता बना रहता है।

इस सम्बन्ध में समाज की दोनों स्थितियों के अन्तर जानने के लिए कुलीन-तांत्रिक युगों के पारिवारिक पत्रव्यवहार को पढ़ने से अधिक और किसी बात की आवश्यकता नहीं है। शैली सदा सही, समारोहात्मक, कठोर और इतनी शुष्क होती है कि भाषा में हृदय की स्वाभाविक उष्णता का अनुभव मुश्किल से किया जा सकता है। प्रजातांत्रिक देशों में, इसके विपरीत, पुत्र पिता के पास जिस भाषा में पत्र लिखता है, वह सदा मिश्रित स्वतंत्रता, परिचय और स्नेह से ओतप्रोत रहती है, जिससे तत्काल यह प्रकट होता है कि परिवार के हृदय में नये सम्बन्ध उत्पन्न हो गये हैं।

बालकों के पारस्परिक सम्बन्धों में भी इसी प्रकार की क्रांति घटित होती है। कुलीनतांत्रिक परिवारों में तथा कुलीनतांत्रिक समाज में भी पहले से ही प्रत्येक स्थान निर्धारित होता है। न केवल पिता की एक पृथक् श्रेणी होती है, जिसमें उसे व्यापक विशेषाधिकार प्राप्त होते हैं, प्रत्युत बालक भी आपस में समान नहीं होते। आयु और लिंग भेद प्रत्येक की श्रेणी को अटल रूप से निर्धारित कर देते हैं और उसे कतिपय विशेषाधिकार प्रदान करते हैं। प्रजातंत्र में इनमें से अधिकांश भेद समाप्त अथवा कम हो जाते हैं।

कुलीनतांत्रिक परिवारों में ज्येष्ठतम पुत्र को सम्पत्ति का अधिकांश भाग तथा परिवार के प्रायः समस्त अधिकार प्राप्त होते हैं और वह अपने भाइयों का सरदार तथा कुछ हद तक उनका स्वामी बन जाता है। महानता और अधिकार उसके लिए होते हैं, सामान्यता तथा पराधीनता औरों के लिए होती हैं, किन्तु यह सोचना भूल होगी कि कुलीनतांत्रिक राष्ट्रों में ज्येष्ठतम पुत्र के विशेषाधिकार केवल उसी के लिए लाभदायक होते हैं अथवा उनसे उसके प्रति केवल ईर्ष्या और घृणा की भावना उत्पन्न होती है। ज्येष्ठतम पुत्र सामान्यतः अपने भाइयों के लिए सम्पत्ति एवं शक्ति प्राप्त करने का प्रयत्न करता है, क्योंकि

घर का सामान्य वैभव उस व्यक्ति द्वारा प्रतिबिम्बित होता है, जो उसका प्रतिनिधित्व करता है; कनिष्ठतर पुत्र बड़े भाई के समस्त कार्यों का समर्थन करते हैं, क्योंकि परिवार के प्रमुख की महानता और शक्ति उसे परिवार की समस्त शाखाओं के लिए व्यवस्था करने के लिए अधिक योग्य बनाती है। अतः कुलीनतांत्रिक परिवारों के विभिन्न सदस्यों में अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध होता है; उनके हित सम्बद्ध होते हैं, उनके विचारों में एकता होती है, किन्तु उनके हृदयों में बहुत कम सौमनस्य होता है।

प्रजातंत्र में भी भाइयों में पारस्परिक सम्बन्ध होता है, किन्तु यह सम्बन्ध अत्यन्त भिन्न साधनों से स्थापित होता है। प्रजातान्त्रिक कानूनों के अनुसार सभी बालक पूर्णतः समान और फलतः स्वतंत्र होते हैं। कोई भी वस्तु उन्हें एक होने के लिए बाध्य नहीं करती, किन्तु कोई भी वस्तु उन्हें पृथक् नहीं रखती और चूँकि उनका मूल एक ही होता है, एक ही घर में वे प्रशिक्षित होते हैं, उनके साथ एक ही प्रकार का व्यवहार किया जाता है और चूँकि उन्हें पृथक् अथवा विभक्त करने वाला कोई विलक्षण विशेषाधिकार नहीं होता, इसलिए प्रारम्भिक वर्षों की स्पष्ट घनिष्ठता सरलतापूर्वक उनके मध्य प्रकट हो जाती है। इस प्रकार जीवन के प्रारम्भ में जो सम्बन्ध स्थापित हो जाता है, उसे भंग करने का कोई कारण बहुत कम उपस्थित होता है, क्योंकि भ्रातृत्व उन्हें बिना परेशान किये हुए प्रतिदिन सम्पर्क में लाता रहता है। अतः प्रजातंत्र में भाई स्वार्थ अथवा हितों द्वारा नहीं, प्रत्युत सामान्य सम्बन्धों, मत और रुचि के प्रति स्वतंत्र सहानुभूति द्वारा एक दूसरे के साथ संयुक्त होते हैं। यह उनके उत्तराधिकार को विभाजित करता है, किन्तु उनके हृदयों और विचारों को एक बना देता है।

इन प्रजातान्त्रिक व्यवहारों का आकर्षण ऐसा है कि कुलीनतंत्र के समर्थक भी उससे आकृष्ट होते हैं, और कुछ समय तक इसका अनुभव करने के बाद वे किसी भी प्रकार कुलीनतान्त्रिक परिवारों के सम्मानपूर्ण और शुष्क व्यवहारों को पुनः अपनाने के लिए लालायित नहीं होते। यदि वे प्रजातन्त्र की सामाजिक शर्तों और उसके कानूनों की उपेक्षा कर सकते, तो वे प्रसन्नतापूर्वक उसकी घरेलू आदतों को कायम रखते, किन्तु इन तत्त्वों में इतनी एकता है कि उन्हें विलग नहीं किया जा सकता और प्रजातंत्र की सामाजिक शर्तों एवं कानूनों को सहन किये बिना उसकी घरेलू आदतों का आनन्द लेना असम्भव है।

पुत्र के प्रेम तथा भाई के स्नेह के सम्बन्ध में मैंने जो बातें कही हैं, वे स्वयं

मानव प्रवृत्ति से स्वतः उत्पन्न होने वाली समस्त भावनाओं के सम्बन्ध में भी लागू होती है।

यदि कोई विचार-पद्धति अथवा भावना जीवन की किसी विशेष स्थिति के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती है, तो उस स्थिति के परिवर्तित हो जाने पर उस विचार अथवा भावना का कोई अवशेष नहीं बच रहता। इस प्रकार कोई कानून समाज के दो सदस्यों के मध्य अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित कर सकता है, किन्तु उस कानून के समाप्त हो जाने पर वे पृथक्-पृथक् हो जाते हैं। सामन्तवादी प्रणाली में दास और स्वामी को संयुक्त करने वाले बन्धन से अधिक कठोर बन्धन कोई नहीं बचा। वर्तमान युग मे दोनों व्यक्ति एक दूसरे को नहीं जानते, पहले उन्हें सम्बन्धित करनेवाले भय, कृतज्ञता और स्नेह की समाप्ति हो चुकी है और उनका अवशेष तक नहीं बचा है।

फिर भी, मानव-जाति की स्वाभाविक भावनाओं के सम्बन्ध में यह बात नहीं लागू होती। जब कभी कोई कानून इन भावनाओं को एक विशेष ढर्रे पर लाने का प्रयत्न करता है, तो वह उन्हें क्षीण बनाये बिना नहीं रहता, इन भावनाओं की प्रबलता में वृद्धि करने का प्रयत्न कर वह उन्हें तत्त्वों से वंचित कर देता है, क्योंकि ये भावनाएँ स्वतंत्र रहने पर जितनी प्रबल रहती हैं, उतनी प्रबल वे कभी नहीं रहतीं।

समाज के प्रायः समस्त पुराने परम्परागत नियमों को नष्ट अथवा विलुप्त कर देने वाला तथा नये नियमों को तत्परतापूर्वक स्वीकार करने से मनुष्यों को रोकने वाला प्रजातंत्र इन परम्परागत नियमों से उत्पन्न भावनाओं में से अधिकांश को पूर्णतया मिटा देता है; किन्तु यह अन्य भावनाओं में परिवर्तन मात्र करता है और बहुधा उन्हें एक ऐसी शक्ति और मधुरिमा प्रदान करता है, जो पहले अज्ञात थी।

सम्भवतः इस अध्याय के और इसके पूर्व के अनेक अध्यायों के सार को एक ही वाक्य में कहना असम्भव नहीं है। प्रजातंत्र सामाजिक बन्धनों को शिथिल बना देता है, किन्तु प्राकृतिक सम्बन्धों को सुदृढ़ बनाता है, वह परिजनों को निकटतर लाता है, जबकि नागरिकों को एक दूसरे से अधिक दूर कर देता है।

३९. प्रजातंत्र में नवयुवतियाँ

नैतिकता के बिना कभी किसी स्वतंत्र समाज का अस्तित्व नहीं रहा और जैसा कि मैं इस पुस्तक के पूर्व भाग में कह चुका हूँ, नैतिकता महिलाओं का

कार्य है। फलस्वरूप, जो कोई भी बात महिलाओं की स्थिति, उनकी आदतों और उनके विचारों को प्रभावित करती है, उसका मेरी दृष्टि में बड़ा राजनीतिक महत्त्व होता है।

प्रायः सभी प्रोटेस्टेण्ट राष्ट्रों में नवयुवतियाँ कैथोलिक राष्ट्रों की अपेक्षा बहुत अधिक अपने निजी कार्यों की स्वामिनी होती हैं। इंग्लैंड जैसे प्रोटेस्टेण्ट देशों में, जिन्होंने स्वशासन के अधिकार को कायम रखा है अथवा उसे प्राप्त किया है, यह स्वतंत्रता और भी अधिक है, तब घरेलू क्षेत्र में राजनीतिक आदतों और धार्मिक विचारों द्वारा स्वतन्त्रता को प्रविष्ट कराया जाता है। संयुक्त-राज्य अमरीका में प्रोटेस्टेण्टिज्म के सिद्धान्त अत्यधिक राजनीतिक स्वतन्त्रता और समाज की अत्यधिक प्रजातान्त्रिक स्थिति के साथ संयुक्त हैं; और किसी भी स्थान पर नवयुवतियों को इतने शीघ्र अथवा इतने पूर्ण रूप से स्वयं अपना पथ-प्रदर्शन करने के लिए छोड़ नहीं दिया जाता।

विवाह-योग्य आयु प्राप्त करने से बहुत पहले माता के नियंत्रण से अमरीकी बालिका की मुक्ति प्रारम्भ हो जाती है, बाल्यावस्था को पार करने से पहले ही वह स्वतंत्र रूप से सोचने लगती है, स्वतंत्रतापूर्वक बात करने लगती है और अपनी निजी प्रेरणाओं के अनुसार कार्य करने लगती है। विश्व का महान दृश्य उसकी दृष्टि के समक्ष निरन्तर उपस्थित रहता है। इसे उससे छिपाने की बात तो दूर रही, उसे अधिक पूर्णता से प्रतिदिन इसकी जानकारी करायी जाती है और उसे दृढ़ता एवं शान्ति के साथ निर्निमेष दृष्टि से इसका सर्वेक्षण करने की शिक्षा दी जाती है। इस प्रकार समाज की बुराइयाँ और खतरे उसे शीघ्र ही विदित हो जाते हैं; चूँकि वह उन्हें स्पष्ट रूप से देखती है, इसलिए उसे उनके सम्बन्ध में कोई भ्रान्ति नहीं होती और बिना भय के उनका सामना करती है, क्योंकि वह अपनी निजी शक्ति में विश्वास से ओत प्रोत होती है और उसके आसपास के समस्त व्यक्ति उसके विश्वास में सम्मिलित प्रतीत होते हैं। बाल्यावस्था से युवावस्था में संक्रमण करने की अवधि में सामान्यतः यूरोपीय महिला में युवावस्था की आकांक्षाओं के मध्य जिस कौमार्यगत अथवा निर्दोष और स्वाभाविक कमनीयता के दर्शन मिलते हैं, उसका प्रदर्शन अमरीकी बालिका बहुत कम करती है। अमरीकी महिला, किसी भी आयु में, बाल-सुलभ कायरता अथवा अज्ञान का प्रदर्शन शायद ही करती है। यूरोप की नवयुवतियों की भाँति वह प्रसन्न करने का प्रयत्न करती है, किन्तु वह जानती है कि प्रसन्न करने का मूल्य क्या होता है! यदि वह बुराई के समक्ष आत्म-

समर्पण नहीं करती, तो भी वह कम से कम जानती है कि बुराई विद्यमान है और उसमें जितनी व्यवहार-शुद्धता होती है, उतनी मानसिक शुद्धता नहीं होती।

अमरीका में नवयुवतियाँ स्वतंत्र वार्तालाप की समस्त कठिनाइयों के मध्य जिस कुशलता और सुखद साहस के साथ अपने विचारों को, अपनी भाषा को प्रकट करती हैं, उसे देखकर मुझे बहुधा आश्चर्य और प्रायः भय हुआ है; वे बिना प्रयास और बिना दुर्घटना के जिस सकीर्ण पथ पर चलती हैं, उस पथ पर कोई दार्शनिक भी पग-पग पर लड़खड़ा जाता। निश्चय ही प्रारम्भिक यौवनावस्था की स्वतन्त्रता के मध्य भी यह देखना सरल है कि अमरीकी महिला सदा अपनी स्वामिनी होती है: वह समस्त मान्य आनन्दों का उपभोग करती है, किन्तु उनमें से किसी के समक्ष भी आत्म समर्पण नहीं करती और उसकी बुद्धि आत्म पथ-प्रदर्शन की लगाम को कभी छूटने नहीं देती। भले ही लगाम ढीली प्रतीत होती हो।

फ्रांस में, जहाँ प्रत्येक युग की परम्पराएँ अब भी जनता के विचारों और रुचियों के साथ निचित्र रूप से मिली हुई हैं, महिलाओं को सामान्यतः संयमित, अवकाशपूर्ण और प्रायः परम्परागत शिक्षा मिलती है, वैसी शिक्षा उन्हें कुलीन-तान्त्रिक युगों में मिलती थी और तत्पश्चात् उन्हें अकस्मात् बिना पथ प्रदर्शन और सहायता के उन समस्त अनियमितताओं के मध्य छोड़ दिया जाता है, जिन्हें प्रजातान्त्रिक समाज में पृथक् नहीं किया जा सकता।

अमरीकी अधिक तर्क संगत होते हैं। उन्होंने जान लिया है कि प्रजातंत्र में अत्यधिक व्यक्तिगत स्वतंत्रता, असामयिक युवावस्था, अनियंत्रित रुचियाँ, परिवर्तनशील प्रथाएँ, बहुधा अनिश्चित और शक्तिहीन जनमत, निर्बल पैतृक सत्ता, और विवादास्पद वैवाहिक अधिकार अनिवार्य हैं। यह विश्वास रखते हुए कि वे महिलाओं में मानव-हृदय की प्रबलतम भावनाओं का दमन नहीं कर सकते, इन परिस्थितियों के अन्तर्गत उन्होंने यह निर्णय किया कि सर्वोत्तम मार्ग यह है कि स्वयं महिलाओं को ही इन भावनाओं का प्रतिकार करने की शिक्षा दी जाय। चूँकि वे नारी की इज्जत को बहुधा रास्ते में पड़ने से रोक नहीं सकते थे, इसलिए उन्होंने निर्णय किया कि उसे जानना चाहिए कि इस इज्जत की रक्षा सर्वोत्तम रूप से किस प्रकार की जा सकती है; और शिथिल तथा समाप्त हो गये संरक्षणों की अपेक्षा उसकी इच्छा की स्वतंत्र शक्ति पर अधिक भरोसा किया गया। अतः अमरीकी महिलाओं को अपने में अविश्वास करने

की शिक्षा देने के स्थान पर निरन्तर इस बात का प्रयत्न करते हैं कि स्वयं अपने चरित्र की शक्ति में महिलाओं के विश्वास में वृद्धि हो। चूँकि किसी नवयुवती को पूर्ण और शाश्वत अज्ञान में रखना न तो सम्भव है और न वांछनीय है, इसलिए वे उसे समस्त विषयों का समय से पूर्व ही ज्ञान प्रदान करने में शीघ्रता करते हैं। विश्व के भ्रष्टाचारों को उससे छिपाना तो दूर रहा, वे इस बात को अधिक पसन्द करते हैं कि वह उन्हें तत्काल देख ले, और उन भ्रष्टाचारों से दूर रहने की शिक्षा स्वयं प्राप्त कर ले। वे उसके विचारों की निर्दोषिता पर अत्यधिक ध्यान देने की अपेक्षा उसके आचरण की रक्षा करने को अधिक महत्त्व प्रदान करते हैं।

यद्यपि अमरीकी अत्यन्त-धार्मिक होते हैं, तथापि वे नारी की प्रतिष्ठा की रक्षा करने के लिए केवल धर्म पर ही निर्भर नहीं करते, वे उसकी बुद्धि एवं तर्क-शक्ति को सुदृढ़ बनाने का भी प्रयत्न करते हैं। इस सम्बन्ध में उन्होंने उसी प्रणाली से काम लिया है, जिस का अनुगमन उन्होंने अन्य अनेक बातों में किया है। वे सर्वप्रथम इस बात का प्रबल प्रयास करते हैं कि व्यक्तिगत स्वतन्त्रता अपने ऊपर स्वयं संयम रखे, और वे धर्म की सहायता तब तक नहीं लेते, जब तक कि वे मानवीय शक्ति की चरम सीमा पर नहीं पहुँच जाते।

मैं इस बात से अवगत हूँ कि इस प्रकार की शिक्षा खतरे से खाली नहीं होती, मैं जानता हूँ कि यह कल्पना के मूल्य पर विवेक को शक्ति प्रदान करती है और नारियों को मनुष्य के लिए स्नेहमयी पत्नी और सुखद सहचरी बनाने के बदले शुष्क एवं पुण्यमयी महिलाएँ बनाती है। इससे समाज अधिक शांत एवं अधिक अच्छी तरह से नियमित हो सकता है, किन्तु घरेलू जीवन के आकर्षण बहुधा कम हो जाते हैं। फिर भी, ये बुराइयाँ गौण हैं, जिन्हें उच्चतर हितों के लिए सहन किया जा सकता है। अब हम जिस स्थिति में पहुँच गये हैं, उसमें चुनाव करने का कार्य हमारे जिम्मे नहीं रह गया है, प्रजातान्त्रिक संस्थाओं और व्यवहारों द्वारा नारियाँ जिन खतरों से घिरी रहती हैं, उनसे उनकी रक्षा करने के लिए प्रजातान्त्रिक शिक्षा अनिवार्य हो गयी है।

अमरीका में नारी की स्वतन्त्रता विवाह के बन्धनों में ऐसी खो जाती है कि उसका पता नहीं लगता। यदि वहाँ अविवाहित नारी अन्य स्थानों की अपेक्षा कम संयमित होती है, तो पत्नी को कठोरतर उत्तरदायित्वों का निर्वाह करना पड़ता है। अविवाहित नारी पितृ गृह को स्वतंत्रता और आनन्द का स्थान बनाती है। पत्नी, पति के घर में ऐसे रहती है, मानो वह एक आश्रम में हो; फिर भी

जीवन की ये भिन्न स्थितियाँ सम्भवतः इतनी विपरीत नहीं हैं, जितनी कल्पना की जा सकती है और दूसरी स्थिति में पहुँचने के लिए पहली स्थिति को पार करना अमरीकी महिलाओं के लिए स्वाभाविक है।

विवाह के सम्बन्ध में धार्मिक सम्प्रदायों और व्यापारी राष्ट्रों की धारणाएँ विशेष रूप से गम्भीर होती हैं। धार्मिक सम्प्रदाय नारी-जीवन की नियमितता को उसकी नैतिकता की शुद्धता का सर्वोत्तम रक्षक तथा निश्चिततम लक्षण मानते हैं। व्यापारी राष्ट्र इसे घर की व्यवस्था और समृद्धि के लिए बड़ा संरक्षण मानते हैं। अमरीकी एक ही साथ शुद्धतावादी और व्यापारी राष्ट्र दोनों हैं; उनके धार्मिक विचार और व्यापारी आदतें परिणामतः एक ऐसे पथ पर ले जाती हैं, जहाँ महिलाओं से अत्यधिक त्याग एवं कर्तव्य के लिए उसके सुखों के निरन्तर त्याग की आवश्यकता होती है। यूरोप में नारियों से इस त्याग की अपेक्षा कम की जाती है। इस प्रकार अमरीका में जनता का अटल मत सावधानीपूर्वक नारी को घरेलू हितों और कर्तव्यों की संकीर्ण सीमा में आबद्ध कर देता है और उसे इस सीमा का अतिक्रमण करने से रोकता है।

अमरीकी नवयुवती विश्व में प्रवेश करने पर इन धारणाओं को सुदृढ़ रूप से प्रतिष्ठित पाती है, वह उनसे निस्सृत नियमों को देखती है; उसे यह देखने में विलम्ब नहीं लगता कि अपनी मानसिक शान्ति, अपने सम्मान, यहाँ तक कि अपने सामाजिक अस्तित्व तक को भी संकट में डाले बिना वह अपने समकालीनों की स्थापित प्रथाओं से एक क्षण के लिए भी विचलित नहीं हो सकती, और आत्म समर्पण के इस प्रकार के कार्य के लिए जिस शक्ति की आवश्यकता होती है, उसे वह अपनी बुद्धि की दृढ़ता तथा अपनी शिक्षा से प्राप्त पौरुषपूर्ण आदतों में पाती है। यह कहा जा सकता है कि उसने अपनी स्वतंत्रता के प्रयोग द्वारा त्याग करने का समय उपस्थित होने पर बिना संघर्ष और बिना प्रतिवाद के स्वतंत्रता का समर्पण करना सीखा है।

किन्तु कोई भी अमरीकी नारी विवाह के बन्धन में इस प्रकार नहीं फँसती, मानो वह अपनी सरलता और अज्ञान के लिए फैलाये गये जाल में फँस रही हो। उससे जो आशा की जाती है उसकी शिक्षा उसे पहले ही मिल चुकी होती है और वह स्वेच्छापूर्वक एवं स्वतंत्रतापूर्वक विवाह को स्वीकार करती है। वह साहसपूर्वक अपनी नयी स्थिति का समर्थन करती है, क्योंकि उसने उसे चुना था। चूँकि अमरीका में पैतृक अनुशासन बहुत शिथिल और वैवाहिक बंधन बहुत कठोर होता है, इसलिए नवयुवती वैवाहिक बंधन को पर्याप्त सतर्कता

और भय के बिना नहीं स्वीकार करती। समय से पूर्व विवाह कम होते हैं। अमरीकी महिलाओं की बुद्धि जब तक प्रौढ़ एवं परिपक्व नहीं हो जाती तब तक वे विवाह नहीं करतीं। जब कि अन्य देशों में अधिकांश महिलाएँ सामान्यतः विवाह के बाद ही अपनी बुद्धि का उपयोग करना एवं उसे परिपक्व बनाना प्रारम्भ करती हैं।

फिर भी, मैं किसी तरह यह खयाल नहीं करता कि अमरीका में विवाह के शीघ्र ही बाद नारियों की आदतों में जो महान परिवर्तन होता है, उसका एकमात्र कारण जनमत का नियंत्रण ही होना चाहिए; बहुधा वे स्वयं अपनी इच्छा से इस परिवर्तन को अपने ऊपर लाद लेती हैं। जब पति का चुनाव करने का समय आता है, तब विश्व के उन्मुक्त पर्यवेक्षण द्वारा प्राप्त एवं प्रबल बनी हुई शुष्क एवं कठोर तर्क शक्ति अमरीकी नारी को यह सिखाती है कि विवाह-बंधन में गर्व एवं स्वतंत्रता की भावना निरंतर परेशानी का ही कारण बनती है, आनंद का स्रोत नहीं; और विवाहित महिला के आनन्द का स्रोत उसके पति के घर में होता है। चूँकि वह घरेलू सुख के मार्ग को पहले से ही स्पष्ट रूप से देखती है, इसलिए वह तत्काल इस मार्ग पर अग्रसर होती है और पीछे मुड़ने का प्रयास न करके अन्त तक उस पर चलती जाती है।

अमरीका की युवती पत्नियाँ अपनी नयी स्थिति के त्यागमय कर्तव्यों को तत्काल एवं बिना पश्चात्ताप के स्वीकार करने में जिस उद्देश्यशक्ति का परिचय देती हैं, वह उनके जीवन की समस्त महान परीक्षाओं में तनिक भी कम मात्रा में नहीं दिखायी देता। संयुक्त राज्य अमरीका में निजी सम्पत्ति जितनी अनिश्चित होती है, उतनी विश्व के किसी अन्य देश में नहीं होती। एक ही व्यक्ति को अपने जीवन में उन सभी क्रमों से, जो समृद्धि से निर्धनता की ओर ले जाते हैं, उत्थान करना एवं पुनः नीचे गिरना, कोई असामान्य बात नहीं है। अमरीकी महिलाएँ इन परिवर्तनों को शान्त एवं अदम्य शक्ति के साथ सहन करती हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि उनकी सम्पत्ति के साथ उनकी आकांक्षाएँ सरलतापूर्वक संकुचित एवं विस्तृत होती रहती हैं।

जैसा कि मैं इस पुस्तक के पूर्ववर्ती भाग में कह चुका हूँ, पश्चिमी जंगलों को आबाद करने के लिए प्रतिवर्ष जो व्यक्ति देशान्तर वास करते हैं, उनमें से अधिकांश उत्तरी राज्यों की आंग्ल अमरीकी जाति के होते हैं। सम्पत्ति की खोज में साहसपूर्वक आगे बढ़ने वाले इन व्यक्तियों में से अधिकांश पहले से

ही देश के अपने भाग में सम्पत्तिशाली थे। वे अपनी पत्नियों को अपने साथ ले जाते हैं तथा वे इन अभियानों के साथ सदा सम्बद्ध अनेक खतरों और कष्टों को सहन करती हैं। बहुधा जंगलों के किनारे भी मुझे ऐसी युवतियाँ मिली हैं, जिनका पालन-पोषण न्यू इंग्लैण्ड के बड़े नगरों के समस्त सुखों के मध्य हुआ था; किन्तु जो बिना किसी माध्यमिक अवस्था के अपने मातापिता के सम्पत्ति से भरे घरों से जंगल में स्थित झोपड़ों में निवास करने चली गयीं। ज्वर, एकान्त तथा जीवन की कठोरता उनके साहस को भंग नहीं कर सकी। उनके चेहरे मुरझाये हुए थे, किन्तु उनकी दृष्टि में दृढ़ता थी; वे एक साथ ही दुखी एवं कृतसंकल्प प्रतीत होती थीं। मुझे इस बात में सन्देह नहीं है कि इन अमरीकी नवयुवतियों ने अपने प्रारम्भिक वर्षों की शिक्षा में वह आन्तरिक शक्ति प्राप्त कर ली थी, जिसका प्रदर्शन उन्होंने इन परिस्थितियों में किया। अतः अमरीका में अब भी विवाह के पहलू के अन्तर्गत बालिका की प्रारम्भिक संस्कृति को ढूँढा जा सकता है। उसका कार्य बदल जाता है, उसकी आदतें भिन्न हो जाती हैं, किन्तु उसका चरित्र वही रहता है।

४०. अमरीका में सदाचार की रक्षा में स्थिति की समानता का योग-दान

कतिपय दार्शनिकों और इतिहासकारों ने कहा है अथवा संकेत किया है कि विषुवत् रेखा से किसी देश की दूरी के अनुसार ही नारी-नैतिकता की दृढ़ता में वृद्धि अथवा कमी होती है। यह समस्या का एक सरल समाधान था, और मानव-जाति की स्थिति की एक जटिलतम समस्या का एक क्षण में समाधान करने के लिए एक 'ग्लोब' और एक जोड़ा कम्पास के अतिरिक्त और किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं थी; किन्तु मुझे इस बात का निश्चय नहीं है कि भौतिकवादियों का सिद्धान्त तथ्यों द्वारा समर्थित है। एक ही राष्ट्र अपने इतिहास की विभिन्न अवधियों में नैतिक और अनैतिक, दोनों रहा है; अतः जातियों की नैतिकता की दृढ़ता अथवा शिथिलता उनके देश के अपरिवर्तनीय प्राकृतिक गुणों पर ही नहीं, प्रत्युत कतिपय परिवर्तनीय कारणों पर निर्भर करती है। मैं इस बात को अस्वीकार नहीं करता कि कतिपय प्रकार के जलवायु में स्त्री पुरुष

के पारस्परिक आकर्षण से उत्पन्न होने वाली भावनाएँ विशेष रूप से प्रबल होती हैं, किन्तु मेरा विश्वास है कि समाज की स्थिति और राजनीतिक संस्थाओं द्वारा इस प्राकृतिक प्रबलता को सदा उत्तेजित अथवा संयमित किया जा सकता है।

यद्यपि उत्तरी अमरीका की यात्रा करने वाले यात्रियों में अनेक बातों में मतभेद है, तथापि वे सभी एक स्वर से कहते हैं कि वहाँ अन्य स्थानों की अपेक्षा नैतिकता अधिक कठोर है। यह स्पष्ट है कि अमरीकी इस मामले में अपने अंग्रेज पूर्वजों की अपेक्षा बहुत श्रेष्ठ हैं। दोनों राष्ट्रों पर लेश मात्र भी दृष्टिपात करने से यह तथ्य प्रमाणित हो जायगा।

यूरोप के अन्य समस्त देशों की भाँति इंग्लैण्ड में जन दुर्भावना नारियों की दुर्बलता पर निरन्तर प्रहार करती रहती है। दार्शनिक और नेता इस बात पर खेद प्रकट करते हुए सुने जाते हैं कि नैतिकता में पर्याप्त दृढ़ता नहीं है तथा देश की साहित्यिक कृतियों से निरन्तर यह निष्कर्ष निकलता है। अमरीका में समस्त पुस्तकों में, जिसके अपवाद उपन्यास भी नहीं हैं, नारियों को सदाचारिणी समझा जाता है और कोई भी व्यक्ति धूर्तता के कार्यों का वर्णन करने की बात नहीं सोचता।

इसमें सन्देह नहीं कि अमरीकी नैतिकता की इस महान नियमितता का आंशिक कारण देश के गुण, जाति और धर्म हैं; किन्तु ये समस्त कारण, जो अन्य स्थानों पर विद्यमान हैं, इस पर प्रकाश डालने के लिए पर्याप्त नहीं हैं। कोई विशेष कारण ढूँढ़ना आवश्यक है। मुझे यह कारण समानता का सिद्धान्त तथा उससे उत्पन्न संस्थाएँ प्रतीत होती हैं। स्थिति की समानता स्वयमेव नैतिकता की नियमितता को उत्पन्न नहीं करती, किन्तु वह निस्सन्देह उसे सुविधाजनक बनाती है तथा उसमें वृद्धि करती है।

कुलीनतान्त्रिक राष्ट्रों में बहुधा जन्म और सम्पत्ति नर और नारी को दो भिन्न प्राणी बना देते हैं, जिससे वे एक दूसरे के साथ कभी संयुक्त नहीं हो सकते। उनकी भावनाएँ उन्हें निकट लाती हैं, किन्तु समाज की स्थिति और उससे उत्पन्न धारणाएँ उन्हें स्थायी एवं प्रत्यक्ष बन्धन में बँधने से रोकती हैं। इसका आवश्यक परिणाम यह होता है कि अनेक क्षणिक एवं गुप्त सम्बन्ध उत्पन्न होते हैं। मनुष्य के कानूनों द्वारा प्रकृति पर जो नियंत्रण लगाया जाता है, उसका प्रतिशोध प्रकृति गुप्त रीति से लेती है।

जब स्थिति की समानता पुरुष को नारी से पृथक् रखने वाली समस्त काल्पनिक

अथवा वास्तविक बन्धनों को तोड़ डालती है, तब ऐसी बात नहीं होती। तब कोई भी बालिका यह विश्वास नहीं करती कि वह उससे प्रेम करने वाले व्यक्ति की पत्नी नहीं बन सकती और यह विवाह से पूर्व नैतिकता की अवहेलना किये जाने को अत्यन्त असामान्य बात बना देता है; क्योंकि भावनाओं पर चाहे जितना विश्वास किया जाता हो, जब किसी नारी का प्रेमी उससे विवाह करने के लिए पूर्ण रूप से स्वतंत्र होते हुए भी उसे विवाह नहीं करता, तब वह अपने को मुश्किल से ही इस बात का विश्वास दिला सकती है कि वह प्रेमिका है।

विवाहित जीवन में भी यही कारण, यद्यपि अधिक अप्रत्यक्ष रूप से, कार्य करता है। विवशता अथवा संयोगवश जो विवाह होते हैं, उनसे अधिक अन्य कोई भी वस्तु अवैध प्रेम-भावना को उचित नहीं सिद्ध करती, चाहे वह भावना रखने वाले व्यक्ति हों, अथवा उसे देखने वाला संसार हो।

जिस देश में नारी निर्णय करने के लिए सदा स्वतंत्र रहती है और जहाँ शिक्षा ने उसे सही निर्णय करने के लिए तैयार कर दिया है, उस देश में जनमत उसके दोषों के सम्बन्ध में निर्मम रहता है। अमरीकियों की कठिनाई अंशतः इसी कारण से उत्पन्न होती है। वे विवाह को एक ऐसा समझौता मानते हैं, जो बहुधा कष्टदायक होता है; किन्तु जिसकी शर्तों का पूर्ण रूप से पालन करने के लिए प्रत्येक पक्ष बाध्य है, क्योंकि वे उन सब शर्तों को पहले से ही जानते थे और उनको स्वीकार न करने के लिए पूर्णरूप से स्वतंत्र थे। जो परिस्थितियाँ वैवाहिक सदाचार को अधिक बाध्यतामूलक बनाती हैं, वे ही उसे अधिक सरल भी बनाती हैं।

कुलीनतांत्रिक देशों में विवाह का उद्देश्य व्यक्तियों को संयुक्त करना न होकर सम्पत्ति को संयुक्त करना होता है; अतः कभी-कभी मँगनी होने पर पति पाठशाला में और पत्नी धाय गृह में होती है। यदि दम्पति की सम्पत्ति को संयुक्त करने वाला वैवाहिक बन्धन उनके हृदयों में दरार डाल दे, तो इस बात पर आश्चर्य नहीं किया जा सकता, यह समझौते के स्वरूप का परिणाम होता है। इसके विपरीत जब कोई व्यक्ति सदा स्वयं पत्नी का चुनाव करता है और उस पर कोई बाहरी दबाव नहीं पड़ता, तथा पथ-प्रदर्शन भी नहीं किया जाता, तब सामान्यतः रुचियों और विचारों की एकता ही पुरुष और नारी को निकट लाती है और यही एकता उनकी घनिष्ठता को सुरक्षित एवं स्थिर रखती है।

हमारे पूर्वजों ने विवाह के विषय में एक विचित्र मत की कल्पना की थी, चूँकि उन्होंने इस बात को लक्ष्य किया था कि उनके समय में जो थोड़े से प्रेम-विवाह होते थे, वे प्रायः सदा बुरे सिद्ध होते थे, इसलिए उन्होंने यह निष्कर्ष निकाल लिया कि इस सम्बन्ध में हृदय की बातों को सुनना खतरनाक है। उन्हें चुनाव की अपेक्षा संयोग अधिक मार्ग-दर्शक प्रतीत हुआ।

फिर भी, इस बात को लक्ष्य करना कठिन नहीं था कि उन्होंने जो उदाहरण देखे, उनसे वास्तव में कुछ भी नहीं सिद्ध होता, क्योंकि सर्वप्रथम यदि प्रजातान्त्रिक राष्ट्र किसी नारी को अपने पति का चुनाव करने की स्वतंत्रता प्रदान करते हैं, तो वे इतना महत्वपूर्ण चुनाव करने के लिए नारी के मस्तिष्क को पर्याप्त ज्ञान और उसकी इच्छा को पर्याप्त शक्ति प्रदान करते हैं; जबकि कुलीनतान्त्रिक राष्ट्रों में अपने माता पिता की सत्ता से चोरी-चोरी पलायन कर उन पुरुषों की भुजाओं में, जिन्हें जानने का न तो उनके पास समय रहता है, न योग्यता, स्वेच्छापूर्वक अपने को डाल देने वाली नवयुवतियाँ पूर्ण रूप से अरक्षित रहती हैं। इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है कि जब उन्हें पहले-पहल कार्य करने की स्वतंत्रता उपलब्ध होती है, तब वे उसका दुरुपयोग करती हैं, न यही बात आश्चर्य की है कि प्रजातान्त्रिक शिक्षा न मिली होने पर जब वे प्रजातान्त्रिक प्रथाओं के अनुसार विवाह करने का निर्णय करती हैं, तब वे इस प्रकार की भीषण गलतियाँ करती हैं; किन्तु यही सब कुछ नहीं है। जब कोई पुरुष और नारी कुलीनतान्त्रिक समाज के विभेदों के बावजूद विवाह करने पर तुल जाते हैं, तब उन्हें विकट कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। सन्तान के लिए निर्धारित अनुशासन के बन्धनों को तोड़ने अथवा शिथिल कर लेने पर उन्हें अंतिम प्रयास द्वारा अपने को प्रथा और विचार के अत्याचार से मुक्त करना पड़ता है। अन्त में जब वे इस कठिन कार्य में सफल हो जाते हैं, तब वे अपने स्वाभाविक मित्रों और आत्मीयजनों से पृथक् हो जाते हैं; उन्होंने जिस पूर्वाग्रह को पार किया है, वह उन्हें सभी से विलग कर देता है और एक ऐसी स्थिति में डाल देता है जो शीघ्र ही उनके साहस को भग्न कर देती है और उनके हृदयों में कटुता उत्पन्न कर देती है।

अतः यदि इस प्रकार विवाहित कोई दम्पति पहले दुःखी और बाद में अपराधी बन जाय तो इस स्थिति के लिए उनकी चुनाव-स्वतंत्रता को उत्तरदायी नहीं ठहराया जाना चाहिए, प्रयुत इस स्थिति का उत्तरदायित्व उनके ऐसे

समाज में रहने पर होता है, जिसमें इस प्रकार की चुनाव-स्वतंत्रता को स्वीकार नहीं किया जाता।

इसके अतिरिक्त इस बात का विस्मरण नहीं किया जाना चाहिए कि कोई व्यक्ति जिस प्रयास द्वारा किसी प्रचलित बुराई को उग्र रूप से झकझोर डालता है, वही प्रयास सामान्यतः उसे तर्क की सीमाओं का अतिक्रमण करने के लिए भी प्रेरित करता है। युग और देश के विचार के विरुद्ध युद्ध की घोषणा का साहस करने के लिए, चाहे पक्ष कितना भी न्यायसंगत हो, उग्र एवं साहसपूर्ण भावना की आवश्यकता होती है, तथा इस प्रकार के चरित्र वाले व्यक्तियों को, चाहे वे किसी मार्ग का अनुगमन करें, सुख अथवा पुण्य बहुत कम मिलता है। (और, इसी सिलसिले में कहा जा सकता है कि यही कारण है कि अत्यन्त आवश्यक और न्यायसंगत क्रान्तियों में पुण्यशाली और उदार क्रान्तिकारी चरित्र बहुत कम मिलते हैं) अतः यदि कोई व्यक्ति कुलीनतांत्रिक युग में पत्नी का चुनाव करने में अपने निजी विचार और निजी रुचि के अतिरिक्त अन्य किसी वस्तु पर ध्यान नहीं देता, तो वह शीघ्र ही अपने घर में अनैतिकता और घरेलू दीनता का आक्रमण होते हुए देखता है। इस पर आश्चर्य प्रकट करना उचित नहीं है। किन्तु जब यही कार्यपद्धति स्वाभाविक और साधारण स्थिति में अपनायी जाती है, जब वह पैतृक सत्ता द्वारा स्वीकृत और साधारण जनमत द्वारा समर्थित होती है, तब इस बात में सन्देह नहीं किया जा सकता कि इससे परिवारों की आन्तरिक शान्ति में वृद्धि होगी तथा वैवाहिक जीवन में नैतिकता का कठोरता से पालन किया जायेगा।

प्रजातन्त्रों में प्रायः सभी व्यक्ति सार्वजनिक अथवा पेशेवर जीवन में लगे होते हैं और दूसरी ओर सीमित आय पत्नी को घर में सीमित रहने के लिए बाध्य कर देती है, जिससे वह घरेलू अर्थ व्यवस्था को व्यक्तिगत रूप से और अत्यन्त सतर्कतापूर्वक देख सके। ये समस्त स्पष्ट और अनिवार्य व्यवसाय अनेक प्राकृतिक सीमाएँ हैं, जो स्त्री-पुरुष दोनों को पृथक् पृथक् रखकर एक के अनुरोधों को न्यून एवं निर्बल तथा दूसरे के प्रतिरोध को सरल बना देती हैं।

यह सच है कि स्थितियों की समानता पुरुषों को सदाचारी बनाने में कभी सफल नहीं हो सकती, किन्तु यह उनके द्वारा की जाने वाली नैतिकता की अवहेलना को कम खतरनाक बना सकती है। चूँकि तब किसी को भी आत्मरक्षा के लिए शस्त्रसज्ज पुण्य पर प्रहार करने का पर्याप्त समय अथवा सुअवसर नहीं प्राप्त होगा, इसलिए एक ही समय अनैतिक नारियाँ तथा पुण्यमयी नारियाँ दोनों

भारी संख्या में मिलेंगी। यह स्थिति दुःखद व्यक्तिगत कठिनाइयों के जन्म देती है, किन्तु वह समाज को सतर्क एवं शक्तिशाली बनने से नहीं रोकती। वह पारिवारिक बन्धनों को नष्ट नहीं करती अथवा राष्ट्र की नैतिकता को क्षीण नहीं बनाती। समाज के लिए थोड़े-से व्यक्तियों के अनाचार से नहीं, प्रत्युत सभी की नैतिकता के क्षीण हो जाने से खतरा उत्पन्न होता है। विधायक की दृष्टि में दुराचार की अपेक्षा वेश्यावृत्ति कम खतरनाक होती है।

समानता में जो मनुष्य अशांत एवं निरन्तर परेशानी का जीवन व्यतीत करते हैं, वह जीवन न केवल उन्हें प्रेम की भावना से विपथ करता है, क्योंकि उनके पास इसके लिए समय नहीं रहता, प्रत्युत वह उन्हें एक अधिक गुप्त, किन्तु अधिक निश्चित मार्ग द्वारा उससे विपथ करता है। प्रजातान्त्रिक युगों में रहने वाले समस्त व्यक्ति न्यूनाधिक मात्रा में उत्पादक और व्यापारी वर्गों की विचारधारा को ग्रहण कर लेते हैं, उनके मस्तिष्क एक गम्भीर, सुविचारित और निश्चित मोड़ लेते हैं, वे किसी स्पष्ट एवं निकटतम उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए, जो उनकी आकांक्षाओं का स्वाभाविक एवं आवश्यक लक्ष्य प्रतीत होता है, आदर्शों का परित्याग कर देने की प्रवृत्ति रखते हैं। इस प्रकार समानता का सिद्धांत कल्पना को नष्ट नहीं करता, किन्तु उसकी उड़ान को नीची करके पृथ्वी के स्तर पर ला देता है।

प्रजातंत्र के नागरिक लक्ष्यहीन विचार के जितने कम अभ्यस्त होते हैं, उतने और लोग नहीं होते और उनमें से बहुत कम उन निष्प्रयोजन एवं एकान्त साधनाओं के वशीभूत होते हैं, जो सामान्यतः हृदय की महान भावनाओं की सृष्टि करती हैं तथा उनसे पूर्व की जाती हैं। यह सच है कि वे अपने लिए उस गहन, नियमित एवं शान्त स्नेह की प्राप्ति को अत्यधिक महत्व प्रदान करते हैं, जो जीवन का आकर्षण एवं संरक्षण होता है, किन्तु उनमें उत्तेजना के उन उग्र एवं परिवर्तनशील स्रोतों के पीछे भागने की प्रवृत्ति नहीं होती, जो जीवन में अशान्ति उत्पन्न करते हैं तथा उसकी अवधि को कम बना देते हैं।

मुझे इस बात का ज्ञान है कि ये सब बातें पूर्ण रूप से केवल अमरीका के सम्बन्ध में लागू होती हैं और सम्प्रति उन्हें यूरोप के विषय में लागू नहीं किया जा सकता। विगत अर्द्ध शताब्दी में, जब कानूनों और प्रथाओं ने अनेक यूरोपीय राष्ट्रों को अतुलनीय शक्ति के साथ प्रजातंत्र की ओर बढ़ाया है, हमें यह देखने का अवसर नहीं मिला कि पुरुष और नारी के सम्बन्ध अधिक व्यवस्थित और शुद्ध हो गये हैं। कुछ स्थानों पर इसके बिल्कुल प्रतिकूल बात देखी जा

सकती है, कतिपय वर्ग अधिक कठोर हैं, जनता की सामान्य नैतिकता अधिक शिथिल प्रतीत होती है। मुझे यह कहने में तनिक भी संकोच नहीं है, क्योंकि जिस प्रकार मैं अपने समकालीनों की निन्दा करने में रुचि नहीं रखता, उसी प्रकार मैं उनकी चापलूसी करने में भी रुचि नहीं रखता।

यह तथ्य दुःखदायक अवश्य है, किन्तु इसमें हमें आश्चर्य नहीं होना चाहिए। प्रजातांत्रिक समाज व्यवस्था व्यवस्थित आदतों पर जो शुभ प्रभाव डालती है, वह उन प्रवृत्तियों में से एक है, जिसका पता समय बीतने पर ही लगाया जा सकता है। यदि स्थिति की समानता नैतिकता की दृढ़ता के लिए अनुकूल है, तो स्थितियों को समान बनाने वाली सामाजिक क्रान्ति उसके लिए प्रतिकूल है। विगत पचास वर्षों में जब फ्रान्स इस रूपान्तर के मध्य होकर गुजरता रहा है, उसे स्वतंत्रता बहुत ही कम मिली और अशान्ति वहाँ सदा बनी रही। धारणाओं की इस सार्वभौमिक गड़बड़ी और विचारों के इस सामान्य आन्दोलन के मध्य—उचित और अनुचित, सत्य और असत्य, न्याय और शक्ति के इस असम्बद्ध मिश्रण के मध्य—सार्वजनिक नैतिकता संदिग्ध बन गयी है और निजी नैतिकता लड़खड़ाने लगी है; किन्तु समस्त क्रान्तियों के प्रथम परिणाम इसी प्रकार के हुए हैं, चाहे उनके अथवा उनके अभिकर्ताओं के उद्देश्य कुछ भी रहे हों। अन्त में जिन क्रान्तियों के परिणाम स्वरूप नैतिकता के बंधन दृढ़तर हुए, उन्होंने भी प्रारम्भ में उन बन्धनों को ढीला ही बनाया। फ्रांसीसी बहुधा नैतिकता की जो अवहेलनाएँ देखते हैं, वे मुझे स्थायी नहीं प्रतीत होतीं और समय के कतिपय विचित्र लक्षणों से यह पहले से ही दृष्टिगोचर होता है।

जो कुलीनतन्त्र अपनी शक्ति को खो चुकने के बाद भी अपनी सम्पत्ति को बनाये रखता है और मात्र अश्लील मनोरंजनों के रूप में परिणत हो जाने के बाद भी जिसके पास अत्यधिक अवकाश रहता है, उससे अधिक भ्रष्ट वस्तु कोई नहीं होती। अब तक उसे प्रेरित करने वाली शक्तिशाली भावनाएँ और महान कल्पनाएँ तब उसका साथ छोड़ देती हैं और अनेक छोटी-छोटी बुराइयों के अतिरिक्त उसके पास कुछ भी नहीं बच रहता। ये बुराइयाँ उससे उसी प्रकार लिपटी रहती हैं, जिस प्रकार कीड़े किसी शव से लिपटे रहते हैं।

इस बात से कोई इनकार नहीं करता कि विगत शताब्दी का फ्रांसीसी कुलीनतन्त्र अत्यन्त भ्रष्ट था, फिर भी स्थापित आदतें तथा प्राचीन विश्वास समाज

के अन्य वर्गों के मध्य नैतिकता के प्रति कुछ सम्मान बनाये हुए थे। न इस बात से ही इनकार किया जा सकता है कि वर्तमान युग में उसी कुलीनतंत्र के अवशेष एक प्रकार की कठोर नैतिकता का प्रदर्शन करते हैं, जबकि मध्य और निम्नतर वर्गों में अनैतिकता फैल गयी प्रतीत होती है। इस प्रकार पचास वर्ष पूर्व जो परिवार अत्यन्त भ्रष्टाचारी थे, वे ही आज अत्यन्त अनुकरणीय एवं आदर्श हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि प्रजातंत्र ने कुलीनतांत्रिक नैतिकता को शक्तिशाली ही बनाया है। फ्रांसीसी क्रान्तियों ने उच्च परिवारों की सम्पत्ति को विभाजित कर, उन्हें अपने कार्यों पर, अपने परिवारों पर ध्यान देने के लिए बाध्य कर, उनके लिए एक ही घर में अपनी सन्तानों के साथ रहने की स्थिति उत्पन्न कर और संक्षेप में उनके मस्तिष्कों को अधिक बुद्धिसंगत और गम्भीर दिशा प्रदान कर प्रायः उनके जाने बिना ही उनमें धार्मिक विश्वास के प्रति श्रद्धा, व्यवस्था, शांति, आनन्द, घरेलू स्नेह और सुख के प्रति प्रेम उत्पन्न कर दिया है, जबकि शेष राष्ट्र, जिसकी रुचियाँ भी स्वभावतः यही थीं, देश के कानूनों और राजनीतिक आदतों का उन्मूलन करने के लिए आवश्यक प्रयास द्वारा अतिशयताओं में प्रवाहित हो गया।

प्राचीन फ्रांसीसी कुलीनतंत्र को क्रान्ति के परिणामों को भुगतना पड़ा है, किन्तु उसने न तो क्रान्तिकारी भावनाओं का अनुभव किया, न क्रान्ति की सृष्टि करने वाली अराजक उत्तेजना का अनुभव किया। इस बात की कल्पना सरलतापूर्वक की जा सकती है कि यह कुलीनतंत्र क्रांति करने वालों से पूर्व अपने आचरणों पर क्रान्ति के स्वस्थ प्रभाव का अनुभव करता है। अतः यद्यपि प्रथम दृष्टि में यह विरोधाभास सा प्रतीत होता है तथापि कहा जा सकता है कि वर्तमान युग में राष्ट्र के अत्यन्त प्रजातंत्र-विरोधी वर्ग मुख्यतः उस प्रकार की नैतिकता का प्रदर्शन करते हैं, जिसकी आशा उचित रूप से प्रजातंत्र से की जा सकती है। मैं यह सोचे बिना नहीं रह सकता कि जब हम इस प्रजातांत्रिक क्रान्ति से उत्पन्न अशान्ति से मुक्त हो जाने के बाद इसके समस्त प्रभावों को प्राप्त कर लेंगे, तब वे कथन शनैः शनैः समस्त समुदाय के लिए सत्य सिद्ध होंगे, जो सम्प्रति केवल थोड़े-से व्यक्तियों के सम्बन्ध में लागू होते हैं।

४१. अमरीकी पुरुष-नारी की समानता को किस प्रकार समझते हैं

मैं बता चुका हूँ कि प्रजातंत्र किस प्रकार समाज में उत्पन्न होनेवाली विभिन्न विषमताओं को नष्ट कर देता है अथवा उनमें परिवर्तन करता है; किन्तु क्या यही सब कुछ है ? अथवा क्या वह अन्ततोगत्वा पुरुष और नारी की उस महान विषमता को प्रभावित नहीं करता, जो आज तक शाश्वत रूप से मानव प्रवृत्ति पर आधारित हुई है ? मेरा विश्वास है कि एक ही स्तर पर पिता और पुत्र, स्वामी और सेवक तथा सामान्यतः बड़ों और छोटों को निकटतर लाने वाले सामाजिक परिवर्तन नारी का उत्थान करेंगे तथा उसे पुरुष के अधिकाधिक समान बनायेंगे; किन्तु यहाँ मैं, सदा से अधिक, अपनी बात को साफ-साफ समझा देना आवश्यक समझता हूँ; क्योंकि कोई ऐसा विषय नहीं है, जहाँ हमारे युग की अपरिष्कृत और अराजक कल्पनाओं ने इससे अधिक स्वतंत्रता से काम लिया हो।

यूरोप में ऐसे व्यक्ति हैं, जो 'सेक्सों' की विभिन्न विशिष्टताओं को भ्रांतिजनक रूप में एक साथ मिलाकर न केवल पुरुष और नारी को समान, बल्कि एकरूप भी बना देना चाहेंगे। वे दोनों को एक ही प्रकार का काम देना चाहेंगे, दोनों का उत्तरदायित्व एक ही प्रकार का रखना चाहेंगे तथा दोनों को एक ही प्रकार के अधिकार प्रदान करना चाहेंगे; वे उनके पेशों, आनन्दों और व्यवसायों, सभी बातों में उन्हें मिला देंगे। इस बात को तत्काल देखा जा सकता है कि इस प्रकार एक 'सेक्स' को दूसरे 'सेक्स' के समान बनाने का प्रयत्न करने से दोनों का ह्रास होता है और प्रकृति के कार्यों को इस प्रकार अनुचित रूप से मिलाने से इसके अतिरिक्त दूसरा कोई परिणाम नहीं निकल सकता कि पुरुष निर्बल और नारियाँ अव्यवस्थित हो जायँगी।

'सेक्सों' के मध्य स्थापित की जाने वाली प्रजातांत्रिक समानता को अमरीकी इस दृष्टि से नहीं देखते हैं। वे स्वीकार करते हैं कि चूँकि प्रकृति ने पुरुष और नारी की शारीरिक एवं नैतिक बनावट में इतने व्यापक अन्तर रखे हैं, इसलिए प्रकृति का स्पष्ट उद्देश्य यह था कि उनके विभिन्न गुणों का स्पष्ट रूप से नियोजन किया जाय और उनकी मान्यता है कि सुधार इस बात में नहीं निहित

है कि इतनी विषमता रखने वालों से लगभग एक ही प्रकार का कार्य कराया जाय, अपितु वह इस बात में निहित है कि वे अपने-अपने कार्यों को सर्वोत्तम रीति से सम्पन्न करें। अमरीकियों ने पुरुष के कर्तव्यों को नारी के कर्तव्यों से सावधानीपूर्वक पृथक् रख कर—जिससे समाज के महान कार्य का संचालन अधिक अच्छी तरह से किया जा सके—'सेक्सों' के सम्बन्ध में राजनीतिक अर्थ-व्यवस्था के उस महान सिद्धान्त को लागू किया है, जो हमारे युग के उत्पादनों के सम्बन्ध में लागू होता है।

दोनों 'सेक्सों' के लिए कार्य की दो स्पष्ट रूप से पृथक्-पृथक रेखाएँ खींचने तथा सदा भिन्न रहने वाले दो मार्गों पर उन्हें एक दूसरे के साथ कदम से कदम मिलाकर चलाने के लिए अमरीका में निरन्तर जितनी सावधानी से काम लिया गया है, उतनी सावधानी से अन्य किसी देश में काम नहीं लिया गया है। अमरीकी महिलाएँ परिवार के बाहरी कार्यों का प्रबन्ध कभी नहीं करतीं, न वे व्यवस्था का सचालन करती हैं और न राजनीतिक जीवन में भाग लेती हैं। वे दूसरी ओर खेतों में न कड़ी मेहनत करती हैं, न मेहनत के उन कामों में से कोई काम करती हैं, जिनके लिए शारीरिक शक्ति की आवश्यकता होती है। कोई भी परिवार इतना निर्धन नहीं होता कि इस नियम का अपवाद हो सके। यदि एक ओर कोई अमरीकी नारी घरेलू कार्यों के शान्त वृत्त से बच कर नहीं निकल सकती, तो दूसरी ओर उसे उसका अतिक्रमण करने के लिए कभी बाध्य नहीं किया जाता। अतः अमरीकी नारियाँ, जो बहुधा पौरुषेय बुद्धि और पौरुषेय शक्ति का प्रदर्शन करती हैं, सामान्यतः व्यक्तिगत आकृति की महान कोमलता बनाये रखती हैं और नारी सुलभ व्यवहारों को सदा कायम रखती हैं, यद्यपि कभी-कभी वे यह प्रकट करती हैं कि उनमें पुरुषों का हृदय और पुरुषों की बुद्धि है। न कभी अमरीकियों ने यह सोचा है कि प्रजातान्त्रिक सिद्धान्तों का एक परिणाम यह होता है कि वैवाहिक अधिकार का नाश हो जाता है अथवा परिवारों में प्राकृतिक अधिकारों के विषय में गड़बड़ी हो जाती है। उनकी मान्यता है कि प्रत्येक संघ का एक प्रमुख होना चाहिए, तभी उसके लक्ष्य की पूर्ति हो सकती है और वैवाहिक संघ का स्वाभाविक प्रमुख पुरुष होता है। अतः वे पुरुष को अपने साथी का निर्देशन करने के अधिकार से वंचित नहीं करते और वे मानते हैं कि पति और पत्नी के अल्पतर संघ में तथा महान सामाजिक समुदाय में भी प्रजातंत्र का लक्ष्य आवश्यक अधिकारों को नियमित एवं कानून-सम्मत बनाना है, न कि समस्त अधिकार को नष्ट कर देना।

ऐसा नहीं है कि यह मत एक ही 'सेक्स' का है और दूसरा इसका प्रतिवाद करता है। मैंने ऐसा कभी नहीं देखा कि अमरीका की नारियाँ वैवाहिक सत्ता को अपने अधिकारों का सौभाग्यपूर्ण अपहरण मानती हैं, न वे इस सत्ता के समक्ष समर्पण करने में अपमान ही समझती हैं। इसके विपरीत मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि वे अपनी निजी इच्छा का स्वेच्छापूर्वक परित्याग कर देने को एक प्रकार के गर्व की बात समझती हैं तथा जुए को उतार फेंकने को नहीं, प्रत्युत उसमें जुतने को गर्व की बात समझती हैं। कम-से-कम अत्यंत पुण्य-शालिनी महिलाएँ इसी प्रकार की भावना व्यक्त करती हैं; दूसरी महिलाएँ मौन रहती हैं और संयुक्त-राज्य अमरीका में अपराधिनी पत्नी नारी-अधिकारों की मांग नहीं करती, जबकि वह स्वयं अपने पवित्रतम कर्तव्यों को पैरों तले कुचलती रहती है।

बहुधा कहा गया है कि यूरोप में पुरुष महिलाओं की चापलूसी में जो बातें कहते हैं, उसमें भी कुछ अंश में घृणा विद्यमान रहती है। यद्यपि यूरोप-निवासी बहुधा अपने को नारी का गुलाम प्रकट करता है तथापि यह देखा जा सकता है कि वह कभी ईमानदारी के साथ नारी को अपने समकक्ष नहीं समझता। अमरीका में पुरुष नारियों की प्रशंसा बहुत कम करते हैं, किन्तु वे प्रतिदिन यह दिखाते हैं कि वे उनका कितना सम्मान करते हैं। वे निरन्तर पत्नी की बुद्धि में पूर्ण विश्वास तथा उसकी स्वतंत्रता के प्रति अत्यधिक सम्मान प्रकट करते हैं। उन्होंने निर्णय कर लिया है कि उसके मस्तिष्क में पुरुष के मस्तिष्क के समान ही प्रत्यक्ष सत्य [redacted] पता लगाने की क्षमता है तथा उसका हृदय पुरुष के हृदय के समान ही उसे ग्रहण करने की दृढ़ता रखता है और उन्होंने अपने गुण से अधिक उसके गुण को पूर्वाग्रह, अज्ञान और भय के आश्रय के अंतर्गत रखने का कभी प्रयास नहीं किया है।

ऐसा प्रतीत होगा कि यूरोप में, जहाँ पुरुष नारी के निरंकुश आधिपत्य के समक्ष इतनी सरलतापूर्वक आत्म-समर्पण कर देता है, नारियाँ फिर भी मानव जाति के कतिपय महानतम गुणों से वंचित होती हैं और उन्हें प्रलोभक, किन्तु अपूर्ण प्राणी माना जाता है और आश्चर्य की बात तो यह है कि नारियाँ अन्ततोगत्वा स्वयं को इसी दृष्टि से देखने लगती हैं और प्रायः इस बात को एक विशेषाधिकार समझने लगती हैं कि उन्हें अपने को निरर्थक, दुर्बल और कायर प्रकट करने [redacted] अधिकार है। अमरीका की नारियाँ इस प्रकार के किसी विशेषाधिकार का दावा नहीं करतीं।

पुनः यह कहा जा सकता है कि हमने अपनी नैतिकता में पुरुषों के लिए विभिन्न स्वतंत्रताएँ रख छोड़ी हैं, जिससे उसके प्रयोग के लिए एक आचार और उसके साथी के पथ-प्रदर्शन के लिए दूसरा आचार होता है, तथा जनता के मत के अनुसार एक ही कार्य के लिए अपराध के रूप में अथवा केवल एक दोष के रूप में एकान्तर रूप से दण्ड दिया जा सकता है। अमरीकी कर्त्तव्यों और अधिकारों के इस विषमतापूर्ण विभाजन को नहीं जानते; उनके मध्य भ्रष्टाचार के पथ पर ले जाने को उसी असम्मान की दृष्टि से देखा जाता है, जिस दृष्टि से भ्रष्टाचार करनेवाले को।

यह सच है कि यूरोप में सामान्यतः नारियों की ओर जितना अधिक ध्यान दिया जाता है, उतना अमरीकी इन पर नहीं देते; किन्तु वे नारियों के प्रति जो व्यवहार करते हैं, उससे सदा यह अर्थ निकलता है कि वे उन्हें पुण्यशालिनी एवं परिष्कृत समझते हैं और नारी की नैतिक स्वतंत्रता का इतना अधिक सम्मान किया जाता है कि नारी की उपस्थिति में अत्यंत संयमित भाषा का प्रयोग किया जाता है, जिससे कोई बात उसके कानों को अप्रिय न लगे। अमरीका में कोई अविवाहित युवती अकेले और बिना भय के लम्बी यात्रा कर सकती है।

संयुक्त-राज्य अमरीका के विधि-निर्माता, जिन्होंने अपराध विषयक कानून के प्रायः समस्त दण्डों में कमी कर दी है, अब भी बलात्कार को एक भीषण अपराध मानते हैं और जनमत इस अपराध के लिए जितना निर्मम दण्ड देता है, उससे अधिक निर्मम कठोरता वह किसी अपराध के लिए नहीं दिखाता। इसका कारण जानना सरल है। चूंकि अमरीकी नारी की प्रतिष्ठा से अधिक मूल्यवान किसी वस्तु को नहीं समझते और किसी वस्तु को उसकी स्वतंत्रता से अधिक सम्माननीय नहीं मानते, इसलिए वे मानते हैं कि जो व्यक्ति नारी को उसकी इच्छा के विरुद्ध उसकी स्वतंत्रता एवं प्रतिष्ठा से वंचित करता है, उसके लिए कोई भी दण्ड अत्यन्त कठोर नहीं कहा जा सकता। फ्रांस में, जहां इसी अपराध के लिए बहुत नरम दण्ड दिया जाता है, बहुधा कैदी के विरुद्ध न्याय सभ्यों से निर्णय प्राप्त करना कठिन होता है। क्या यह शालीनता के प्रति घृणा का परिणाम है अथवा नारियों के प्रति घृणा का परिणाम है? मैं यह विश्वास किये बिना नहीं रह सकता कि यह दोनों के प्रति घृणा का परिणाम है।

इस प्रकार अमरीकी यह नहीं सोचते कि पुरुष और नारी का कर्तव्य अथवा अधिकार एक ही कार्य करने का है, किन्तु वे दोनों के कार्यों को समान सम्मान की दृष्टि से देखते हैं और यद्यपि उनके भाग्य भिन्न भिन्न होते हैं तथापि वे

पुरुष और नारी को समान मूल्य के प्राणी समझते हैं। वे नारी के साहस को वही स्वरूप अथवा दिशा नहीं प्रदान करते, जो पुरुष के साहस को; किन्तु वे उसके साहस में कभी सदेह नहीं करते और यदि वे यह नहीं मानते कि पुरुष और उसकी सहचरी को एक ही रीति से अपनी प्रतिभा और बुद्धि का प्रयोग करना चाहिए, तो कम-से कम वे यह विश्वास करते हैं कि नारी की बुद्धि भी उतनी ही ठोस होती है, जितनी पुरुष की और उसकी प्रतिभा भी उतनी ही स्पष्ट होती है। अतः इस प्रकार जबकि उन्होंने नारी की सामाजिक लघुता को कायम रहने दिया है, उन्होंने उसे नैतिक और बौद्धिक दृष्टि से पुरुष के स्तर पर लाने के लिए अपनी शक्ति भर सब कुछ किया है और मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इस सम्बन्ध में उन्होंने प्रजातांत्रिक सुधार के वास्तविक सिद्धान्त को सर्वोत्तम रूप से समझा है।

जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, मुझे यह कहने में तनिक भी संकोच नहीं है कि यद्यपि अमरीकी महिलाएँ घरेलू जीवन के संकीर्ण वृत्त में सीमित हैं तथा कतिपय बातों में उनकी स्थिति चरम पराधीनता की स्थिति है, तथापि इससे उच्चतर स्थिति की नारी मैंने अन्यत्र कहीं नहीं देखी है और अब जब कि मैं इस पुस्तक के अन्त के निकट पहुँच रहा हूँ, जिसमें मैंने अमरीकियों द्वारा किये गये अनेक महत्वपूर्ण कार्यों का उल्लेख किया है, तब यदि मुझसे पूछा जाय कि अमरीकियों की महान समृद्धि और बढ़ती हुई शक्ति का कारण क्या है, तो मेरा उत्तर होगा—अमरीकी नारियों की श्रेष्ठता।

४२. किस प्रकार समानता का सिद्धान्त स्वभावतः अमरीकियों को छोटे-छोटे निजी क्षेत्रों में विभक्त करता है

यह कल्पना की जा सकती है कि प्रजातांत्रिक संस्थाओं का अन्तिम और आवश्यक परिणाम यह होगा कि निजी तथा सार्वजनिक जीवन में भी समुदाय के सदस्य इस प्रकार एक में घुलमिल जायेंगे कि उन्हें पहचाना नहीं जा सकता तथा वे सभी एक ही प्रकार का जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य होंगे; किन्तु यह प्रजातंत्र में उत्पन्न होने वाली समानता को अत्यन्त अपरिष्कृत एवं दमनात्मक रूप प्रदान करने के तुल्य होगा। कोई भी सामाजिक स्थिति और कानून

मनुष्यों को इतने समान नहीं बना सकते; किन्तु शिक्षा, सम्पत्ति और अभिरुचियाँ उनके मध्य कुछ अन्तर ला देगी और यद्यपि विभिन्न मनुष्य कभी कभी एक ही कार्य के लिए संयुक्त होना अपने लिए हितकारी समझ सकते हैं, तथापि वे इसे कभी अपने आनन्द का विषय नहीं बनायेंगे। अतएव वे सदा कानून के प्रावधानों से, चाहे वे कुछ भी हों, बचने का प्रयत्न करेंगे और विधायक उन्हें जिस सीमा में आबद्ध करने का प्रयास करते हैं, उससे किसी न-किसी मामले में बचकर वे महान राजनीतिक समुदाय के समीप ऐसे छोटे छोटे निजी समाजों की स्थापना करेंगे, जो स्थितियों, आदतों और व्यवहारों की एक-रूपता द्वारा संयुक्त होंगे।

अमरीका में नागरिक एक दूसरे से किसी प्रकार श्रेष्ठ नहीं होते, एक दूसरे की आज्ञा का पालन करने अथवा एक दूसरे के प्रति सम्मान करने के लिए वे बाध्य नहीं होते; वे सभी न्याय प्रशासन, राज्य के शासन और सामान्यतः उनके सामान्य कल्याण से सम्बन्धित प्रश्नों पर विचार करने के लिए मिलते हैं; किन्तु मैंने ऐसा कभी नहीं सुना कि उन सब को एक ही प्रकार का मनोरंजन करने के लिए प्रेरित करने तथा अविवेकपूर्ण ढंग से एक ही प्रकार के मनोरंजन-स्थलों पर एकत्र करने के प्रयास किये गये हैं।

अपनी राजनीतिक सभाओं और न्यायालयों में इतनी तत्परता से मिलनेवाले अमरीकियों में सावधानीपूर्वक छोटे छोटे स्पष्ट वर्गों में विभक्त हो जाने की प्रवृत्ति होती है, जिससे वे निजी जीवन के आनन्दों का अकेले उपभोग कर सकें। उनमें से प्रत्येक अपने समस्त सह-नागरिकों को स्वेच्छापूर्वक अपने समान स्वीकार करता है, किन्तु वह उनमें से बहुत कम को मित्र अथवा अतिथि के रूप में स्वीकार करेगा। मुझे यह बात अत्यन्त स्वाभाविक प्रतीत होती है। इस बात की पूर्व कल्पना की जा सकती है कि जिस अनुपात में सार्वजनिक समाज के क्षेत्र का विस्तार किया जायगा, उसी अनुपात में निजी सम्पर्क का क्षेत्र संकुचित हो जायगा। यह सोचना तो बहुत दूर रहा कि अन्ततोगत्वा आधुनिक समाज के सदस्य एक ही भाँति का जीवन व्यतीत करेंगे, मुझे इस बात की आशंका है कि अन्त में वे छोटे छोटे समूहों का निर्माण करेंगे।

कुलीनतान्त्रिक राष्ट्रों में विभिन्न वर्ग विशाल घरों के तुल्य होते हैं, जिनसे बाहर निकल सकना तथा जिनमें प्रवेश करना असम्भव है। इन वर्गों का एक दूसरे से कोई सम्पर्क नहीं होता; किन्तु उनके अन्तर्गत मनुष्यों का सम्पर्क प्रति दिन आवश्यक रूप से होता रहता है। यदि वे स्वाभाविक रूप से उपयुक्त

न हों, तो भी एक ही प्रकार की स्थिति की सामान्य एकरूपता उन्हें एक दूसरे के निकट लाती है।

किन्तु जब न तो कानून और न प्रथा कतिपय व्यक्तियों के मध्य अक्सर और स्वभावगत सम्बन्धों की स्थापना करते हैं, तब उनका सम्पर्क विचारों और रुचियों की आकस्मिक एकरूपता से उत्पन्न होता है; अतः निजी समाज में अत्यधिक अन्तर होता है। प्रजातंत्रों में, जहाँ समाज के सदस्यों में कभी अधिक अन्तर नहीं होता और वे स्वभावतः इतने निकट होते हैं कि किसी भी समय उन सभी को एक सामान्य समूह में मिश्रित किया जा सकता है, अनेक कृत्रिम और मनमाने विभेद उत्पन्न हो जाते हैं, जिनके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति अपने को पृथक् रखने की आशा रखता है, जिससे वह अपनी इच्छा के विरुद्ध भीड़ में न बह जाय।

ऐसी स्थिति सदा बनी रहेगी; क्योंकि मानवीय संस्थाओं में परिवर्तन किया जा सकता है, किन्तु मनुष्य में नहीं। समुदाय अपने सदस्यों को समान एवं एकरूप बनाने के लिए चाहे जो भी सामान्य प्रयास करे, व्यक्तियों का व्यक्तिगत अभिमान सदा पंक्ति से ऊपर उठने तथा उन्हें निजी लाभ के लिए कहीं एक असमता का निर्माण करने का प्रयत्न करेगा।

कुलीनतंत्रों में उच्च अटल दीवारें मनुष्यों को एक दूसरे से पृथक् रखती हैं, प्रजातंत्रों में अनेक छोटे छोटे और प्रायः अदृश्य सूत्र, जो निरन्तर टूटते रहते हैं, उन्हें विभक्त करते हैं। इस प्रकार समानता की चाहे जो भी प्रगति हो, प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में राजनीतिक समाज की सामान्य सीमा के अन्तर्गत छोटे-छोटे निजी संघों का भारी संख्या में निर्माण सदा होता रहेगा, किन्तु उनमें से कोई भी कुलीन-तंत्रों के उच्चतर वर्गों के व्यवहारों से तनिक भी मिलता-जुलता नहीं रहेगा।

४३. अमरीकी व्यवहारों के विषय में कतिपय विचार

प्रथम दृष्टि में मानवीय कार्यों के बाह्य स्वरूप से कम महत्वपूर्ण वस्तु कुछ भी नहीं दिखायी देती, फिर भी कोई वस्तु ऐसी नहीं है, जिसे मनुष्य इसने अधिक महत्व प्रदान करते हों। एक ऐसे समाज में, जिसके व्यवहार उनके निजी व्यवहारों के समान न हों, रहने के अतिरिक्त वे प्रत्येक वस्तु के अभ्यस्त बन

जाते हैं। अतः व्यवहारों पर किसी देश की सामाजिक एवं राजनीतिक स्थिति के प्रभाव पर गम्भीर विचार करने की आवश्यकता है।

व्यवहार सामान्यतः चरित्र के मूल आधार से उत्पन्न होते हैं, किन्तु कभी-कभी वे कतिपय व्यक्तियों के मध्य मनमाने ढंग से स्थापित परम्परा के भी परिणाम होते हैं, इस प्रकार वे एक साथ ही स्वाभाविक एवं प्राप्त दोनों होते हैं।

जब कतिपय व्यक्ति यह देखते हैं कि वे बिना संघर्ष और बिना प्रयास के समाज में सर्वप्रधान बन गये हैं, जब वे छोटी-छोटी बातों को दूसरों के लिए छोड़ कर निरन्तर महान कार्यों में लगे रहते हैं और जब वे ऐसी सम्पत्ति का आनन्दोपभोग करते हैं, जिसे उन्होंने एकत्र नहीं किया था और जिसके खो जाने का भय नहीं रहता, तब यह कल्पना की जा सकती है कि वे जीवन के क्षुद्र स्वार्थों और व्यावहारिक चिन्ताओं के प्रति एक प्रकार की गर्वपूर्ण घृणा का अनुभव करते हैं और उनके विचारों में एक स्वाभाविक महानता आ जाती है, जो उनकी भाषा और व्यवहारों से प्रकट होती है। प्रजातान्त्रिक देशों के व्यवहारों में सामान्यतः गरिमा नहीं होती; क्योंकि वहाँ निजी जीवन का स्वरूप चरम क्षुद्रतापूर्ण होता है और वे बहुधा निम्न कोटि के होते हैं, क्योंकि मस्तिष्क को घरेलू हितों की चिन्ताओं से ऊपर उठने के सुअवसर बहुत कम उपलब्ध होते हैं।

व्यवहारों की वास्तविक गरिमा सदा इस बात में निहित होती है कि अपनी सही-सही स्थिति को न तो अत्यधिक ऊँची और न अत्यन्त निम्न कोटि की समझा जाय और यह कार्य किसान भी उसी भाँति कर सकता है, जिस भाँति कोई राजकुमार। प्रजातंत्रों में सभी वर्ग सन्देहशील प्रतीत होते हैं, अतः प्रजातंत्रों में व्यवहार यद्यपि बहुधा उद्दण्डतापूर्ण होते हैं, तथापि उन्हें गरिमा का अभाव होता है और इसके अतिरिक्त वे कभी सुप्रशिक्षित अथवा पूर्ण नहीं होते।

प्रजातन्त्रों में रहनेवाले व्यक्ति इतने अधिक अस्थिर होते हैं कि वे वंशानुगत उच्चता की संहिता निर्धारित करने तथा लोगों को उसका अनुगमन करने के लिए बाध्य करने में कभी सफल नहीं हो सकते। अतः प्रत्येक व्यक्ति अपने-अपने ढंग के अनुसार व्यवहार करता है और इस प्रकार के युगों के व्यवहारों में सदा एक प्रकार की असम्बद्धता रहती है; क्योंकि ये व्यवहार सामान्य अनुकरण के लिए प्रस्तावित आदर्श नमूने पर आधारित न होकर प्रत्येक व्यक्ति की धारणाओं और भावनाओं पर आधारित होते हैं। फिर भी, कुलीनतंत्र के

नष्ट किये जाने के दीर्घ काल बाद की अपेक्षा उसका उन्मूलन किये जाने के तत्काल बाद यह बात बहुत अधिक दृष्टिगोचर होती है। तब नयी राजनीतिक संस्थाएँ और नये सामाजिक तत्व उन व्यक्तियों को, जिनकी शिक्षा और आदतों में अभी तक आश्चर्यजनक विषमता पायी जाती है, एक ही स्थान पर लाते हैं और बहुधा उन्हें एक साथ रहने के लिए बाध्य करते हैं और यह बात समाज की विविधतामूलक रचना को विशेष रूप से स्पष्ट बना देती है। बाह्यिक उच्चता की भूतपूर्व कठोर संहिता को अब भी स्मरण किया जाता है, किन्तु इस बात को पहले ही विस्मृत कर दिया जाता है कि इस संहिता में क्या था अथवा वह कहाँ मिल सकती है। मनुष्य व्यवहारों के सामान्य विधान को भूल गये हैं और उन्होंने अभी तक उसके बिना काम चलाने का निर्णय नहीं किया है; किन्तु प्रत्येक व्यक्ति भूतपूर्व प्रथाओं के अवशेष से अपने लिए एक प्रकार का मनमाना एवं परिवर्तनीय नियम बनाने का प्रयत्न करता है जिससे व्यवहारों में न तो वह नियमितता और गरिमा रह गयी है, जो बहुधा कुलीनतांत्रिक राष्ट्रों में दिखायी देती है और न वह सरलता और स्वतंत्रता रह गयी है, जिसे वे कभी-कभी प्रजातंत्रों में ग्रहण कर लेते हैं; वे एक साथ ही संयमित और संयमहीन दोनों हैं।

फिर भी, यह सामान्य स्थिति नहीं है। जब स्थितियों की समानता को स्थापित हुए काफी समय बीत जाता है और वह पूर्णता पर पहुँच जाती है, तब चूँकि सभी मनुष्यों की धारणाएँ लगभग एक ही होती हैं और वे सभी प्रायः एक ही प्रकार के कार्य करते हैं, इसलिए एक ही भाँति बोलने अथवा कार्य करने के लिए उन्हें एक दूसरे से सहमत होने अथवा एक दूसरे का अनुकरण करने की आवश्यकता नहीं होती, उनके व्यवहारों में सदा अनेक छोटी मोटी विविधताएँ पायी जाती हैं, किन्तु कोई महान अन्तर नहीं पाया जाता। वे पूर्ण रूप से समान कभी नहीं होते, क्योंकि वे एक ही पद्धति का अनुकरण नहीं करते; उनमें अत्यधिक असमानता कभी नहीं पायी जाती, क्योंकि उनकी सामाजिक स्थिति एक ही होती है। प्रथम दृष्टि में कोई यात्री यही कहेगा कि समस्त अमरीकियों के व्यवहार एक ही प्रकार के हैं, निकट से परीक्षा करने पर ही उनमें अन्तर लाने वाली विलक्षणताओं का पता लगाया जा सकता है।

अंग्रेज अमरीकियों के व्यवहारों का मजाक उड़ाते हैं, किन्तु यह बात महत्व-पूर्ण है कि जिन लेखकों ने ये उपहासपूर्ण वर्णन किये हैं, उनमें से अधिकांश इंग्लैंड के मध्यम वर्गों के थे, जिनके सम्बन्ध में ये ही वर्णन अत्यधिक लागू हो

सकते हैं, जिससे ये निर्मम निन्दक अधिकांश उसी बात का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं, जिस बात की निन्दा वे अमरीका में करते हैं; वे इस बात को नहीं देखते कि वे स्वयं अपना ही उपहास कर रहे हैं, जिस पर स्वयं उनके देश के कुलीनतंत्र को हँसी आती है।

प्रजातंत्र के लिए उसके व्यवहार के बाह्य स्वरूपों से बढ़कर हानिकारक वस्तु कोई नहीं है। अनेक व्यक्ति उसकी बुराइयों को स्वेच्छापूर्वक सहन कर लेंगे, किन्तु वे उसके व्यवहारों का समर्थन कर नहीं सकते। फिर भी मैं इस बात को स्वीकार नहीं कर सकता कि प्रजातान्त्रिक व्यक्तियों के व्यवहारों में कोई प्रशंसनीय बात होती ही नहीं।

कुलीनतान्त्रिक राष्ट्रों में समाज की सर्वोच्च श्रेणी की पहुँच के अन्तर्गत रहनेवाले समस्त व्यक्ति सामान्य रूप से उसके समान बनने का प्रयत्न करते हैं, जो उपहासास्पद और नीरस सीमाओं की सृष्टि करता है। चूंकि प्रजातान्त्रिक व्यक्तियों के पास वाह्यिक उच्चता का कोई आदर्श नहीं होता, इसलिए वे कम-से-कम अपनी दयनीय अनुकृतियों को देखने की दैनिक आवश्यकता से बच जाते हैं। प्रजातंत्रों में कभी कुलीनतान्त्रिक राष्ट्रों की भाँति परिष्कृत व्यवहार नहीं होते, किन्तु दूसरी ओर वे इतने अपरिष्कृत भी कभी नहीं होते। वहाँ न तो जनता की गालियाँ और न अभिजातों की ललित एवं चुनी हुई अभिव्यक्तियाँ सुनने को मिलती हैं। इस प्रकार के लोगों के व्यवहार बहुधा अश्लील होते हैं, किन्तु वे न तो पाशविक होते हैं और न नीचतापूर्ण।

मैं पहले ही कह चुका हूँ कि प्रजातंत्रों में वाह्यिक उच्चता की नियमित संहिता जैसी कोई चीज नहीं निश्चित की जा सकती। इससे कुछ असुविधाएँ भी होती हैं और कुछ लाभ भी होते हैं। कुलीनतंत्रों में औचित्य के नियम प्रत्येक व्यक्ति को एक ही प्रकार का व्यवहार करने के लिए बाध्य करते हैं; वे एक ही वर्ग के समस्त सदस्यों को उनकी निजी प्रवृत्तियों के बावजूद एक ही समान दिखायी देने के लिए बाध्य करते हैं; वे प्राकृतिक मनुष्य को सजाते और छिपाते हैं। प्रजातान्त्रिक व्यक्तियों के मध्य व्यवहार न तो इतने निश्चित होते हैं और न इतने एकरूप होते हैं, किन्तु वे बहुधा अधिक हार्दिक होते हैं। यह कहा जा सकता है कि वे एक हल्के और ढीले पर्दे के समान होते हैं, जिनके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति की वास्तविक भावनाओं और निजी विचारों को सरलतापूर्वक देखा जा सकता है। अतः वहाँ माननीय कार्यों के स्वरूप और सार में घनिष्ठतर सम्बन्ध होता है और यदि मानव जीवन का महान चित्र कम

सुसज्जित होता है, तो उसमें सत्य भी अधिक होता है। इस प्रकार एक अर्थ में यह कहा जा सकता है कि प्रजातंत्र मनुष्यों को किसी विशेष प्रकार के व्यवहार नहीं प्रदान करता, प्रत्युत उन्हें किसी भी प्रकार का व्यवहार रखने से रोकता है।

कभी-कभी प्रजातन्त्र में कुलीनतंत्र की भावनाएँ, आवेश, अच्छाइयाँ और बुराइयाँ पुनः प्रकट हो सकती हैं, किन्तु उसके व्यवहार पुनः प्रकट नहीं हो सकते। ज्यों ही प्रजातांत्रिक क्रान्ति पूर्ण हो जाती है त्यों ही वे सदा के लिए विलुप्त एवं समाप्त हो जाते हैं। ऐसा प्रतीत होगा कि कुलीनतांत्रिक वर्ग के व्यवहारों से अधिक स्थायी वस्तु कोई नहीं होती, क्योंकि वह वर्ग अपनी सम्पत्ति और अधिकार के खो जाने पर भी कुछ समय तक उनकी रक्षा करता है—न कोई वस्तु इतनी क्षणिक ही होती है, क्योंकि ज्यों ही उनका लोप होता है, त्यों ही उनका नामोनिशान मिट जाता है और उनका अस्तित्व समाप्त होते ही यह कहना असम्भव हो जाता है कि वे क्या थीं। सामाजिक स्थिति में परिवर्तन यह चमत्कारपूर्ण कार्य करता है कि और कुछ ही पीढ़ियाँ इसे पूर्णता तक पहुँचाने के लिए पर्याप्त होती हैं। कुलीनतंत्र के नष्ट हो जाने के बाद उसकी प्रमुख विशेषताओं का ज्ञान इतिहास द्वारा भावी पीढ़ियों को प्रदान किया जाता है, किन्तु उसके व्यवहारों के कोमल एवं सुखद स्पर्श उसके पतन के प्रायः तत्काल बाद मनुष्यों की स्मृति से विलुप्त हो जाते हैं। जब मनुष्य इन व्यवहारों को नहीं देखते, तब वे इस बात की कल्पना भी नहीं कर सकते कि ये व्यवहार क्या थे; वे चले गये हैं और उनके प्रस्थान को न किसी ने देखा, न अनुभव किया, क्योंकि उत्कृष्ट एवं विशिष्ट व्यवहारों से उत्पन्न होनेवाले परिष्कृत आनन्द का अनुभव करने के लिए आदत और शिक्षा द्वारा हृदय का तैयार किया जाना आवश्यक होता है और उन व्यवहारों का अभ्यास जितनी सरलता से समाप्त हो जाता है, उतनी ही सरलता से उनके प्रति अभिरुचि भी समाप्त हो जाती है। इस प्रकार न केवल प्रजातांत्रिक व्यक्तियों का व्यवहार कुलीनतांत्रिक में नहीं हो सकता, प्रत्युत वे उन्हें न तो समझते हैं और न उनकी आकांक्षा करते हैं और चूँकि उन्होंने उसके विषय में कभी विचार नहीं किया है, इसलिए वे सोचते हैं कि इस प्रकार की वस्तुएँ का कभी अस्तित्व ही नहीं रहा। इस क्षति को बहुत अधिक महत्त्व नहीं दिया जाना चाहिए, किन्तु इस पर दुःख किया जा सकता है।

मैं इस बात से अवगत हूँ कि बहुधा ऐसा हुआ है कि जिन व्यक्तियों ने अत्यन्त उच्च कोटि के व्यवहार का प्रदर्शन किया है, उन्हीं व्यक्तियों ने अत्यन्त

निम्न कोटि की भावनाओं का भी प्रदर्शन किया है। न्यायालयों के बाह्य स्वरूप ने पर्याप्त रूप से सिद्ध कर दिया है कि बाहरी भव्य आकृतियों के नीचे नीचतम हृदय छिपे रहते हैं, किन्तु यद्यपि कुलीनतत्र के व्यवहार पुण्य के परिचायक नहीं होते, तथापि वे कभी कभी स्वय पुण्य को भी सुन्दर बना देते हैं। ऐसे मनुष्यों के इतनी अधिक सख्या में एक शक्तिशाली वर्ग को देखना कोई साधारण दृश्य नहीं था, जिनका प्रत्येक बाहरी कार्य विचार और भावना की स्वाभाविक उच्चता से, रुचि की कोमलता और नियमितता से तथा व्यवहारों की परिष्कृति से निरन्तर प्रेरित प्रतीत होता था। वे व्यवहार मानव-प्रकृति को एक सुखद भ्रान्तिमूलक आकर्षण प्रदान करते थे और यद्यपि चित्र बहुधा मिथ्या होता था, तथापि उसे देखकर एक पावन सतोष होता था।

४४. अमरीकियों का राष्ट्रीय अहंकार अंग्रेजों की अपेक्षा अधिक अशान्त एवं भावनाप्रधान क्यों है?

समस्त स्वतंत्र राष्ट्र अहंकारी होते हैं, किन्तु वे सभी अपने राष्ट्रीय अहंकार का प्रदर्शन एक ही प्रकार से नहीं करते। अपरिचितों के साथ बातचीत करते समय अमरीकी छोटी-से छोटी आलोचना के प्रति भी असहिष्णु प्रतीत होते हैं; उनमें प्रशसा की अदम्य तृष्णा दिखायी देती है। छोटी-से-छोटी प्रशंसा भी उन्हें स्वीकार्य होती है, बड़ी से-बड़ी प्रशस्ति भी उन्हें कम ही सन्तुष्ट कर पाती है। वे प्रशंसा प्राप्त करने के लिए आपको निरन्तर परेशान करते रहते हैं और यदि आप उनके अनुरोधों का प्रतिवाद करते हैं, तो वे अपनी प्रशसा स्वय करने लगते हैं। ऐसा प्रतीत होगा, मानो उन्हें अपने गुण में स्वय सन्देह है और वे चाहते है कि उनकी आँखों के सामने उसका निरन्तर प्रदर्शन होता रहे। उनका अहंकार न केवल लोभी, प्रत्युत अशान्त और ईर्ष्यालु भी होता है; वह देगा कुछ भी नहीं, जबकि वह माँग सब कुछ की करता है; किन्तु वह एक ही समय माँगने और झगड़ा करने, दोनों के लिए तैयार रहता है।

यदि मैं किसी अमरीकी से कहूँ कि उसका देश सुन्दर है, तो वह उत्तर देगा—"हाँ, इसके समान सुन्दर देश विश्व में दूसरा कोई नहीं है।" यदि मैं उसके देशवासियों को प्राप्त स्वतन्त्रता की सराहना करता हूँ, तो वह उत्तर देता है—

"स्वतंत्रता एक सुन्दर वस्तु है, किन्तु उसका उपभोग करने की योग्यता कम राष्ट्रों में ही है।" यदि मैं अमरीका को विशिष्टता प्रदान करने वाली नैतिक शुद्धता का उल्लेख करता हूँ, तो वह कहता है—"मैं इस बात की कल्पना कर सकता हूँ कि एक नवागन्तुक, जो अन्य राष्ट्रों में व्याप्त भ्रष्टाचार को देख चुका है, इस अन्तर पर आश्चर्य प्रकट किये बिना नहीं रहेगा।" अन्त में मैं उसे स्वयं अपने विषय में कल्पनाएँ करने के लिए छोड़ देता हूँ, किन्तु वह शीघ्र ही वापस आ जाता है और तब तक नहीं रुकता, जब तक मैं उन्हीं बातों को दुहराने नहीं लगता, जिन्हें मैं अब तक कहता रहा हूँ। इससे अधिक कष्टदायक और बातुल देशभक्ति की कल्पना करना असम्भव है। यह उन लोगों को भी परिक्लान्त कर देती है, जो इसका सम्मान करते हैं।

अंग्रेजों के सम्बन्ध में यह बात नहीं है। एक अंग्रेज शान्तिपूर्वक उन वास्तविक अथवा काल्पनिक लाभों का आनन्द लेता है, जो उसके मतानुसार उसके देश को उपलब्ध है। यदि वह अन्य राष्ट्रों को कुछ नहीं प्रदान करता, तो वह अपने देश के लिए कुछ मांगता भी नहीं। विदेशियों की निन्दा उसे प्रभावित नहीं करती और उनकी प्रशंसा उसे मुश्किल से प्रसन्न कर पाती है। शेष विश्व के सम्बन्ध में उसका दृष्टिकोण घृणापूर्ण एवं अज्ञानपूर्ण संयम का होता है: उसके अहंकार को किसी सहारे की आवश्यकता नहीं होती; वह अपना पोषण स्वयं करता है। यह महत्वपूर्ण बात है कि इतने हाल में एक ही मूल से उत्पन्न हुए दो राष्ट्रों की भावनाएँ और वार्तालाप की पद्धति एक दूसरे से इतनी विपरीत हैं।

कुलीनतांत्रिक देशों में बड़े लोगों को व्यापक विशेषाधिकार प्राप्त होते हैं। उनका अहंकार इन्हीं विशेषाधिकारों पर आश्रित होता है और उन्हें जो क्षुद्रतर सुविधाएँ प्राप्त होती हैं, उनका सहारा लेने का प्रयास वे नहीं करते। चूंकि ये विशेषाधिकार उन्हें उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त होते हैं, इसलिए वे इन्हें एक प्रकार से अपना ही भाग अथवा कम-से-कम स्वयं में अन्तर्निहित एक प्राकृतिक अधिकार मानते हैं। अतः वे अपनी निजी श्रेष्ठता के सम्बन्ध में एक शान्त भावना रखते हैं; वे विशेषाधिकारों का प्रदर्शन करने की कल्पना नहीं करते, जिन्हें प्रत्येक व्यक्ति देखता है और जिनके सम्बन्ध में कोई भी व्यक्ति विवाद नहीं करता और इन वस्तुओं में इतनी पर्याप्त नवीनता नहीं होती कि इन्हें वार्तालाप का विषय बनाया जा सके। वे अपनी विशिष्ट महत्ता में अटल रहते हैं और इस बात से अच्छी तरह आश्वस्त रहते हैं कि सारा संसार उन्हें बिना

प्रभाव के देखता है, जिससे उन्हें अपना प्रदर्शन करने की आवश्यकता नहीं होती तथा कोई भी व्यक्ति उन्हें उस स्थिति से हटाने का प्रयत्न नहीं करेगा। जब कोई कुलीनतंत्र सार्वजनिक कार्यों का संचालन करता है, तब उसका राष्ट्रीय अहंकार स्वभावतः यह संयमित, उदासीनता पूर्ण एवं उदण्डतापूर्ण स्वरूप ग्रहण कर लेता है, जिसका अनुकरण राष्ट्र के अन्य समस्त वर्ग करते हैं।

इसके विपरीत जब सामाजिक स्थितियों में तनिक भी अन्तर नहीं होता, तब तुच्छतम विशेषाधिकारों का भी कुछ महत्त्व होता है; चूँकि प्रत्येक व्यक्ति अपने चारों ओर लाखों व्यक्तियों को अपने समान ही सुविधाओं का उपयोग करते हुए देखता है, इसलिए उसका दर्प लोभी और ईर्ष्यालु बन जाता है, वह तुच्छ वस्तुओं से लिपट जाता है और हठपूर्वक उनका बचाव करता है। चूंकि प्रजातन्त्रों में जीवन की स्थितियाँ अत्यन्त अनिश्चित होती हैं, इसलिए मनुष्यों को जो सुविधाएँ उपलब्ध होती हैं, वे लगभग सदा ही कुछ ही समय पूर्व प्राप्त की गयी होती हैं। इसका परिणाम यह होता है कि इन सुविधाओं का प्रदर्शन करने में, दूसरों को यह दिखाने तथा स्वयं अपने को यह विश्वास दिलाने में कि वे वास्तव में इन सुविधाओं का आनन्द ले रहे हैं, मनुष्य असीम सुख का अनुभव करते हैं। चूंकि ये सुविधाएँ किसी भी क्षण समाप्त हो सकती हैं, इसलिए उनके स्वामी निरन्तर सतर्क रहते हैं और यह दिखाने का विशेष रूप से ध्यान रखते हैं कि ये सुविधाएं अब भी उनके पास विद्यमान हैं। प्रजातन्त्रों में रहने वाले व्यक्ति अपने देश से उतना ही प्रेम करते हैं, जितना स्वयं अपने से और वे अपने निजी अहंकार की आदतों को अपने राष्ट्रीय अहंकार के रूप में परिणत कर देते हैं।

प्रजातान्त्रिक जनता का अशान्त एवं अदम्य अहंकार इतने पूर्ण रूप से उनकी सामाजिक स्थिति की समानता और अस्थिरता से उत्पन्न होता है कि अत्यन्त अहंकारी उच्च वर्गों के सदस्य अपने जीवन के उन तुच्छतर भागों में, जिनमें कोई भी वस्तु अस्थिर अथवा विवादास्पद होती है, एक ही प्रकार की भावना का प्रदर्शन करते हैं। कुलीनतान्त्रिक अपने विशेषाधिकारों की व्यापकता और स्थायित्व के कारण राष्ट्र के अन्य वर्गों से बहुत अधिक भिन्न होता है, किन्तु ऐसा बहुधा होता है कि कुलीनतान्त्रिक वर्ग के सदस्यों के मध्य जो अन्तर होते हैं, व ऐसी तुच्छ एवं क्षणिक सुविधाओं के सम्बन्ध में होते हैं, जो किसी भी दिन समाप्त हो सकती हैं अथवा प्राप्त की जा सकती हैं। राजधानी अथवा दरबार में

एकत्र शक्तिशाली कुलीनतंत्र के सदस्यों ने उन तुच्छ विशेषाधिकारों के सम्बन्ध में उग्र विवाद किया है, जो फैशन की इच्छा अथवा उनके स्वामी की इच्छा पर निर्भर करते हैं। तब ये व्यक्ति एक दूसरे के प्रति उन्हीं मूर्खतापूर्ण ईर्ष्याओं का प्रदर्शन करते हैं, जो प्रजातान्त्रिक मनुष्यों को प्रेरित करती हैं, तब वे उन तुच्छतम सुविधाओं को, जिनके लिए उनके समकक्ष व्यक्ति विवाद करते हैं, छीननेकी उसी उत्सुकता का और जो सुविधाएँ उनके अधिकार में रहती हैं, उन्हें आडम्बर के साथ दिखाने की उसी इच्छा का प्रदर्शन करते हैं। मुझे इस बात में सन्देह नहीं है कि यदि कभी राष्ट्रीय अहंकार दरबारियों के मस्तिष्क में प्रवेश कर गया, तो वे प्रजातांत्रिक समाज के सदस्यों की भाँति ही उसका प्रदर्शन करेंगे।

४५. अमरीका में समाज का पहलू एक साथ ही गतिशील और अपरिवर्तनशील कैसे है?

ऐसा प्रतीत होगा कि उत्सुकता को जाग्रत एवं तृप्त करने के लिए संयुक्त राज्य अमरीका के पहलू से अधिक उपयुक्त वस्तु दूसरी नहीं हो सकती। वहाँ सम्पत्तियों, विचारों और कानूनों में निरन्तर परिवर्तन होते रहते हैं। मनुष्य के हाथों से प्रकृति में इस प्रकार के परिवर्तन किये जाते हैं कि प्रतीत होता है, मानों अपरिवर्तनीय प्रकृति स्वयं परिवर्तनशील हो। फिर भी अन्त में इस गतिशील समुदाय का दृश्य अपरिवर्तनशील बन जाता है और कुछ समय तक इस गतिशील दृश्य को देखने के पश्चात् दर्शक उससे ऊब जाता है।

कुलीनतांत्रिक राष्ट्रों में प्रत्येक व्यक्ति अपने निजी क्षेत्र में लगभग स्थिर होता है, किन्तु मनुष्य आश्चर्यजनक रूप से एक दूसरे से भिन्न होते हैं—उनकी भावनाएँ, उनकी धारणाएँ, उनकी आदतें और उनकी रुचियाँ आवश्यक रूप से भिन्न-भिन्न होती हैं, किसी भी वस्तु में परिवर्तन नहीं होता, किन्तु प्रत्येक वस्तु भिन्न होती है। इसके विपरीत प्रजातन्त्र में सभी व्यक्ति समान होते हैं, और लगभग समान ही कार्य करते हैं। यह सच है कि उनमें महान और बहुधा परिवर्तन होते रहते हैं। किन्तु चूँकि अनुकूल अथवा प्रतिकूल भाग्य की एक ही प्रकार की घटना की निरन्तर पुनरावृत्ति होती रहती है, इसलिए अभिनेताओं के नाम मात्र बदल जाते हैं, नाटक सदा एक ही रहता है। अमरीकी समाज का पहलू

अनुप्राणित है क्योंकि मनुष्यों और वस्तुओं में सदा परिवर्तन होता रहता है, किन्तु वह अपरिवर्तनशील है, क्योंकि ये सभी परिवर्तन समान प्रकार के होते हैं।

प्रजातांत्रिक युगों में रहने वाले व्यक्तियों की अनेक भावनाएँ होती हैं, किन्तु उनकी अधिकांश भावनाओं का अन्त या तो सम्पत्ति-प्रेम के रूप में होता है अथवा वे सम्पत्ति-प्रेम से उत्पन्न होती हैं। इसका कारण यह नहीं है कि उनकी आत्माएँ सकीर्णतर होती हैं, अपितु इसका कारण यह है कि ऐसे समयों में धन का महत्त्व वास्तव में अधिक होता है। जब समुदाय के समस्त सदस्य एक दूसरे से स्वतंत्र अथवा एक दूसरे के प्रति उदासीन होते हैं, तब मूल्य चुकाने पर भी उनमें से प्रत्येक का सहयोग प्राप्त किया जा सकता है। इससे इन उद्देश्यों की संख्या अत्यधिक बढ़ जाती है, जिनके लिए सम्पत्ति का उपयोग किया जा सकता है और सम्पत्ति का मूल्य बढ़ जाता है। जब प्राचीनता के प्रति श्रद्धा का लोप हो जाता है, तब वंश, स्थिति और पेशे के आधार पर मनुष्यों के मध्य भेद नहीं किया जाता अथवा बहुत कम भेद किया जाता है। तब मनुष्यों के मध्य स्पष्ट अन्तरों की सृष्टि करने के लिए और उनमें से कुछ को सामान्य स्तर से ऊपर उठाने के लिए मुश्किल से धन के अतिरिक्त अन्य कोई वस्तु बच रहती है। अन्य समस्त विभेदों के लुप्त हो जाने अथवा न्यून हो जाने के कारण सम्पत्ति से उत्पन्न होने वाला विभेद बढ़ जाता है। कुलीनतांत्रिक राष्ट्रों में धन मनुष्य की आकांक्षाओं के विशाल क्षेत्र के कुछ भागों तक ही पहुँच पाता है। प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में वह सर्वत्र पहुँचता हुआ प्रतीत होता है।

अतः अमरीकियों द्वारा किये जाने वाले समस्त कार्यों के मूल में मुख्य अथवा सहायक उद्देश्य के रूप में सम्पत्ति प्रेम को देखा जा सकता है। यह उनकी समस्त भावनाओं को एक प्रकार की पारिवारिक एकरूपता प्रदान करता है और शीघ्र ही उनके सर्वेक्षण को अत्यन्त थका देने वाला कार्य बना देता है। एक ही भावना की वह शाश्वत पुनरावृत्ति नीरस होती है, जिन विलक्षण तरीकों से यह भावना अपनी परितुष्टि करने का प्रयत्न करती है, वे तरीके भी कम नीरस नहीं होते।

संयुक्त राज्य अमरीका जैसे व्यवस्थित और शांतिप्रिय प्रजातंत्र में, जहां मनुष्य युद्ध, सार्वजनिक पद अथवा राजनीतिक सम्पत्ति-हरण द्वारा धनी नहीं बन सकते, सम्पत्ति-प्रेम उन्हें मुख्यतः व्यवसाय और उद्योग की ओर आकृष्ट करता है। यद्यपि इन उद्योगों के परिणामस्वरूप बहुधा महान अशान्तियाँ उत्पन्न होती हैं, तथापि ये अत्यन्त नियमित आदतों और छोटे-छोटे एक-रूप कार्यों के एक दीर्घ क्रम के बिना समृद्ध नहीं बन सकते। भावना जितनी ही अधिक प्रधान होती है, ये

आदतें उतनी ही अधिक नियमित होती हैं और ये कार्य उतने ही अधिक एक-रूप होते हैं। यह कहा जा सकता है कि अमरीकियों की इच्छाओं की उग्रता ही उन्हें इतना अधिक नियमित बनाती है; यह उनके मस्तिष्क में अशान्ति उत्पन्न करती है, किन्तु उनके जीवन को अनुशासित बनाती है।

यहाँ मैं अमरीका के लिए जो बात कह रहा हूँ, वह निश्चय ही प्रायः हमारे समस्त समकालीनों के सम्बन्धों में कही जा सकती है। मानव-जाति से विविधता का लोप हो रहा है, समस्त विश्व में एक ही प्रकार की कार्यप्रणाली, विचारप्रणाली और भावना के दर्शन होते हैं। इसका कारण केवल यह नहीं है कि राष्ट्र अधिकाधिक एक-दूसरे के समान कार्य करते हैं और अधिक निष्ठा के साथ एक-दूसरे का अनुकरण करते हैं, अपितु इसका कारण यह है कि जब प्रत्येक देश के मनुष्य जाति, पेशे और परिवार के विलक्षण विचारों और भावनाओं का अधिकाधिक परित्याग करने लगते हैं, तब वे एक साथ ही एक ऐसी स्थिति में पहुँच जाते हैं, जो मनुष्य की रचना के, जो सर्वत्र एक ही प्रकार की होती है, निकटतर होती है। इस प्रकार वे एक दूसरे का अनुकरण किये बिना भी अधिक सदृश हो जाते हैं। एक विस्तृत वन में, जिसमें एक ही स्थान की ओर जाने वाले अनेक मार्ग हों, फैले हुए यात्रियों की भाँति यदि वे सभी अपनी दृष्टियों को उस स्थान पर लगाये रहें और उसकी ओर अग्रसर हों, तो वे अनजाने ही एक दूसरे के निकटतर आते हैं, यद्यपि वे एक दूसरे को खोजते नहीं, देखते नहीं और जानते नहीं, और अन्त में वे अपने को एक ही स्थान पर देखकर आश्चर्य चकित हो जायगे। वे समस्त राष्ट्र जो किसी व्यक्ति विशेष को नहीं अपितु स्वयं मनुष्य को अपने अनुसन्धानों और अनुकरणों का उद्देश्य बनाते हैं, वन के मध्यवर्ती भाग की ओर अग्रसर होने वाले इन यात्रियों की भाँति, अन्त में एक ही प्रकार की समाज-व्यवस्था की ओर उन्मुख हो रहे हैं।

४६. अमरीका में इतने अधिक महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति तथा इतनी कम उच्च महत्त्वाकांक्षाएँ क्यों मिलती हैं ?

अमरीका में किसी यात्री को सर्वप्रथम जो वस्तु आकृष्ट करती है, वह अपनी मूल स्थिति से ऊपर उठने का प्रयत्न करने वाले व्यक्तियों की अगणित संख्या

होती है। और उसे आकृष्ट करने वाली दूसरी वस्तु समाज की सर्वव्यापिनी महत्त्वाकांक्षापूर्ण गतिशीलता के मध्य परिलक्षित होने वाली उच्च महत्त्वाकांक्षा की दुर्लभता होती है। किसी भी अमरीकी में उत्थान की इच्छा [redacted] अभाव नहीं होता, किन्तु महान आशाएँ रखने वाला अथवा अत्यन्त उच्च उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रयत्नशील अमरीकी मुश्किल से दिखायी देता है। सम्पत्ति, सत्ता और प्रतिष्ठा की प्राप्ति के लिए सभी निरन्तर प्रयत्नशील रहते हैं, किन्तु थोड़े से व्यक्ति ही बड़े पैमाने पर इन वस्तुओं की कल्पना करते हैं, और यह बात बहुत अधिक आश्चर्यजनक है, क्योंकि अमरीका के व्यवहारों और कानूनों में आकांक्षा को सीमित करने वाली अथवा प्रत्येक दिशा में अपना विस्तार करने से उसे रोकने वाली कोई चीज नहीं दिखायी देती। इस विशिष्ट स्थिति का कारण सामाजिक स्थिति की समानता में ढूढ़ना कठिन प्रतीत होता है, क्योंकि फ्रांस में ज्योंही उस समानता की स्थापना हुई, त्योंही महत्त्वाकांक्षा की उड़ान भी अबाध और असीम हो गयी। फिर भी, मेरा विचार है कि हम इस तथ्य का मुख्य कारण अमरीकियों की सामाजिक स्थिति और प्रजातान्त्रिक व्यवहारों में पा सकते हैं।

सभी क्रान्तियाँ मनुष्यों की महत्त्वाकांक्षाओं का विस्तार करती हैं; कुलीनतंत्र का नाश करने वाली क्रान्तियों के सम्बन्ध में यह बात विशेष रूप से सच है। जनसमूह को प्रसिद्धि और सत्ता से दूर रखने वाली भूतपूर्व दीवारें जब अकस्मात् ढह जाती हैं, तब उस श्रेष्ठता की दिशा में, जिसकी कामना इतने अधिक समय तक की जाती थी और अन्त में जिसे प्राप्त करना है, एक उग्र और सर्वव्यापी अभियान प्रारम्भ होता है। विजय के इस प्रथम उल्लास में किसी के लिए कोई भी वस्तु असम्भव नहीं प्रतीत होती, न केवल आकांक्षाएँ असीम होती हैं, अपितु उन आकांक्षाओं की तृप्ति करने की शक्ति भी प्रायः असीम प्रतीत होती है। कानूनों और प्रथाओं के सामान्य एवं आकस्मिक परिवर्तन के मध्य, समस्त व्यक्तियों और समस्त अध्यादेशों की इस भारी गड़बड़ी में, समाज के विभिन्न सदस्य अत्यधिक तीव्र गति से ऊपर उठते हैं और पुनः नीचे गिर जाते हैं और सत्ता इतनी शीघ्रता से एक हाथ से दूसरे हाथ में जाती है कि किसी को उसे पुनः प्राप्त कर लेने से निराश होने की आवश्यकता नहीं होती।

इसके अतिरिक्त, इस बात को याद रखना आवश्यक है कि जो व्यक्ति कुलीनतंत्र को नष्ट करते हैं, वे उसके कानूनों के अन्तर्गत रह चुके हैं; उन्होंने उसके वैभव को देखा है और अचेतन रूप से उसकी भावनाओं और धारणाओं को ग्रहण किया है। इस प्रकार, जिस क्षण कुलीनतंत्र का विघटन होता है, उस

क्षण भी उसकी आत्मा जन-समुदाय में परिव्याप्त रहती है और उसकी पराजय के बाद बहुत दिनों तक उसकी मनोवृत्तियाँ कायम रहती हैं। अतः जब तक प्रजातांत्रिक क्रान्ति जारी रहती है, तब तक महत्त्वाकांक्षा सदा ही अत्यन्त ऊँची रहती है और क्रान्ति के पूर्ण हो जाने के बाद कुछ समय तक वह ऐसी ही बनी रहेगी।

मनुष्य जिन असाधारण घटनाओं को देखते हैं, उनकी स्मृति एक दिन में ही नहीं समाप्त हो जाती। क्रान्ति जिन भावनाओं को जन्म देती है, वे उसकी समाप्ति के साथ ही विलुप्त नहीं हो जातीं। पुनः स्थापित व्यवस्था के मध्य अस्थायित्व की भावना बनी रहती है। निष्प्रयास सफलता की भावना उसे जन्म देने वाले विचित्र परिवर्तनों के बाद भी कायम रहती है; इच्छाओं की पूर्ति के साधनों में दिन-प्रति-दिन कमी होती रहने के बाद भी वे अत्यन्त व्यापक बनी रहती हैं। यद्यपि बड़ी सम्पत्तियां दुर्लभ होती हैं, तथापि उनके प्रति रुचि कायम रहती है; और हम सभी ओर अनियंत्रित एवं असफल महत्त्वाकांक्षा की, जो हृदयों को गुप्त और निरर्थक रूप से जलाती रहती है, विनाश-लीला को देखते हैं।

फिर भी, अन्त में संघर्ष के अन्तिम अवशेष मिट जाते हैं; कुलीनतंत्र के अवशेष विलुप्त हो जाते हैं; उसके पतन के साथ सम्बद्ध महान घटनाओं के विस्मरण कर दिया जाता है; युद्ध के बाद शांति आती है, और नये शासन में व्यवस्था का आधिपत्य पुनः स्थापित होता है; इच्छाओं को पुनः उन साधनों के उपयुक्त बनाया जाता है, जिनके द्वारा उनकी पूर्ति की जा सकती है; मनुष्यों की आवश्यकताओं, विचारों और भावनाओं में एक बार पुनः सम्बद्धता आ जाती है; समुदाय का स्तर स्थायी रूप से निर्धारित हो जाता है, और प्रजातान्त्रिक समाज की स्थापना हो जाती है।

इस स्थायी और नियमित स्थिति में पहुँचा हुआ प्रजातान्त्रिक राष्ट्र उस राष्ट्र से अत्यन्त भिन्न होगा, जिसका हमने अभी वर्णन किया है, और हम निस्संकोच यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि जब समाज की स्थितियाँ समान हो रही हैं, तब यदि महत्त्वाकांक्षा महान बन जाती है, तो सामाजिक स्थितियों के समान हो जाने पर महत्त्वाकांक्षा अपनी महानता के गुण को खो देती है।

जब सम्पत्ति उपविभाजित हो जाती है और ज्ञान का प्रसार हो जाता है, तब कोई भी व्यक्ति शिक्षा अथवा सम्पत्ति से पूर्णतया वंचित नहीं रहता; जातिगत विशेषाधिकारों और अनर्हताओं के नष्ट हो जाने पर तथा उन बन्धनों

के, जो एक समय मनुष्यों को आबद्ध रखते थे, छिन्न भिन्न हो जाने पर प्रत्येक व्यक्ति के मस्तिष्क में प्रगति की कल्पना उत्पन्न होती है, प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में ऊपर उठने की आकांक्षा बढ़ जाती है और समस्त व्यक्ति अपनी स्थिति से ऊपर उठने की कामना करते हैं; महत्त्वाकांक्षा सार्वजनिक भावना बन जाती है।

किन्तु यदि स्थितियों की समानता समाज के समस्त सदस्यों को कतिपय साधन-स्रोत प्रदान करती है, तो वह उनमें से प्रत्येक को महान साधन स्रोत रखने से रोकती भी है, जिससे उनकी इच्छाएँ कुछ कुछ सकीर्ण सीमाओं के अन्तर्गत आवश्यक रूप से आबद्ध हो जाती हैं। इस प्रकार प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों में महत्त्वाकांक्षा प्रबल एवं गतिमान रहती है; किन्तु उसका लक्ष्य स्वभावतः उच्च नहीं होता, और जीवन सामान्यतः उन छोटे पदार्थों के लिए उत्सुकतापूर्वक कामना करने में व्यतीत होता है, जो पहुँच के अन्तर्गत होते हैं।

प्रजातंत्रों के व्यक्ति मुख्यतः अपनी सम्पत्तियों की न्यूनता के कारण नहीं, *प्रत्युत उनमें सुधार करने के लिए प्रतिदिन किये जाने वाले प्रयासों की* प्रबलता के कारण उच्च महत्त्वाकांक्षा से विमुख हो जाते हैं। वे तुच्छ परिणाम प्राप्त करने के लिए अपनी शक्तियों का अधिकतम उपयोग करते हैं और इसके फलस्वरूप उनका दृष्टिकोण और उनकी शक्ति तीव्र गति से सीमित हुए बिना नहीं रह सकती। वे बहुत अधिक निर्धन होते हुए भी महान हो सकते हैं।

किसी प्रजातन्त्र में अल्पसंख्या में जो समृद्ध नागरिक दिखायी देते हैं, वे इस नियम के अपवाद नहीं होते। शनैः शनैः सम्पत्ति और सत्ता प्राप्त करने वाले व्यक्ति की, उसके दीर्घकालीन श्रम की अवधि में, बुद्धिमत्ता और संयम की ऐसी आदतें बन जाती हैं, जिनका परित्याग वह बाद में नहीं कर सकता। कोई व्यक्ति जिस प्रकार अपने मकान का विस्तार करता है, उसी प्रकार क्रमिक रूप से वह अपने मस्तिष्क का विस्तार नहीं कर सकता।

यही बात इस प्रकार के व्यक्ति के पुत्रों के सम्बन्ध में भी लागू होती है। यह सच है कि उनका जन्म उच्च स्थिति में हुआ है, किन्तु उनके माता-पिता निम्न वर्ग के थे; वे ऐसी भावनाओं और धारणाओं के मध्य बड़े हुए हैं, जिनसे वे बाद में सफलतापूर्वक मुक्ति नहीं पा सकते, और यह कल्पना की जा सकती है कि उन्हें उत्तराधिकार के रूप में उनके पिता की सम्पत्ति के साथ-साथ उसकी मनोवृत्तियाँ भी प्राप्त होंगी।

इसके विपरीत, शक्तिशाली कुलीनतंत्र का निर्धनतम उत्तराधिकारी विशाल

महत्त्वाकांक्षा का प्रदर्शन कर सकता है, क्योंकि उसकी जाति के परम्परागत विचार तथा उसके वर्ग की सामान्य भावना अब भी उसे कुछ समय के लिए उसकी दशा से ऊपर उठा ले जाती है।

प्रजातान्त्रिक युगों के मनुष्यों को उच्च उद्देश्यों की खोज में सरलतापूर्वक लगने से एक दूसरी चीज भी रोकती है। यह चीज वह समय है, जिसके सम्बन्ध में वे सोचते हैं कि उन उच्च उद्देश्यों के निमित्त संघर्ष करने के लिए उनके तैयार होने से पूर्व इतना समय अवश्य व्यतीत हो जायगा। पास्कल ने कहा है—"गुण सम्पन्न होना बड़ी लाभदायक बात है, क्योंकि इससे कोई व्यक्ति अठारह अथवा बीस वर्ष की आयु में ही उतना आगे बढ़ जायगा, जितना कोई दूसरा व्यक्ति पचास वर्ष की आयु में बढ़ेगा और यह तीस वर्षों का स्पष्ट लाभ है।" प्रजातन्त्रों के महत्त्वाकांक्षी व्यक्तियों में इन तीस वर्षों का सामान्यतः अभाव होता है। समानता का सिद्धान्त, जो प्रत्येक व्यक्ति को प्रत्येक वस्तु को प्राप्त करने की अनुमति देता है, समस्त व्यक्तियों को तीव्र प्रगति करने से रोकता है।

प्रजातान्त्रिक समाज में तथा अन्यत्र भी एक निश्चित संख्या में ही महान संपत्तियाँ अर्जित की जा सकती हैं और चूँकि उन संपत्तियों तक ले जाने वाले मार्ग बिना भेदभाव के सभी के लिए उन्मुक्त रहते हैं, इसलिए सभी की प्रगति आवश्यक रूप से शिथिल हो जायगी। चूंकि उम्मीदवार लगभग सदृश प्रतीत होते हैं और चूँकि समानता के सिद्धान्त का, जो प्रजातान्त्रिक समाजों का सर्वोच्च कानून होता है, उल्लंघन किये बिना कोई चुनाव करना कठिन होता है, इसलिए सर्वप्रथम यही विचार उत्पन्न होता है कि सभी एक ही गति से प्रगति करें तथा एक ही प्रकार के कष्ट सहन करें। इस प्रकार जिस अनुपात में मनुष्यों में सादृश्य बढ़ता है और समानता का सिद्धान्त देश की संस्थाओं और व्यवहारों में अधिक शांति और गहराई के साथ प्रवेश करता है, उसी अनुपात में प्रगति के नियम अधिक अपरिवर्तनीय हो जाते हैं; स्वयं प्रगति अधिक मन्द हो जाती है तथा एक निश्चित ऊंचाई पर शीघ्र पहुँचने की कठिनाई बहुत अधिक बढ़ जाती है। विशेषाधिकार के प्रति घृणा और चुनाव करने की परेशानी से सभी व्यक्ति, चाहे वे किसी भी स्तर के हों, एक ही अग्नि परीक्षा से होकर गुजरने के लिए बाध्य हो जाते हैं; सभी को अविवेकपूर्ण ढंग से अनेक छोटे-छोटे प्रारम्भिक अभ्यासों से होकर गुजरने के लिए बाध्य किया जाता है, जिनमें उनका यौवन बर्बाद हो जाता है और उनकी कल्पना बुझ जाती है, जिससे

उन्हें जिस वस्तु की आशा दिलायी जाती है, उसे पूर्ण रूप से प्राप्त करने से वे निराश हो जाते हैं; और अन्त में जब वे कोई असाधारण कार्य करने की स्थिति में होते हैं, तब इस प्रकार के कार्यों के प्रति उनकी रुचि समाप्त हो चुकी होती है।

चीन में जहाँ स्थितियों की समानता अत्यन्त अधिक और अत्यन्त प्राचीन है, कोई भी व्यक्ति प्रतियोगिता-परीक्षा के बिना एक सार्वजनिक पद से दूसरे सार्वजनिक पद पर नहीं पहुँचता। यह परीक्षा उसके जीवन की प्रत्येक अवस्था में नये सिरे से उपस्थित होती है और अब यह धारणा जनता के व्यवहारों में इतनी अधिक बद्धमूल हो चुकी है कि मुझे याद आ रहा है कि मैंने एक चीनी उपन्यास पढ़ा था, जिसमें नायक अनेक परीक्षाओं के बाद सम्मान प्राप्त कर अन्त में अपनी प्रेमिका का हृदय स्पर्श करने में सफल हो जाता है। इस प्रकार के वातावरण में उच्च महत्त्वाकांक्षा कठिनाई से ही साँस ले पाती है।

मैं राजनीति के विषय में जो बात कह रहा हूँ, वह प्रत्येक वस्तु के सम्बन्ध में लागू होती है। समानता का प्रभाव प्रत्येक स्थान पर एक समान होता है। जहाँ किसी देश के कानून निश्चयात्मक विधि निर्माण द्वारा मनुष्यों की प्रगति को नियमित और अवरुद्ध नहीं करते, वहाँ प्रतियोगिता यही कार्य करता है।

अतः भली भाँति स्थापित प्रजातान्त्रिक समुदाय में महान और तीव्र उत्थान दुर्लभ होता है; यह सामान्य नियम का एक अपवाद होता है, और इस प्रकार की घटनाओं की विचित्रता के कारण मनुष्य इस बात को भूल जाते हैं कि वे कितनी कम घटित होती हैं।

प्रजातन्त्रों में रहने वाले व्यक्तियों को अन्ततोगत्वा इन बातों का पता चल जाता है; आखिर में उन्हें पता लगता है कि उनके देश के कानून उनके समक्ष एक असीमित कार्य-क्षेत्र प्रस्तुत करते हैं; किन्तु कोई भी व्यक्ति उसे शीघ्रता-पूर्वक पार कर जाने की आशा नहीं कर सकता। वे अपने तथा अपनी आकांक्षाओं के अन्तिम लक्ष्य के बीच अनेक छोटी-छोटी बाधाएँ देखते हैं, जिन्हें धीरे-धीरे अवश्य पार किया जाना चाहिए। यह सम्भावना उनकी महत्त्वाकांक्षा को तत्काल क्लान्त और निरुत्साहित बना देती है। अतः वे इतनी सन्दिग्ध और सुदूर आशाओं का परित्याग कर देते हैं और अपने अधिक निकट कम ऊँचे और अधिक सरलतापूर्वक उपलब्ध हो सकने वाले सुखों की तलाश करने लगते हैं। उनका क्षितिज कानूनों द्वारा सीमित नहीं होता, प्रत्युत स्वयं उन्हीं के द्वारा संकीर्ण बन जाता है।

मैंने कहा है कि कुलीनतात्रिक युगों की अपेक्षा प्रजातात्रिक युगों में उच्च महत्त्वाकांक्षाएँ दुर्लभतर होती हैं; इसमें मैं इतना जोड़ सकता हूँ, कि इन प्राकृतिक बाधाओं के बावजूद जब वे अस्तित्व में आ जाती हैं, तब उनका स्वरूप भिन्न होता है। कुलीनतंत्रों में महत्त्वाकांक्षा का जीवन बहुधा विस्तृत होता है, किन्तु उसकी सीमाएँ निर्धारित होती हैं। प्रजातंत्रों मे महत्त्वाकांक्षा का क्षेत्र सामान्यतः संकीर्ण होता है, किन्तु जब वह एक बार उसे पार कर जाती है, तब मुश्किल से उसकी कोई सीमा निश्चित की जा सकती है। चूँकि मनुष्य व्यक्तिगत रूप से निर्बल होते हैं, चूँकि वे पृथक् पृथक् और निरन्तर गतिशील रहते हैं, चूँकि पूर्व उदाहरणों को तनिक भी प्रामाणिक नहीं माना जाता और कानून अल्पकालीन होते हैं, इसलिए नवीनता का प्रतिरोध क्षीण होता है और समाज का ढाँचा कभी पूर्णरूप से सुदृढ़ अथवा ठोस नहीं प्रतीत होता। अतः जब सत्ता किसी महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति की पकड़ में आ जाती है, तब ऐसी कोई वस्तु नहीं होती, जिसके लिए वह साहस नहीं कर सकता; और जब वह सत्ता उसके पास से चली जाती है, तब वह उसे पुनः प्राप्त करने के लिए राज्य को उलट डालने का विचार करता है। इससे महान राजनीतिक महत्त्वाकांक्षा को क्रान्तिकारी हिंसा का स्वरूप प्राप्त होता है, जिसका प्रदर्शन समान अंश में वह कुलीनतात्रिक समुदायों में बहुत कम करती है। प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों का सामान्य पहलू भारी संख्या में महत्त्वाकांक्षा के छोटे छोटे और अत्यन्त बुद्धि-संगत लक्ष्यों को प्रस्तुत करेगा, जिनके मध्य से समय-समय पर थोड़ी सी बड़ी-बड़ी अनियन्त्रित इच्छाएँ उत्पन्न होंगी, किन्तु वहाँ बड़े पैमाने पर कल्पित और नियमित महत्त्वाकांक्षा जैसी कोई वस्तु नहीं मिलेगी।

मैं अन्यत्र बता चुका हूँ कि किस गुप्त-प्रभाव द्वारा समानता का सिद्धान्त मानव-हृदय में भौतिक सुख के प्रति प्रबल भावना तथा वर्तमान के प्रति विशेष प्रेम को सर्वोपरि बनाता है। ये विभिन्न प्रवृत्तियाँ महत्त्वाकांक्षा की भावना के साथ मिलती हैं और उसे अपने रंग में रंग देती हैं।

मेरा विश्वास है कि प्रजातन्त्रों में महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति अन्य व्यक्तियों की अपेक्षा भावी पीढ़ी के हितों और भाग्य में कम रुचि रखते हैं; केवल वर्तमान क्षण ही उन्हें व्यस्त और तल्लीन रखता है। वे अपनी सफलताओं के स्थायी स्मारक बनाने की अपेक्षा अनेक कार्यों को तीव्र गति से पूर्ण करने में अधिक रुचि रखते हैं, और वे ख्याति की अपेक्षा सफलता के लिए बहुत अधिक चिन्ता करते हैं। वे मनुष्यों से सर्वाधिक आज्ञा पालन की माँग करते हैं तथा

साम्राज्य की सर्वाधिक कामना करते हैं। उनके व्यवहार प्रायः समस्त मामलों में उनकी स्थिति से निम्न कोटि के बने रहे हैं। इसका परिणाम यह हुआ है कि वे बहुधा अपनी असाधारण समृद्धि में अत्यन्त निम्न कोटि की रुचि का प्रदर्शन करते हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने अपने अपरिष्कृत अथवा तुच्छ आनन्दों की प्राप्ति के लिए ही सर्वोच्च सत्ता प्राप्त की है।

मैं सोचता हूँ कि हमारे युग में महत्त्वाकांक्षा की भावना को शुद्ध, नियमित और आनुपातिक बनाना अत्यन्त आवश्यक है, किन्तु उसमें कमी करने अथवा उसका दमन करने का प्रयत्न करना अत्यन्त खतरनाक होगा। हमें कतिपय चरम-सीमाएँ निर्धारित करने का प्रयत्न करना चाहिए और महत्त्वाकांक्षा की भावना को उनसे बाहर जाने की अनुमति कभी नहीं देनी चाहिए; किन्तु उन निर्धारित सीमाओं के अन्तर्गत उसके विस्तार को बहुत अधिक अवरुद्ध नहीं किया जाना चाहिए।

मैं स्वीकार करता हूँ कि मुझे प्रजातान्त्रिक समाज के लिए निम्न कोटि की इच्छाओं से जितनी आशंका है, उससे बहुत कम आशंका साहसिकता से है। मुझे जो बात सबसे अधिक खतरनाक प्रतीत होती है, वह यह है कि निजी जीवन के छोटे छोटे, अनवरत कार्यों के मध्य महत्त्वाकांक्षा की प्रबलता और उसकी महत्ता कहीं समाप्त न हो जाय तथा मनुष्य की भावनाएँ कहीं शान्त और साथ ही साथ निम्नगामी न हो जाय, जिससे समाज की गति कहीं प्रतिदिन अधिक शान्त और कम महत्त्वाकांक्षापूर्ण न हो जाय।

अतः मेरा विचार है कि आधुनिक समाज के नेता अत्यधिक सदय और अत्यधिक शान्तिमय प्रसन्नता की स्थिति द्वारा समाज को निष्क्रिय बनाने का प्रयत्न कर गलती करेंगे; और समय-समय पर उसे कठिनाई और खतरे में डालना अच्छा होगा, जिससे महत्त्वाकांक्षा का उत्थान हो सके और उसे एक कार्य क्षेत्र मिल सके।

नैतिकतावादी निरन्तर यह शिकायत करते रहते हैं कि वर्तमान युग की सबसे बड़ी बुराई अहंकार है। एक अर्थ में यह बात सच है, क्योंकि निश्चय ही प्रत्येक व्यक्ति सोचता है कि वह अपने पड़ोसी से अधिक अच्छा है अथवा वह अपने से बड़े व्यक्ति की आज्ञा मानने से इनकार करता है; किन्तु एक दूसरे अर्थ में यह बात अत्यन्त गलत है, क्योंकि वही व्यक्ति, जो अधीनता अथवा समानता को सहन नहीं कर सकता, अपने सम्बन्ध में इतना घृणित विचार रखता है कि वह सोचता है कि उसका जन्म केवल अश्लील आनन्दों

का उपभोग करने के लिए ही हुआ है। वह उच्च प्रयासों को, जिनकी कल्पना वह स्वप्न में भी बहुत कम करता है, प्रारम्भ करने का साहस न करके स्वेच्छापूर्वक निम्न कोटि की इच्छाओं का वरण करता है।

इस प्रकार, यह सोचना तो बहुत दूर रहा कि हमारे युग के व्यक्तियों को नम्रता का उपदेश दिया जाना चाहिए, मैं इस बात को पसन्द करूँगा कि उन्हें अपने तथा अपनी जाति के सम्बन्ध में व्यापकतर भावना प्रदान करने के प्रयास किये जाने चाहिए। उनके लिए विनम्रता अस्वास्थ्यकर है; उन्हें जिस बात की सर्वाधिक आवश्यकता है, वह है अहंकार। हमारी अनेक छोटी-छोटी अच्छाइयों के साथ मैं इस एक बुराई को स्वेच्छापूर्वक बदल दूँगा।

४७. कतिपय प्रजातांत्रिक देशों में स्थान की खोज का व्यापार

संयुक्त-राज्य अमरीका में ज्योंही कोई व्यक्ति थोड़ी-सी शिक्षा और सम्पत्ति अर्जित कर लेता है, त्योंही वह या तो वाणिज्य एवं उद्योग द्वारा धनी बनने का प्रयास करता है या जंगल में जमीन खरीदकर अगुवा बन जाता है। वह राज्य से केवल इतना चाहता है कि उसके श्रम में बाधा न डाली जाय तथा उसकी कमाई सुरक्षित रहे। अधिकांश यूरोपीय राष्ट्रों में जब कोई व्यक्ति अपनी शक्ति का अनुभव एवं अपनी इच्छाओं का विस्तार करना प्रारम्भ करता है, तब उसके मस्तिष्क में सर्वप्रथम कोई सार्वजनिक पद प्राप्त करने की भावना उत्पन्न होती है। एक ही कारण से उत्पन्न इन विरोधी प्रभावों पर हमें सरसरी दृष्टि डालने की आवश्यकता है।

जब सार्वजनिक नौकरियों की संख्या कम होती है, उनके लिए कम वेतन मिलता है तथा वे अनिश्चित रहती हैं, जब कि विभिन्न प्रकार के व्यवसायों की संख्या अनेक होती है तथा उनमें पर्याप्त धन की उपलब्धि होती है, तब समानता के सिद्धान्त से उत्पन्न नयी और तीव्र आकांक्षाएँ सभी ओर से सरकारी कार्यों की ओर नहीं, प्रत्युत व्यवसाय की ओर ही मुड़ती हैं; किन्तु जबकि समाज की श्रेणियाँ अधिकाधिक समान बन रही हों, तब यदि जनता की शिक्षा अपूर्ण रहती है अथवा उनकी भावना में साहस नहीं रहता—यदि वाणिज्य एवं

उद्योग का विकास रुक जाने के कारण उनसे शनैः शनैः और कष्टपूर्वक ही सम्पत्ति अर्जित की जा सके—तब समाज के विभिन्न सदस्य अपनी निजी स्थिति में सुधार करने से निराश हो कर राज्य के प्रमुख के पास जाते हैं और उसकी सहायता मांगते हैं। सार्वजनिक धन द्वारा अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करना उन्हें एक ऐसी स्थिति से, जिससे अब उन्हें सन्तोष नहीं होता, ऊपर उठने का एक मात्र नहीं तो सुगमतम और सर्वाधिक उन्मुक्त मार्ग प्रतीत होता है; स्थान (नौकरी) की खोज का व्यापार सर्वाधिक सामान्य व्यापार बन जाता है।

उन महान केन्द्रीकृत राजतन्त्रों में, जहाँ सवैतनिक पदों की संख्या अत्यधिक होती है और उनकी अबाध पर्याप्त रूप से सुरक्षित होती है, जिससे कोई भी व्यक्ति कोई स्थान प्राप्त करने और पैतृक सम्पत्ति की भाँति ही निर्विघ्न रूप से उसका उपभोग करने से निराश नहीं होता, अवश्य ही विशेष रूप से यह स्थिति पायी जाती होगी।

मैं यह नहीं कहूँगा कि स्थान के लिए यह सर्वजनीन एवं आत्यन्तिक इच्छा एक महान सामाजिक बुराई है, यह नागरिक में स्वतन्त्रता की भावना को नष्ट कर देती है और समाज के समस्त ढाँचे में एक भ्रष्ट एवं दासतापूर्ण भावना भर देती है, यह पुरुषत्व के गुणों को दबा देती है। न मैं यही प्रमाणित करने का प्रयत्न करूँगा कि इस प्रकार का कार्य केवल अनुत्पादक गतिविधि को ही जन्म देता है, जो देश के साधन स्रोतों में वृद्धि किये बिना उसे आन्दोलित करती है। ये सभी बातें प्रत्यक्ष हैं; किन्तु मैं यह मत व्यक्त करूँगा कि जो सरकार इस मनोवृत्ति को प्रोत्साहित करती है, वह अपनी ही शान्ति को खतरे में डालती है और अपने अस्तित्व के लिए महान संकट उत्पन्न कर देती है।

मैं इस बात से अवगत हूँ कि हमारे युग जैसे युग में, जब सत्ता के प्रति पहले व्यक्त किये जाने वाले प्रेम और सम्मान का शनैः शनैः ह्रास हो रहा है, सत्ताधीशों के लिए यह आवश्यक प्रतीत हो सकता है कि प्रत्येक व्यक्ति पर स्वयं उसी के हित द्वारा अधिक नियंत्रण रखा जाय तथा उसे व्यवस्थित एवं मौन रखने के लिए उसी की भावनाओं का प्रयोग करना सुविधाजनक प्रतीत हो सकता है; किन्तु यह स्थिति अधिक दिनों तक नहीं रह सकती और जो वस्तु किसी समय शक्ति का स्रोत प्रतीत हो सकती है, वह निश्चय ही अन्त में परेशानी और निर्बलता का एक महान कारण बन जायगी।

प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में तथा अन्यत्र भी, अन्त में सरकारी नियुक्तियों की संख्या की कतिपय सीमाएँ होती हैं, किन्तु उन राष्ट्रों में महत्वाकांक्षा रखनेवाले व्यक्तियों

की संख्या असीमित होती है; जिस अनुपात में सामाजिक स्थितियाँ समान बनती जाती हैं, उसी अनुपात में इसमें धीरे-धीरे तथा अदम्य गति से निरंतर वृद्धि होती जाती है और जनसंख्या की सीमाओं द्वारा ही उसका अवरोध होता है।

इस प्रकार, जब सरकारी नौकरियाँ महत्वाकांक्षा की पूर्ति का एकमात्र साधन होती हैं, सरकार को आवश्यक रूप से एक स्थायी विरोध का सामना करना पड़ता है, क्योंकि उसे सीमित साधनों द्वारा असीमित आकांक्षाओं की पूर्ति का कार्य करना होता है। यह अत्यन्त निश्चित बात है कि विश्व में नौकरी की तलाश करने वाले व्यक्तियों को संयमित और नियंत्रित रखना कठिनतम कार्य होता है। शासकों द्वारा चाहे जो भी प्रयास किये जायं, इस प्रकार के व्यक्ति कभी सन्तुष्ट नहीं हो सकते; और इस बात की आशंका सदा बनी रहती है कि वे केवल नौकरियां प्राप्त करने के लिए अन्ततोगत्वा देश के संविधान को उलट देंगे तथा राज्य के पहलू को बदल देंगे।

यदि मैं भूल नहीं करता, तो वर्तमान युग के सम्राट, जो समानता द्वारा उत्पन्न उन समस्त नयी इच्छाओं को अकेले अपने ऊपर ही ले लेने और उनकी पूर्ति करने का प्रयत्न करते हैं, इस बात के लिए पश्चाताप करेंगे कि उन्होंने यह नीति अपनायी। उन्हें एक दिन इस बात का पता चलेगा कि इसे इतना आवश्यक बनाकर उन्होंने स्वयं अपनी सत्ता को खतरे में डाल दिया तथा अधिक सुरक्षित और ईमानदारी का मार्ग यह होता है कि वे अपने प्रजाजनों को अपने लिए स्वयं व्यवस्था करने की कला सिखाते।

४८. क्यों महान क्रांतियाँ भविष्य में कम हुआ करेंगी?

जो जाति शताब्दियों तक जातियों और वर्गों की प्रणाली के अन्तर्गत रह चुकी हो, वह उन प्रयत्नों द्वारा पूर्ण हुए न्यूनाधिक रूप से संकटपूर्ण रूपान्तरों की एक लम्बी अवधि से गुजरने के बाद तथा अनेक परिवर्तनों के बाद ही प्रजातांत्रिक सामाजिक स्थिति में पहुँच सकती है; इस अवधि में सम्पत्ति, विचार और अधिकार तीव्र गति से एक हाथ से दूसरे हाथ में जाते रहते हैं। इस महान क्रांति के पूर्ण हो जाने के बाद भी इससे उत्पन्न क्रांतिकारी आदतें दीर्घकाल तक देखी जा सकती हैं और उसके बाद गम्भीर अशान्ति उत्पन्न

होगी। चूंकि यह सब उसी समय होता है, जब सामाजिक स्थितियाँ अधिक समान बनती हैं, इसलिए यह निष्कर्ष निकलता है कि स्वयं समानता के सिद्धान्त और क्रांति के मध्य कोई प्रच्छन्न एवं गुप्त सम्बन्ध विद्यमान रहता है; क्योंकि क्रांति को जन्म दिये बिना समानता के सिद्धान्त का अस्तित्व नहीं हो सकता।

इस विषय में तर्क और अनुभव का एक ही परिणाम निकलता हुआ प्रतीत हो सकता है। जिस जाति में श्रेणियाँ लगभग समान होती हैं, उसमें मनुष्यों में कोई प्रत्यक्ष पारस्परिक सम्बन्ध नहीं होता अथवा उनकी स्थिति को स्थिर रखनेवाली कोई प्रत्यक्ष कड़ी नहीं होती। उनमें से किसी के पास कोई स्थायी अधिकार अथवा शक्ति नहीं होती, किसी भी व्यक्ति की स्थिति उसे आज्ञा-पालन के लिए बाध्य नहीं करती, किन्तु थोड़ी सी शिक्षा और थोड़ी सी सम्पत्ति से सम्पन्न प्रत्येक व्यक्ति अपना निजी मार्ग चुन सकता है और अपने समस्त सह-प्राणियों से अलग मार्ग पर जा सकता है। जो कारण समाज के सदस्यों को एक दूसरे से स्वाधीन बनाते हैं, वे ही कारण निरन्तर उनमें नयी और अज्ञात इच्छाएँ उत्पन्न करते रहते हैं तथा उन्हें आगे बढ़ने के लिए अनवरत रूप से प्रेरित करते रहते हैं। अतः यह स्वाभाविक प्रतीत होता है कि प्रजातांत्रिक समुदाय में मनुष्यों, वस्तुओं और विचारों के स्वरूप और स्थान में सदा परिवर्तन होते रहना चाहिए तथा प्रजातांत्रिक युगों को तीव्र अनवरत रूपान्तर का समय होना चाहिए।

किन्तु क्या वास्तव में यही स्थिति है? क्या सामाजिक स्थितियों की समानता सदा और स्वाभाविक रूप से मनुष्यों को क्रांति की ओर ले जाती है? क्या समाज की उस स्थिति में कोई ऐसा अव्यावहारिक सिद्धान्त निहित होता है, जो समाज को शांति से रहने से रोकता है और नागरिकों में अपने कानूनों, अपने सिद्धान्तों और अपने व्यवहारों में निरन्तर परिवर्तन करते रहने की मनोवृत्ति उत्पन्न करता है? मैं इस बात में विश्वास नहीं करता; और चूँकि यह विषय महत्वपूर्ण है, इसलिए मैं पाठकों से इस पर विशेष ध्यान देने का आग्रह करता हूँ।

राष्ट्रों के स्वरूप को बदल डालने वाली प्रायः समस्त क्रान्तियाँ सामाजिक वैषम्य को सुदृढ़ बनाने अथवा उसको विनष्ट करने के लिए की गयी हैं। विश्व में जो महान क्रान्तियाँ हुई हैं, उनके गौण कारणों को हटा दीजिए तो आपको प्रायः सदा उनके मूल में वैषम्य का सिद्धान्त मिलेगा। या तो निर्धनों ने धनिकों को लूटने का या धनिकों ने निर्धनों को पराधीन बनाने का प्रयत्न किया है।

अतः यदि कभी ऐसी समाज-व्यवस्था की स्थापना की जा सके, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति के पास रखने के लिए कुछ रहेगा तथा दूसरों से छीनने के लिए कुछ भी नहीं रहेगा, तो विश्व की शांति के लिए यह बहुत बड़ा काम होगा।

मुझे इस बात का ज्ञान है कि किसी महान प्रजातांत्रिक देश में समाज के कतिपय सदस्य सदा अत्यन्त निर्धन और अन्य सदस्य अत्यन्त समृद्धिशाली बने रहेंगे, किन्तु निर्धन व्यक्ति राष्ट्र का विशाल बहुमत बनने के स्थान पर, जैसा कि कुलीनतांत्रिक समाजों में सदा होता है, संख्या में अपेक्षाकृत कम होते हैं और कानून उन्हें असाध्य और वंशानुगत निर्धनता के बन्धनों से आबद्ध नहीं करते।

जहाँ तक धनी व्यक्तियों का सम्बन्ध है, वे थोड़े और शक्तिहीन होते हैं, उनके पास ऐसे विशेषाधिकार नहीं होते जो जनता का ध्यान आकृष्ट कर सकें; उनकी सम्पत्ति भी, चूँकि वह भूमि के साथ संयुक्त और सम्बद्ध नहीं रह जाती, सूक्ष्म एवं अदृश्य होती है। चूंकि निर्धन व्यक्तियों की कोई जाति नहीं रह जाती, इसलिए धनी व्यक्तियों की कोई जाति भी नहीं रह जाती; धनी व्यक्ति प्रति दिन समूह में से उत्पन्न होते हैं और पुनः उसी में विलीन हो जाते हैं। अतः उनका कोई पृथक वर्ग नहीं होता, जिसका सरलतापूर्वक पता लगाया जा सके और लूटा जा सके और इसके अतिरिक्त चूँकि वे हजारों गुप्त बंधनों द्वारा अपने सहनागरिकों के समूह के साथ सम्बद्ध होते हैं, इसलिए जनता स्वयं अपने को क्षति पहुँचाये बिना उन पर प्रहार नहीं कर सकती।

प्रजातांत्रिक समुदायों की इन दो चरम-सीमाओं के मध्य असंख्य साधारण रखने वाले व्यक्ति होते हैं, जो न तो ठीक-ठीक धनी होते हैं, न ठीक-ठीक निर्धन होते हैं, किन्तु जिनके पास इतनी पर्याप्त सम्पत्ति होती है कि वे व्यवस्था के कायम रहने की कामना करते हैं। फिर भी, उनके पास इतनी अधिक सम्पत्ति नहीं होती कि उससे ईर्ष्या उत्पन्न हो सके। इस प्रकार के व्यक्ति हिंसक नागरिकों के स्वाभाविक शत्रु होते हैं, उनकी निष्क्रियता उनके ऊपर और नीचे की समस्त वस्तुओं को शांत रखती है और समाज के ढांचे को सन्तुलित बनाती है।

निश्चय ही ऐसी बात नहीं है कि ये व्यक्ति भी अपनी स्थिति से सन्तुष्ट रहते हैं अथवा ऐसी क्रान्ति के प्रति उनकी स्वाभाविक घृणा होती है, जिसमें वे विपत्ति के भागी बने बिना ही उससे मिलने वाले लाभ के भागी बन सकते हैं। इसके विपरीत उनमें धनी बनने की अतुलनीय प्रबल कामना होती है, किन्तु कठिनाई यह जानने की होती है कि धन किससे छीना जा सकता है।

जो समाज व्यवस्था इच्छाओं को अनवरत रूप से प्रोत्साहित करती है, वही उन्हें आवश्यक सीमाओं के अन्तर्गत नियंत्रित भी रखती है, यह मनुष्यों को परिवर्तन करने की अधिक स्वतन्त्रता और परिवर्तन में कम रुचि प्रदान करता है।

प्रजातंत्रों में रहनेवाले व्यक्ति न केवल स्वभावतः क्रांतियों की कामना नहीं करते, प्रत्युत वे क्रांतियों से भयभीत से रहते हैं। न्यूनाधिक मात्रा में समस्त क्रान्तियाँ सम्पत्ति के स्वामित्व को खतरे में डालती हैं, किन्तु प्रजातांत्रिक देशों में रहने वाले अधिकांश व्यक्तियों के पास सम्पत्ति होती है। उनके पास न केवल सम्पत्ति होती है, प्रत्युत वे ऐसी स्थिति में रहते हैं, जिसमें मनुष्य अपनी सम्पत्ति को सर्वाधिक महत्त्व प्रदान करते हैं।

यदि हम समाज की रचना करने वाले वर्गों में से प्रत्येक वर्ग पर ध्यानपूर्वक विचार करें, तो यह बात सरलतापूर्वक देखी जा सकती है कि सम्पत्ति से उत्पन्न होने वाली भावनाएँ मध्यम वर्गों में तीव्रतम एवं दृढ़तम होती हैं। निर्धन अपनी सम्पत्ति के विषय में बहुधा तनिक भी चिन्ता नहीं करते; क्योंकि उनके पास जो थोड़ी सी सम्पत्ति होती है, उसमें उन्हें जो सुख प्राप्त होता है, उससे बहुत अधिक कष्ट उन्हें उसके अभाव से प्राप्त होता है। समृद्धि की भावना के अतिरिक्त धनिकों को अन्य अनेक भावनाओं को भी सन्तुष्ट करना पड़ता है और इसके अतिरिक्त कभी-कभी महान सम्पत्ति का दीर्घकालीन और दुस्साध्य आनन्दोपभोग अन्त में उन्हें सम्पत्ति के आकर्षण के प्रति उदासीन बना देता है; किन्तु जिन व्यक्तियों के पास क्षमता होती है और जो समृद्धि एवं निर्धनता, दोनों से समान दूरी पर होते हैं, वे अपनी सम्पत्ति का मूल्य अत्यधिक समझते हैं। चूँकि वे अब भी प्रायः निर्धनता की सीमा के अन्तर्गत होते हैं, इसलिए वे उसके अभावों को निकट से देखते हैं और उससे भयभीत रहते हैं; निर्धनता और उनके मध्य केवल एक तुच्छ सम्पत्ति होती है, जिस पर वे अपनी आशंकाओं और आशाओं को तत्काल केन्द्रित कर देते हैं। इसके लिए जो निरन्तर चिन्ता करनी पड़ती है, उससे इसमें उनकी रुचि प्रतिदिन बढ़ती जाती है और वे धन राशि में वृद्धि करने के लिए निरन्तर जो प्रयास करते हैं, उनके कारण इसके प्रति उनका लगाव बढ़ जाता है। इसके अल्पतम भाग को समर्पण करने की भावना भी उनके लिए असमर्थनीय होती है और इसकी पूर्ण क्षति को वे निकृष्ट दुर्भाग्य मानते हैं।

अब, तुच्छ सम्पत्ति रखने वाले ये उत्सुक और भयाक्रांत व्यक्ति उस वर्ग का निर्माण करते हैं, जिसमें स्थितियों की समानता से अनवरत वृद्धि होती रहती

है। अतः प्रजातांत्रिक समुदायों में जनता का बहुमत स्पष्ट रूप से नहीं देख पाता कि क्रान्ति से उसे क्या लाभ होगा, किन्तु वह सदा और हजार तरीकों से यह अनुभव करता है कि क्रांति उसके लिए हानिकारक सिद्ध हो सकती है।

इस पुस्तक के दूसरे भाग में मैंने दिखाया है कि स्थितियों की समानता मनुष्यों को स्वभावतः वाणिज्य एवं उद्योग की ओर प्रेरित करती है तथा उसमें वास्तविक सम्पत्ति की अभिवृद्धि एवं उसका वितरण करने की प्रवृत्ति होती है। मैंने यह भी बताया है कि वह किन साधनों से प्रत्येक व्यक्ति में अपनी सम्पत्ति को बढ़ाने की प्रबल एवं अनवरत इच्छा जाग्रत करती है। इन वस्तुओं से बढ़कर कोई भी वस्तु क्रान्तिकारी भावनाओं की विरोधिनी नहीं है। किसी क्रान्ति का अन्तिम परिणाम वाणिज्य एवं उद्योग के लिए अनुकूल हो सकता है; किन्तु उसका प्रथम परिणाम सदा ही उद्योगों एवं वाणिज्यकर्ताओं को नष्ट कर देने वाला होता है, क्योंकि क्रांति सदा ही उपभोग के सामान्य सिद्धान्तों में तत्काल परिवर्तन कर देती है तथा पूर्ति और मांग के मध्य वर्तमान अनुपात को अस्थायी रूप से अस्तव्यस्त कर देती है।

मुझे ऐसी किसी वस्तु का ज्ञान नहीं है, जो व्यावसायिक व्यवहारों की अपेक्षा क्रान्तिकारी व्यवहारों के अधिक विरुद्ध हो। वाणिज्य स्वभावतः समस्त हिंस्र भावनाओं के विरुद्ध होता है; वह समयानुकूल कार्य करने के प्रति प्रेम रखता है, समझौते से उसे प्रसन्नता प्राप्त होती है और अशान्ति से वह प्रयत्नपूर्वक बचता है। वह धैर्यवान, मृदुभाषी तथा नमनीय होता है और जब तक अत्यन्त अनिवार्य आवश्यकता से बाध्य नहीं हो जाता, तब तक उग्र उपायों का अवलम्बन कभी नहीं करता। वाणिज्य मनुष्यों को एक दूसरे से स्वाधीन बनाता है, उनमें अपने व्यक्तिगत महत्व के सम्बन्ध में एक उच्च धारणा उत्पन्न करता है, उन्हें अपने कार्यों का स्वयं संचालन करने का प्रयास करने के लिए प्रेरित करता है तथा उन्हें भलीभाँति संचालित करने की शिक्षा प्रदान करता है; अतः वह मनुष्यों को स्वतंत्रता के लिए तैयार करता है, किन्तु उन्हें क्रान्ति से निवृत्त रखता है।

क्रान्ति में व्यक्तिगत सम्पत्ति के स्वामियों को अन्य समस्त व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक भय रहता है, क्योंकि एक ओर उनकी सम्पत्ति को छीनना बहुधा सरल कार्य होता है और दूसरी ओर वह किसी भी क्षण पूर्ण रूप से विनष्ट हो सकती है—यह एक ऐसी बात है जिसका खतरा वास्तविक सम्पत्ति के स्वामियों को कम रहता है, क्योंकि यद्यपि उनकी जायदाद से होने

वाली आमदनी समाप्त हो सकती है, तथापि वे बड़े-बड़े परिवर्तनों में भी भूमि की रक्षा करने की आशा कर सकते हैं। अतः निजी सम्पत्ति के स्वामी वास्तविक सम्पत्ति के स्वामियों की अपेक्षा क्रान्तिकारी अशांति के लक्षणों से अधिक भयभीत रहते हैं। अतः जिस अनुपात से व्यक्तिगत सम्पत्ति में वृद्धि और जनता के मध्य उसका वितरण होता है तथा व्यक्तिगत सम्पत्ति के स्वामियों की संख्या बढ़ जाती है, उसी अनुपात से क्रान्ति करने की राष्ट्रों की प्रवृत्ति में कमी हो जाती है।

इसके अतिरिक्त मनुष्यों का पेशा और उनकी सम्पत्ति का स्वरूप चाहे कुछ भी हो, एक बात उनमें सामान्य रूप से पायी जाती है। कोई भी व्यक्ति अपनी वर्तमान सम्पत्ति से पूर्णरूपेण सन्तुष्ट नहीं होता; सभी हजारों उपायों से उसमें सुधार करने का निरन्तर प्रयास करते रहते हैं। उनमें किसी भी व्यक्ति को उसके जीवन के किसी भी समय देखिये और आप पायेंगे कि उसके पास जो कुछ है, उसमें वृद्धि करने के उद्देश्य से वह किसी नयी योजना में लगा हुआ है। उससे मानव जाति के हितों और अधिकारों की बात मत कीजिये, उसके सारे विचार इस छोटी-सी घरेलू चिन्ता में केन्द्रीभूत रहते हैं और वह राजनीतिक आंदोलनों को किसी अन्य समय के लिए स्थगित कर देता है। यह बात न केवल मनुष्यों को क्रान्तियाँ करने से, प्रत्युत उनकी इच्छा करने से भी रोकती है। जिन लोगों ने अपने समस्त गुणों को अपने कल्याण की खोज में लगा दिया है, उनके ऊपर उग्र राजनीतिक भावनाओं का तनिक भी प्रभाव नहीं पड़ता। वे छोटे छोटे कार्यों में जिस उत्साह का प्रदर्शन करते हैं, वह महत्त्वपूर्ण कार्यों के लिए उनके उत्साह को शांत बना देता है।

निश्चय ही समय-समय पर प्रजातान्त्रिक समुदायों में अध्यवसायी और महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति उत्पन्न होंगे, जिनकी असीमित महत्त्वाकांक्षाएँ पुराने मार्ग पर चल कर ही सन्तुष्ट नहीं हो सकतीं। इस प्रकार के व्यक्ति क्रान्तियों को पसन्द करते हैं और उनके आगमन का स्वागत करते हैं; किन्तु जब तक असाधारण घटनाएँ उनकी सहायता नहीं करतीं, तब तक क्रान्तियाँ करने में उन्हें महान कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। कोई भी व्यक्ति अपने युग और देश की भावना के विरुद्ध संघर्ष कर लाभान्वित नहीं हो सकता; और किसी भी व्यक्ति के लिए, वह चाहे जितना भी शक्तिशाली समझा जाता हो, अपने समकालीनों से उन भावनाओं और विचारों को मनवाना कठिन होगा, जो उनकी समस्त भावनाओं और इच्छाओं के विरुद्ध होंगे।

यह विश्वास करना भूल है कि जब एक बार स्थिति की समानता समाज की पुरानी और निर्विवाद व्यवस्था का रूप धारण कर लेती है और उसकी विशेषताएँ राष्ट्र के व्यवहारों में समाविष्ट हो जाती हैं, तब मनुष्य किसी निर्बुद्धि नेता अथवा किसी साहसी परिवर्तनवादी के कहने से अपने को खतरों में झोंक देंगे। निश्चय ही यह बात नहीं है कि वे सुनिर्धारित योजनाओं द्वारा अथवा प्रतिरोध की एक पूर्वनिश्चित योजना द्वारा भी उसका खुले रूप से प्रतिरोध करेंगे। वे उत्साहपूर्वक उसके विरुद्ध संघर्ष नहीं करेंगे; कभी-कभी वे उसकी प्रशंसा भी करेंगे, किन्तु वे उसका अनुगमन नहीं करते। वे उसकी सक्रियता का अपनी निष्क्रियता द्वारा, उसकी क्रांतिकारी प्रवृत्तियों का अपने अनुदार स्वार्थों द्वारा, उसकी साहसपूर्ण भावनाओं का अपनी पारिवारिक रुचियों द्वारा, उसकी प्रतिभा की उड़ानों [illegible] अपनी सामान्य बुद्धि द्वारा और उसकी कविता का अपनी गद्यात्मकता द्वारा गुप्त रीति से विरोध करते हैं। अत्यधिक प्रयास करके वह एक क्षण के लिए उन्हें ऊपर उठाता है, किन्तु वे शीघ्र ही उससे बच निकलते हैं और अपने ही भार से पुनः दब जाते हैं। वह उदासीन और असम्बद्ध समूह को सक्रिय बनाने के लिए प्रयत्न करता है और अन्त में उसे इस बात का पता चलता है कि वह निर्वीर्य हो गया है। इसका कारण यह नहीं होता कि वह पराजित हो जाता है, प्रत्युत यह होता है कि वह अकेला पड़ जाता है।

मैं यह नहीं कहता कि प्रजातान्त्रिक समुदायों में रहने वाले व्यक्ति स्वभावतः निष्क्रिय होते हैं; इसके विपरीत मेरा मत है कि इन समाजों के वक्षःस्थल में एक शाश्वत उथल-पुथल विद्यमान रहती है तथा वहाँ शांति अज्ञात रहती है; किन्तु मेरा विचार है कि मनुष्य कतिपय सीमाओं के अन्तर्गत ही आन्दोलित होते हैं, जिनके परे वे मुश्किल से कभी जाते हैं। वे गौण वस्तुओं में निरन्तर परिवर्तन करते रहते हैं और उन्हें पुनः अपने स्थान पर लाते रहते हैं, किन्तु वे मूलभूत वस्तुओं का स्पर्श करने से सतर्कतापूर्वक बचते रहते हैं। वे परिवर्तन से प्रेम करते हैं, किन्तु क्रान्तियों से भयभीत रहते हैं।

यद्यपि अमरीकी अपने कतिपय कानूनों को निरन्तर परिवर्तित अथवा रद्द करते रहते हैं, तथापि वे किसी भी स्थिति में क्रान्तिकारी भावनाओं का प्रदर्शन नहीं करते। जब सार्वजनिक उत्तेजना चिन्ताजनक रूप धारण करने लगती है और जिस क्षण भावनाएँ अत्यन्त अशांत प्रतीत होती हैं, तब वे जिस तत्परता एवं शीघ्रता से अपने को संयमित एवं शांत बना लेते हैं, उससे यह बात सरलतापूर्वक देखी जा सकती है कि वे क्रांति को महानतम दुर्भाग्य मान कर उससे

डरते हैं और उनमें से प्रत्येक इस प्रकार की विपत्ति को दूर रखने के लिए महान बलिदान करने के लिए मन ही मन कृत-संकल्प रहता है। संयुक्त राज्य अमरीका में सम्पत्ति प्रेम जितना प्रबल है और वहाँ सम्पत्ति के लिए जितनी अधिक चिन्ता की जाती है, उतनी चिन्ता विश्व के अन्य किसी देश में नहीं की जाती। उन सिद्धान्तों के प्रति, जिनमें सम्पत्ति के कानूनों में किसी भी प्रकार का परिवर्तन होने का खतरा हो, बहुमत का लगाव जितना कम अमरीका में दिखायी देता है, उतना कम अन्यत्र कहीं भी नहीं दिखाई देता।

मैं अनेक बार कह चुका हूँ कि चूँकि क्रान्तिकारी सिद्धान्तों को समाज और मनुष्यों की स्थिति में पूर्ण और कभी-कभी आकस्मिक परिवर्तन किये बिना कार्यरूप में परिणत नहीं किया जा सकता, इसलिए उन्हें यूरोप के महान राजतान्त्रिक देशों की अपेक्षा अमरीका में बहुत कम अनुकूल दृष्टि से देखा जाता है। यदि कुछ व्यक्ति इन सिद्धान्तों को स्वीकार करते हैं, तो अधिकांश जनता आन्तरिक घृणा से उन्हें अस्वीकृत कर देती है। मुझे यह कहने में तनिक भी संकोच नहीं है कि फ्रांस में जिन सिद्धान्तों को प्रजातान्त्रिक सिद्धान्त कहा जाता है, उनमें से अधिकांश अमरीका के प्रजातन्त्र द्वारा निषिद्ध कर दिये जायेंगे। इस बात को सरलता पूर्वक समझा जा सकता है; अमरीका में मनुष्यों के विचार और भावनाएँ प्रजातान्त्रिक हैं, यूरोप में हमारी भावनाएँ और विचार अभी तक क्रान्तिकारी हैं।

यदि अमरीका को कभी महान क्रान्तियों से होकर गुजरना पड़ा, तो ये क्रान्तियाँ अमरीका की भूमि पर काली जाति की उपस्थिति से उत्पन्न होंगी। कहने का तात्पर्य यह है कि उनका कारण स्थिति की समानता नहीं, प्रत्युत विषमता होगी।

जब सामाजिक स्थितियाँ समान होती हैं, तब प्रत्येक व्यक्ति पृथक रहता है, वह अपने आप में ही केन्द्रित रहता है, और उसे जनता का ध्यान नहीं रहता। यदि प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों के शासकों ने इस घातक प्रवृत्ति में सुधार करने की ओर ध्यान नहीं दिया अथवा इस धारणा से इसे प्रोत्साहित किया कि यह मनुष्यों को राजनीतिक भावनाओं से दूर रखती है और इस प्रकार की क्रान्तियों को रोकती है, तो अन्ततोगत्वा वे उसी बुराई को जन्म देंगे, जिससे बचने का वे प्रयास करते हैं और एक समय ऐसा आ सकता है, जब थोड़े से व्यक्तियों की अनियन्त्रित भावनाएँ अधिकांश व्यक्तियों की मूर्खतापूर्ण स्वार्थपरता अथवा मान-सिक दुर्बलता की सहायता से अन्ततोगत्वा समाज को विचित्र परिवर्तनों से

होकर गुजरने के लिए बाध्य कर देंगी। प्रजातन्त्रिक देशों में एक अल्पसंख्यक समुदाय को छोड़ कर और लोग क्रान्तियों की कामना बहुत कम करते हैं, किन्तु कभी कभी एक अल्पसंख्यक समुदाय उन्हें उत्पन्न कर सकता है।

मैं यह नहीं कहता कि प्रजातान्त्रिक राष्ट्र क्रान्तियों से सुरक्षित रहते हैं; मेरा कहना केवल यह है कि उन राष्ट्रों की समाज व्यवस्था क्रान्तियों को जन्म नहीं देती, प्रत्युत उन्हें रोकती ही है। यदि किसी प्रजातान्त्रिक जनता को स्वयं उसके ऊपर छोड़ दिया जाय, तो वह सरलतापूर्वक बड़े बड़े खतरे नहीं उठाती; वह अनजान में ही क्रान्तियाँ करती है; वह कभी कभी क्रान्तियों से होकर गुजर सकती है, किन्तु वह क्रान्तियों की सृष्टि नहीं करती और मैं इतना और कहूँगा कि जब इस प्रकार की जनता पर्याप्त ज्ञान और अनुभव अर्जित कर लेगी, तब वह इस बात को सहन नहीं करेगी कि क्रान्तियाँ हों।

मैं इस बात से भली भाँति अवगत हूँ कि इस सम्बन्ध में सार्वजनिक संस्थाएँ स्वयं बहुत कुछ कर सकती हैं। वे समाज-व्यवस्था में उत्पन्न होने वाली प्रवृत्तियों को प्रोत्साहित अथवा उनका दमन कर सकती हैं। अतः मैं पुनः कहता हूँ कि मेरा मत यह नहीं है कि केवल सामाजिक स्थितियों के समान होने से ही जनता क्रान्तियों से सुरक्षित रहती है; किन्तु मेरा विचार है कि इस प्रकार की जनता की संस्थाएँ चाहे जो भी हों, महान क्रान्तियाँ सदा ही कल्पना से बहुत कम हिंसापूर्ण होंगी और उनके अवसर कम उपस्थित होंगे। मैं सरलतापूर्वक एक ऐसी शासन व्यवस्था की कल्पना कर सकता हूँ जिसमें, जब वह समानता के सिद्धान्त के साथ संयुक्त हो जायगी, समाज इतना अधिक स्थिर हो जायगा, जितना स्थिर वह विश्व के हमारे पश्चिम भाग में कभी नहीं रहा।

मैंने यहाँ घटनाओं के सम्बन्ध में जो मत व्यक्त किये हैं, उन्हें आंशिक रूप से विचारों के सम्बन्ध में भी लागू किया जा सकता है। अमरीका ने दो बातें —मानवीय कार्यों के अधिकांश भाग की परिवर्तनशीलता और कतिपय सिद्धान्तों की विलक्षण स्थिरता—आश्चर्यजनक हैं। मनुष्य निरन्तर गतिशील रहते हैं, किन्तु मनुष्यों के मस्तिष्क लगभग अविचल प्रतीत होते हैं। जब एक बार कोई विचार देश में फैल जाता है और वहाँ बद्धमूल हो जाता है, तब ऐसा प्रतीत होता है कि संसार की कोई भी शक्ति उसका मूलोच्छेद करने की सामर्थ्य नहीं रखती। संयुक्त-राज्य अमरीका में धर्म, दर्शन, नैतिकता और यहाँ तक कि राजनीति के भी सामान्य सिद्धान्त परिवर्तित नहीं होते अथवा कम-से-

कम उनमें केवल एक छिपी हुई और बहुधा अदृश्य प्रक्रिया द्वारा ही परिवर्तन होता है। निकृष्टतम पूर्वाग्रहों को भी, मनुष्यों और वस्तुओं के अनवरत संघर्ष के मध्य, अविश्वसनीय मन्द गति से नष्ट किया जाता है।

मैं यह कहते सुनता हूँ कि अपने विचारों और भावनाओं में निरन्तर परिवर्तन करते रहना प्रजातन्त्रों का स्वभाव और उनकी आदत होती है। यह बात प्राचीन विश्व के राष्ट्रों के समान छोटे छोटे प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों के सम्बन्ध में सत्य हो सकती है, जिनमें समस्त समुदाय को एक सार्वजनिक स्थल पर एकत्र और किसी वक्ता द्वारा उत्तेजित किया जा सकता था; किन्तु अटलाण्टिक महासागर के दूसरे किनारे पर निवास करने वाली महान प्रजातान्त्रिक जाति में मुझे ऐसी कोई बात नहीं दिखायी दी। मैं अमरीका में इस बात से प्रभावित हुआ कि वहाँ बहुमत द्वारा एक बार निश्चित किसी विचार का अथवा एक बार स्वीकृत कर लिये गये किसी नेता का परित्याग करना कठिन होता है। यह कार्य न तो भाषण द्वारा और न लेखनी द्वारा सम्पन्न हो सकता है; अनुभव के अतिरिक्त अन्य कोई वस्तु सफल नहीं हो सकती और अनुभव की पुनरावृत्ति भी आवश्यक होती है।

प्रथम दृष्टि में यह बात आश्चर्यजनक प्रतीत होती है, किन्तु अधिक ध्यानपूर्वक निरीक्षण करने से इस तथ्य का स्पष्टीकरण हो जाता है। मैं नहीं सोचता कि किसी प्रजातान्त्रिक जाति के पूर्वाग्रहों का मूलोच्छेद करना, इसके विश्वास में परिवर्तन करना, धर्म, राजनीति और नैतिकता के क्षेत्र में एक बार स्थापित हो चुके सिद्धान्तों के स्थान पर नये सिद्धान्तों की प्रतिष्ठा करना—एक शब्द में मनुष्यों के मस्तिष्कों में महान और बहुधा परिवर्तन करना—उतना सरल कार्य है जितना कि समझा जाता है। ऐसी बात नहीं है कि वहाँ मानव मस्तिष्क गतिहीन रहता है, वह निरन्तर आन्दोलित होता रहता है, किन्तु वह नये सिद्धान्तों की खोज करने की अपेक्षा ज्ञात सिद्धान्तों के परिणामों में निरन्तर परिवर्तन करते रहने और नये परिणामों की खोज करने रहने में लगा रहता है। उसकी गति तीव्र एवं प्रत्यक्ष प्रयास द्वारा सीधे बढ़ने की नहीं, अपितु तीव्र गति से चारों ओर घूमते रहने की होती है; वह अपने घेरे का विस्तार निरन्तर और जल्दी में किये जाने वाले छोटे-छोटे आन्दोलनों द्वारा करता है, किन्तु वह अपनी स्थिति में आकस्मिक परिवर्तन नहीं करता।

जिन व्यक्तियों के अधिकार, शिक्षा और सम्पत्ति समान होती है, अथवा एक शब्द में कहा जाय तो जिनकी सामाजिक स्थिति समान होती है, उनकी

आवश्यकताएँ, आदतें और रुचियाँ भी आवश्यक रूप से प्रायः समान ही होती हैं। चूँकि वे एक ही प्रकार की वस्तुओं को देखते हैं, इसलिए उनके मस्तिष्क स्वभावतः एक ही प्रकार के निष्कर्ष पर पहुँचते हैं; और यद्यपि उनमें से प्रत्येक व्यक्ति अपने समकालीनों से विलग जा सकता है और अपने निजी विचारों का निर्माण कर सकता है तथापि वे कतिपय स्वीकृत विचारों से अनिच्छापूर्वक एवं अनजाने ही सहमत होते हैं। मैं मस्तिष्क पर समानता के प्रभावों के बारे में जितना ही ध्यानपूर्वक विचार करता हूँ, उतना ही मेरा विश्वास होता जाता है कि हम अपने चारों ओर जो बौद्धिक अराजकता देखते हैं, वह प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों की स्वाभाविक स्थिति नहीं है, जैसा कि अनेक व्यक्ति सोचते हैं। मैं सोचता हूँ कि इसे उनकी युवावस्था का एक विलक्षण संयोग समझा जाना चाहिए तथा इसका प्रादुर्भाव उस संक्रमण-काल में ही होता है, जब मनुष्य पहले ही अपने को एक साथ आबद्ध करने वाले पूर्व बन्धनों को तोड़ चुके होते हैं, किन्तु फिर भी उनके मूल, उनकी शिक्षा और उनके व्यवहारों में आश्चर्यजनक भिन्नता होती है, जिससे अत्यधिक भिन्नता रखने वाले मतों, प्रवृत्तियों और रुचियों को बनाये रखने के कारण उन्हें खुले रूप से व्यक्त करने से मनुष्यों को रोकने वाली कोई वस्तु नहीं रह जाती। मनुष्यों की स्थितियों में समानता आती है, उसी अनुपात में उनके प्रमुख विचारों में भी समानता आती है। यही मुझे सामान्य एवं स्थायी विधान प्रतीत होता है; शेष आकस्मिक और क्षणिक होता है।

मेरा विश्वास है कि किसी प्रजातान्त्रिक समुदाय में किसी व्यक्ति के मस्तिष्क में अकस्मात् विचारों की एक ऐसी पद्धति का निर्माण करने की बात बहुत कम उत्पन्न होगी, जो उसके समकालीनों द्वारा स्वीकृत पद्धति से बहुत भिन्न हो; और यदि कोई ऐसा परिवर्तनवादी उत्पन्न हुआ, तो मुझे आशंका है कि उसे श्रोता बहुत कठिनाई से मिल पायेंगे और उसकी बातों में विश्वास करने वाले व्यक्ति तो और भी अधिक कठिनाई से मिलेंगे। जब मनुष्यों की स्थितियाँ प्रायः समान होती हैं, तब वे सरलतापूर्वक एक दूसरे की बातों को स्वीकार नहीं करते। चूँकि वे सभी घनिष्ठ सम्पर्क में रहते हैं, एक ही प्रकार की बातों को एक साथ सीखते हैं और एक ही प्रकार का जीवन व्यतीत करते हैं; अतः उनमें स्वभावतः अपने में से किसी एक व्यक्ति को पथप्रदर्शक मानने और उसका अनुगमन करने की प्रवृत्ति नहीं होती। मनुष्य अपने समकक्ष अथवा अपने ही समान किसी व्यक्ति के मतों को बहुत कम ग्रहण करते हैं।

जैसा कि मैं अन्यत्र कह चुका हूँ, प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों में न केवल कतिपय

व्यक्तियों की उच्चतर प्रतिभा में विश्वास क्षीण हो जाता है, प्रत्युत समाज के शेष व्यक्तियों की तुलना में किसी व्यक्ति द्वारा प्राप्त की जाने वाली बौद्धिक श्रेष्ठता की सामान्य धारणा शीघ्र ही विलुप्त हो जाती है। जब मनुष्य एक दूसरे के अधिकाधिक समान हो जाते हैं, तब बौद्धिक समानता का सिद्धान्त धीरे-धीरे उनके विचारों में समाविष्ट हो जाता है, और जनता के मस्तिष्क पर विशेष प्रभाव डाल सकना किसी भी परिवर्तनवादी के लिए अधिक कठिन हो जाता है। अतः इस प्रकार के समुदायों में आकस्मिक बौद्धिक क्रान्तियों का अवसर बहुत कम उपस्थित होगा, क्योंकि यदि हम विश्व के इतिहास का सही-सही अध्ययन करें, तो हमें विदित होगा कि मानवीय विचारों में महान और द्रुत परिवर्तन जितने अधिक किसी व्यक्ति के नाम के प्रभाव से हुए हैं, उसकी अपेक्षा बहुत कम परिवर्तन तर्क शक्ति द्वारा हुए हैं।

इस बात पर भी ध्यान दीजिए कि चूँकि प्रजातान्त्रिक समाजों में रहने वाले व्यक्ति किसी प्रकार के बन्धन द्वारा एक-दूसरे से सम्बद्ध नहीं होते, इसलिए उनमें से प्रत्येक को व्यक्तिगत रूप से पृथक् पृथक् विश्वास दिलाना आवश्यक होता है; जबकि कुलीनतात्मक समाज में थोड़े-से व्यक्तियों को विश्वास दिलाना पर्याप्त होता है, शेष व्यक्ति उनका अनुगमन करते हैं। यदि लूथर समानता के युग में उत्पन्न हुआ होता और उसके श्रोता राजकुमार तथा सत्ताधीश न होते, तो सम्भवतः उसे यूरोप के स्वरूप में परिवर्तन करने में अधिक कठिनाई का सामना करना पड़ता।

निश्चय ही ऐसी बात नहीं है कि प्रजातंत्रों के मनुष्यों में स्वभावतः अपने विचारों की निश्चितता में दृढ़ विश्वास होता है अथवा उनके विश्वास अटल होते हैं; उनके मन में बहुधा सन्देह उत्पन्न होते रहते हैं, जिन्हें उनके मतानुसार कोई दूर नहीं कर सकता। ऐसे अवसरों पर कभी कभी ऐसा होता है कि मानव-मस्तिष्क स्वेच्छापूर्वक अपनी स्थिति को बदल देता है, किन्तु चूँकि कोई वस्तु उसे प्रेरणा अथवा पथ प्रदर्शन नहीं प्रदान करती, इसलिए वह बिना प्रगति के इधर उधर घूमता रहता है।

प्रजातांत्रिक जनता का विश्वास प्राप्त कर लेने पर भी उसका ध्यान आकृष्ट करना सरल कार्य नहीं होता। प्रजातंत्रों में रहने वाले व्यक्तियों से जब तक स्वयं उनके सम्बन्ध में बात न की जाय, तब तक उन्हें किसी बात को सुनने के लिए प्रेरित करना अत्यन्त कठिन कार्य होता है; क्योंकि वे सदा उन कार्यों में ही पूर्ण रूप से तल्लीन रहते हैं, जिन्हें वे करते रहते हैं। प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों में निश्चय ही

निष्क्रिय व्यक्तियों की संख्या थोड़ी होती है; जीवन शोर-गुल और उत्तेजना के मध्य व्यतीत होता है और मनुष्य कार्य करने में इतने अधिक तल्लीन रहते हैं कि सोचने के लिए बहुत कम समय बचता है। मैं विशेष रूप से यह कहूँगा कि वे न केवल काम में लगे होते हैं, बल्कि वे अपने कार्यों के प्रति प्रबल निष्ठा रखते हैं। वे सदा क्रियाशील रहते हैं और उनके प्रत्येक कार्य में उनकी सारी शक्ति लग जाती है; वे व्यवसाय में जिस उत्साह का प्रदर्शन करते हैं, वह उस उत्साह को दबा देता है, जिसे अन्यथा वे विचारों में लगाते।

मेरा विचार है कि प्रजातान्त्रिक जनता के उत्साह को किसी भी ऐसे सिद्धान्त के प्रति जाग्रत करना अत्यन्त कठिन होता है, जिसका जीवन के दैनिक कार्यों से स्पर्शनीय, प्रत्यक्ष एवं तात्कालिक सम्बंध न हो। अतः वे अपने प्राचीन विचारों का सरलतापूर्वक परित्याग नहीं करेंगे, क्योंकि उत्साह ही मनुष्यों के मस्तिष्कों को पुराने मार्ग से दूर ले जाता है और महान बौद्धिक एवं राजनीतिक क्रान्तियों को जन्म देता है।

इस प्रकार प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों के पास नवीन विचारों की खोज करने का न तो समय होता है, न रुचि। जब उनके विचार सन्दिग्ध बन जाते हैं, तब भी वे उन्हें बनाये रखते हैं, क्योंकि उनमें परिवर्तन करने के लिए बहुत अधिक समय और छान-बीन की आवश्यकता होगी; वे उन विचारों को निश्चित मान कर नहीं, प्रत्युत स्थापित मान कर बनाये रखते हैं।

प्रजातान्त्रिक जनता के सिद्धान्तों में सरलतापूर्वक महान परिवर्तन न होने के अन्य कारण भी हैं, जो अधिक प्रबल हैं। मैं उनका उल्लेख उन्नीसवें अध्याय में पहले ही कर चुका हूँ।

यदि इस प्रकार की जनता में व्यक्तियों का प्रभाव क्षीण और मुश्किल से दिखायी देने वाला होता है, तो प्रत्येक व्यक्ति के मस्तिष्क पर पड़ने वाला समूह का प्रभाव अत्यन्त अधिक होता है। इसके कारण मैं पहले ही बता चुका हूँ। अब मैं यह दिखाऊँगा कि यह सोचना गलत है कि यह केवल शासन-प्रणाली पर निर्भर करता है तथा यदि बहुमत की राजनीतिक सत्ता समाप्त हो जाय, तो उसकी बौद्धिक श्रेष्ठता भी समाप्त हो जायगी।

कुलीनतंत्रों में बहुधा मनुष्यों की निजी महत्ता और शक्ति होती है। जब वे देखते हैं कि उनके अधिकांश देशवासियों के साथ उनका मत-भेद हो गया है, तब वे अपने निजी क्षेत्र में चले जाते हैं, जहाँ वे अपना समर्थन स्वयं करते हैं और स्वयं अपने को आश्वस्त करते हैं। प्रजातान्त्रिक देश में ऐसी बात नहीं

होती, वहाँ जनता का समर्थन उतना ही आवश्यक प्रतीत होता है, जितना साँस लेने के लिए हवा और समूह से विलग हो कर जीना न जीने के ही सदृश होता है। जिन लोगों के विचार समूह के विचारों से मेल नहीं खाते, उनका दमन करने के लिए उसे किसी कानून की आवश्यकता नहीं होती; जनता की असहमति पर्याप्त होती है। अपने अकेलेपन और निर्बलता की भावना उन्हें अभिभूत कर लेती है और निराश बना देती है।

जब कभी सामाजिक स्थितियाँ समान होती हैं, तब जनमत प्रत्येक व्यक्ति के मस्तिष्क पर भारी दबाव डालता है; वह उसे घेरे रहता है, उसका निर्देशन और दमन करता है और यह स्थिति समाज के राजनीतिक कानूनों की अपेक्षा बहुत अधिक उसकी रचना से ही उत्पन्न होती है। जब मनुष्यों में समानता बढ़ती है; तब प्रत्येक व्यक्ति शेष व्यक्तियों की तुलना में अपने में निर्बलता का अनुभव करता है। चूँकि वह ऐसी कोई वस्तु नहीं देखता, जो उसे शेष व्यक्तियों से बहुत ऊपर उठाती है अथवा उनसे विशिष्ट बनाती है, इसलिए ज्योंही वे उस पर प्रहार करते हैं, वह अपने-आप पर अविश्वास करने लगता है। न केवल वह अपनी शक्ति में अविश्वास करने लगता है, प्रत्युत अपने अधिकार में भी सन्देह करने लगता है और जब उसके अधिकांश देशवासी यह कहते हैं कि वह गलती पर है, तब वह प्रायः इस बात को स्वीकार कर लेता है। बहुमत को उसे बाध्य करने की आवश्यकता नहीं होती, वह उसे विश्वास दिला देता है। } अतः प्रजातांत्रिक समुदाय की शक्तियों का संगठन और सन्तुलन चाहे जिस प्रकार किया जाय, अधिकांश जनता द्वारा अस्वीकृत बात में विश्वास करना अथवा उसके द्वारा निन्दित बात की खुली घोषणा करना सदा अत्यन्त कठिन कार्य होगा।

विचारों की स्थिरता के लिए यह परिस्थिति असाधारण रूप से अनुकूल है। जब कोई विचार किसी प्रजातांत्रिक जनता में बद्धमूल बन जाता है और समाज के अधिकांश व्यक्तियों के मस्तिष्कों में संस्थापित हो जाता है, तब बाद में वह विचार स्वयं अपने ऊपर जीवित रहता है और उसे कायम रखने के लिए किसी प्रयास की आवश्यकता नहीं होती, क्योंकि कोई भी व्यक्ति उस पर प्रहार नहीं करता। जो लोग पहले उसे मिथ्या कह कर अस्वीकृत कर देते हैं, वे ही अन्ततोगत्वा उसे सामान्य भावना के रूप में स्वीकार कर लेते हैं, और जो लोग अब भी अपने हृदयों में उसे स्वीकार नहीं करते, वे अपनी असहमति को छिपा कर रखते हैं; वे एक खतरनाक और निरर्थक संघर्ष में न पड़ने की सावधानी बरतते हैं।

यह सच है कि जब प्रजातांत्रिक जनता का बहुमत अपने विचारों में परिवर्तन करता है, तब वह मनुष्यों के मस्तिष्कों में आकस्मिक और मनमाने ढंग से विचित्र क्रान्तियाँ उत्पन्न कर सकता है, किन्तु उसके विचार बिना विशेष कठिनाई के नहीं बदलते और यह सिद्ध करना लगभग उतना ही कठिन होता है कि विचारों में परिवर्तन हो गया है।

कभी-कभी समय, घटनाएँ अथवा मस्तिष्क का अकेला पृथक् कार्य किसी विचार को परिवर्तित अथवा नष्ट कर देगा, किन्तु परिवर्तन का कोई बाह्य लक्षण दृष्टिगोचर नहीं होगा। उस विचार पर खुला प्रहार नहीं किया गया है, उसके विरुद्ध युद्ध करने के लिए कोई षड्यन्त्र नहीं किया गया है; किन्तु उसके अनुयायी एक-एक करके चुपचाप पृथक् होते जाते हैं, उनमें से कुछ प्रतिदिन उसका परित्याग करते जाते हैं, और अन्त में उसे मानने वाले अल्पसंख्या में ही रह जाते हैं। इस स्थिति में भी उसका प्राधान्य बना रहेगा। चूँकि उसके विरोधी मौन रहते हैं अथवा अपने विचारों का आदान-प्रदान चोरी चोरी ही करते हैं, इसलिए वे स्वयं अधिक समय तक इस बात से अनवगत रहते हैं कि वास्तव में क्रान्ति हो गयी है। अनिश्चितता की इस स्थिति में वे कोई पग नहीं उठाते; वे एक दूसरे को देखते हैं और मौन रहते हैं। बहुमत पहले जिस बात में विश्वास करता था, उसमें उसका विश्वास नहीं रह जाता, किन्तु वह अब भी विश्वास का दिखावा करता है, और जनमत की यह खोखली कल्पना परिवर्तनवादियों के उत्साह को ठंडा कर देने तथा उन्हें मौन रखने और सम्मानजनक दूरी पर रखने के लिए पर्याप्त रूप से शक्तिशालिनी होती है।

हम एक ऐसे युग में रहते हैं, जिसमें मनुष्यों के मस्तिष्कों में अत्यन्त तीव्र गति से वैचारिक परिवर्तन हुए हैं; इसके बावजूद यह हो सकता है कि निकट भविष्य में ही समाज के प्रमुख विचार इतने अधिक स्थिर हो जायें, जितने हमारे इतिहास में अनेक शताब्दियों तक नहीं रहे। वह समय अभी तक नहीं आया है, किन्तु सम्भवतः वह आ रहा है। जब मैं प्रजातांत्रिक राष्ट्रों की स्वाभाविक आवश्यकताओं और मनोवृत्तियों का अधिक निकट से निरीक्षण करता हूँ, तब मुझे इस बात का विश्वास हो जाता है कि यदि कभी विश्व में सामान्य और स्थायी रूप से सामाजिक समानता की स्थापना हो गयी, तो जितना सोचा जाता है, उसकी अपेक्षा महान बौद्धिक और राजनीतिक क्रान्तियाँ कम हो जायगी और उन्हें करना अधिक कठिन हो जायगा। चूँकि प्रजातांत्रिक मनुष्य सदा उत्तेजित, अनिश्चित, उत्सुक तथा अपनी इच्छाओं और स्थितियों

में परिवर्तनीय प्रतीत होते हैं, इसलिए यह कल्पना कर ली जाती है कि वे अपने कानूनों को अकस्मात् रद्द कर नये विचारों और नये व्यवहारों को ग्रहण कर लेंगे; किन्तु यदि समानता का सिद्धान्त मनुष्यों में परिवर्तन की प्रवृत्ति को जन्म देता है, तो वह उनमें कतिपय हितों और रुचियों को भी उत्पन्न करता है, जिन्हें स्थिर व्यवस्था के बिना सतुष्ट नहीं किया जा सकता। समानता उन्हें आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करती है, किन्तु साथ ही साथ वह उन्हें पीछे भी खींचती है; वह उन्हें उकसाती है, किन्तु उन्हें धरती के साथ आबद्ध कर देती है; वह उनकी इच्छाओं को प्रज्वलित करती है किन्तु उनकी शक्तियों को सीमित कर देती है।

फिर भी, यह बात प्रथम दृष्टि में नहीं दिखाई देती। जो भावनाएँ प्रजातंत्र के नागरिकों को पृथक् करती हैं, वे पर्याप्त रूप से प्रत्यक्ष होती हैं; किन्तु उन्हें नियंत्रित और एकताबद्ध करने वाली गुप्त शक्ति सरसरी दृष्टि से नहीं दिखाई देती।

मैं अपने चारों ओर जो विध्वंस देखता हूँ, उनके मध्य क्या मैं यह कहने का साहस करूँगा कि मैं क्रान्तियों को भावी पीढ़ियों के लिए सर्वाधिक खतरनाक नहीं मानता? यदि मनुष्यों ने स्वयं को घरेलू हितों की सकीर्ण सीमा में रखना और उस प्रकार की उत्तेजना पर जीवित रहना जारी रखा, तो इस बात की आशंका है कि वे अन्ततोगत्वा इन महान और शक्तिशाली जन-भावनाओं की पहुँच से बाहर हो जायगे, जो राष्ट्रों में विक्षोभ उत्पन्न करती हैं, किन्तु जो उनका विकास करती हैं और उनमें नयी शक्ति का संचार करती हैं। जब सम्पत्ति इतनी अस्थिर और सम्पत्ति प्रेम इतना प्रशांत और प्रबल हो जाता है, तब मैं यह आशंका किये बिना नहीं रह सकता कि मनुष्य एक ऐसी स्थिति में पहुँच सकते हैं, जब वे प्रत्येक नये सिद्धान्त को एक विपत्ति, प्रत्येक परिवर्तन को एक कष्टदायक श्रम तथा प्रत्येक सामाजिक सुधार को क्रान्ति का जन्मदाता समझने लगेंगे और इस प्रकार बहुत आगे बढ़ जाने के डर से एक दम हिलने-डुलने से ही इनकार करने लगेंगे। मुझे डर है और मैं इसे स्वीकार करता हूँ कि कहीं वे वर्तमान सुख के प्रति कायरतापूर्ण प्रेम में इतने अधिक तल्लीन न हो जायं कि अपने भावी कल्याण तथा अपने वंशजों के कल्याण को भूल जायं और आवश्यक होने पर उच्चतर उद्देश्य के लिए प्रबल और आकस्मिक प्रयास करने के बदले जीवन के सरल प्रवाह में प्रवाहित होना अधिक पसन्द करने लग जाय।

कुछ लोगों का विश्वास है कि आधुनिक समाज अपने स्वरूप में निरन्तर परिवर्तन करता रहेगा; जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, मुझे आशंका है कि वह

अन्ततोगत्वा एक ही प्रकार की संस्थाओं, एक ही प्रकार के पूर्वाग्रहों और एक ही प्रकार के व्यवहारों से इतने अधिक अपरिवर्तनीय रूप से आबद्ध सीमित हो जायगा कि मानव-जाति अवरुद्ध और सीमित हो जायगी। मस्तिष्क नवीन भावनाओं की सृष्टि न करके सदा आगे-पीछे घूमता रहेगा। मनुष्य लाभहीन तुच्छ बातों में अपनी शक्ति का अपव्यय करता रहेगा और मानवता यद्यपि निरन्तर गतिशील रहेगी तथापि उसकी प्रगति रुक जायगी।

४९. क्यों प्रजातांत्रिक राष्ट्र स्वभावतः शांति की और प्रजातांत्रिक सेनाएँ युद्ध की कामना करती हैं ?

जो हित, जो आशंकाएँ और जो भावनाएँ प्रजातांत्रिक राष्ट्रों को क्रान्तियों से विमुख करती हैं, वे ही उन्हें युद्ध से भी विमुख करती हैं; सैनिक-विजय की भावना और क्रान्ति की भावना में एक ही समय और एक ही प्रकार के कारणों से क्षीणता आ जाती है। शांति से प्रेम करने वाले सम्पत्तिशाली व्यक्तियों की संख्या में निरन्तर वृद्धि, निजी सम्पत्ति का, जिसे युद्ध तीव्र गति से समाप्त कर डालता है, विकास, व्यवहारों की मधुरता, हृदय की कोमलता, वे प्रवृत्तियाँ जो स्थितियों की समानता से उत्पन्न होती हैं, वह शांत सौमनस्य, जो मनुष्यों को शस्त्रग्रहण करने की हिंसक एवं काव्यमयी उत्तेजना से अपेक्षाकृत विमुख बना देता है—ये समस्त कारण एक साथ मिल कर सैनिक भावना को शांत कर देते हैं। मैं सोचता हूँ कि इसे एक सामान्य एवं शाश्वत नियम के रूप में स्वीकार किया जा सकता है कि जिस अनुपात में सामाजिक स्थितियों की समानता में वृद्धि होगी, उसी अनुपात में सभ्य राष्ट्रों में युद्ध की भावनाएँ अधिक विरल हो जायंगी तथा उनकी प्रबलता में भी कमी हो जायगी।

फिर भी, युद्ध एक ऐसी घटना है, जो समस्त राष्ट्रों में, प्रजातांत्रिक तथा अन्य राष्ट्रों में भी, घटित होती है। शांति के प्रति उनका प्रेम चाहे जितना हो, आक्रमण का प्रतिकार करने के लिए उन्हें तैयार रहना ही पड़ता है अथवा दूसरे शब्दों में उन्हें सेना रखनी ही पड़ती है। भाग्य ने, जिसने संयुक्त-राज्य अमरीका के निवासियों को अनेक लाभ प्रदान किये हैं, उन्हें सब से पृथक् कर दिया है, जहाँ यह कहा जा सकता है, उनका कोई पड़ोसी नहीं है; उनकी

आवश्यकताओं के लिए कुछ हजार सैनिक पर्याप्त हैं, किन्तु यह अमरीका की विशेष स्थिति है, प्रजातंत्र की नहीं।

स्थितियों की समानता और उससे उत्पन्न होनेवाले व्यवहारों और संस्थाओं द्वारा कोई प्रजातांत्रिक राष्ट्र सेनाएँ रखने की आवश्यकता से मुक्त नहीं हो जाता है और प्रजातांत्रिक राष्ट्रों की सेनाएँ सदा उनके भाग्य पर प्रबल प्रभाव डालती हैं। अतः इस बात का पता लगाना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है कि जिन व्यक्तियों से इन सेनाओं का निर्माण किया जाता है, उनकी स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ क्या होती हैं।

कुलीनतांत्रिक राष्ट्रों में, विशेषतः उन राष्ट्रों में, जहाँ श्रेणी केवल जन्म पर आधारित होती है, सेना में भी वही विषमता विद्यमान रहती है, जो राष्ट्र में विद्यमान रहती है; अफसर सरदार होता है और सैनिक दास होता है, आज्ञा देना एक का स्वाभाविक अधिकार होता है और आज्ञापालन करना दूसरे का कर्त्तव्य होता है। अतः कुलीनतांत्रिक सेनाओं में निजी सैनिक की महत्वाकांक्षा अत्यन्त संकीर्ण सीमाओं में आबद्ध होती है। अफसर की महत्वाकांक्षा का विस्तार भी असीमित नहीं होता। एक कुलीनतांत्रिक संस्था न केवल राष्ट्र की श्रेणियों के क्रम का अंग होती है, प्रत्युत स्वयं उसमें ही श्रेणियों के क्रम का एक भाग निहित होता है: जिन सदस्यों द्वारा उसकी रचना होती है, वे एक विशिष्ट और अपरिवर्तनीय ढंग से एक के ऊपर दूसरे रखे होते हैं। इस प्रकार रेजिमेंट और कम्पनी के सेनापतित्व का निश्चय जन्म के ही आधार पर होता है और वे जब एक बार अपनी आशाओं के चरम लक्ष्य तक पहुँच जाते हैं, तब वे स्वेच्छापूर्वक रुक जाते हैं और अपने भाग्य से सन्तुष्ट रहते हैं।

इसके अतिरिक्त कुलीनतंत्रों में पदोन्नति के लिये अफसरों की इच्छा को निर्बल बनाने वाला एक प्रबल कारण होता है। कुलीनतांत्रिक राष्ट्रों में अफसर सेना में अपने पद के अतिरिक्त समाज में भी एक उच्चतम स्थान रखता है; उसकी दृष्टि में सेना का पद प्रायः सदा ही समाज में उसके उच्च स्थान से सम्बद्ध होता है। सैनिक वृत्ति अपनाने वाला अभिजात वर्गीय व्यक्ति महत्वाकांक्षा के उद्देश्य से नहीं, प्रत्युत अपने जन्म द्वारा अपने ऊपर डाले गये उत्तरदायित्व एवं कर्तव्य की भावना से इस वृत्ति को ग्रहण करता है। वह अपनी युवावस्था के निष्क्रियतापूर्ण वर्षों के लिए कोई सम्मानजनक कार्य प्राप्त करने तथा अपने सैनिक जीवन की कतिपय सम्मानजनक स्मृतियों को वापस घर लाने के लिए सेना में प्रवेश करता है, किन्तु उसका मुख्य लक्ष्य सैनिक वृत्ति से सम्पत्ति, प्रतिष्ठा अथवा अधिकार प्राप्त करना नहीं होता, क्योंकि ये सुविधाएँ

उसके निजी अधिकार से उसके पास रहती है और वह घर छोड़े बिना ही उसका सुखोपभोग करता है।

प्रजातांत्रिक सेनाओं में समस्त सैनिक अफसर बन सकते हैं, जिससे पदोन्नति की आकांक्षा सामान्य बन जाती है और सैनिक महत्त्वाकांक्षा की सीमाएँ अपरिमेय रूप से बढ़ जाती हैं। जहाँ तक अफसर का सम्बन्ध होता है, एक पद से ऊपर दूसरे पद से उसे स्वाभाविक और आवश्यक रूप से रोकने वाली कोई वस्तु नहीं दिखायी देती और प्रत्येक उच्चतर पद उसकी दृष्टि में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होता है, क्योंकि उसका सामाजिक पद प्रायः सदा ही उसके सैनिक पद पर निर्भर करता है। प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में बहुधा ऐसा होता है कि अफसर के पास उसके वेतन के अतिरिक्त और कोई सम्पत्ति नहीं होती, सैनिक सम्मान के अतिरिक्त और कोई प्रतिष्ठा नहीं होती, फलस्वरूप जैसे-जैसे उसके कर्त्तव्यों में परिवर्तन होता है, वैसे-वैसे उसकी सम्पत्ति में भी परिवर्तन होता है और यह कहा जा सकता है कि वह एक नया व्यक्ति बन जाता है। इस प्रकार कुलीनतांत्रिक सेनाओं में जो वस्तु उसकी स्थिति से सम्बद्ध मात्र थी, वह इस प्रकार मुख्य बात अर्थात् उसकी समस्त स्थिति का ही आधार बन गयी है।

पुराने फ्रांसीसी राजतंत्र में अफसरों को सदा उनकी अभिजातवंशीय उपाधियों से सम्बोधित किया जाता था, अब उन्हें सदा उनके सैनिक पद की उपाधि से सम्बोधित किया जाता है। भाषा के स्वरूप में यह तुच्छ परिवर्तन यह प्रमाणित करने के लिये पर्याप्त है कि समाज और सेना की रचना में एक महान क्रांति हो गयी है।

प्रजातांत्रिक सेनाओं में पदोन्नति की इच्छा प्रायः सर्वव्यापिनी होती है; वह प्रबल, दृढ़ और शाश्वत होती है, उसे अन्य समस्त इच्छाओं से शक्ति प्राप्त होती है और वह स्वयं जीवन के साथ ही समाप्त होती है, किन्तु इस बात को देखना सरल है कि विश्व की समस्त सेनाओं में से प्रजातांत्रिक देशों की सेनाओं में शांति काल में पदोन्नति की गति मन्दतम होती है। चूँकि कमिशनों की संख्या स्वभावतः सीमित होती है, जबकि प्रतिद्वन्द्वियों की संख्या प्रायः असीमित होती है और चूँकि समानता का कठोर कानून सब पर समान रूप से लागू होता है, इसलिए कोई व्यक्ति तीव्र प्रगति नहीं कर सकता—अनेक व्यक्ति तो तनिक भी प्रगति नहीं कर सकते। इस प्रकार उन्नति की आकांक्षा अधिक और उन्नति के सुअवसर अन्य स्थानों की अपेक्षाकृत होते हैं। फलस्वरूप प्रजातांत्रिक सेना की समस्त महत्त्वाकांक्षापूर्ण भावनाएँ युद्ध के लिये प्रबल कामना करती हैं;

क्योंकि युद्ध में स्थान रिक्त होते हैं और उसमें वरिष्ठता के उस कानून का उल्लंघन करना पड़ता है, जो प्रजातंत्र का एकमात्र स्वाभाविक विशेषाधिकार होता है। *

इस प्रकार हम इस महत्त्वपूर्ण परिणाम पर पहुँचते हैं कि प्रजातांत्रिक सेनाएँ समस्त सेनाओं से अधिक युद्ध की प्रबल कामना करती हैं और प्रजातांत्रिक राष्ट्र समस्त राष्ट्रों से अधिक शांतिप्रिय होते हैं; और जो बात इन तथ्यों को और अधिक असाधारण बना देती है, वह यह है कि ये विपरीत प्रभाव एक ही समय समानता के सिद्धान्त द्वारा उत्पन्न होते हैं।

समुदाय के समस्त सदस्यों के एक समान होने के कारण वे अपनी स्थिति में परिवर्तन करने और अपनी दशा में सुधार करने की निरन्तर कामना करते रहते हैं और उन्हें इसकी सम्भावना भी दिखाई देती है। यह बात उन्हें शांतिप्रिय बनाती है, जो उद्योग के लिए अनुकूल होती है और इससे प्रत्येक व्यक्ति अपने निजी छोटे-छोटे कार्य को पूर्ण करने का अवसर प्राप्त करता है। दूसरी ओर, इसी समानता से सैनिक रणक्षेत्रों का स्वप्न देखने लगते हैं, क्योंकि यह समानता सैनिकों की दृष्टि में सैनिक सम्मानों का मूल्य बढ़ा देती है और उन सम्मानों को सभी की पहुँच के अन्तर्गत ला देती है। इन दोनों स्थितियों में हृदय की अशांति एक ही रहती है, सुखोपभोग की इच्छा उतनी ही महान रहती है—केवल उसे तृप्त करने के साधन भिन्न-भिन्न होते हैं।

राष्ट्र और सेना की ये विरोधी प्रवृत्तियाँ प्रजातान्त्रिक समुदायों के लिए अत्यन्त खतरनाक होती हैं। जब जनता सैनिक भावना का परित्याग कर देती है, तब तत्काल ही सैनिक वृत्ति का सम्मान करना बन्द कर दिया जाता है और सैनिकों को सरकारी कर्मचारियों की निम्नतम श्रेणी में गिना जाने लगता है। उनका तनिक भी सम्मान नहीं किया जाता और उनकी बातों को समझा नहीं जाता। तब कुलीनतांत्रिक युगों में जो कुछ होता है, उसकी उल्टी बात होती है; सेना में प्रवेश करने वाले व्यक्ति उच्चतम श्रेणी के नहीं, प्रत्युत निम्नतम श्रेणी के होते हैं। सैनिक महत्त्वाकांक्षा को तभी स्वीकार किया जाता है, जब अन्य कोई महत्त्वाकांक्षा सम्भव नहीं रहती। अतः कारण और परिणाम का एक ऐसा चक्र उत्पन्न होता है जिससे बच निकलना कठिन होता है। राष्ट्र का सर्वोत्तम भाग सैनिक वृत्ति को पसन्द नहीं करता, क्योंकि उस वृत्ति का सम्मान नहीं किया जाता और सैनिक वृत्ति का सम्मान इसलिए नहीं किया जाता कि राष्ट्र के सर्वोत्तम भाग ने उसका परित्याग कर दिया है।

अतः यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि प्रजातांत्रिक सेनाएँ बहुधा अशांत, बुरे स्वभाव वाली और अपनी स्थिति से असन्तुष्ट होती हैं, यद्यपि इनकी भौतिक स्थिति अन्य देशों की अपेक्षा बहुत अच्छी है और उनका अनुशासन कम कठोर होता है। सैनिक अनुभव करता है कि उसकी स्थिति निम्नतर कोटि की है, और उसका घायल अहंकार या तो युद्ध के प्रति उसकी रुचि में वृद्धि करता है जिससे उसकी सेवाएँ आवश्यक हो जायेंगी या उसमें क्रांति की इच्छा उत्पन्न करता है, जिसमें वह छल-बल द्वारा राजनीतिक प्रभाव और व्यक्तिगत महत्त्व प्राप्त करने की आशा कर सकता है, जिनसे सम्प्रति उसे वंचित कर दिया गया है।

प्रजातांत्रिक सेनाओं का गठन इस अन्तिम खतरे को बहुत अधिक भयंकर बना देता है। प्रजातांत्रिक समुदायों में प्रायः प्रत्येक व्यक्ति के पास कुछ सम्पत्ति होती है, जिसकी वह रक्षा करना चाहता है, किंतु प्रजातांत्रिक सेनाओं का नेतृत्व करने वाले व्यक्ति सामान्यतः सम्पत्तिहीन होते हैं, जिनमें से अधिकांश भाग स्वभावतः कुलीनतांत्रिक युगों की अपेक्षा क्रांतियों से बहुत अधिक भयभीत रहता है, किन्तु सेना के नेता उनसे अपेक्षाकृत बहुत कम भयभीत रहते हैं।

इसके अतिरिक्त (जैसा कि मैं अभी कह चुका हूँ), चूँकि प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में समृद्धतम, सर्वाधिक शिक्षित, और योग्यतम व्यक्ति सैनिक वृत्ति को बहुत कम ग्रहण करते हैं, इसलिए सेना, सामूहिक रूप से, अन्ततोगत्वा स्वयं एक राष्ट्र बन जाती है, जहाँ सम्पूर्ण राष्ट्र की अपेक्षा मस्तिष्क का विस्तार कम होता है, आदतें अधिक अपरिष्कृत होती हैं। अब, इस छोटे असभ्य राष्ट्र के अधिकार में शस्त्रास्त्र होते हैं और उनका प्रयोग करने का ढंग केवल उसे ही ज्ञात होता है, इसलिए निश्चय ही समाज के शांतिप्रिय स्वभाव के कारण सेना की सैनिक और अशांत भावना से प्रजातांत्रिक जनता के लिए खतरा बढ़ जाता है। युद्ध विमुख राष्ट्र में सेना से बढ़ कर खतरनाक वस्तु दूसरी कोई नहीं होती; शांति के लिए समस्त समाज के अत्यधिक प्रेम के कारण संविधान सदा सैनिकों की मर्जी पर कायम रहता है।

अतः सामान्य रूप से यह कहा जा सकता है कि यदि प्रजातांत्रिक राष्ट्र अपने हितों और अपनी प्रवृत्तियों के कारण स्वभावतः शांति की कामना करने वाले होते हैं, तो उनकी सेनाएँ उन्हें निरन्तर युद्ध और क्रांति के निकट लाती रहती हैं। प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में सैनिक क्रांतियों का, जिनका खतरा कुलीनतंत्रों में बहुत कम रहता है, भय सदा बना रहता है। उनके भावी मार्ग को संकटापन्न

बनाने वाले खतरों में इन खतरों को भयंकरतम समझा जाना चाहिए और इस खतरे को दूर करने का उपाय ढूँढने पर राजनेताओं को निरन्तर ध्यान देना चाहिए।

जब कोई राष्ट्र यह देखता है कि वह भीतर से अपनी सेना की व्यग्र महत्त्वाकांक्षा से प्रभावित हो गया है, तब सर्वप्रथम विचार यह उत्पन्न होता है कि युद्ध प्रारम्भ कर इस असुविधाजनक महत्त्वाकांक्षा को कोई एक लक्ष्य प्रदान किया जाय। मैं युद्ध के सम्बन्ध में कोई बुरी बात नहीं कहना चाहता : युद्ध लगभग सदा ही जनता के मस्तिष्क का विस्तार करता है तथा उसके चरित्र को ऊपर उठाता है। कुछ मामलों में स्थितियों की समानता से स्वाभाविक रूप से उत्पन्न होने वाली कतिपय प्रवृत्तियों की आत्यन्तिक बाढ़ को रोकने का वह एकमात्र साधन होता है और प्रजातांत्रिक समुदायों में जो कतिपय बद्धमूल बुराइयाँ होती हैं, उन्हें दूर करने का उसे एक आवश्यक उपाय समझा जाना चाहिये।

युद्ध से बड़े-बड़े लाभ होते हैं, किन्तु हमें यह न समझ लेना चाहिए कि इससे वह खतरा कम हो सकता है, जिसका मैंने अभी उल्लेख किया है। इससे वह खतरा स्थगित मात्र हो जाता है और युद्ध के समाप्त हो जाने पर पुनः अधिक भयंकर रूप में उपस्थित हो जाता है, क्योंकि सैनिक विजयों का रसास्वादन कर लेने के पश्चात् सेनाएं शांति के प्रति बहुत अधिक अधीर हो जाती हैं। युद्ध केवल उसी जाति के लिए उपचार का काम दे सकता है, जो सदा सैनिक विजय के लिए प्यासी होती है।

मैं इस बात की पूर्व कल्पना करता हूँ कि महान प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में प्रकट होने वाले समस्त सैनिक शासकों के लिए विजयोपरान्त अपनी सेनाओं को शांतिप्रिय बनाने की अपेक्षा अपनी सेनाओं द्वारा विजय प्राप्त करना सरल कार्य होगा। दो बातें ऐसी हैं, जो प्रजातांत्रिक जनता के लिए सदा ही अत्यन्त कठिन सिद्ध होंगी। वे दोनों बातें निम्नलिखित हैं—युद्ध प्रारम्भ करना और उसे समाप्त करना

पुनः, यदि प्रजातांत्रिक राष्ट्रों को युद्ध से कुछ विशेष लाभ प्राप्त होते हैं, तो दूसरी ओर वह उनके लिए कुछ खतरे भी पैदा करता है, जिससे समान मात्रा में डरने के लिए कुलीनतंत्रों को कोई कारण नहीं होता। मैं इनमें से केवल दो खतरों का उल्लेख करूँगा।

यद्यपि युद्ध सेना को सन्तुष्ट करता है, तथापि वह उन असंख्य व्यक्तियों को कठिनाई में और बहुधा कष्ट में डाल देता है, जिनकी छोटी-छोटी भावनाओं

की परितुष्टि के लिए प्रतिदिन शांति की आवश्यकता होती है। इस प्रकार इस बात का कुछ-कुछ खतरा रहता है कि जिस अशांति को रोकने के लिए युद्ध प्रारम्भ किया जाता है, वही अशांति एक दूसरे रूप में उत्पन्न हो जायगी।

कोई भी दीर्घकालीन युद्ध प्रजातांत्रिक देश की स्वतंत्रता को खतरे में डाल देता है। निश्चय ही ऐसी बात नहीं है कि प्रत्येक विजय के पश्चात् इस बात की आशंका रहती है कि विजयी सेनापति बल प्रयोग द्वारा उसी प्रकार सर्वोच्च सत्ता पर अधिकार कर लेंगे, जिस प्रकार साइला और सीजर ने किया था। खतरा एक दूसरे ही प्रकार का होता है। युद्ध के परिणामस्वरूप सदा ही प्रजातांत्रिक समुदायों में सैनिक शासन की स्थापना नहीं हुआ करती, किन्तु वह सदा ही नागरिक सरकार के अधिकारों में अपरिमित वृद्धि कर देता है और प्रायः अनिवार्य रूप से समस्त व्यक्तियों का ध्यान और समस्त वस्तुओं का प्रबन्ध प्रशासन के हाथों में केंद्रित हो जाता है। यदि वह आकस्मिक हिंसा द्वारा निरंकुशता को जन्म नहीं देता, तो वह मनुष्यों को उनकी आदतों द्वारा अधिक प्रच्छन्न रूप से इसके लिए तैयार करता है। किसी प्रजातांत्रिक राष्ट्र की स्वतंत्रता को नष्ट करने का प्रयत्न करनेवाले समस्त व्यक्तियों को जानना चाहिये कि इसका सर्वोत्तम और न्यूनतम समय लेनेवाला साधन युद्ध है। विज्ञान की यह प्रथम स्वय-सिद्धि है।

जब सैनिकों और अफसरों की महत्त्वाकांक्षा चिन्ताजनक बन जाती है, तब एक प्रत्यक्ष उपाय यह प्रतीत होता है कि सेना का विस्तार कर वितरित किये जाने वाले कमिशनों की संख्या बढ़ा दी जाय। इससे अस्थायी राहत मिल जाती है, किन्तु यह भविष्य में किसी समय देश को और बड़ी कठिनाइयों में डाल देता है। कुलीनतांत्रिक समुदाय में सेना वृद्धि का स्थायी प्रभाव हो सकता है, क्योंकि वहां सैनिक महत्त्वाकांक्षा एक वर्ग के व्यक्तियों तक ही सीमित होती है और प्रत्येक व्यक्ति की महत्त्वाकांक्षा एक सीमा पर पहुँच कर रुक जाती है, जिससे उसके प्रभाव का अनुभव करने वाले समस्त व्यक्तियों को सन्तुष्ट करना सम्भव हो सकता है; किन्तु प्रजातांत्रिक समाज में सेना में वृद्धि करने से कोई लाभ नहीं होता, क्योंकि जिस अनुपात में सेना में वृद्धि होती है, ठीक उसी अनुपात में महत्त्वाकांक्षी व्यक्तियों की संख्या में भी सदा वृद्धि होती है। नये कमिशनों का निर्माण कर जिन व्यक्तियों के दावों को पूरा कर दिया जाता है, उनका स्थान तत्काल ही ऐसे अगणित व्यक्ति ग्रहण कर लेते हैं, जिन्हें सन्तुष्ट किया ही नहीं जा सकता और जिन्हें सन्तुष्ट कर दिया जाता है, वे भी

शीघ्र ही और अधिक उन्नति की कामना करने लगते हैं, क्योंकि सेना की श्रेणियों में वही उत्तेजना व्याप्त रहती है और मनुष्य एक निश्चित श्रेणी व्याप्त करने की नहीं, प्रत्युत निरन्तर उन्नति करते रहने की इच्छा रखते हैं। यद्यपि ये आकांक्षाएँ बहुत बड़ी नहीं हो सकती हैं, तथापि उनकी पुनरावृत्ति निरन्तर होती रहती है। इस प्रकार प्रजातांत्रिक राष्ट्र अपनी सेना में वृद्धि कर केवल कुछ समय के लिए ही सैनिकों की महत्त्वाकांक्षा को दूर करता है। यह महत्त्वाकांक्षा शीघ्र ही प्रबलतर बन जाती है, क्योंकि इसका अनुभव करनेवाले व्यक्तियों की संख्या बढ़ जाती है।

मेरा मत है कि अशांत और उग्र भावना एक ऐसी बुराई है, जो प्रजातांत्रिक सेनाओं के गठन में ही अन्तर्निहित है और जिसके दूर होने की कोई भी आशा नहीं है। प्रजातंत्रों के विधायकों को किसी ऐसे सैनिक संगठन का निर्माण करने की आशा नहीं करनी चाहिए, जो अपने प्रभाव द्वारा सैनिक पेशे को शांत एवं नियंत्रित करने की क्षमता रखता हो। उद्देश्य की पूर्ति के पहले ही उनके प्रयासों की शक्ति समाप्त हो जायगी।

सेना की बुराइयों को दूर करने का उपाय स्वयं सेना में नहीं, प्रत्युत देश में मिलेगा। प्रजातांत्रिक राष्ट्र स्वभावतः उपद्रव और निरंकुशता से भयभीत रहते हैं। लक्ष्य यह होना चाहिए कि इन स्वाभाविक अन्तर्भावनाओं को बुद्धिसंगत, विवेकपूर्ण, और स्थायी रुचियों के रूप में परिणत कर दिया जाय। जब मनुष्य स्वतंत्रता का शांतिमय एवं लाभदायक उपयोग करना सीख जाते हैं और उसके वरदानों का अनुभव कर लेते हैं, जब वे व्यवस्था से प्रेम करने लगते हैं और उसके अनुशासन को स्वेच्छापूर्वक स्वीकार कर लेते हैं, तब वे ही व्यक्ति सैनिक वृत्ति ग्रहण करने पर अनजाने ही और प्रायः अपनी इच्छा के विपरीत उसमें उन्हीं आदतों और व्यवहारों का समावेश कर देते हैं। राष्ट्र की सामान्य भावना के सेना की विशेष भावना के साथ मिल जाने पर सैनिक जीवन से उत्पन्न विचारों और इच्छाओं में मुलायमियत आ जाती है अथवा जनमत की प्रबल शक्ति उनको दबा देती है। नागरिकों को शिक्षित, अनुशासित, दृढ़ और स्वतंत्र होना सिखाइए, सैनिक अनुशासित और आज्ञाकारी बन जायँगे।

जो कोई भी कानून सेना की उग्र भावना का दमन करते समय राष्ट्र में स्वतंत्रता की भावना को कम करने तथा कानून और अधिकार की धारणा को समाप्त करेगा, वह अपने लक्ष्य को ही नष्ट कर देगा; उससे सैनिक अत्याचार की स्थापना रुकेगी नहीं, प्रत्युत उसकी आशंका बहुत अधिक बढ़ जायगी।

किसी भी स्थिति में और समस्त संविधानों के बावजूद, प्रजातांत्रिक देश में

बड़ी सेना सदा ही बहुत बड़े खतरे का कारण बनी रहेगी। उस खतरे को दूर करने का सबसे प्रभावशाली साधन यह होगा कि सेना को घटा दिया जाय, किंतु यह एक ऐसा उपाय है, जिसे काम में लाने की क्षमता सभी राष्ट्रों में नहीं होती।

५०. किन कारणों से प्रजातांत्रिक सेनाएँ युद्ध के आरम्भ में अन्य सेनाओं की अपेक्षा अधिक कमजोर और दीर्घकालीन युद्ध के बाद अधिक अजेय होती हैं।

दीर्घकालीन शांति के बाद, किसी युद्ध के प्रारम्भ में, किसी भी सेना के लिए पराजित हो जाने का खतरा बना रहता है; दीर्घकाल से युद्ध में रत किसी भी सेना की विजय की प्रबल सम्भावनाएँ रहती हैं। यह सत्य प्रजातान्त्रिक सेनाओं के सम्बन्ध में विशेष रूप से चरितार्थ होता है। कुलीनतांत्रिक देशों में सैनिक जीवन चूँकि विशेषाधिकारपूर्ण जीवन होता है, इसलिए शांतिकाल मे भी उसे सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है। महान प्रतिभा, महान गुणों और महान महत्त्वाकांक्षा वाले व्यक्ति उसे ग्रहण करते हैं, सेना सभी मामलों मे राष्ट्र के समान स्तर पर और बहुधा उससे ऊपर होती है।

इसके विपरीत हमने देखा है कि प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों में राष्ट्र के श्रेष्ठतर मस्तिष्क धीरे-धीरे सैनिक वृत्ति से दूर होते जाते हैं और अन्य मार्गों द्वारा प्रतिष्ठा, शक्ति और विशेषतः सम्पत्ति अर्जित करने का प्रयास करते हैं। दीर्घकालीन शांति के बाद—और प्रजातान्त्रिक युगों में शांति की अवधि लम्बी होती है—सेना सदा स्वयं देश से निम्नतर स्तर की होती है। उस स्थिति में उसे सक्रिय सेवा के लिए बुलाया जाता है; और यदि युद्ध द्वारा इस स्थिति में परिवर्तन न हो जाय, तो देश के लिए तथा सेना के लिए भी खतरा रहता है।

मैंने दिखाया है कि प्रजातान्त्रिक सेनाओं में और शांति के समय में, वरिष्ठता का नियम पदोन्नति का सर्वोच्च और अपरिवर्तनीय कानून होता है। जैसा कि मैं पहले मत व्यक्त कर चुका हूँ, यह न केवल इन सेनाओं की गठन-पद्धति का, प्रत्युत जनता के गठन का परिणाम होता है और उसकी पुनरावृत्ति सदा होती रहेगी।

पुनः, चूँकि इन राष्ट्रों में अफसर की स्थिति पूर्णतः उसकी सैनिक स्थिति

पर निर्भर करती है और चूँकि उसे जो प्रतिष्ठा एवं योग्यता प्राप्त होती है, वह उसी स्रोत से प्राप्त होती है, इसलिए वह अपने पेशे से अवकाश नहीं ग्रहण करता अथवा जब तक वह जीवन के अन्त के अत्यन्त निकट नहीं पहुँच जाता, तब तक आयु के कारण उससे निवृत्त नहीं होता। इन दो कारणों का परिणाम यह होता है कि जब कोई प्रजातांत्रिक राष्ट्र दीर्घकालीन शांति के बाद युद्धलिप्त होता है, तब सेना के समस्त प्रमुख अफसर वृद्ध व्यक्ति होते हैं; मैं केवल कर्नलों की नहीं, प्रत्युत नॉनकमिशन्ड अफसरों की बात भी कह रहा हूँ, जिनमें से अधिकांश या तो स्थिर रहे हैं या धीरे-धीरे ही आगे बढ़े हैं। इस बात को आश्चर्य के साथ देखा जा सकता है कि प्रजातांत्रिक सेना में, दीर्घकालीन शांति के बाद, समस्त सैनिक 'छोकरे' मात्र होते हैं और सभी बड़े-बड़े अफसर वृद्ध होते हैं, जिससे सैनिकों में अनुभव की और अफसरों में उत्साह की कमी होती है। यह पराजय का एक प्रमुख कारण होता है, क्योंकि सफल सेनापतित्व की प्रथम शर्त युवावस्था होती है; यदि आधुनिक युग के महानतम कप्तान ने यह मत व्यक्त न किया होता, तो मैं ऐसा कहने का साहस नहीं करता।

कुलीनतांत्रिक सेनाओं में इन दो कारणों का एक ही प्रकार का परिणाम नहीं होता; चूँकि उनमें वरिष्ठता के अधिकार की अपेक्षा बहुत अधिक जन्मगत अधिकार के आधार पर पदोन्नति की जाती है, इसलिए सभी ओहदों पर कुछ युवक व्यक्ति होते हैं, जो अपने पेशे में युवावस्था की शरीर और मस्तिष्क की सारी शक्ति लेकर प्रवेश करते हैं। पुनः, चूँकि कुलीनतांत्रिक देशों में सैनिक सम्मान की कामना रखने वाले व्यक्तियों की नागरिक समाज में एक निश्चित स्थिति होती है, इसलिए वे बहुत कम वृद्धावस्था तक सेना में बने रहते हैं। युवावस्था के अत्यन्त उत्साहपूर्ण वर्षों को सैनिक जीवन में व्यतीत करने के बाद वे स्वेच्छापूर्वक अवकाश ग्रहण कर लेते हैं और प्रौढ़तर वर्षों के शेष भाग को घर पर व्यतीत करते हैं।

दीर्घकालीन शांति न केवल प्रजातांत्रिक सेनाओं में बूढ़े अफसरों की भरमार कर देती है, प्रत्युत वह समस्त अफसरों में शरीर और मस्तिष्क की ऐसी आदतें भी उत्पन्न कर देती है, जो उन्हें वास्तविक सेवा के लिए अयोग्य बना देती है। जो व्यक्ति बहुत दिनों तक प्रजातांत्रिक व्यवहारों के शांत एवं अशांत उष्ण वातावरण में रह चुका होता है, वह पहले-पहल अपने को युद्ध के कठोरतर परिश्रमों और कठोरतर कर्त्तव्यों के उपयुक्त नहीं बना पायेगा और यदि शस्त्रास्त्रों के प्रति उसकी रुचि पूर्णतया समाप्त नहीं हो जाती, तो कम

से कम वह ऐसी जीवन-पद्धति ग्रहण कर लेता है जो उसे विजय के लिए अनुपयुक्त बना देती है।

कुलीनतांत्रिक राष्ट्रों में सेना के व्यवहारों पर नागरिक जीवन के सुखों का कम प्रभाव पड़ता है, क्योंकि उन राष्ट्रों में कुलीन वर्ग सेना का नेतृत्व करता है और कुलीनतंत्र विलासमय आनन्दों में चाहे जितना भी अधिक क्यों न डूबा हुआ हो, वह सदा अपने कल्याण की भावनाओं के अतिरिक्त दूसरी भावनाएँ भी रखता है और इन भावनाओं को पूर्णरूप से सन्तुष्ट करने के लिए उसके निजी कल्याण की भावना का तत्परतापूर्वक बलिदान कर दिया जायगा।

मैंने बताया है कि शांतिकाल मे प्रजातांत्रिक सेनाओं में पदोन्नति की गति अत्यन्त मन्द होती है। पहले अफसर इस स्थिति का समर्थन अधीरता के साथ करते हैं, वे उत्तेजित होते हैं, अशांत होते हैं, कष्ट का अनुभव करते हैं; किंतु अंत में उनमें से अधिकांश इसे स्वीकार कर लेते हैं। जिनकी महत्त्वाकांक्षा और साधन स्रोत सबसे अधिक होते हैं, वे सेना का परित्याग कर देते हैं, अन्य सैनिक अपनी रुचियों और इच्छाओं को अपनी नगण्य सम्पत्ति के उपयुक्त बनाते हुए, अन्ततोगत्वा सैनिक पेशे को नागरिक दृष्टिकोण से देखने लगते हैं। वे इसमें जिस गुण को सर्वाधिक मूल्यवान समझते हैं, वह इसके साथ सम्बद्ध योग्यता और सुरक्षा होती है। भविष्य के सम्बन्ध में उनकी सारी धारणा इस तुच्छ प्रावधान की निश्चितता पर आधारित होती है और उन्हें केवल शांतिपूर्वक इसका आनन्द लेने की आवश्यकता होती है। इस प्रकार दीर्घकालीन शांति न केवल सेना में बूढ़े व्यक्तियों की भरमार कर देती है, प्रत्युत बहुधा उन व्यक्तियों में भी वृद्धों के विचार भर देती है, जो अभी तक जीवन की यौवनावस्था में होते हैं।

मैंने यह भी बताया है कि प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में शांति-काल में सैनिक पेशे को तनिक भी सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जाता तथा उसे अत्यल्प उत्साह के साथ ग्रहण किया जाता है। जनता के समर्थन का यह अभाव सेना को अत्यधिक निरुत्साह कर देता है, यह सैनिकों के मस्तिष्कों को दबा देता है और जब आखिर में यह प्रारम्भ हो ही जाता है, तब वे अपनी प्रेरणा और उत्साह को तत्काल पुन: नहीं प्राप्त कर सकते। कुलीनतांत्रिक सेनाओं में नैतिक दुर्बलता का इस प्रकार का कोई कारण नहीं होता; वहाँ अफसरों को स्वयं उनकी दृष्टि में या उनके देशवासियों की दृष्टि में कभी निम्न नहीं समझा जाता, क्योंकि सैनिक महानता से स्वतंत्र वे व्यक्तिगत रूप से भी महान होते हैं;

किन्तु यदि इन दोनों प्रकार की सेनाओं पर शांति का एक ही प्रकार का प्रभाव पड़े, तो भी परिणाम भिन्न-भिन्न होंगे।

जब कुलीनतांत्रिक सेनाओं के अफसरों की युद्ध भावना तथा युद्ध द्वारा अपने को ऊपर उठाने की इच्छा समाप्त हो जाती है, तब भी उनमें अपने वर्ग के सम्मान के प्रति आदर की एक भावना तथा उदाहरण प्रस्तुत करने में सब से आगे होने की एक पुरानी आदत बनी रहती है, किन्तु जब किसी प्रजातांत्रिक सेना के अफसरों में युद्ध के प्रति प्रेम और शस्त्रास्त्रों की महत्त्वाकांक्षा नहीं रह जाती, तब उनके पास कुछ भी नहीं बच रहता।

अतः, मेरा मत है कि जब कोई प्रजातांत्रिक राष्ट्र दीर्घकालीन शांति के बाद किसी युद्ध में रत होता है, तो अन्य किसी भी राष्ट्र की अपेक्षा उसकी पराजय का खतरा बहुत अधिक रहता है; किन्तु उसे अपनी पराजयों से हतोत्साह नहीं होना चाहिए, क्योंकि युद्ध के दीर्घ काल तक चलने से इस प्रकार की सेना की सफलता की सम्भावनाएँ बढ़ जाती हैं। जब युद्ध के जारी रहने से अन्त में समस्त समाज की भावनाएँ उत्तेजित हो उठती हैं और वह अपने शांतिपूर्ण क्रियाकलापों का परित्याग कर देता है तथा उसके छोटे छोटे व्यवसाय नष्ट हो जाते हैं, तब वे ही भावनाएँ युद्ध की ओर उन्मुख हो जाती हैं, जिनके कारण प्रजातांत्रिक समाज शांति की रक्षा को इतना अधिक महत्त्व प्रदान करता है। जब युद्ध व्यवसाय की समस्त पद्धतियों को नष्ट कर डालता है, तब स्वयं सबसे बड़ा और एकमात्र व्यवसाय बन जाता है, जिसकी ओर समानता-जनित समस्त प्रबल और महत्त्वाकांक्षापूर्ण इच्छाएँ उन्मुख हो जाती हैं। इस प्रकार वे ही प्रजातांत्रिक राष्ट्र, जो युद्ध-रत होने के लिए इतने अधिक अनिच्छुक रहते हैं, एकबार जब रणक्षेत्र में प्रविष्ट हो जाते हैं, तब कभी-कभी महान सफलताएँ प्राप्त करते हैं।

जब युद्ध जनता के ध्यान को अधिकाधिक आकृष्ट करता है और जब यह अल्प अवधि में ही उच्च प्रतिष्ठा और महान सम्पत्ति प्रदान करनेवाला समझा जाने लगता है, तब राष्ट्र के सर्वोत्कृष्ट व्यक्ति सैनिक-पेशे में प्रवेश करते हैं; तब न केवल कुलीनतंत्र के, प्रत्युत समस्त देश के अध्यवसायी, अभिमानी और सैनिक मस्तिष्क इस दिशा में मुड़ जाते हैं। चूँकि सैनिक सम्मानों के लिए प्रतिद्वन्द्वियों की संख्या अत्यधिक होती है और युद्ध प्रत्येक व्यक्ति को उसके समुचित स्तर पर ले जाता है, इसलिए महान सेनापतियों का प्रकट होना सदा ही सुनिश्चित रहता है। दीर्घकालीन युद्ध का प्रजातांत्रिक सेना पर वही प्रभाव

पड़ता है, जो प्रभाव जनता पर क्रांति का पड़ता है; वह नियमों को छिन्नभिन्न कर देता है और असाधारण व्यक्तियों को सामान्य स्तर से ऊपर उठने का सुअवसर प्रदान करता है। जिन अफसरों के शरीर और मस्तिष्क युद्धकाल में वृद्ध हो चुके होते हैं, उन्हें हटा दिया जाता है अथवा उन्हें वृद्धता के कारण सेवा-निवृत्त कर दिया जाता है, या वे मर जाते हैं। उनके स्थान पर युवकों का एक समूह आगे आता है, जिनके शरीर पहले से ही पुष्ट तथा जिनकी इच्छाएं सक्रिय युद्ध से विस्तृत एवं प्रज्वलित हो गयी रहती हैं। वे हर प्रकार के विघ्न को पार कर उन्नति करने के लिए, शाश्वत उन्नति करने के लिए कृतसंकल्प रहते हैं; इनके बाद इसी प्रकार की भावनाएँ और इच्छाएँ रखने वाले अन्य व्यक्ति होते हैं और इनके बाद भी अन्य व्यक्ति होते हैं, जिनकी संख्या सेना के आकार के अतिरिक्त अन्य किसी वस्तु से सीमित नहीं होती। समानता का सिद्धान्त सभी के लिए महत्त्वाकांक्षा का द्वार खोल देता है और मृत्यु सभी के लिए महत्त्वाकांक्षा का अवसर प्रदान करती है। मृत्यु सैनिकों की संख्या को निरंतर कम करती रहती है, जिससे स्थान रिक्त होते रहते हैं और सैनिक जीवन के द्वार बन्द होते और खुलते रहते हैं। इसके अतिरिक्त, सैनिक स्वरूप और प्रजातंत्रों के स्वरूप में एक गुप्त सम्बंध होता है, जिसे युद्ध प्रकाश में लाता है। प्रजातान्त्रिक व्यक्ति स्वभावतः अभीप्सित वस्तु को प्राप्त करने तथा सरल शर्तों पर उसका सुखोपभोग करने की प्रबल आकांक्षा रखते हैं। वे अधिकांशतः संयोग की पूजा करते हैं और कठिनाइयों की अपेक्षा मृत्यु से बहुत कम भयभीत रहते हैं। वाणिज्य एवं उद्योग में वे इसी भावना से काम लेते हैं और यही भावना जब उनके साथ रणक्षेत्र में पहुँचती है, तब वह एक क्षण में ही सफलता के पुरस्कार प्राप्त करने के लिए उन्हें स्वेच्छापूर्वक प्राणोत्सर्ग कर देने के लिए प्रेरित करती है। प्रजातान्त्रिक जनता की कल्पना को सैनिक महानता, जो स्पष्ट एवं आकस्मिक आभा वाली महानता होती है, जो बिना श्रम के प्राप्त होती है और जिसके लिए जीवन को छोड़ कर अन्य किसी वस्तु को खतरे में नहीं डालना पड़ता, जितनी सुखकर प्रतीत होती है, उतनी सुखकर अन्य कोई भी महानता नहीं प्रतीत होती।

इस प्रकार, जबकि प्रजातान्त्रिक समाज के सदस्यों के हित और उनकी रुचियाँ उन्हें युद्ध से विमुख बनाती हैं, उनके मस्तिष्क की आदतें उन्हें युद्ध का संचालन भलीभाँति करने की योग्यता प्रदान करती हैं; जब वे अपने व्यवसाय और अपने सुखों से जाग उठते हैं, तब वे शीघ्र ही अच्छे सैनिक बन जाते हैं।

यदि शांति प्रजातांत्रिक सेनाओं के लिए विशेषरूप से हानिकारक होती है, तो युद्ध उन्हें ऐसे लाभ प्रदान करता है, जो अन्य सेनाओं को कभी प्राप्त नहीं होते और प्रारम्भ में इन लाभों का अनुभव चाहे जितना कम किया जाय, अन्त में वे प्रजातांत्रिक सेनाओं को विजयी बना कर ही रहते हैं। जो कुलीनतांत्रिक राष्ट्र किसी प्रजातांत्रिक राष्ट्र के साथ युद्ध मे प्रारम्भ में ही उसे नष्ट कर देने में सफल नहीं होता, उसे प्रजातांत्रिक राष्ट्र द्वारा परास्त हो जाने का महान खतरा सदा बना रहता है।

५१. प्रजातांत्रिक समुदायों में युद्ध पर कतिपय विचार

जब समानता का सिद्धान्त न केवल एक राष्ट्र में, प्रत्युत अनेक पड़ोसी राष्ट्रों में एक ही समय फैल रहा हो, जैसा कि सम्प्रति यूरोप में हो रहा है, तब भी इन विभिन्न देशों के निवासी भाषा, रीतिरिवाजों और कानूनों की विषमता के बावजूद, युद्ध से समान रूप से डरते रहते हैं और शांति से सामान्य रूप से प्रेम रखते हैं। इस मामले में वे एक दूसरे के समान रहते हैं, राजा महत्त्वाकांक्षा अथवा क्रोध के वशीभूत होकर व्यर्थ ही शस्त्र ग्रहण करते हैं; वे अपनी इच्छा के बावजूद एक प्रकार की सामान्य उदासीनता और सद्भावना से संतुष्ट हो जाते हैं, जिसके कारण तलवार उनकी पकड़ से गिर पड़ती है और युद्धों के अवसर दुर्लभ हो जाते हैं।

जब एक ही समय अनेक देशों में होने वाला समानता का प्रसार उनके विभिन्न निवासियों को एकसाथ ही उद्योग एवं वाणिज्य में लगने के लिए प्रेरित करता है, तब न केवल रुचियों में समानता आ जाती है, बल्कि उनके हित इस प्रकार एक दूसरे के साथ मिल जाते हैं कि कोई भी राष्ट्र स्वयं संकट में पड़े बिना दूसरे राष्ट्रों को संकट में नहीं डाल सकता; और अन्ततोगत्वा समस्त राष्ट्र युद्ध को एक ऐसी विभीषिका मानने लगते हैं, जो विजेता के लिए भी उतनी ही कष्टदायक होती है, जितनी विजित के लिए।

इस प्रकार, एक ओर प्रजातांत्रिक युगों में राष्ट्रों को युद्ध में फँसाना अत्यन्त कठिन होता है, किन्तु, दूसरी ओर यह प्रायः असम्भव होता है कि किसी भी दो राष्ट्रों के युद्धरत होने पर शेष राष्ट्र उसमें न सम्मिलित हों। उनके हित एक दूसरे के साथ इतने अधिक मिले होते हैं, उनके मतों और उनकी

आवश्यकताओं में इतना अधिक सादृश्य होता है कि एक के उत्तेजित होने पर अन्य राष्ट्र शांत नहीं रह सकते। अतः युद्धों के अवसर कम हो जाते हैं, किन्तु जब वे प्रारम्भ होते हैं, तो उनका विस्तार व्यापकतर क्षेत्र में हो जाता है।

पड़ोसी प्रजातांत्रिक राष्ट्र न केवल कुछ मामलों में एक समान बन जाते हैं, प्रत्युत अन्ततोगत्वा प्रायः सभी मामलों में उनमें सादृश्य आ जाता है। युद्धों के सम्बन्ध में राष्ट्रों के इस सादृश्य का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण परिणाम होता है।

जब मैं इस कारण का पता लगाता हूँ कि पन्द्रहवीं शताब्दी में हेल्वेटिक महासंघ से यूरोप के महानतम और अत्यन्त शक्तिशाली राष्ट्र भी क्यों काँपते रहते थे, जबकि आजकल उस देश की शक्ति ठीक उसकी जनसंख्या के अनुपात में ही है, तब मैं देखता हूँ कि स्विस अपने चारों ओर के समस्त समुदायों के सदृश और चारों ओर के समुदाय स्विसों के सदृश बन गये हैं, जिससे अब चूँकि उनके मध्य एकमात्र अन्तर संख्या-बल का रह गया है, इसलिए विशालतम सेना की आवश्यक रूप से विजय होती है। इस प्रकार यूरोप में हो रही प्रजातान्त्रिक क्रान्ति का एक परिणाम यह हुआ कि समस्त रणक्षेत्रों में संख्या-बल का प्राधान्य हो गया है और छोटे राष्ट्र बड़े राष्ट्रों के साथ मिलने अथवा कम-से-कम उनकी नीति को ग्रहण करने के लिए बाध्य हो गये हैं।

चूँकि संख्या-बल विजय का निर्णायक कारण बन गया है, इसलिए प्रत्येक राष्ट्र को निश्चय ही अपने समस्त साधनों द्वारा यथासम्भव अधिक से अधिक सैनिकों को रणक्षेत्र में लाने का प्रयास करना चाहिए। जिस समय स्विस पदाति सेना अथवा फ्रांसीसी घुड़सवार सेना की भाँति अन्य समस्त सेनाओं से श्रेष्ठ सेना की भर्ती कर सकना सम्भव था, उस समय बहुत बड़ी-बड़ी सेनाओं का निर्माण करना आवश्यक नहीं समझा जाता था, किन्तु जब एक सैनिक दूसरे सैनिक के समान ही कार्यक्षम होता है, तब स्थिति बदल जाती है।

जो कारण इस नयी आवश्यकता को जन्म देता है, वही इसकी पूर्ति के साधन भी प्रस्तुत करता है, क्योंकि जैसा कि मैं पहले ही बता चुका हूँ, जब सभी व्यक्ति एक समान होते हैं, तब सभी निर्बल हो जाते हैं और राज्य की सर्वोच्च शक्ति स्वभावतः अन्य स्थानों की अपेक्षा प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों में अधिक प्रबल होती है। अतः जब इन राष्ट्रों में समस्त पुरुष जनसंख्या को सेना में भर्ती करने की इच्छा होती है, तब उनमें इस लक्ष्य को पूरा करने की शक्ति भी होती है; परिणाम यह होता है कि प्रजातान्त्रिक युगों में जिस अनुपात में युद्ध प्रेम में कमी आती है, उसी अनुपात में सेनाओं का विस्तार होता प्रतीत होता है।

उन्हीं युगों में उन्हीं कारणों से युद्ध-संचालन की पद्धति में भी परिवर्तन हो जाता है। मैकियावेली ने 'दि प्रिंस' नामक पुस्तक में यह मत व्यक्त किया है कि "जिस जाति के नेता कोई राजा और उसके सरदार होते हैं, उसे पराजित करना उस जाति की अपेक्षा बहुत अधिक कठिन होता है, जिसका नेतृत्व कोई राजा और उसके गुलाम करते हैं।" भावनाओं को ठेस न पहुँचाने के लिए हमें 'गुलामों' के स्थान पर 'सार्वजनिक कर्मचारी' पढ़ना चाहिए और यह महत्त्वपूर्ण सत्य हमारे युग के सम्बन्ध में पूर्ण रूप से लागू होगा।

कोई महान कुलीनतांत्रिक राष्ट्र अत्यधिक कठिनाई के बिना न तो अपने पड़ोसियों पर विजय प्राप्त कर सकता है और न उनसे पराजित हो सकता है। वह उन पर इसलिए विजय नहीं प्राप्त कर सकता कि उसकी समस्त सेनाओं को दीर्घकालीन अवधि के लिए एकत्र और एकसाथ नहीं रखा जा सकता; वह पराजित इसलिए नहीं हो सकता कि शत्रु को पग पग पर प्रतिरोध के छोटे-छोटे केन्द्रों का सामना करना पड़ता है, जिनके द्वारा आक्रमण अवरुद्ध हो जाता है। किसी कुलीनतांत्रिक राष्ट्र के विरुद्ध युद्ध की तुलना एक पर्वतीय देश में होने वाले युद्ध से की जा सकती है, जहाँ पराजित दल को अपनी सेनाओं को एकत्र कर नयी स्थिति ग्रहण करने के सुअवसर निरन्तर मिलते रहते हैं।

प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में ठीक इसके विपरीत बात होती है। वे सरलतापूर्वक अपनी समस्त सेना को युद्धक्षेत्र में ला कर खड़ी कर देते हैं और यदि राष्ट्र समृद्ध एवं अधिक जनसंख्या वाला हुआ, तो वह शीघ्र ही विजयी हो जाता है; किन्तु यदि वह कभी पराजित हो जाता है और उसके क्षेत्र पर आक्रमण हो जाता है तो उसके हाथ में बहुत कम साधन स्रोत रह जाते हैं और यदि शत्रु राजधानी पर अधिकार कर लेता है, तो राष्ट्र समाप्त हो जाता है। इस बात का स्पष्टीकरण भलीभाँति किया जा सकता है। जब समाज का प्रत्येक सदस्य व्यक्तिगत रूप से विलग एवं अत्यन्त शक्तिहीन होता है, तब सम्पूर्ण समाज में से कोई भी व्यक्ति न तो अपनी रक्षा कर सकता है और न दूसरों को एकत्र कर सकता है। प्रजातांत्रिक देश में सरकार के अतिरिक्त कोई भी वस्तु शक्तिशाली नहीं होती; जब सरकार की सैनिक शक्ति सेना के विनाश द्वारा नष्ट हो जाती है, और उसकी नागरिक शक्ति राजधानी पर अधिकार हो जाने से नष्ट हो जाती है, तब केवल शक्तिविहीन अथवा सरकारविहीन जनसमूह मात्र बच रहता है, जो आक्रमणकारी संगठित शक्ति का प्रतिरोध करने की क्षमता नहीं रखता। मैं जानता हूँ कि स्थानीय स्वतन्त्रताओं और परिणामतः स्थानीय अधिकारों के

निर्माण द्वारा इस खतरे में कमी की जा सकती है; किन्तु यह उपाय सदा अपर्याप्त बना रहेगा, क्योंकि इस प्रकार की विपत्ति के बाद न केवल जनता में युद्ध को जारी रखने की योग्यता नहीं रह जाती, प्रत्युत इस बात की आशंका की जा सकती है कि उसमें इसके लिए प्रयत्न करने की प्रवृत्ति भी नहीं रह जायगी।

सभ्य देशों में स्वीकृत किये गये राष्ट्रों के कानून के अनुसार युद्ध का उद्देश्य निजी व्यक्तियों की सम्पत्ति पर अधिकार करना नहीं, प्रत्युत राजनीतिक सत्ता पर अधिकार करना मात्र होता है। निजी सम्पत्ति का विनाश केवल कभी-कभी राजनीतिक सत्ता पर अधिकार करने के उद्देश्य की पूर्ति के लिए किया जाता है।

जब किसी कुलीनतांत्रिक देश पर उसकी सेना की पराजय के बाद आक्रमण किया जाता है, तब सरदारगण, यद्यपि वे समाज के समृद्धतम सदस्य होते हैं, आत्मसमर्पण करने की अपेक्षा व्यक्तिगत रूप से अपनी रक्षा करना जारी रखेंगे, क्योंकि यदि विजेता देश का अधिपति बना रहा, तो वह उन्हें उनकी राजनीतिक सत्ता से, जिसे वे अपनी सम्पत्ति से भी अधिक चाहते हैं, वंचित कर देगा। अतः वे आत्मसमर्पण करने की अपेक्षा, जो उनके मतानुसार महानतम दुर्भाग्य होता है, लड़ना अधिक पसन्द करते हैं, और वे जनता को सरलतापूर्वक अपने साथ कर लेते हैं, क्योंकि जनता को उनका अनुगमन करने एवं उनकी आज्ञाओं का पालन करने का दीर्घकालीन अभ्यास रहता है और इसके अतिरिक्त उसे युद्ध से कोई खतरा नहीं रहता।

इसके विपरीत जिस राष्ट्र में स्थितियों की समानता व्याप्त रहती है, उसमें प्रत्येक नागरिक को थोड़ा सा ही और बहुधा तनिक भी नहीं, राजनीतिक अधिकार प्राप्त होता है : दूसरी ओर समस्त नागरिक स्वतंत्र होते हैं और सभी के पास कुछ न कुछ खोने के लिए रहता है, वे कुलीनतांत्रिक राष्ट्रों की जनता की अपेक्षा पराजय से बहुत कम और युद्ध से बहुत अधिक भयभीत रहते हैं। किसी प्रजातांत्रिक देश के क्षेत्र में युद्ध के पहुँच जाने पर उसकी जनता को शस्त्र ग्रहण करने के लिए प्रेरित करना सदा ही अत्यन्त कठिन कार्य रहेगा। अतः इस प्रकार की जनता को अधिकार और राजनीतिक चरित्र प्रदान करना आवश्यक है, जिससे प्रत्येक नागरिक में उन रुचियों में से कतिपय रुचियाँ उत्पन्न होंगी, जिनके कारण कुलीनतांत्रिक देशों में सरदारगण जनकल्याण के लिए कार्यरत होते हैं।

राजाओं और प्रजातांत्रिक राष्ट्रों के अन्य नेताओं को इस बात का विस्मरण कदापि नहीं करना चाहिए कि स्वतंत्रता-प्रेम और स्वतंत्रता की आदत के अतिरिक्त किसी अन्य वस्तु द्वारा भौतिक कल्याण के प्रति प्रेम और उसकी आदत का सामना लाभपूर्वक नहीं किया जा सकता, स्वतंत्र संस्थाओं से विहीन प्रजातांत्रिक जनता पराजय की स्थिति में पराधीनता के लिए जितनी प्रस्तुत होती है, उससे अधिक प्रस्तुत अन्य किसी वस्तु की मैं कल्पना नहीं कर सकता।

पहले छोटी छोटी सेनाओं द्वारा युद्ध करने, छोटे छोटे युद्ध लड़ने और दीर्घकालीन नियमित घेराबन्दियाँ करने की प्रथा थी। आधुनिक पद्धति निर्णायक युद्ध करने और ज्योंही सेना के लिए अभियान का मार्ग खुल जाय, त्योंही एक ही प्रहार में युद्ध को समाप्त कर देने के लिए राजधानी की ओर तीव्र गति से बढ़ने की है। कहा जाता है कि नेपोलियन इस नयी पद्धति का आविष्कर्त्ता था; किन्तु इस प्रकार की पद्धति का आविष्कार किसी एक व्यक्ति पर निर्भर नहीं करता था, चाहे वह व्यक्ति कोई भी हो। नेपोलियन जिस पद्धति से युद्ध-संचालन करता था, उसका ज्ञान उसे उसके युग की सामाजिक स्थिति से प्राप्त हुआ था; वह पद्धति इसलिए सफल हुई कि वह पूर्णरूपेण सामाजिक स्थिति के उपयुक्त थी और उसने सर्वप्रथम इससे काम लिया। सेना के आगे-आगे एक राजधानी से दूसरी राजधानी तक प्रयाण करने वाला नेपोलियन प्रथम सेनापति था, किन्तु सामन्तशाही समाज के विनाश ने उसके लिये मार्ग प्रशस्त कर दिया था। यह विश्वास समुचित रूप से किया जा सकता है कि यदि वह असाधारण व्यक्ति तीन सौ वर्ष पूर्व उत्पन्न हुआ होता, तो उसकी युद्ध-संचालन-पद्धति के वही परिणाम नहीं निकलते अथवा यों कहना चाहिए कि उसने किसी भिन्न पद्धति से काम लिया होता।

गृह-युद्धों के सम्बन्ध में मैं बहुत कम शब्द कहूँगा, जिससे कहीं पाठक का धैर्य समाप्त न हो जाय। मैंने विदेशी युद्धों के सम्बन्ध में जो बातें कही हैं, उनमें से अधिकांश बातें गृह-युद्धों के सम्बन्ध में भी अधिक जोर के साथ लागू होती हैं। प्रजातंत्रों में रहनेवाले व्यक्तियों में स्वभावतः सामरिक भावना नहीं होती; कभी-कभी, युद्ध क्षेत्र में जाने के लिए विवश हो जाने पर वे इस भावना को ग्रहण करते हैं; किन्तु सामूहिक रूप से खड़े होने तथा स्वेच्छापूर्वक युद्ध की, विशेषतः गृह-युद्ध की भयंकरताओं का सामना करने का मार्ग ऐसा होता है, जिसे ग्रहण करने की प्रवृत्ति प्रजातंत्रों में निवास करने वाले व्यक्तियों में नहीं होती। समुदाय के अत्यन्त साहसिक व्यक्ति ही इस प्रकार के खतरे मोल लेना

स्वीकार करते हैं; जनसंख्या का अधिकांश भाग गतिहीन बना रहता है।

किन्तु यदि जनसंख्या में कार्य करने की प्रवृत्ति भी हो, तो उनके मार्ग में बहुत अधिक बाधाएँ उपस्थित होंगी, क्योंकि वे ऐसे किसी पुराने और सुस्थापित प्रभाव का आश्रय नहीं ले सकते, जिसकी आज्ञा का पालन करने के लिए वे तैयार हों—असन्तुष्ट तथा अनुशासित व्यक्तियों को भी एकत्र करने एवं उनका नेतृत्व करने के लिए कोई सुप्रसिद्ध नेता नहीं होते—राष्ट्र की सर्वोच्च सत्ता के अधीन ऐसे राजनीतिक अधिकार नहीं होते, जो सरकार के विरुद्ध निर्देशित प्रतिरोध को प्रभावशाली समर्थन प्रदान करते हैं।

प्रजातान्त्रिक देशों में बहुमत की नैतिक शक्ति अपार होती है और उसके अधिकार में जो भौतिक साधन-स्रोत होते हैं, वे उन भौतिक साधन स्रोतों से बहुत अधिक होते हैं, जिन्हें उसके विरुद्ध उपयोग में लाया जा सकता है। अतः जो दल बहुमत के स्थान पर अधिकार रखता है, उसके नाम पर बोलता है तथा उसकी शक्ति पर अधिकार रखता है, वह समस्त निजी प्रतिरोध पर तत्काल और अप्रतिरोध्य विजय प्राप्त कर लेता है। वह इस प्रकार के विरोध का अस्तित्व भी नहीं रहने देता, वह उसे प्रारम्भ में ही समाप्त कर देता है।

इस प्रकार के राष्ट्रों में जो लोग शस्त्र-बल द्वारा क्रांति लाने का प्रयत्न नहीं करते, उनके लिए इसके अतिरिक्त दूसरा कोई मार्ग नहीं होता कि वे समस्त सरकारी यंत्र पर अकस्मात् ज्यों-का-त्यों अधिकार कर लें और यह कार्य युद्ध की अपेक्षा मात्र एक प्रहार द्वारा अधिक अच्छी तरह से सम्पन्न किया जा सकता है; क्योंकि ज्योंही नियमित युद्ध प्रारम्भ हो जाता है त्योंही राज्य का प्रतिनिधित्व करने वाले दल की विजय सुनिश्चित हो जाती है।

गृहयुद्ध केवल एक स्थिति में उत्पन्न हो सकता है। वह स्थिति सेना के दो गुटों में विभक्त हो जाने की है, जिनमें एक गुट विद्रोह का झण्डा उठा ले और दूसरा गुट वफादार बना रहे। सेना एक छोटे समाज के तुल्य होती है, जिसमें अत्यन्त घनिष्ठ एकता होती है, जिसमें महान जीवन-शक्ति होती है और जिसमें कुछ समय के लिए अपनी निजी आवश्यकताओं की पूर्ति करने की क्षमता होती है। इस प्रकार का युद्ध रक्तरंजित हो सकता है, किन्तु वह दीर्घकालीन नहीं हो सकता; क्योंकि या तो विद्रोही सेना अपने साधन स्रोतों के प्रदर्शन मात्र से अथवा अपनी प्रथम विजय द्वारा सरकार पर विजय प्राप्त कर लेगी और तत्पश्चात् युद्ध समाप्त हो जायगा या संघर्ष होगा और सेना का वह भाग, जिसे राज्य की संगठित शक्तियों का समर्थन नहीं प्राप्त होगा, या तो

शीघ्र ही अपना विघटन कर लेगा या नष्ट हो जायगा। अतः इस बात को एक सामान्य सत्य के रूप में स्वीकार किया जा सकता है कि समानता के युगों में गृह-युद्ध बहुत कम हो जायेंगे और उनकी अवधि भी कम हो जायगी।

५२. समानता स्वाभाविक रूप से मनुष्यों में स्वतंत्र संस्थाओं के लिए अभिरुचि पैदा करती है।

समानता का सिद्धान्त मनुष्यों को एक दूसरे से स्वाधीन बनाता है और उनमें यह प्रवृत्ति और अभिरुचि उत्पन्न करता है कि वे अपने निजी कार्यों में, अपनी स्वयं की इच्छाशक्ति को छोड़ कर अन्य किसी का मार्गदर्शन स्वीकार नहीं करें। यह सम्पूर्ण स्वाधीनता, जिसका वे अपने समवयस्क लोगों के साथ और निजी जीवन के आचरण में निरन्तर उपभोग करते हैं, उनमें समस्त सत्ता को ईर्ष्या की दृष्टि से देखने की प्रवृत्ति उत्पन्न करती है, और उनमें शीघ्र ही राजनीतिक स्वतन्त्रता की धारणा और उसके प्रति प्रेम जगाती है। ऐसे युग में रहनेवाले लोगों में स्वतंत्र संस्थाओं के प्रति स्वाभाविक झुकाव पाया जाता है। इनमें से किसी भी व्यक्ति को ले लीजिए और आपसे हो सके तो अन्तर की गहनतम प्रवृत्तियों की खोज कीजिए; आपको ज्ञात होगा कि वह तुरन्त ही सब तरह की सरकारों में से उसी सरकार का ध्यान में लायेगा और सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण समझेगा जिसका सर्वोच्च अधिकारी स्वयं उसने चुना है और जिसके प्रशासन पर वह नियंत्रण कर सकता है।

परिस्थितियों की समानता द्वारा उत्पन्न समस्त राजनीतिक प्रभावों में सर्वप्रथम यह स्वाधीनता का प्रेम मननशील व्यक्तियों का ध्यान आकर्षित करता है और दुर्बल व्यक्तियों को भयभीत करता है। परन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि उन लोगों का यह भय पूर्णतः अकारण है, क्योंकि अराजकता का रूप अन्य देशों की अपेक्षा प्रजातान्त्रिक देशों में अधिक भयानक होता है। चूँकि नागरिकों का एक-दूसरे पर प्रत्यक्ष कोई प्रभाव नहीं होता, इसलिए प्रतीत होता है कि ज्योंही राष्ट्र की सर्वोच्च सत्ता, जिसने अब तक उन्हें अपनी-अपनी जगह पर कायम रखा था, असफल हुई कि अराजकता अपनी चरम सीमा पर पहुँच जायेगी और सब लोग अपनी जगहों से च्युत होकर अलग-अलग दिशाओं की ओर उन्मुख होंगे,

जिससे समाज का ढांचा अवश्य ही तुरन्त ढह जायगा।

परन्तु मेरा मत है कि प्रजातान्त्रिक युग के लिए अराजकता भय का प्रमुख नहीं, अपितु क्षीणतम विषय है; क्योंकि समानता का सिद्धान्त दो प्रवृत्तियाँ उत्पन्न करता है : एक प्रवृत्ति मनुष्य को सीधे स्वतंत्रता की ओर अग्रसर करती है और एकाएक उसमें अराजकता उत्पन्न कर सकती है; दूसरी प्रवृत्ति दीर्घ और परोक्ष, परन्तु अधिक निश्चित मार्ग द्वारा उन्हें दासता की ओर ले जाती है। राष्ट्र प्रथम प्रवृत्ति को शीघ्र ही पहिचान लेते हैं और उसका प्रतिरोध करने के लिए तैयार रहते हैं; परन्तु दूसरी प्रवृत्ति उन्हें पथभ्रष्ट कर देती है और वे उसकी गति एवं दशा तक नहीं जान पाते। अतः इस प्रवृत्ति पर प्रकाश डालना विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है।

जहाँ तक मेरा प्रश्न है, मैं समानता के सिद्धान्त पर इस प्रकार का निन्दात्मक दोषारोपण करने को उत्सुक नहीं हूँ कि वह मनुष्यों को दुराग्रही बनाता है। उलटे इसी विशेषता की मैं मुख्य रूप से सराहना करता हूँ। यह सिद्धान्त मनुष्य के मस्तिष्क और हृदय में जिस तरह राजनीतिक स्वाधीनता की अस्पष्ट धारणा और स्वाभाविक प्रेम का आरोपण करता है, मैं उसकी प्रशंसा करता हूँ; क्योंकि वह जो बुराई करता है उसका उपचार भी इस प्रकार प्रस्तुत कर देता है। मैं इसी कारण उसका समर्थन करता हूँ।

५३. प्रजातांत्रिक राष्ट्रों की सरकार सम्बन्धी धारणाएँ स्वाभाविक रूप से शक्ति के केन्द्रीकरण के अनुकूल हैं

शासक और उसकी प्रजा के मध्य रहने वाली गौण शक्तियों की धारणा स्वभावतः कुलीनतांत्रिक राष्ट्रों की कल्पना से उत्पन्न हुई; क्योंकि उन समुदायों में व्यक्ति और परिवारों का स्तर सामान्य से ऊँचा था और स्पष्टतः वे अपनी जन्मजात कुलीनता, शिक्षा और समृद्धि के कारण शासन करने के अधिकारी थे। प्रजातान्त्रिक युग में प्रतिकूल कारणों से मनुष्य के मस्तिष्क में स्वभावतः वही धारणा नहीं पायी जाती। उसका प्रवेश केवल कृत्रिम रूप से ही कराया जा सकता है और बड़ी कठिनाई से उसे कायम रखा जा सकता है। इसके विपरीत, मानो इस विषय में बिना सोचे-विचारे ही वो धारणा उनके मस्तिष्क

में जन्म लेती है, वह है ऐसी एकमात्र और केन्द्रीय सत्ता की, जो अपने प्रत्यक्ष प्रभाव से सारे समाज पर शासन करती है।

इसके अतिरिक्त राजनीतिक दर्शन और धर्म के विषय में भी प्रजातांत्रिक राष्ट्रों की बुद्धि सरल और सामान्य धारणाओं को अपनाने को प्रस्तुत रहती है। जटिल पद्धतियाँ उसे नहीं सुहातीं। उसकी प्रिय कल्पना होती है एक ऐसे महान राष्ट्र की, जिसके सब नागरिक एक साँचे में ढले हुए हों और उन सब पर किसी एक शक्ति का शासन हो।

समानता के युग में मनुष्यों के मस्तिष्क में एकमात्र और केन्द्रीय शक्ति की धारणा के बाद पैदा होता है, विधान की समरूपता का विचार। जब प्रत्येक व्यक्ति यह देखता है कि उसमें और उसके चारों ओर के लोगों में बहुत ही कम भिन्नता है तो उसे इस बात का कोई कारण नहीं दीखता कि वह नियम जो एक मनुष्य के लिए लागू है, बाकी के सब लोगों के लिए भी वैसे ही लागू न हो। अतः न्यूनतम विशेषाधिकार की बात उसके तर्क के प्रतिकूल होती है, एक ही राष्ट्र के लोगों की राजनीतिक संस्थाओं की मामूली से मामूली असमानताएँ उसे क्षुब्ध करती हैं और उसे प्रतीत होता है कि अच्छी सरकार के लिए सबसे पहली शर्त है विधान की समरूपता।

इसके विपरीत मैं देखता हूँ कि कुलीनतांत्रिक युग में मानव का मस्तिष्क समाज के सभी सदस्यों पर समान रूप से लागू होने वाले समरूप नियम की इस धारणा से प्रायः अपरिचित था; या तो इस धारणा को उठाया ही नहीं गया या अस्वीकृत कर दिया गया।

विचारों की ये प्रतिकूल प्रवृत्तियाँ अन्ततोगत्वा दोनों ओर अन्ध वृत्तियों और अनियंत्रित स्वभावों की ओर झुक जाती हैं और आज भी विशेष अपवादों के बावजूद मनुष्यों के कार्यों का निर्देशन करती हैं। मध्ययुग में, परिस्थितियों की अत्यन्त विभिन्नताओं के बावजूद कुछ ऐसे लोगों की भी संख्या थी, जिनकी परिस्थितियाँ बिल्कुल समान थीं, परन्तु इस परिस्थिति ने उस समय के कानूनों को, प्रत्येक व्यक्ति को विशिष्ट कर्तव्य और विभिन्न अधिकार सौंपने से नहीं रोका। इसके विपरीत वर्तमान समय में सरकार की समस्त शक्तियाँ जनता पर, जिसमें समानता की बातें बहुत ही कम देखने को मिलती हैं, समान प्रथाएँ और समान कानून थोपने में संलग्न हैं।

जब किसी राष्ट्र में मनुष्यों की परिस्थितियाँ समान हो जाती हैं, तब व्यक्तियों को कम और समाज को अधिक महत्त्व प्राप्त होता है, या यों कहिये कि प्रत्येक

नागरिक समस्त नागरिकों की भीड़ में घुलमिल कर खो जाता है और स्वतंत्र समाज की महान और प्रभावशाली प्रतिच्छाया के अतिरिक्त कुछ भी स्पष्ट दिखाई नहीं पड़ता। यह स्थिति स्वाभाविक रूप से प्रजातांत्रिक युग के मनुष्यों में समाज के विशेषाधिकारों के प्रति उच्च विचार और व्यक्तियों के अधिकारों के बारे में अत्यन्त हीन धारणा पैदा करती है। वे यह स्वीकार करने के लिए तैयार रहते हैं कि समाज के हित ही सब कुछ हैं और व्यक्तियों के हित कुछ भी नहीं। वे इस तथ्य को सहर्ष स्वीकार करते हैं कि समुदाय का प्रतिनिधित्व करने वाली सत्ता के पास समुदाय के किसी भी सदस्य की अपेक्षा अधिक ज्ञान और बुद्धि रहती है और प्रत्येक नागरिक का मार्गदर्शन करना और उस पर नियंत्रण करना उस सत्ता का कर्तव्य और अधिकार होता है।

यदि हम अपने समकालीन लोगों का निकट से विश्लेषण करें और उनकी राजनीतिक विचारधाराओं की तह तक जायं तो हमें कतिपय ऐसी धारणाएँ मिलेंगी जिनका मैंने अभी उल्लेख किया है और सम्भवतः हमें यह जानकर आश्चर्य होगा कि मनुष्यों में, जो बहुधा इतनी विभिन्न परिस्थितियों में रहते हैं, इतनी अधिक समानता विद्यमान है।

अमरीकियों का मत है कि प्रत्येक राज्य में, सर्वोच्च शक्ति का निर्माण लोगों द्वारा होना चाहिए, परन्तु जब एक बार उस शक्ति का निर्माण हो जाता है तो वे उसे किन्हीं सीमाओं में बाँधने का विचार नहीं करते और वे यह स्वीकार करने को तैयार रहते हैं कि इस शक्ति को स्वेच्छा से कोई भी कार्य करने का अधिकार है। उनमें उन विशिष्ट विशेषाधिकारों की, जो नगरों, परिवारों या व्यक्तियों को प्रदान किये जाते हैं, किंचित् भी धारणा नहीं होती है। ऐसा प्रतीत होता है कि उनके मस्तिष्क में इस प्रकार की कल्पना कभी पैदा नहीं हुई कि एक ही कानूनों को राज्य के प्रत्येक भाग में और उसके सभी नागरिकों पर पूर्ण समरूपता के साथ लागू न करना भी सम्भव हो सकता है।

यूरोप में इसी प्रकार के मत अधिकाधिक रूप से फैले हुए हैं। यहाँ तक कि वे उन राष्ट्रों में भी फैले हुए हैं जो जनता की सार्वभौमता के सिद्धान्त को बड़ी दृढ़ता से अस्वीकार करते हैं। ऐसे राष्ट्रों की सर्वोच्च सत्ता का मूल भिन्न रहता है, परन्तु वे इस शक्ति को वही विशिष्टताएँ प्रदान करते हैं। इन सब के बीच माध्यमिक शक्तियों का विचार दुर्बल और अत्यन्त क्षीण होता है। अधिकार की धारणा, जो कतिपय व्यक्तियों में अन्तर्निहित है, शीघ्रता से मनुष्यों के मस्तिष्क से लोप होती जा रही है। उसके स्थान पर, स्वतंत्र समाज की सर्व-

शक्तिमान और एकमात्र सत्ता का विचार उत्पन्न होता है। जैसे जैसे सामाजिक परिस्थितियाँ और मनुष्य अधिकाधिक समान बनते जाते हैं, वैसे वैसे ये विचार जड़ पकड़ते और फैलते जाते हैं। ये विचार समानता द्वारा उत्पन्न होते हैं और उसके बदले वे समानता की प्रगति में तत्परता से योगदान देते हैं।

फ्रांस के, जहाँ क्रान्ति ने, जिसके विषय में मैं लिख रहा हूँ, यूरोप के किसी भी देश की अपेक्षा अधिक व्यापक रूप धारण कर लिया है, इन विचारों ने जनता के मस्तिष्क को पूर्णतः काबू में कर लिया है। यदि हम फ्रांस के विभिन्न दलों के विचारों को ध्यानपूर्वक सुनें तो हमें यह पता चलेगा कि वहाँ एक भी दल ऐसा नहीं है जिसने उन विचारों को अंगीकृत न कर लिया हो। इनमें अधिकांश दल शासन-संचालन की निंदा करते हैं, परन्तु वे सब इस विचार से सहमत हैं कि सरकार को निरन्तर कार्य करना चाहिए और प्रत्येक किये गये कार्य में निरन्तर हस्तक्षेप करना चाहिए। यहाँ तक कि अत्यन्त विरोधी मतों के दल भी इस विषय में पूर्ण रूप से सहमत हैं। सर्वोच्च सत्ता की एकता, सर्वव्यापकता, सर्वशक्तिमत्ता और उसके नियमों की समरूपता, उन समस्त राजनीतिक पद्धतियों के मुख्य लक्षण हैं जो हमारे युग में प्रस्तुत की गयी हैं। राजनीतिक सुधार की भयावह कल्पनाओं में भी वे पुनः जन्म लेते हैं और मानव-मस्तिष्क अपने स्वप्नों में उनके पीछे लगा रहता है।

यदि ये धारणाएँ व्यक्तिगत लोगों में अपने-आप पैदा हो जाती हैं तो वे राजाओं के मस्तिष्क को और भी अधिक प्रभावित करती हैं। जबकि यूरोपीय समाज का प्राचीन ढांचा परिवर्तित और भंग होता है, सार्वभौम शासकों को उनके अवसरों और कर्तव्यों के नये रूप प्राप्त होते हैं, उन्हें प्रथम बार इस बात का ज्ञान होता है कि केन्द्रीय शक्ति, जिसका वे प्रतिनिधित्व करते हैं, सारे समुदाय के समस्त विषयों का, अपने स्वयं के अभिकरण द्वारा और एक समान योजना के आधार पर संचालन कर सकती है और उसे करना चाहिए। हमारे युग के पूर्व यूरोप के राजतंत्रों द्वारा कभी भी इस विचार की कल्पना नहीं की गयी थी, यह मैं बड़े साहस के साथ अभिव्यक्त करूँगा। अब इस प्रकार की धारणा राजाओं के मस्तिष्क में गहराई से बसी हुई है और वहाँ अधिक अस्थिर विचारों के द्वन्द्व के बीच पड़ी हुई है।

इसलिए हमारे समकालीन इस विषय में, जैसा कि सामान्य रूप से समझा जाता है, उससे कम विभाजित हैं। वे निरंतर इस विषय पर विवाद करते हैं कि सर्वोच्चसत्ता किसके हाथों में रहनी चाहिये, परन्तु वे शीघ्र ही सर्वोच्च सत्ता

के अधिकारों और कर्तव्यों के सम्बन्ध में सहमत हो जाते हैं। उनकी धारणाओं के अनुसार सरकार एकमात्र सरल, दैविक और रचनात्मक शक्ति है।

राजनीति में अन्य समस्त गौण विचार अनिश्चित हैं, यही एक मात्र निश्चित, अभिन्न और स्थिर है। यही राजनीतिज्ञों और राजनीतिक दार्शनिकों द्वारा अपनाया जाता है और बड़े उत्साह से जनसमूह द्वारा ग्रहण किया जाता है। शासक और शासित दोनों ही समान उत्साह से उसका अनुसरण करना स्वीकार करते हैं; यह उनके मस्तिष्क की प्रारम्भिक भावना है जो स्वाभाविक प्रतीत होती है। इसलिए यह मानव-बुद्धि की कोई आकस्मिक क्रिया नहीं है, प्रत्युत मानव-जाति की वर्तमान स्थिति की आवश्यक शर्त है।

५४. प्रजातांत्रिक राष्ट्रों के भाव अपने विचारों के अनुकूल राजनीतिक शक्ति को केन्द्रित करने के लिए प्रेरित करते हैं।

समानता के युग में मनुष्य महान केन्द्रीय शक्ति की धारणा शीघ्रता से ग्रहण कर लेते हैं, यदि यह बात सही है तो इसमें भी सन्देह नहीं कि दूसरी ओर उनकी प्रवृत्तियाँ और भावनाएँ इस प्रकार की शक्ति को मान्यता देने और उसे अपना समर्थन देने के लिए पहले से ही उद्यत रहती हैं। इस तथ्य का निरूपण कुछ शब्दों में किया जा सकता है, क्योंकि तर्कों के अधिकांश भाग के विषय में, जिन पर तथ्य की कसौटी कसी जा सकती है, पहले ही वर्णन किया जा चुका है।

चूँकि प्रजातान्त्रिक देशों में रहने वालों में उच्च या निम्न नहीं होते और न उनके उपवर्गों में कोई स्वाभाविक या आवश्यक मार्गाधार ही रहते हैं, इसलिए वे स्वयं शीघ्रता से अपने पर ही विचार करने को बाध्य हो जाते हैं और स्वयं को अलग-अलग समझने लगते हैं। व्यक्तिवाद पर विचार करते समय इस तथ्य का विस्तारपूर्वक निरूपण करने का मुझे अवसर मिला था। अतः ऐसे मनुष्य कभी भी बिना प्रयत्न के सार्वजनिक कार्यों में व्यस्त होने के लिए अपने निजी कार्यों का त्याग नहीं कर सकते। यह स्वाभाविक प्रवृत्ति उन्हें सार्वजनिक कार्यों

को जनता के हितों की एकमात्र प्रत्यक्ष प्रतिनिधि अर्थात् राज्य के भरोसे छोड़ने को तत्पर करती है। सार्वजनिक कार्यों के लिए रुचि का उनमें न केवल स्वाभाविक अभाव ही रहता है, परन्तु बहुधा उन्हें समय नहीं मिलता। प्रजातांत्रिक युग में निजी जीवन इतना व्यस्त, इतना उत्तेजित, इतना आकांक्षाओं और श्रमों से परिपूर्ण रहता है, कि प्रत्येक व्यक्ति को सार्वजनिक जीवन के लिए कठिनाई से किसी प्रकार की स्फूर्ति या अवकाश रहता है। ये प्रवृत्तियाँ अजेय हैं, इस बात से मैं कतई सहमत नहीं हूँ, क्योंकि इस पुस्तक के लिखने का मेरा मुख्य ध्येय ऐसी प्रवृत्तियों का ही विरोध करना है। मेरा केवल यही कहना है कि वर्तमान समय में कोई गुप्त शक्ति मानव-हृदय में इन प्रवृत्तियों का पोषण कर रही है और यदि इन प्रवृत्तियों पर प्रतिबंध नहीं लगाया जाता है तो वे उस पर पूर्णतया अधिकार कर लेंगी।

मुझे यह भी दर्शाने का अवसर मिला है कि उस प्रकार कल्याण के लिए बढ़ता हुआ प्रेम और सम्पत्ति का परिवर्तनशील रूप प्रजातांत्रिक राष्ट्रों को सभी हिंसात्मक उपद्रवों से भयभीत करता है। सार्वजनिक शांति का प्रेम प्रायः एकमात्र ऐसा आवेग है जिसे ये राष्ट्र निरंतर बनाये रखते हैं और यह उन अन्य समस्त आवेगों के अनुपात में, जो लुप्त और समाप्त हो जाते हैं, अधिक सक्रिय और शक्तिशाली रहता है। परिणामस्वरूप समुदाय के सदस्य केन्द्रीय शक्ति को निरन्तर अतिरिक्त अधिकार देने या समर्पित करने के लिए स्वभावतः पहले से ही तैयार रहते हैं। केन्द्रीय शक्ति उनकी उन्हीं साधनों से रक्षा करती हुई प्रतीत होती है, जिनका प्रयोग वह स्वयं अपनी रक्षा के लिए करती है।

समानता के युग में चूँकि कोई भी मनुष्य अपने साथियों की सहायता करने के लिए बाध्य नहीं है और किसी को भी उनसे अधिक सहायता प्राप्त करने की आशा रखने का कोई अधिकार नहीं है, अतः प्रत्येक मनुष्य स्वाधीन भी है एवं शक्तिहीन भी। इन दोनों परिस्थितियों पर कभी भी न तो अलग से विचार करना चाहिए और न उन्हें एक साथ मिलाना ही चाहिए, क्योंकि प्रजातांत्रिक देश के नागरिक ऐसी ही प्रतिकूल प्रवृत्तियों से प्रेरित होते हैं। व्यक्ति की स्वाधीनता उसमें आत्मविश्वास जगाती है और उसके समकक्ष लोगों में गौरव उत्पन्न करती है। उसकी अयोग्यता समय-समय पर उसे अनुभव कराती है कि उसे किसी बाह्य सहायता की आवश्यकता है, जिसकी वह उनमें से किसी से आशा नहीं कर सकता, क्योंकि वे सभी निर्बल और अवहानुभूतिपूर्ण हैं। इस विषम स्थिति में वह सहज ही में उस महत्वशाली शक्ति की ओर

देखने लगता है, जो उसे सर्वव्यापक नैराश्यता के स्तर से ऊँचा उठाती है। उसकी आवश्यकताएं और विशेषतः उसकी इच्छाएँ उसे निरन्तर उस शक्ति की याद दिलाती रहती हैं और अंततः वह यह दृष्टिकोण अपना लेने के लिए बाध्य हो जाता है कि वही शक्ति उसकी स्वयं की दुर्बलताओं के लिए एकमात्र और आवश्यक सहारा है।

प्रजातांत्रिक देशों में प्रायः जो कुछ घटित होता है, इसके द्वारा उसकी अधिक पूर्णता से व्याख्या की जा सकती है। प्रजातांत्रिक देशों के जो लोग अपने से उच्च व्यक्तियों के प्रति असहिष्णु होते हैं वे ही अपना गर्व और अपनी दासता प्रदर्शित करते हुए किसी स्वामी को अपने को समर्पित कर देते हैं। विशेषाधिकार जैसे-जैसे क्षीण और उपेक्षणीय होते जाते हैं, उसी के अनुपात से उनके प्रति मनुष्यों की घृणा भी बढ़ती जाती है। परिणामतः उनमें प्रजातांत्रिक भावावेग उस समय अधिक तेजी से प्रज्वलित होता हुआ प्रतीत होगा जबकि उनमें शक्ति अल्पतम मात्रा में होगी। इस विलक्षण घटना के कारण का मैं पहले ही उल्लेख कर चुका हूँ। जब सारी परिस्थितियाँ असमान रहती हैं उस समय कोई भी असमानता इतनी अधिक नहीं होती कि आखों को खटकने लगे, परन्तु सामान्य एकरूपता के बीच न्यूनतम असमानता बुरी लगने लगती है। यह समरूपता जितनी अधिक पूर्ण रहती है उतनी ही अधिक इस प्रकार की विभिन्नता अग्राह्य होती है। अतः स्वाभाविक रूप से समानता का प्रेम स्वयं समानता के साथ ही निरंतर बढ़ता रहना चाहिए और जिससे वह पोषित होता है उसी से उसका विकास होना चाहिए।

यह अमर और सदा प्रज्वलित रहने वाली घृणा, जो प्रजातांत्रिक लोगों को छोटे विशेषाधिकारों का विरोधी बनाती है, सारे राजनीतिक अधिकारों को केवल राज्य के प्रतिनिधियों के हाथों में क्रमशः केन्द्रित करने के लिए विशेषतः अनुकूल होती है। सार्वभौम शासक अनिवार्यतः और निर्विवाद रूप से समस्त नागरिकों के ऊपर रहता है। वह उनकी ईर्ष्या को उत्तेजित नहीं करता और उनमें से प्रत्येक यह सोचता है कि वह अपने समकक्षों को उन विशेषाधिकारों से वंचित करता है, जो उसने सर्वोच्च सत्ता को सुपुर्द किये हैं। प्रजातांत्रिक युग में रहने वाला मनुष्य अपने समकक्ष पड़ोसी की आज्ञा का पालन करने के लिए नितांत अनिच्छुक रहता है। वह ऐसे व्यक्ति की उच्च योग्यता को स्वीकार करने से इन्कार करता है, उसके न्याय में अविश्वास करता है, उसकी शक्ति को ईर्ष्या की दृष्टि से देखता है, वह उससे डरता है, उसका तिरस्कार करता है और उसे

यह बात प्रिय है कि वह एक ही स्वामी की सामान्य अधीनता की उसे निरन्तर याद दिलाता रहे, जिसके आश्रित वे दोनों ही हैं।

प्रत्येक केन्द्रित शक्ति, जो अपनी स्वाभाविक प्रवृत्तियों का अनुकरण करती है, समानता के सिद्धान्त को बढ़ावा एवं प्रोत्साहन देती है; क्योंकि समानता ही केन्द्रीय शक्ति के प्रभाव को विचित्र ढंग से सुगम बनाती है, विस्तृत करती है और उसे सुरक्षित रखती है।

इसी प्रकार यह कहा जा सकता है कि प्रत्येक केन्द्रीय सरकार समरूपता की उपासना करती है; समरूपता उसे बड़ी बारीकी से जाँच करने से मुक्त करती है। यदि नियमों को विभिन्न लोगों पर लागू करना है तो बजाय इसके कि सभी को बिना किसी भेदभाव के एक ही डंडे से हाँका जाय, यही समरूपता प्रतिष्ठित करनी चाहिए। इस प्रकार सरकार वही चाहती है जो नागरिक चाहते हैं और स्वाभाविक रूप से नागरिक जिन बातों से घृणा करते हैं, उनसे सरकार भी घृणा करती है। ये सामान्य भाव प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में सार्वभौम शासक और समुदाय के प्रत्येक सदस्य को निरंतर एक ही विश्वास में आबद्ध करते हैं और उनके मध्य गुप्त तथा स्थायी सहानुभूति उत्पन्न करते हैं। सरकार के दोष उसकी प्रवृत्तियों के कारण क्षमा कर दिये जाते हैं, उसकी अति और उसकी त्रुटियों के बीच भी लोगों का विश्वास अनिच्छापूर्वक ही टूटता है और प्रथम पुकार के साथ ही वह पुनः प्रतिष्ठित हो जाता है। प्रजातांत्रिक राष्ट्र प्रायः उन लोगों से घृणा करते हैं जिनके हाथों में केन्द्रीय सत्ता निहित रहती है, परन्तु स्वयं उस सत्ता से वे सर्वदा प्रेम रखते हैं।

इस प्रकार मैं दो विभिन्न मार्गों से एक ही निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ। मैंने यह स्पष्ट किया है कि समानता का सिद्धांत मनुष्यों के मस्तिष्क में एकमात्र समरूप और शक्तिशाली सरकार की धारणा उत्पन्न करता है। मैंने यह दर्शाया है कि समानता का सिद्धांत उनमें सरकार के प्रति अभिरुचि जाग्रत करता है। इसलिए हमारे युग के राष्ट्र इस प्रकार की सरकारों की तरफ झुक रहे हैं। मस्तिष्क और हृदय के स्वाभाविक झुकाव के द्वारा वे उधर आकृष्ट होते हैं और उस परिणाम तक पहुँचने के लिए यह पर्याप्त है कि वे अपने मार्ग में स्वयं अपने ऊपर प्रतिबंध नहीं रखते।

मेरा यह मत है कि प्रजातांत्रिक युग में, जो हम पर स्पष्ट होता जा रहा है, व्यक्तिगत स्वतंत्रता और स्थानीय स्वाधीनता की उत्पत्ति अपने गुण से होगी और केन्द्रीकरण ही स्वाभाविक सरकार बनेगी।

५५. कतिपय विशिष्ट और आकस्मिक कारण जो या तो लोगों को सरकार के केन्द्रीकरण की ओर प्रवृत्त करते हैं या उन्हें उससे विमुख करते हैं

यदि समस्त प्रजातांत्रिक राष्ट्र स्वाभाविक रूप से सरकार के केन्द्रीकरण की ओर प्रवृत्त होते हैं तो वे इस परिणाम पर जुदा-जुदा प्रकार से पहुँचते हैं। यह अविशिष्ट परिस्थितियों पर निर्भर है जो समाज की उस स्थिति के प्राकृतिक परिणामों की वृद्धि या रोकथाम कर सकती हैं। इस प्रकार की परिस्थितियों की संख्या बहुत अधिक है, परन्तु मैं उनमें से केवल कुछ ही का यहाँ उल्लेख करूँगा।

समान होने के बहुत पहिले स्वतंत्र रहनेवाले मनुष्यों ने स्वतंत्र संस्थाओं से इस प्रकार की प्रवृत्तियाँ संघर्ष द्वारा प्राप्त की थीं, कुछ सीमा तक इन प्रवृत्तियों को समानता के सिद्धान्त ने बढ़ावा दिया और यद्यपि ऐसे समाज में केन्द्रित शक्ति उसके विशेषाधिकारों को बढ़ा सकती है, फिर भी ऐसे समाज के निजी सदस्य कभी भी अपनी स्वतंत्रता को पूर्णतः नहीं खोयेंगे। परन्तु जब परिस्थितियों की समानता ऐसे लोगों में बढ़ती है, जिन्होंने यह कभी जाना ही नहीं अथवा जिन्होंने बहुत दिनों से यह भुला दिया है कि स्वतंत्रता क्या है (यूरोप के महाद्वीप में इसी प्रकार की स्थिति है), जब राष्ट्र की पूर्ववर्ती प्रवृत्तियाँ अचानक किसी प्रकार के स्वाभाविक आकर्षण द्वारा, समाज की परिस्थिति द्वारा उत्पन्न नयी प्रवृत्तियों और सिद्धान्तों से घुलमिल जाती हैं, उस समय ऐसा प्रतीत होता है मानो सारी शक्तियाँ अन्तःप्रेरित होकर केन्द्र की ओर दौड़ रही हैं। यही नहीं, ये शक्तियाँ वहाँ विस्मयजनक तीव्रता से एकत्र हो जाती हैं और राज्य तुरन्त ही अपनी शक्ति की सर्वोच्च सीमाओं को प्राप्त कर लेता है, जबकि निजी व्यक्ति दुर्बलता के निम्नतम अंश में एकाएक अपने आपको डूबा देने को तैयार हो जाते हैं।

तीन सौ वर्ष पूर्व अंग्रेजों ने नयी दुनिया के तटों पर प्रजातांत्रिक राष्ट्रमण्डल बसाने के लिए प्रयास किया था और उन सब ने अपने मातृदेश में ही सार्वजनिक कार्यों में भाग लेना सीख लिया था। वे जूरी द्वारा की जाने वाली सुनवाई से परिचित थे, वे समाज और प्रेस की स्वतंत्रता से, व्यक्तिगत

स्वतंत्रता, अधिकारों की भावना और उनके व्यवहार के अभ्यस्त थे। वे अपने साथ उन स्वतंत्र संस्थाओं और मानवीय प्रथाओं को अमरीका ले गये और इन संस्थाओं ने उन्हें राज्य के हस्तक्षेप से सुरक्षित रखा। इस प्रकार अमरीकियों में स्वतंत्रता ही पुरानी है, समानता उसकी तुलना में आधुनिक समय की है। यूरोप में ठीक इसके विपरीत परिस्थिति है, जहाँ समानता का प्रवेश निरंकुश शक्ति द्वारा और राजाओं के शासन के अन्तर्गत हुआ और यह समानता स्वतंत्रता के बहुत पहले राष्ट्रों के स्वभावों में और उनके विचारों में प्रवेश कर चुकी थी।

मैं कह चुका हूँ कि प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में सरकार की धारणा स्वाभाविक रूप से मस्तिष्क के सामने अपने को एकमात्र और केन्द्रित शक्ति के रूप में उपस्थित करती है और मध्यवर्ती शक्तियों की धारणा से वह अपरिचित होती है। यह स्थिति विशेषतः उन प्रजातांत्रिक राष्ट्रों के लिए लागू होती है, जिन्होंने हिंसात्मक क्रांति के माध्यमों से समानता के सिद्धान्त की विजय को देखा था। चूँकि स्थानीय कार्यों की व्यवस्था करने वाले वर्ग एकाएक आँधी में बह गये और किंकर्तव्यविमूढ़ जनसमूह में जो शेष रहा उसमें न तो संगठन की शक्ति रही और न वह स्वभाव रहा जो उन्हें इन कार्यों के उत्तरदायित्व को धारण करने के योग्य बनाता। अकेला राज्य ही सरकार के छोटे से छोटे कार्य को अपने ऊपर लेने के योग्य प्रतीत होता है और केन्द्रीयकरण देश की अनिवार्य स्थिति हो जाती है।

नेपोलियन की, जिसने फ्रांस के प्रायः सारे प्रशासन को अपने हाथों में केन्द्रित कर लिया था, न तो प्रशंसा की जा सकती है और न निंदा ही, क्योंकि कुलीन और मध्यवर्गों की उच्च श्रेणियों के अचानक लोप हो जाने के बाद ये सारी शक्तियाँ उत्तराधिकार में उसे प्राप्त हो गयी थीं, परन्तु उस समय उसके लिए उन अधिकारों को अस्वीकृत करना प्रायः उतना ही कठिन होता, जितना उन्हें ग्रहण करना। किन्तु ऐसी आवश्यकता अमरीकियों द्वारा कभी भी महसूस नहीं की गयी, जिनको क्रांति का अनुभव न होने के कारण और प्रारम्भ से ही अपने आप प्रशासन चलाने के कारण, कभी भी राज्य को कुछ समय के लिए अपना संरक्षक बनने के लिए नहीं कहना पड़ा। अतः प्रजातांत्रिक समाज में केन्द्रीकरण की प्रगति न केवल समानता की प्रगति पर निर्भर करती है, अपितु उस तरीके पर भी निर्भर करती है, जिससे यह समानता स्थापित हुई है।

महान प्रजातांत्रिक क्रांति का श्रीगणेश होने पर जब समाज की विभिन्न श्रेणियों के मध्य शत्रुता का अंकुर फूट पड़ता है, तब जनता सार्वजनिक प्रशासन

को सरकार के हाथों में केन्द्रित करने का प्रयास करती है ताकि कुलीनतंत्र से स्थानीय कार्यों के प्रबंध को छीन कर वह अपने हाथों में ले सके। इसके विपरीत, इस प्रकार की क्रांति की समाप्ति के समय प्रायः विजित कुलीनतंत्र सारे कार्यों के प्रबंध को सौंप देने का प्रयत्न करता है, क्योंकि इस प्रकार की कुलीनता उन लोगों की निरंकुशता से भय खाती है, जो उसकी बराबरी के हैं, और प्रायः उनके स्वामी बन जाते हैं। इस प्रकार हमेशा समाज का एक ही वर्ग नहीं है जो सरकार के परमाधिकार में वृद्धि करने का प्रयत्न करता है, प्रत्युत जब तक प्रजातांत्रिक क्रांति बनी रहती है, राष्ट्र में हमेशा ऐसा वर्ग पाया जाता है जो संख्या या धन की दृष्टि से सशक्त होता है, जो विशिष्ट आवेगों या हितों से सार्वजनिक प्रशासन को केन्द्रित करने के भाव से प्रेरित होता है और यह कार्य वह किसी पड़ोसी से शासित होने से उत्पन्न उस घृणा से मुक्त हो कर करता है, जो प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में पायी जाने वाली सामान्य और स्थायी भावना होती है।

वर्तमान समय में यह कहा जा सकता है कि इंगलैण्ड के निम्न श्रेणी के लोग अपनी सारी शक्ति से स्वायत्त शासन को नष्ट करने और प्रशासन को सभी दृष्टियों से केन्द्र को हस्तांतरित करने के लिए प्रयत्नशील हैं; जबकि उच्चतर श्रेणियों के लोग इस प्रशासन को उसकी प्राचीन मर्यादाओं के भीतर बनाये रखने के लिए प्रयत्न कर रहे हैं। मैं यह साहस के साथ भविष्यवाणी करता हूँ कि एक ऐसा समय आयेगा जब कि ठीक इसके विपरीत परिस्थिति उत्पन्न होगी।

इन बातों से स्पष्ट हो जाता है कि एक प्रजातांत्रिक राष्ट्र में जिसे समानता की स्थिति तक पहुँचने के लिए दीर्घकालीन संघर्ष करना पड़ा था, एक लोकतांत्रिक समुदाय की अपेक्षा, जिसमें प्रत्येक नागरिक प्रारम्भ से ही समान होता है, सर्वोच्च सत्ता सर्वदा प्रबल होती है और निजी व्यक्ति निर्बल होते हैं। अमरीकियों का उदाहरण पूर्णतः इस तथ्य को सिद्ध करता है। संयुक्त-राज्य अमरीका के निवासी विशेषाधिकारों से कभी विभाजित नहीं रहे और न उन्हें कभी उच्च और निम्न के पारस्परिक सम्बंध का ज्ञान ही हुआ। चूंकि वे एक दूसरे से भय या घृणा नहीं करते, अतः उन्होंने अपने कार्यों की व्यवस्था के लिए सर्वोच्च शक्ति की शरण में जाने की कभी आवश्यकता नहीं समझी। अमरीकियों का भाग्य विचित्र है। उन्होंने इंगलैण्ड के कुलीनतंत्र से निजी अधिकारों की धारणा और स्थानीय स्वतंत्रता के प्रति रुचि प्राप्त की है और वे दोनों को बनाये रखने में सफल हुए हैं, क्योंकि अमरीका में उन्हें किसी कुलीनतंत्र से संघर्ष नहीं करना पड़ा।

सभी युगों में यदि शिक्षा मनुष्यों को अपनी स्वाधीनता की रक्षा के लिए समर्थ बनाती है तो यह बात प्रजातांत्रिक युगों के लिए विशेष रूप से लागू होती है। जब सभी मनुष्य समान हैं, तब एकमात्र और सर्वशक्तिशाली सरकार की, केवल अन्तःप्रवृत्ति की सहायता से स्थापना करना आसान है। परन्तु मनुष्यों को समान परिस्थितियों के अन्तर्गत गौण शक्तियों को संघटित और बनाये रखने के लिए, बड़ी बुद्धिमानी और ज्ञान की आवश्यकता है, ताकि नागरिकों की स्वतंत्रता और व्यक्तिगत दुर्बलताओं के बीच ऐसी स्वतंत्र संस्थाओं का निर्माण हो सके, जो उन्हें निरंकुशता के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए बिना सार्वजनिक व्यवस्था को भंग किये समर्थ बना सके।

इसलिए प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में शक्ति का केन्द्रीयकरण और व्यक्तियों की अधीनता न केवल उनकी समानता के अनुपात में, अपितु उनके अज्ञान के अनुपात में बढ़ेगी। यह सही है कि अपूर्ण सभ्यता के युगों में सरकार में लोगों पर निरंकुशता लादने के लिए आवश्यक ज्ञान [redacted] प्रायः उतना ही अभाव रहता है, जितना समाज में उस सरकार को हिला देने के लिए ज्ञान का अभाव होता है; परन्तु दोनों ओर एक ही प्रकार का प्रभाव नहीं होता है। प्रजातांत्रिक राष्ट्र कितना ही असभ्य क्यों न हो, उस पर शासन करने वाली केन्द्रीय शक्ति कभी भी सभ्यता से पूर्णतः वंचित नहीं रहती, क्योंकि देश में थोड़ी-बहुत जो सभ्यता उपलब्ध है, उसका वह शीघ्र ही अपने लिए प्रयोग कर लेती है और यदि आवश्यकता पड़ती है तो वह अन्यत्र से सहायता प्राप्त कर सकती है। अतः उस राष्ट्र में, जो अज्ञानी है और साथ ही प्रजातांत्रिक भी है, शासक और शासित की बौद्धिक क्षमता के बीच शीघ्र ही आश्चर्यजनक विभिन्नता पैदा हुए बिना नहीं रह सकती। इससे शासक के हाथों में सारी शक्ति का सरल केन्द्रीयकरण पूरा हो जाता है और राज्य के प्रशासकीय कार्य निरंतर विस्तृत होते हैं, क्योंकि देश का शासन-संचालन करने के लिए केवल राज्य ही योग्य है।

कुलीनतांत्रिक राष्ट्र, कितने ही अविकसित क्यों न हों, एक ही दृश्य कभी भी प्रस्तुत नहीं करते, क्योंकि उनमें राजा तथा समाज के प्रमुख व्यापारियों के बीच शिक्षा लगभग समानरूप से प्रचारित होती है।

मैं सोचता हूँ कि सरकार का चरम केन्द्रीयकरण अन्ततोगत्वा समाज को दुर्बल करता है और इस प्रकार दीर्घ काल के बाद स्वयं सरकार को दुर्बल कर देता है; परन्तु मैं इस तथ्य से इन्कार नहीं करता कि केन्द्रित सामाजिक शक्ति

महान कार्यों को निश्चित समय और एक विशिष्ट लक्ष्य के साथ सुविधापूर्वक निष्पादित करने में समर्थ हो सकती है। यह बात विशेषतः युद्ध के लिए सही है, जिसमें राष्ट्र के सारे साधनों को, बजाय फैलाने के, एक ही बिन्दु पर केन्द्रित कर देने पर ही सफलता पूर्ण रूप से निर्भर करती है। इसलिए मुख्यतः युद्ध में राष्ट्र केन्द्रीय सरकार की शक्तियों में वृद्धि करना चाहते हैं और बहुधा उन्हें इसकी आवश्यकता रहती है। सैनिक प्रतिभाओं के सभी पुरुष केन्द्रीयकरण चाहते हैं, जो उनकी शक्ति में वृद्धि करता है और केन्द्रीयकरण के सारे प्रतिभाशाली पुरुष युद्ध के प्रेमी होते हैं, जो राष्ट्र को अपनी शक्तियों को सरकार के हाथों में सौंप देने के लिए विवश करता है। इस प्रकार प्रजातांत्रिक प्रवृत्ति मनुष्यों को राज्य के विशेषाधिकारों को बहुगुणित करने के लिए और निजी व्यक्तियों के अधिकारों को मर्यादित करने की ओर ले जाती है। यह प्रवृत्ति अन्य राष्ट्रों की अपेक्षा उन प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों में बहुत अधिक शीघ्रगामी और निरंतर बनी रहती है, जिन्हें अपनी स्थिति के कारण प्रायः महान युद्धों का मुकाबला करना पड़ता है।

मैं यह बता चुका हूँ कि किस प्रकार उपद्रव का भय और कल्याण का प्रेम प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों को केन्द्रीय सरकार के कार्यों की वृद्धि करने के लिए प्रेरित करता है, क्योंकि यही ऐसी शक्ति है जो अराजकता से उनकी रक्षा करने के लिए वस्तुतः प्रबल, प्रगतिशील और सुरक्षित प्रतीत होती है। अब मैं यहाँ यह भी कहूँगा कि सभी विशिष्ट परिस्थितियाँ, जो प्रजातान्त्रिक समुदाय की स्थिति को आंदोलित और खतरनाक बनाने में प्रवृत्त होती हैं, इस सामान्य प्रवृत्ति को विकसित करती हैं और निजी व्यक्तियों को अपनी शांति के लिए अपने अधिकारों का अधिकाधिक त्याग करने के लिए प्रेरित करती हैं।

इसलिए राष्ट्र केन्द्रीय सरकार के कार्यों को बढ़ाने के लिए कभी भी इतना तत्पर नहीं रहता जितना कि दीर्घकालिक रक्तरंजित राज्यक्रांति के अंत में होता है। यह राज्यक्रांति सम्पत्ति को उसके पूर्व मालिकों से छीन लेने के बाद, सारे विश्वासों को हिला देती है और राष्ट्र को भयानक घृणा, सघर्षमय स्वार्थों और गुटबन्दियों से भर देती है। ऐसे समय में सार्वजनिक शांति का प्रेम अविवेक-पूर्ण आवेग बन जाता है और समाज के सदस्य व्यवस्था के प्रति अत्यंत अमर्यादित भक्ति धारण कर सकते हैं।

शक्ति के केन्द्रीयकरण की वृद्धि के लिए जो भी घटनाएँ घटित हो सकती हैं, उनमें से कुछ का मैं पहले ही वर्णन कर चुका हूँ, परन्तु मूल कारण अभी देखना बाकी है। उन प्रासंगिक कारणों में, जो प्रजातान्त्रिक देशों में सारे कार्यों

की व्यवस्था को शासक के हाथों में सौंप सकते हैं, अत्यंत महत्वपूर्ण कारण स्वयं उस शासक का मूल और उसकी प्रवृत्तियाँ हैं। जो मनुष्य समानता के युग में रहते हैं, वे स्वभावतः केन्द्रीय शक्ति चाहते हैं और उसके विशेषाधिकारों को विस्तृत करना चाहते हैं परन्तु यदि ऐसा होता है कि वही शक्ति विश्वसनीय रूप से उनके हितों का प्रतिनिधित्व करती है और उनकी स्वयं की प्रवृत्तियों की हू-ब-हू नकल करती है, तो उनके विश्वास की, जो वे उसके प्रति रखते हैं, कोई सीमा नहीं रहती और वे सोचते हैं कि उन्होंने उसे जो कुछ अर्पित किया है, अपने को ही अर्पित किया है।

केन्द्र की ओर प्रशासनिक शक्तियों का आकर्षण उन राजाओं के शासनकाल में सर्वदा अपेक्षाकृत कम सरल और कम द्रुतगामी होगा, जो अभी भी किसी न किसी प्रकार प्राचीन कुलीनतांत्रिक व्यवस्था से सम्बन्धित हैं, बनिस्बत उनके उत्तराधिकारी नये नरेशों के शासन-काल में, जिनके जन्म, पूर्वाग्रह, प्रवृत्तियाँ और स्वभाव उन्हें समानता के हित के साथ अत्यन्त दृढता से बाँधे हुए प्रतीत होते हैं। मेरे कहने का यह अर्थ नहीं है कि कुलीनतांत्रिक मूल के जो नरेश प्रजातांत्रिक युगों में रहते हैं, वे केन्द्रीयकरण के लिए प्रयास नहीं करते। मैं विश्वास करता हूँ कि वे इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए दूसरों की भाँति ही प्रयत्नशील होते हैं। उनके लिए समानता का एकमात्र लाभ उसी दिशा में निहित है, परन्तु उनके अवसर कम महान हैं, क्योंकि समाज उनकी इच्छाओं की स्वेच्छा से पूर्ति करने के बजाय, बहुधा अनिच्छा से उनकी आज्ञा का पालन करता है। प्रजातांत्रिक समुदायों का यह नियम होता है कि केन्द्रीयकरण में उसी अनुपात से वृद्धि होती है, जिस अनुपात से सार्वभौम शासक कम कुलीनतांत्रिक होता है।

जब राजाओं की एक प्राचीन जाति कुलीनतंत्र की मुखिया होती है, क्योंकि सार्वभौम शासक के स्वाभाविक पूर्वाग्रह कुलीनतंत्र के स्वाभाविक पूर्वाग्रहों के पूर्णतः अनुकूल होते हैं, तब कुलीनतांत्रिक समुदायों में अंतर्निहित दुर्गुण उन्मुक्त हो जाते हैं और उनका कोई सुधार नहीं होता। जब सामन्तों का वर्ग किसी प्रजातांत्रिक राष्ट्र [redacted] मुखिया बन जाता है, तब उसका परिणाम विपरीत होता है। सार्वभौम शासक निरन्तर अपनी शिक्षा, अपने स्वभाव और अपने संसर्ग से स्थितियों की असमानता से उत्पन्न भावनाओं को अंगीकार करने के लिए प्रेरित होता है और जनता अपनी सामाजिक स्थिति से निरन्तर उन आचरणों की ओर प्रवृत्त होती है, जो समानता द्वारा उत्पन्न होते हैं। ऐसे समय में, प्रायः ऐसा होता है कि नागरिक केन्द्रीय शक्ति को एक कुलीनतांत्रिक शक्ति के

बजाय निरंकुश शक्ति के रूप में कहीं कम नियंत्रित करने का प्रयत्न करते हैं। वे अपनी स्वतंत्रता की दृढ़ सुरक्षा के लिए प्रयत्नशील रहते हैं, न केवल इसलिए कि वे स्वतंत्र रहेंगे, बल्कि विशेषरूप से इसलिए कि उन्होंने समान रहने का दृढ़ संकल्प कर लिया है।

जो क्रान्ति प्रजातांत्रिक राष्ट्र का नेतृत्व नये व्यक्तियों के हाथों में सौंपने के उद्देश्य से प्राचीन राजपरिवार को उखाड़ फेंकती है, वह अस्थायी रूप से केंद्रीय शक्ति को दुर्बल बना सकती है; परन्तु इस प्रकार की क्रांति प्रारम्भ में चाहे जितनी भी अराजकतापूर्ण प्रतीत हो, हमें यह भविष्यवाणी करने में संकोच करने की आवश्यकता नहीं कि उसका अन्तिम और निश्चित परिणाम इस क्रान्ति के विशेषाधिकारों को विस्तृत और सुरक्षित करना होगा।

प्रजातांत्रिक समाज में सर्वोच्च शक्ति के केन्द्रीयकरण में सफलता प्राप्त करने के लिए आवश्यक मुख्य या वस्तुतः एकमात्र शर्त यह है कि समानता से प्रेम किया जाय या लोगों में ऐसा विश्वास उत्पन्न किया जाय कि आप समानता से प्रेम करते हैं। इस प्रकार, निरंकुशता का विज्ञान, जो कभी इतना जटिल था, सरल बन जाता है और एक ही सिद्धान्त में परिणत हो जाता है।

५६. किस प्रकार की निरंकुशता से प्रजातांत्रिक राष्ट्रों को भयभीत होना चाहिए

संयुक्त-राज्य अमरीका में अपने प्रवासकाल के समय मैंने कहा था कि अमरीकियों से मिलती-जुलती समाज की प्रजातांत्रिक स्थिति निरंकुशता की स्थापना के लिए विशेष सुविधाएँ प्रदान कर सकती है और यूरोप में लौटने पर मैंने देखा कि हमारे अधिकांश शासकों द्वारा, इस समान सामाजिक स्थिति से उत्पन्न धारणाओं, भावनाओं और आवश्यकताओं का अपनी शक्ति के दायरे को विस्तृत करने के उद्देश्य से, पहले से ही किस प्रकार पर्याप्त उपयोग कर लिया गया था। इससे मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि ईसाई समाज के राष्ट्रों को सम्भवतः अंत में असाधारण क्रूरता का उसी प्रकार से अनुभव करना पड़ेगा, जिस तरह कि प्राचीन विश्व के अनेक राष्ट्रों को अनुभव हुआ था।

विषय का अधिक सूक्ष्मता से परीक्षण करने और उसके पश्चात् पांच वर्ष निरन्तर उस पर चिंतन करने के बाद भी मेरे भय कम नहीं हुए हैं, बल्कि उन्होंने अपना उद्देश्य बदल लिया है।

प्राचीन समय में कोई भी सार्वभौम शासक कभी इतना निरंकुश या इतना शक्तिशाली नहीं रहा कि उसने अपने स्वयं के अभिकरण द्वारा और मध्यवर्ती शक्तियों की सहायता के बिना विशाल साम्राज्य के समस्त भागों पर प्रशासन करने का उत्तरदायित्व सम्भाला हो। और न किसी ने अधिनियमों की एकरूपता को सीमित करने के उद्देश्य से सारी प्रजा पर अविवेक से शासन करने का और समुदाय के प्रत्येक सदस्य को साक्षात् रूप से शिक्षा और निर्देश देने का कभी प्रयत्न ही किया। इस प्रकार कार्य करने की धारणा कभी मानव-मस्तिष्क में पैदा नहीं हुई और यदि किसी मनुष्य ने ऐसी कल्पना की तो तत्सम्बन्धी ज्ञान के अभाव ने, प्रशासकीय पद्धति की अपरिपूर्णता ने, और सर्वोपरि परिस्थितियों की असमानता से उत्पन्न स्वाभाविक कठिनाइयों ने शीघ्र ही इतने विशाल उद्देश्य की पूर्ति पर रोक लगा दी होगी।

जब रोम के सम्राट अपनी शक्ति के उच्च शिखर पर विराजमान थे, तब भी साम्राज्य के विभिन्न राष्ट्रों ने भिन्न आचरणों और रीतिरिवाजों को सुरक्षित रखा। यद्यपि वे एक ही राजतंत्र के अधीन थे, फिर भी अधिकांश प्रांतों का शासन अलग से होता था, जिनमें शक्तिशाली और क्रियाशील नगरपालिकाओं की संख्या अधिक थी। यद्यपि साम्राज्य की सारी सरकार अकेले सम्राट के हाथों में केन्द्रित थी और वह हमेशा आवश्यकता पड़ने पर, सभी विषयों में सर्वोच्च निर्णायक माना जाता था, फिर भी सामाजिक जीवन और व्यक्तिगत उद्योगों की सूक्ष्म बातें अधिकतर उसके नियंत्रण से परे थीं। यह सही है कि सम्राटों के पास विशाल और अनियंत्रित शक्ति थी, जिसकी सहायता से वे अपनी मनमानी अभिरुचियों को पूर्ण कर लिया करते थे और उस उद्देश्य की पूर्ति में राज्य की समस्त शक्ति को लगा दिया करते थे। उन्होंने प्रायः अपनी प्रजा को सम्पत्ति या जीवन से वंचित करने के लिए मनमाने ढंग से उस शक्ति का दुरुपयोग किया। उनकी क्रूरता कुछ लोगों के लिए बड़ी कष्टप्रद थी, परन्तु वह सभी तक नहीं पहुँच सकी। वह कुछ अशेष उद्देश्यों की पूर्ति के लिए ही निर्धारित थी और शेष सभी के प्रति उपेक्षित थी। वह क्रूरता निश्चय ही हिंसात्मक थी, परन्तु उसका क्षेत्र सीमित था।

यदि हमारे युग के प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में निरंकुशता स्थापित की जाय तो

ऐसा प्रतीत होगा कि वह भिन्न रूप धारण कर सकती है। वह अधिक व्यापक और अधिक मृदु होगी; वह बिना संताप पहुँचाये मनुष्यों का अधःपतन करेगी। मुझे इस बात में सन्देह नहीं कि हमारी तरह के शिक्षा और समानता के युग में सार्वभौम शासक समस्त राजनीतिक शक्ति को अपने हाथों में केन्द्रित करने में अधिक सुगमता से सफलता प्राप्त कर सकता है और व्यक्तिगत हितों के क्षेत्र में अधिक स्वाभाविक प्रकृति और दृढ़ता से हस्तक्षेप कर सकता है, जितना कि प्राचीनकाल का कोई सार्वभौम शासक कभी कर नहीं सकता था। परन्तु समानता का यही सिद्धान्त, जो निरंकुशता को सुगम बनाता है, उसकी कठोरता के प्रभाव को कम कर सकता है। हम यह देख चुके हैं कि जैसे-जैसे मनुष्य अधिक समान और एकरूप बनते हैं, उसी के अनुपात में समाज का आचरण अधिक समान और कोमल बनता है। जब समाज के किसी भी सदस्य के पास अधिक शक्ति और सम्पत्ति नहीं रहती, क्रूरता को, वह जिस रूप में है, कार्रवाई करने का अवसर और क्षेत्र नहीं मिलता। चूँकि सारी सम्पत्ति कम मात्रा में रहती है, इसलिए मनुष्यों के आवेग स्वाभाविक रूप से मर्यादित रहते हैं। उनकी कल्पना स्वयं सार्वभौम शासक को उदार बना देती है और कुछ निश्चित सीमाओं के भीतर उसकी इच्छाओं के असाधारण विस्तार पर अंकुश लगा देती है।

स्वयं समाज की स्थिति की प्रकृति के आधार पर उपरोक्त तर्क प्रस्तुत किये गये हैं, परन्तु मैं उनसे स्वतंत्र अन्य तर्क प्रस्तुत कर सकता हूँ। ये तर्क उन कारणों के आधार पर प्रस्तुत किये जा सकते हैं जो इस विषय के अन्तर्गत नहीं आते, परन्तु मैंने जो अपने विषय की सीमा निर्धारित की है, उसीके भीतर उसे सीमित रखूँगा।

प्रजातान्त्रिक सरकार हिंसात्मक हो सकती है और यहाँ तक कि चरम उत्तेजना के कुछ कालों में या महान संकट की स्थिति में वह क्रूर भी बन सकती है, परन्तु ये संकट दुर्लभ और थोड़े ही समय के लिए होंगे। जब मैं अपने समकालीन लोगों के तुच्छ आवेगों, उनके आचरणों की कोमलता, उनकी शिक्षा की व्यापकता, उनके धर्म की पवित्रता, उनकी नैतिकता की मृदुलता, उनकी नियमित और श्रमशील प्रवृत्तियों और उनके संयम पर, जिसका प्रयोग प्रायः वे अपने गुणों के लिए जितना करते हैं, उतना ही अपने दुर्गुणों के लिए भी करते हैं, विचार करता हूँ, तो मुझे किंचित् भी भय नहीं रहता कि वे अपने शासकों को अत्याचारी के रूप में पायेंगे अथवा संरक्षक के रूप में।

इसलिए मैं सोचता हूँ कि जिस प्रकार की क्रूरता से प्रजातांत्रिक राष्ट्र भयभीत रहते हैं, वह विश्व में पहले कभी भी विद्यमान नहीं थी। हमारे समकालीन अपनी स्मृतियों का मंथन करने पर भी, इसका मूलरूप नहीं खोज पायेंगे। इस क्रूरता की जो कल्पना मेरे मस्तिष्क में घूम रही है, उसे पूर्णतः सही रूप में व्यक्त किया जा सके, ऐसी वाणी मेरे पास नहीं है। निरंकुशता और क्रूरता के पुराने शब्द इसके लिए अनुपयुक्त हैं, वह स्वयं एक नयी वस्तु है और चूँकि मैं उसका नाम नहीं ले सकता, इसलिए मैं उसकी व्याख्या करने का प्रयत्न करूँगा।

मैं उन नये लक्षणों का निरूपण करने का प्रयत्न करता हूँ जिनके अन्तर्गत निरंकुशता विश्व में दृष्टिगोचर हो सकती है। निरीक्षक को आकर्षित करनेवाली प्रथम वस्तु समान और समरूप मनुष्यों का एक विशाल जनसमूह है, जो तुच्छ और निम्न कोटि का आनन्द प्राप्त करने के लिए, जिससे वह जीवन को तृप्त करता है, अविराम प्रयत्न कर रहा है। उनमें से प्रत्येक व्यक्ति अलग रहता है; जैसे शेष सभी के भाग्य से उसका कोई सरोकार नहीं है। वह अपने बच्चों और अपने निजी मित्रों को ही सारी मानव-जाति समझने लगता है। जहाँ तक शेष सहनागरिकों का सम्बन्ध है, वह उनके निकट रहता है, परन्तु उन्हें नहीं देखता; वह उनका स्पर्श करता है, किन्तु उनका अनुभव नहीं करता, वह अपने में ही और केवल अपने लिए जीवित रहता है और यदि उसके कुटुम्बवाले उसके पास बने रहते हैं तो कहा जा सकता है, कि उसका अपने देश से कोई सम्बन्ध नहीं रह गया है।

मनुष्यों की इस जाति के ऊपर एक विशाल और रक्षा करने वाली शक्ति होती है, जो अकेली स्वयं, उनकी तृप्ति की और उनकी सम्पत्ति की देखरेख का बीड़ा उठाती है। यह शक्ति पूर्ण, सूक्ष्म, नियमित, उदार और कोमल होती है। इसकी तुलना मातापिता की सत्ता से की जा सकती है, यदि उस सत्ता की भाँति उसका उद्देश भी मनुष्यों को पुरुषत्व के लिए तैयार करना हो; परन्तु इसके विपरीत वह उन्हें निरन्तर शैशवावस्था में बनाये रखने का प्रयत्न करती है। वह इसी में सन्तुष्ट रहती है कि लोग आनन्द करें, बशर्ते वे आनन्द के अतिरिक्त और किसी चीज की कल्पना न करें। उनकी प्रसन्नता के लिए इस प्रकार की सरकार स्वेच्छा से प्रयत्न करती है, परन्तु वह उस प्रसन्नता की एकमात्र अभिरुचि और एकमात्र निर्णायक हो जाती है। वह उनकी सुरक्षा की व्यवस्था करती है, उनकी आवश्यकताओं को समझती और उनकी पूर्ति करती है,

उनके आनन्द के लिए सुविधा प्रदान करती है, उनके मुख्य कार्यों की व्यवस्था करती है, उनके उद्योग का निर्देशन करती है, उनकी सम्पत्ति के उत्तराधिकार को नियमित करती है और उन्हें विभाजित करती है। अब जीवन के सारे कष्टों और चिन्ताओं के अतिरिक्त उनके लिए शेष क्या रह जाता है?

इस प्रकार, यह शक्ति मनुष्य के स्वतंत्र अभिकरण का प्रयोग प्रतिदिन कम उपयोगी और कुंठित कर देती है। वह मनुष्य की इच्छाशक्ति को संकीर्ण क्षेत्र में परिसीमित कर देती है और धीरे-धीरे मनुष्य से उसके समस्त उपयोगों को छीन लेती है। समानता के सिद्धान्त ने मनुष्यों को इस प्रकार की स्थिति के लिए तैयार किया है। इस सिद्धान्त के कारण ही मनुष्य उन्हें सहन करने और उन्हें हितकारी वस्तुओं के रूप में देखने के लिए प्रेरित हुए हैं।

इस प्रकार सर्वोच्च शक्ति समाज के प्रत्येक सदस्य को शनैः शनैः अपने शक्तिशाली चंगुल में फँसा कर और उसे अपनी इच्छानुकूल बना कर अपने प्रभुत्व को सारे समाज पर व्याप्त कर देती है। वह छोटे-छोटे जटिल, सूक्ष्म और समान नियमों के जाल से समाज के धरातल को ढंक लेती है। यह जाल इतना मजबूत होता है कि कोई भी अत्यन्त मौलिक मस्तिष्क और अत्यन्त शक्तिशाली पात्र भीड़ से ऊपर उठने के लिए उसमें प्रवेश नहीं कर सकता। मनुष्य की इच्छाशक्ति नष्ट नहीं होती, प्रत्युत वह कोमल, विनम्र और अनुयायिनी हो जाती है। वह शायद ही कभी मनुष्यों को कार्य के लिए विवश करती है, बल्कि उन्हें निरन्तर कार्य करने से रोकती है। दबाव डाला जाता है, फिर भी वे निरन्तर कार्य करने से विमुख रहते हैं। इस प्रकार की शक्ति विनाश नहीं करती, किन्तु अस्तित्व को रोकती है; वह अत्याचार नहीं करती, बल्कि राष्ट्रों को दबाती, निर्बल बनाती, क्षीण और किंकर्तव्यविमूढ़ बनाती है, जब तक कि प्रत्येक राष्ट्र भीरु, परिश्रमी पशुओं के एक झुंड से अच्छा नहीं रह जाता, जिसका चरवाहा सरकार होती है।

मेरा हमेशा यही विचार रहा है कि नियमित, शांत और विनम्र दासता, जिसका मैंने अभी वर्णन किया है, स्वतंत्रता के कतिपय बाह्य स्वरूपों के साथ इतनी अधिक सुगमता से घुलमिल सकती है, जितना सामान्यतया विश्वास नहीं किया जाता और यहाँ तक कि वह जनता की सार्वभौमता की छत्रछाया में अपने को प्रतिष्ठित कर सकती है।

हमारे समकालीन निरन्तर दो परस्पर-विरोधी आवेगों से उत्तेजित होते रहते हैं, वे अपना नेतृत्व भी चाहते हैं और स्वतंत्र रहने की इच्छा भी रखते हैं।

चूँकि वे इन विपरीत प्रवृत्तियों में से किसी का भी नाश नहीं कर सकते, इसलिए वे एक साथ ही दोनों को सन्तुष्ट करने का प्रयत्न करते हैं। वे एकमात्र, संरक्षकीय और सर्वशक्तिमान सरकार की योजना बनाते हैं, जो जनता द्वारा निर्वाचित हो। वे केन्द्रीयकरण और लोकप्रिय सार्वभौमता के सिद्धान्तों को मिला देते हैं, इससे उन्हें संतोष मिलता है। वे इस विचार से, कि उन्होंने स्वयं अपने अभिभावकों का चुनाव किया है, उनके संरक्षण में आत्म-सन्तोष प्राप्त करते हैं। प्रत्येक व्यक्ति खुद ही उस शृंखला से अपने को आबद्ध कर लेता है, जिसे वह देखता है कि उसका अंतिम छोर किसी एक व्यक्ति या व्यक्तियों के किसी एक वर्ग के हाथों में न होकर साधारण जनता के हाथों में है।

इस पद्धति से लोग अपने स्वामी के चुनाव के लिए पर्याप्त समय तक अपनी पराधीनता की स्थिति से छुटकारा पा लेते हैं और फिर उसे ही ग्रहण करते हैं। वर्तमान समय में अनेक व्यक्ति प्रशासकीय निरंकुशता और जनता की सार्वभौमता के मध्य इस प्रकार के समझौते से पूर्ण संतुष्ट रहते हैं और सोचते हैं कि उन्होंने स्वतंत्र राष्ट्र की शक्ति के सामने व्यक्तिगत स्वतंत्रता को समर्पित कर उसकी सुरक्षा के लिए पर्याप्त कार्य कर लिया है। इससे मुझे संतोष नहीं होता। बलात् आज्ञाकारिता के तथ्य की अपेक्षा उसकी यह प्रकृति जिसकी आज्ञा [redacted] मुझे पालन करना है, मेरे लिए कम महत्त्वपूर्ण है।

फिर भी, मैं इस बात से इन्कार नहीं करता कि इस प्रकार का संविधान निश्चय ही उससे कहीं अच्छा प्रतीत होता है, जो सरकार की समस्त शक्तियों को केन्द्रित करने के बाद उन्हें गैरजिम्मेदार व्यक्ति या व्यक्तियों की संस्था के हाथों में सौंप देता है। प्रजातांत्रिक निरंकुशता के जितने भी स्वरूप हो सकते हैं, उनमें यह पिछला स्वरूप निश्चय ही सबसे निकृष्ट होगा।

जब सार्वभौम शासक निर्वाचित होता है अथवा उस पर विधान-मण्डल का, जो वस्तुतः निर्वाचित और स्वतंत्र होता है, सूक्ष्म नियंत्रण रहता है, तब वह व्यक्तियों से जिस क्रूरता का व्यवहार करता है उसकी मात्रा कभी-कभी ज्यादा होती है, किन्तु वह हमेशा कम अपमानजनक होती है, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति पीड़ित और निस्सहाय होते हुए भी यह कल्पना करता है कि वह जिस आज्ञा के सामने झुकता है, वह आज्ञा अपनी ही है और वह उसकी स्वयं की प्रवृत्तियों में से एक है जिसे अन्य सब स्वीकार करते हैं। इसी तरह, मैं समझ सकता हूँ कि जब सार्वभौम शासक राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करता है और जनता पर निर्भर रहता है तब जिन अधिकारों और सत्ता से प्रत्येक नागरिक वंचित रहता है, वे न केवल

राज्य के प्रधान का, अपितु स्वयं राज्य का हित करते हैं और निजी व्यक्ति जनता के लिए अपनी स्वतंत्रता का जो कुछ त्याग करते हैं, उसके बदले कुछ प्राप्त करते हैं। इसलिए प्रत्येक देश में, जहां केन्द्रीयकरण है, जनता के प्रतिनिधित्व का निर्माण करना उस बुराई को घटाना है जो अति केंद्रीयकरण द्वारा उत्पन्न हो सकती है, परन्तु इससे मुक्ति नहीं मिल सकती।

मैं यह स्वीकार करता हूँ कि इस साधन से अपेक्षाकृत अधिक महत्त्वपूर्ण विषयों में, व्यक्तियों के हस्तक्षेप के लिए मार्ग खुल जाता है, परन्तु अपेक्षाकृत छोटे और अधिक निजी कार्यों के क्षेत्र में यह हस्तक्षेप किसी प्रकार कम नहीं होता। यह नहीं भूलना चाहिए कि जीवन के छोटे-छोटे मामलों में मनुष्यों को गुलाम बनाना विशेष रूप से खतरनाक होता है। जहाँ तक मेरा प्रश्न है, मेरे विचार से छोटे कार्यों की अपेक्षा बड़े कार्यों में स्वतंत्रता की कम आवश्यकता होती है, यदि एक को, बिना दूसरे को प्राप्त किये, सुरक्षित रखा जाना सम्भव हो।

छोटे कार्यों में जो अधीनता रहती है, वह प्रतिदिन दृष्टिगोचर होती है और सारा समाज बिना किसी भेदभाव के उसका अनुभव करता है। वह मनुष्यों को प्रतिरोध के लिए प्रोत्साहित नहीं करती, किन्तु हर बार उनसे मिलती रहती है, जब तक कि वे स्वयं अपनी इच्छा के प्रयोग का त्याग नहीं कर देते। इस प्रकार धीरे-धीरे उनकी भावना क्षीण हो जाती है और उनका चरित्र गिर जाता है, जब कि वह आज्ञा-पालन जो कुछ महत्वपूर्ण और दुर्लभ अवसरों पर बलात् कराया जाता है, वह कतिपय अवसरों पर ही दासता का प्रदर्शन करता है और उसका बोझ थोड़े से लोगों पर डालता है। जो लोग केन्द्रीय शक्ति पर इतने आश्रित बन चुके हैं, उन्हें समय पर उस शक्ति के प्रतिनिधियों के निर्वाचन के लिए बुलाना निरर्थक है। उनके स्वतंत्र मत का यह दुर्लभ और संक्षिप्त प्रयोग, चाहे वह कितना ही महत्त्वपूर्ण क्यों न हो, सोचने, अनुभव करने और अपने लिए कार्य करने की उनकी शक्तियों को धीरे-धीरे नष्ट हो जाने से नहीं रोक सकेगा और इस प्रकार धीरे-धीरे वे मानवता के स्तर से नीचे गिर जायेंगे।

इसके अतिरिक्त, मेरा यह भी कहना है कि शीघ्र ही वे इस महान और एकमात्र विशेषाधिकार का, जो उनके पास है, प्रयोग करने में भी असमर्थ हो जायेंगे। वे प्रजातान्त्रिक राष्ट्र, जिन्होंने अपने राजनीतिक संविधानों में स्वतंत्रता को उस समय स्थान दिया, जब वे अपने प्रशासकीय संविधान की निरंकुशता की वृद्धि कर रहे थे, विचित्र उलझनों में फँस गये। उन छोटे-छोटे कार्यों के

लिए, जिनमें अच्छी भावना ही आवश्यक है, मनुष्यों को उत्तरदायित्व सम्भालने के लिए अयोग्य समझा जाता है; परन्तु जब देश की सरकार संकट में होती है तब लोगों को असीम शक्तियाँ सौंप दी जाती हैं और बारी बारी से उन्हें क्रमशः राजाओं से अधिक और मनुष्यों से कम, अपने शासक और अपने प्रभुओं की कठपुतली बना दिया जाता है। निर्वाचन के विभिन्न स्वरूपों का प्रयोग कर लेने के बाद और उनमें से किसी को भी अपने उद्देश्य के अनुकूल न पाकर वे आज भी आश्चर्यान्वित हैं और इस मामले में आज भी आगे बढ़ने के लिए कृत-संकल्प हैं, मानो वह बुराई, जिसकी ओर उनका ध्यान आकर्षित हुआ है, देश के संविधान से उत्पन्न न होकर निर्वाचित संस्था से उत्पन्न हुई हो।

वस्तुतः यह समझना कठिन है कि किस प्रकार मनुष्य, जिन्होंने पूर्णतः स्वशासन की प्रवृत्ति का परित्याग कर दिया है, जिनके द्वारा उन्हें शासित होना है, उनका उपयुक्त निर्वाचन करने में सफलता प्राप्त कर सकेंगे। और कोई भी कभी यह विश्वास नहीं कर सकता कि पराधीन जनता के मताधिकार से उदार, बुद्धिमान और शक्तिशाली सरकार का जन्म हो सकता है।

ऐसा संविधान, जो अपने प्रधान में प्रजातान्त्रिक हो और अपने अन्य भागों में अति राजतान्त्रिक हो, मुझे हमेशा अल्पजीवी दैत्य-सा दृष्टिगोचर होता है। नियमों के दुर्गुण और लोगों की अयोग्यता शीघ्र ही उसका सर्वनाश कर देगी और राष्ट्र अपने प्रतिनिधियों तथा स्वयं अपने से ऊब कर मानो अधिक स्वतंत्र संस्थाओं का निर्माण करेगा या शीघ्र ही एकमात्र स्वामी के चरणों में अपने को फिर से डाल देगा।

मैं विश्वास करता हूँ कि ऐसे लोगों के मध्य, जिनके समाज की स्थितियाँ समान होती हैं, अन्य की अपेक्षा निरंकुश और स्वेच्छाचारी सरकार की स्थापना करना सरल है और मैं यह भी सोचता हूँ कि ऐसे लोगों के मध्य यदि इस प्रकार की सरकार की स्थापना एक बार हो जाती है, तो वह न केवल मनुष्यों का दमन करेगी, अपितु अन्ततोगत्वा उनमें से प्रत्येक को मानवता के कतिपय उच्चतम गुणों से वंचित कर देगी। इसलिए मेरी दृष्टि में निरंकुशता प्रजातान्त्रिक युग के लिए विशेषतः खतरनाक है। मेरा विश्वास है कि मैंने सभी युगों में स्वतंत्रता से प्रेम किया होता, परन्तु जिस युग में हम रहते हैं उसमें तो मैं उस स्वतंत्रता की पूजा करने को तैयार हूँ।

दूसरी ओर, मैं इस बात से सहमत हूँ कि जो लोग इस युग में, जिसमें हम प्रवेश कर रहे हैं, स्वतंत्रता को कुलीनतान्त्रिक विशेषाधिकारों के आधार पर

स्थापित करने का प्रयास करेंगे, विफल होंगे और जो लोग एक ही वर्ग के हाथों में सत्ता को केन्द्रित करने का प्रयत्न करेंगे, वे भी विफल होंगे। इस समय कोई भी शासक इतना चतुर और शक्तिशाली नहीं है कि वह अपनी प्रजा में श्रेणियों के स्थायी भेदों को पुनर्स्थापित कर निरंकुशता की स्थापना कर सके और कोई विधायक इतना बुद्धिमान और शक्तिशाली नहीं है कि वह स्वतंत्र संस्थाओं को सुरक्षित रख सके, यदि उसका प्रथम सिद्धान्त समानता को अपनाना नहीं है। हमारे समस्त समकालीन लोगों को, जो स्वतंत्रता और अपने साथियों की प्रतिष्ठा की स्थापना या सुरक्षा करेंगे, स्वयं अपने को समानता का समर्थक सिद्ध करना पड़ेगा और उन्हें यह सिद्ध करने के लिए स्वयं वैसा बनना पड़ेगा। इसी बात पर उनके पवित्र कार्य की सफलता निर्भर करती है। इसलिए प्रश्न यह नहीं है कि कुलीन-तांत्रिक समाज की पुनर्रचना किस प्रकार की जाय, प्रत्युत यह है कि समाज की प्रजातान्त्रिक स्थिति में, जो ईश्वर ने हमें प्रदान की है, किस प्रकार स्वाधीनता को आगे बढ़ाया जाए।

ये दोनों सत्य, परिणामों की दृष्टि से मुझे सरल, स्पष्ट और उपयोगी प्रतीत होते हैं और दोनों ने स्वाभाविक रूप से मुझे इस बात पर विचार करने के लिए प्रेरित किया है कि किस प्रकार की स्वतंत्र सरकार उस समाज में स्थापित की जा सकती है, जहाँ सामाजिक परिस्थितियाँ समान हैं।

प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों के संविधानों से और उनकी आवश्यकताओं से यह परिणाम निकलता है कि उनकी सरकार की शक्ति अन्य देशों की सरकारों की अपेक्षा अधिक समरूप, अधिक केन्द्रित, अधिक व्यापक, अधिक शोधनशील और अधिक कुशल होगी। स्वतंत्र समाज स्वभावतः अधिक शक्तिशाली और सक्रिय होता है, व्यक्ति अधिक आश्रित और दुर्बल होते हैं, समाज अधिक कार्य करता है और व्यक्ति कम, और यही अनिवार्य स्थिति है।

इसलिए यह आशा नहीं करनी चाहिए कि व्यक्तिगत स्वतंत्रता का विस्तार कुलीनतान्त्रिक देशों की भांति प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों में भी व्यापक होगा। और न ऐसी इच्छा ही रखनी चाहिये; क्योंकि कुलीनतान्त्रिक राष्ट्रों में जनता को व्यक्ति के लिए बलिदान कर दिया जाता है और अधिक लोगों की समृद्धि को थोड़े से लोगों की महत्ता के लिए बलिदान कर दिया जाता है।

प्रजातान्त्रिक राष्ट्र की सरकार को सक्रिय और शक्तिशाली होना चाहिए, यह आवश्यक और वाञ्छनीय भी है और हमारा उद्देश्य भी यह होना चाहिए कि हम उसे निर्बल और निष्क्रिय बनाने का प्रयत्न न करें, परन्तु उसकी प्राप्ति और

और उसकी शक्ति के दुरुपयोग से उसको रोकने का पूर्णतः प्रयत्न करें।

जिस परिस्थिति ने कुलीनतांत्रिक युगों में निजी व्यक्तियों की स्वाधीनता को सुरक्षित रखने के लिए सर्वाधिक योगदान दिया, वह यह थी कि सर्वोच्च सत्ता ने सरकार और समाज के प्रशासन के बोझ को अकेले ही अपने ऊपर उठाने का प्रयत्न नहीं किया। अनिवार्यतः उन कार्यों का उत्तरदायित्व आंशिक रूप से कुलीनतंत्र के सदस्यों पर छोड़ दिया गया, जिसके परिणामस्वरूप सर्वोच्च सत्ता ने कभी भी अपनी पूरी शक्ति से कार्य नहीं किया और प्रत्येक व्यक्ति के साथ एक ही तरह से व्यवहार नहीं किया, क्योंकि वह सर्वदा विभाजित रही।

इतना ही नहीं कि सरकार ने अपना प्रत्येक कार्य अपने तात्कालिक अभिकरण द्वारा नहीं कराया, बल्कि उसके कार्यों को पूरा करने वाले अधिकांश अभिकर्ता निरन्तर उसके नियंत्रण में नहीं रहते थे, क्योंकि उन्हें अपनी शक्ति राज्य से प्राप्त नहीं थी, बल्कि उनके जन्म की परिस्थिति से प्राप्त थी। सरकार उन्हें क्षणमात्र में मनमाने ढंग से बना या बिगाड़ नहीं सकती थी, अथवा अपने क्षणिक उमंग में उन्हें कठोर समरूपता की ओर मोड़ सकती थी। यह व्यक्तिगत स्वतंत्रता की एक और गारण्टी थी।

मैं यह तत्परता से स्वीकार करता हूँ कि वर्तमान समय में एक ही साधन को काम में लाने से सहायता नहीं मिल सकती। मैं कुछ ऐसे प्रजातांत्रिक उपकरणों से परिचित हूँ जिन्हें उनके स्थान पर अपनाया जा सकता है। केवल सरकार के हाथों में उन समस्त प्रशासकीय अधिकारों को, जिनसे निगमों और कुलीनों को वंचित कर दिया गया है, केन्द्रित करने के स्थान पर, उनके कुछ अंशों को गैर सरकारी नागरिकों द्वारा अस्थायी रूप से निर्मित माध्यमिक सार्वजनिक संस्थाओं को सौंपा जा सकता है। इस प्रकार गैर-सरकारी व्यक्तियों की स्वाधीनता अधिक सुरक्षित रहेगी और उनकी समानता में कमी नहीं होगी।

अमरीकी फ्रांसीसियों की अपेक्षा शब्दों को कम महत्व देते हैं। आज भी उनके अधिकांश प्रशासकीय जिलों को 'काउंटी' कह कर पुकारा जाता है, परन्तु काउण्ट या लार्ड-लेफ्टिनेंट के कार्यों के कुछ अंश प्रान्तीय विधान-मण्डल द्वारा पूर्ण किये जाते हैं।

अपने जैसे समानता के युग में वंशगत अधिकारियों की नियुक्ति अन्यायपूर्ण और अनुचित होगी, परन्तु कुछ सीमा तक निर्वाचित सार्वजनिक अधिकारियों को नियुक्त करने से हमें कोई नहीं रोक सकता। चुनाव प्रजातांत्रिक साधन है,

जो सरकार के सम्बन्ध में सार्वजनिक अधिकारियों की स्वतंत्रता को उसी प्रकार सुरक्षित रखता है, जिस प्रकार कुलीनतान्त्रिक राष्ट्रों में आनुवंशिक पदों को सुरक्षित रखा जाता है, बल्कि उससे भी अधिक।

कुलीनतान्त्रिक देशों में धनी और प्रभावशाली व्यक्तियों की प्रचुरता रहती है, जो स्वयं अपने जीवनोपार्जन की व्यवस्था करने के योग्य होते हैं और जो सुगमता से या गुप्त रूप से क्रूरता के शिकार नहीं हो सकते। इस प्रकार के व्यक्ति सरकार को संयम और शांति की सामान्य प्रवृत्तियों द्वारा सीमित रखते हैं। मैं भली प्रकार जानता हूँ कि स्वाभाविक रूप से प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में इस प्रकार के व्यक्ति नहीं मिलते, परन्तु कृत्रिम साधनों से उनसे मिलती-जुलती कोई चीज पैदा की जा सकती है। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि कुलीनतंत्र को विश्व में फिर से स्थापित नहीं किया जा सकता। परन्तु मैं सोचता हूँ कि निजी व्यक्ति परस्पर मिल कर कुलीनतंत्र के व्यक्तियों की भाँति प्रचुर धन, प्रभाव और शक्ति की संस्थाओं का निर्माण कर सकते हैं। इस माध्यम से कुलीनतंत्र के अनेक महान राजनीतिक लाभ, बिना उसके अन्याय या उसके खतरे के उठाये जा सकते हैं। राजनीति, वाणिज्य, या निर्माण कार्य के के उद्देश्यों के लिए, यहाँ तक कि विज्ञान और साहित्य के उद्देश्यों के लिए भी जिस संघ का निर्माण किया जाता है, वह समाज का शक्तिशाली और प्रगतिशील सदस्य होता है। इस प्रकार के संघ को न तो स्वेच्छा से भंग किया जा सकता है और न बिना विरोध के दबाया जा सकता है। ये संघ सरकार के अतिक्रमण के विरुद्ध अपने अधिकारों की रक्षा करके देश की सामान्य स्वाधीनता की रक्षा करते हैं।

कुलीनतंत्र के युग में प्रत्येक मनुष्य सर्वदा अपने अनेक साथी नागरिकों से इतनी घनिष्ठता से बँधा रहता है कि उस पर आक्रमण होने पर उसके सारे साथी सहायता के लिए दौड़ पड़ेंगे। समानता के युगों में प्रत्येक मनुष्य स्वभावतः अकेला होता है। उसके वंशपरम्परानुगत मित्र नहीं होते जिनसे वह सहायता की मांग कर सके और न ऐसा कोई वर्ग रहता है जिसकी सहानुभूति पर वह पूर्ण भरोसा रख सके। वह सरलता से मुक्त हो जाता है और बिना दण्ड भय के उसे रौंदा जाता है। वर्तमान समय में समाज के उत्पीड़ित के लिए आत्मरक्षा का एकमात्र साधन यही है कि वह सारे राष्ट्र से अपील कर सकता है और यदि सारा राष्ट्र उसकी शिकायत के प्रति मौन रहे तो वह सारी मानव जाति से अपील कर सकता है। इस प्रकार की अपील करने का एकमात्र

साधन प्रेस है। अतः प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में अन्य राष्ट्रों की अपेक्षा प्रेस की स्वतंत्रता अत्यधिक महत्वपूर्ण होती है। यही उन बुराइयों के निराकरण का, जो समानता द्वारा उत्पन्न हो सकती है, एकमात्र साधन है। समानता मनुष्यों को विलग करती है और उन्हें दुर्बल बनाती है; परन्तु प्रेस प्रत्येक मनुष्य की पहुँच के भीतर एक शक्तिशाली अस्त्र होता है, जिसका उपयोग अत्यन्त दुर्बल और एकाकी व्यक्तियों द्वारा भी किया जा सकता है। समानता मनुष्य को उसके सम्बन्धियों के समर्थन से वंचित रखती है, परन्तु प्रेस उसे उसकी सहायता के लिए उसके साथियों और देशवासियों का आवाहन करने योग्य बनाता है। मुद्रण ने समानता की प्रगति को बढ़ावा दिया है और साथ-ही-साथ वह उसका सर्वोत्तम सुधारक भी है।

मैं सोचता हूँ कि कुलीनतंत्रों में रहनेवाले लोग वस्तुतः प्रेस की स्वाधीनता के बिना भी अपना कार्य चला सकते हैं, परन्तु प्रजातांत्रिक देशों में रहने वाले लोगों के लिए यह बात नहीं है। उनकी व्यक्तिगत स्वाधीनता को सुरक्षित रखने के लिए मैं महान राजनीतिक विधान-मण्डलों, संसदीय विशेषाधिकारों या लोकप्रिय सार्वभौमता के बल में विश्वास नहीं करता। ये सब चीजें कुछ अंशों में व्यक्तिगत परवशता से समझौता कर लेती हैं, परन्तु यदि प्रेस स्वतन्त्र है तो परवशता कभी पूर्ण नहीं हो सकती। प्रेस ही स्वतंत्रता का मुख्य प्रजातांत्रिक माध्यम है।

न्यायिक शक्ति के सम्बन्ध में कुछ इसी प्रकार का उल्लेख किया जा सकता है। व्यक्तिगत हितों की ओर ध्यान देना और विचार के लिए प्रस्तुत सूक्ष्म विषयों पर ध्यान केन्द्रित करना न्यायिक शक्ति के मूल तत्व का ही भाग है। न्यायिक शक्ति का एक अन्य आवश्यक गुण यह है कि वह कभी पीड़ित व्यक्ति की सहायता स्वेच्छा से नहीं करती, परन्तु वह सर्वदा उन नम्र व्यक्तियों की मर्जी पर होती है, जो उसकी माग करते हैं। वे कितने ही निर्बल क्यों न हों, उनकी शिकायत सुनी जायगी और उसे दूर किया जायगा, क्योंकि न्यायालयों के विधान में ही यह तत्व अन्तर्निहित है।

इसलिए इस प्रकार की शक्ति विशेष रूप से उस समय स्वतंत्रता की आवश्यकताओं के अनुकूल अपना स्वरूप निर्धारित करती है, जब सरकार की दृष्टि और अंगुलि निरन्तर मानव कार्यों की सूक्ष्मताओं में जबर्दस्ती प्रवेश करने लगती है और जब निजी व्यक्ति अपने को सुरक्षित रखने के लिए अत्यन्त निर्बल हो जाते हैं तथा अपने साथियों से नितान्त विलग रहने के कारण उनकी सहायता

की आशा से वंचित रहते हैं। न्यायालयों की शक्ति व्यक्तिगत स्वतंत्रता को अधिकतम सुरक्षा प्रदान करती है, परन्तु यह बात और भी विशेषता से प्रजातान्त्रिक युग के लिए लागू होती है। यदि न्यायिक शक्ति परिस्थितियों की बढ़ती हुई समानता के अनुकूल अधिक व्यापक और अधिक शक्तिशाली नहीं होती है तो ऐसी स्थिति में निजी अधिकार और हित निरन्तर खतरे में रहेंगे।

समानता मनुष्यों में अनेक ऐसी प्रवृत्तियों को जाग्रत करती हैं, जो स्वतंत्रता के लिए नितान्त खतरनाक होती हैं। इस बात की ओर विधायक का निरन्तर ध्यान आकर्षित किया जाना चाहिए। मैं उनमें से अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रवृत्तियों का पाठकों को केवल स्मरण दिलाऊँगा।

प्रजातांत्रिक युगों में रहने वाले व्यक्ति स्वरूपों की उपयोगिता को शीघ्रता से ग्रहण नहीं करते। वे उनके लिए आन्तरिक तिरस्कार का अनुभव करते हैं। ऐसा किन कारणों से होता है, इन पर मैं अन्यत्र प्रकाश डाल चुका हूँ। स्वरूप उनके तिरस्कार को और प्रायः उनकी घृणा को उत्तेजित करते हैं। चूँकि वे सामान्यतः केवल सुगम और वर्तमान सुखों का उपभोग करने के इच्छुक रहते हैं, इसलिए वे मनोवांछित पदार्थ की ओर दौड़ते हैं और थोड़ा-सा भी विलंब हो जाने पर चिढ़ जाते हैं। यही स्वभाव उनके राजनीतिक जीवन में भी जाता है और उन्हें स्वरूपों का शत्रु बना देता हैं। ये स्वरूप उनकी कतिपय योजनाओं में सर्वदा बाधक बने रहते हैं।

फिर भी यही आपत्ति, जो प्रजातंत्रों के लोग स्वरूपों के प्रति उठाते हैं, वस्तुतः वही चीज़ है, जो उन स्वरूपों को स्वतंत्रता के लिए अत्यन्त उपयोगी बना देती है। कारण यह है कि उनका मुख्य गुण यही है कि वे प्रबल और दुर्बल के बीच, शासक और शासित के बीच दीवार का काम करते हैं। वे एक को नियंत्रित करते हैं और दूसरे को अपने सम्बन्ध में विचार करने के लिए समय देते हैं। स्वरूप अधिक आवश्यक उसी अनुपात से बनते हैं जिस अनुपात से सरकार अधिक सक्रिय और शक्तिशाली होती है, जबकि गैर-सरकारी व्यक्ति अधिक निष्क्रिय और अधिक शक्तिहीन हो जाते हैं। इस प्रकार प्रजातांत्रिक राष्ट्रों को स्वाभाविक रूप से अन्य राष्ट्रों की अपेक्षा स्वरूपों की अधिक आवश्यकता रहती है और स्वाभाविक रूप से वे उनका सम्मान कम करते हैं। इस तथ्य पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने की आवश्यकता है।

स्वरूप के प्रश्न पर हमारे अधिकांश समकालीन उद्दण्डतापूर्वक तिरस्कार प्रकट करते हैं, इससे अधिक दयनीय और क्या बात हो सकती है? क्योंकि

स्वरूप के छोटे-से-छोटे प्रश्नों ने हमारे युग में वह महत्ता प्राप्त कर ली है जो उन्हें पहले कभी प्राप्त नहीं थी। मानव-जाति के अनेक महानतम हित उन्हीं पर निर्भर करते हैं। मैं सोचता हूँ कि यदि कुलीनतांत्रिक युग के राजनीतिज्ञ कुछ समय के लिए आत्महानि के बिना स्वरूपों के प्रति घृणा प्रकट कर सकते और प्रायः उनसे ऊपर उठ सकते, तो वे राजनीतिज्ञ, जिन पर आज राष्ट्रों की सरकार इस समय विश्वास करती है, इनके प्रति कम से कम सम्मान प्रकट करते और अत्यधिक आवश्यकता के बिना उनकी उपेक्षा नहीं करते। कुलीन-तंत्रों में स्वरूपों की ओर ध्यान देना अन्धविश्वास समझा जाता था। हमें उन्हें सतर्कता से और जानबूझ कर आदर प्रदान कर कायम रखना चाहिए।

दूसरी प्रवृत्ति, जो प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों के लिए नितान्त स्वाभाविक और निरन्तर खतरनाक है, वह है जो गैर-सरकारी व्यक्तियों के अधिकारों का तिरस्कार करने और उनके महत्व को कम करने के लिए प्रेरित करती है। अधिकार के प्रति मनुष्य जो मोह और आदर रखते हैं वह सामान्यतः उसके महत्व या उसके कार्यकाल की अवधि के अनुपात मे, जिसमें उन्होंने उसका उपयोग किया है, होता है। प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों में गैर-सरकारी लोगों के अधिकार सामान्यतः कम महत्व के होते हैं और बड़े ही खतरनाक होते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि बिना खेद व्यक्त किये उनका त्याग किया जाता है और प्रायः हमेशा बिना पश्चात्ताप के उनका उल्लंघन किया जाता है।

परन्तु होता यह है कि एक समय और एक ही प्रकार के राष्ट्रों में, जहाँ लोग गैर सरकारी व्यक्तियों के अधिकारों के प्रति स्वाभाविक तिरस्कार प्रकट करते हैं, स्वतंत्र समाज के अधिकार स्वाभाविक रूप से विस्तृत और सुगठित हो जाते हैं। दूसरे शब्दों में, मनुष्यों का निजी अधिकारों के प्रति मोह कम हो जाता है, ठीक उसी समय जबकि उनके पास जो कुछ बचा रहता है, उसे कायम रखना और सुरक्षित रखना आवश्यक होता है। इसलिए सर्वाधिक विशेषरूप से वर्तमान प्रजातान्त्रिक समय में, स्वाधीनता के सच्चे मित्रों और मानव की महानता को, सरकार की शक्ति को अपने कार्यों के सामान्य निष्पादन के लिए व्यक्ति के निजी अधिकारों का सरलता से बलिदान कर देने से रोकने के लिए, निरन्तर सतर्क रहना चाहिए।

ऐसे समय में, कोई भी नागरिक इतना अनभिज्ञ नहीं होता कि उस पर दमन करना अत्यन्त खतरनाक नहीं सिद्ध होगा और न निजी अधिकार इतने तुच्छ होते हैं कि वे सरकार की मर्जी पर बिना किसी भय के समर्पित किये

जा सकते हैं। कारण स्पष्ट है। यदि व्यक्ति के निजी अधिकार का उल्लंघन उस समय किया जाता है जब कि मानव-मस्तिष्क इस प्रकार के अधिकारों की महत्ता और पवित्रता से पूर्णतः प्रभावित है, तो घातक प्रभाव उस व्यक्ति तक ही सीमित रहता है, जिसका अधिकारापहरण किया जाता है; परन्तु वर्तमान समय में अधिकार का हरण किया जाना राष्ट्र के आचरणों को गहन रूप से भ्रष्ट करना और समस्त समुदाय को संकट में डालना है, क्योंकि अधिकार की इसी प्रकार की धारणा हम में निरन्तर क्षीणता और विनाश की ओर प्रवृत्त होती है।

किसी भी राज्यक्रांति की स्थिति के लिए कतिपय प्रवृत्तियाँ, कतिपय धारणाएँ और कतिपय दुर्गुण विचित होते हैं और दीर्घकालिक राज्यक्रांति उन्हें उत्पन्न करने और उनका प्रसार करने में कभी असफल नहीं हो सकती, भले ही उसकी प्रकृति, उसका उद्देश्य और उसका रंगमंच, जिस पर वह अपना प्रदर्शन करती है, कुछ और प्रकार का क्यों न हो ? जब कोई भी राष्ट्र, एक छोटी-सी अवधि के भीतर बराबर अपने नियमों, अपने मतों और अपने कानूनों को बदलता है तो उसके मनुष्यों में अन्ततोगत्वा परिवर्तन की प्रवृत्ति आ जाती है और वे आकस्मिक हिंसा से उत्पन्न परिवर्तनों को देखने के अभ्यस्त हो जाते हैं। इस प्रकार स्वाभाविक रूप से उन लोगों में स्वरूपों के प्रति, जो प्रतिदिन अप्रभावकारी सिद्ध होते हैं, घृणा उत्पन्न हो जाती है और वे नियमों के नियंत्रण को, जिसका वे प्रायः उल्लंघन होते देखते हैं, बिना अधीरता के समर्थन नहीं करते।

चूँकि समानता और नैतिकता की साधारण धारणाएँ पहले की तरह राज्यक्रांति द्वारा प्रतिदिन उत्पन्न होनेवाले समस्त नये परिवर्तनों की व्याख्या और औचित्य बताने के लिए पर्याप्त नहीं हैं, इसलिए सार्वजनिक उपयोगिता के सिद्धान्त पर विचार किया जाता है और राजनीतिक आवश्यकता के सिद्धान्त की कल्पना की जाती है तथा मनुष्य स्वयं बिना किसी संकोच के निजी हितों का परित्याग करने और व्यक्तियों के अधिकारों को कुचल देने के अभ्यस्त हो जाते हैं, ताकि वे किसी सार्वजनिक उद्देश्य की पूर्ति अधिक शीघ्रता से कर सकें।

ये प्रवृत्तियाँ और धारणाएँ, जिन्हें मैं क्रांतिकारी कहूँगा, क्योंकि समस्त राज्यक्रांतियों द्वारा वे उत्पन्न होती हैं, कुलीनतंत्र में भी प्रजातांत्रिक राष्ट्रों की भांति पनपती हैं; परन्तु वहाँ वे बहुधा कम शक्तिशाली और हमेशा कम स्थायी होती हैं, क्योंकि वहां उन्हें अनेक ऐसी प्रवृत्तियों, धारणाओं, दोषों और बाधाओं का सामना करना पड़ता है, जो उनका प्रतिकार करती हैं। परिणामतः राज्यक्रांति के समाप्त होते ही वे भी विलुप्त हो जाती हैं

और राष्ट्र पुनः अपने पूर्व राजनीतिक स्थिति में आ जाता है। इस प्रकार की स्थिति प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों में हमेशा नहीं होती, जहाँ सर्वदा इस बात का भय रहता है कि क्रांतिकारी प्रवृत्तियाँ अधिक कोमल और अधिक नियमित बन कर, समाज से पूर्णतः लुप्त हुए बिना, धीरे-धीरे सरकार की प्रशासकीय सत्ता की अधीनता की प्रवृत्ति में बदल जायंगी। मैं ऐसे देशों से परिचित नहीं हूँ, जहाँ राज्यक्रांतियाँ प्रजातान्त्रिक राष्ट्रों से अधिक खतरनाक होती हैं, क्योंकि आकस्मिक और क्षणिक बुराइयों से स्वतंत्र, जो निश्चय ही उनके पीछे लगी रहती हैं, वे हमेशा कुछ ऐसी बुराइयाँ पैदा कर सकती हैं, जो स्थायी और अनन्त होती हैं।

मैं विश्वास करता हूँ कि न्यायसंगत प्रतिरोध और उचित विद्रोह जैसी चीजें भी हैं। इसलिए मैं पूरी सहमति से ऐसे प्रस्ताव पर बल नहीं देता कि प्रजातान्त्रिक युग के मनुष्यों को कभी राज्यक्रांतियों का आश्रय नहीं लेना चाहिए, परन्तु मैं सोचता हूँ कि उनमें कूदने के पूर्व उन पर सोच-विचार करने के लिए विशिष्ट कारण है और उनकी वर्तमान स्थितियों में इतने खतरनाक साधन को अपनाने के बजाय अनेक अभाव अभियोगों को सहन करना कहीं अच्छा है।

मैं अब एक सामान्य विचार द्वारा उपसंहार करूँगा, जिसमें न केवल वे सारे विशिष्ट विचार सम्मिलित है, जिन्हें वर्तमान अध्याय में व्यक्त किया गया है, अपितु वे अधिकांश विचार सन्निहित हैं, जो इस पुस्तक का उद्देश्य है। हमारे पूर्व के कुलीनतान्त्रिक युग में महान शक्तिवाले गैर-सरकारी व्यक्ति थे और नितान्त दुर्बल सामाजिक सत्ता थी। स्वयं समाज की रूपरेखा सरलता से दिखाई नहीं पड़ती थी और वह समाज पर शासन करने वाली विभिन्न शक्तियों के साथ निरन्तर घुलमिल गयी थी। सर्वोच्च सत्ता को सुदृढ़ बनाने, विस्तृत करने और सुरक्षित रखने के लिए उस युग के मनुष्यों के दुस्तर प्रयासों की आवश्यकता थी और दूसरी ओर व्यक्तिगत स्वतंत्रता को संकीर्ण सीमाओं में परिसीमित करने और व्यक्तिगत हितों को सार्वजनिक हित के अधीन बनाने की आवश्यकता थी। हमारे युग के मनुष्यों के लिए अन्य प्रकार के खतरे और अन्य चिन्ताएँ भी हैं। अधिकांश आधुनिक राष्ट्रों में सरकार का मूल कुछ भी हो, परन्तु उसका संविधान, या उसका नाम प्रायः सर्वशक्तिशाली हो गया है और निजी व्यक्ति अधिकाधिक दुर्बलता और पराधीनता की निम्नतम स्थिति में गिरते जा रहे हैं।

प्राचीन समाज में, प्रत्येक चीज भिन्न थी। एकता और समरूपता कहीं भी नहीं थी। आधुनिक समाज में प्रत्येक वस्तु इतना समान बन जाने को लालायित है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने विशिष्ट गुणों को शीघ्र ही विश्व के सामान्य रूप में पूर्णतः खो देगा। हमारे पूर्वज इस धारणा का, कि निजी अधिकारों का आदर करना चाहिए, सर्वदा अनुचित प्रयोग करने की ओर प्रवृत्त थे और दूसरी ओर हमने स्वाभाविक रूप से इस विचार की अति कर दी है कि निजी व्यक्ति के हित को हमेशा 'बहुजनहिताय' समर्पित कर देना चाहिए।

राजनीतिक जगत में नये परिवर्तन हो रहे हैं। इसलिए नयी अव्यवस्थाओं के लिए नये उपाय ढूँढ निकालने चाहिए। सरकार के कार्यों के लिए व्यापक परन्तु स्पष्ट और सुनिश्चित सीमाएँ निश्चित करना, निजी व्यक्तियों को कतिपय अधिकार देना और उन अधिकारों के निर्विवाद उपभोग के लिए व्यवस्था करना, निजी व्यक्ति को उस योग्य बनाना कि वह अपनी अब तक की स्वतंत्रता, बल और मूल शक्ति को, सुरक्षित रख सके तथा व्यक्ति को समाज के स्तर पर लाना और उसे उसी स्थिति में कायम रखना—ये कार्य मेरी दृष्टि में, उस युग में जिसमें अब हम प्रवेश कर रहे हैं, विधायकों के मुख्य लक्ष होने चाहिए।

ऐसा प्रतीत होगा, मानो हमारे युग के शासक मनुष्यों का उपयोग केवल महान कार्य करने के लिए करते हैं; मैं चाहता हूँ कि वे मनुष्यों को अधिक महान बनाने का कुछ अधिक प्रयत्न करें, कार्य की अपेक्षा कार्यकर्ता को अधिक महत्त्व दें।

उन्हें यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि राष्ट्र बहुत दिनों तक शक्तिशाली नहीं रह सकता, जब तक उस राष्ट्र में रहनेवाला प्रत्येक मनुष्य व्यक्तिगत रूप से निर्बल है और अभी तक भीरु और दुर्बल व्यक्तियों के समाज से एक शक्तिशाली राष्ट्र के निर्माण के लिए सामाजिक व्यवस्था का कोई रूप या संगठन नहीं निर्धारित किया गया है।

मैं अपने समकालीनों में दो विपरीत धारणाएँ पाता हूँ जो समान रूप से घातक हैं। मनुष्यों का एक वर्ग समानता के सिद्धान्त में उससे उत्पन्न अराजक प्रवृत्तियों के अतिरिक्त और कुछ नहीं देख सकता। वह अपने ही स्वतंत्र अभिकरण से डरता है और स्वयं अपने से भी डरता है। अन्य विचारक, जो संख्या में कम और बुद्धि में अधिक होते हैं, भिन्न दृष्टिकोण रखते हैं।

उस मार्ग के अतिरिक्त, जो समानता के सिद्धान्त से प्रारम्भ होकर अराजकता में समाप्त होता है, अंत में उन्होंने उस मार्ग को भी ढूँढ लिया है, जो मनुष्यों को अनिवार्य दासता की ओर ले जाता हुआ प्रतीत होता है। वे पहले से ही अपनी आत्माओं को इस आवश्यक स्थिति के अनुकूल बना लेते हैं और स्वतंत्र रहने से निराश होकर वे पहले ही से शीघ्र ही प्रकट होनेवाले अपने स्वामी के प्रति अपने हृदय में सम्मान रखते हैं।

प्रथम वर्ग के लोग स्वतंत्रता का परित्याग इसलिए करते हैं कि वे इसे खतरनाक समझते हैं और दूसरे इसलिए कि वे इसे असम्भव समझते हैं।

यदि मैं दूसरे विचार का समर्थन करता तो यह पुस्तक नहीं लिखता, बल्कि मैंने गुप्त रूप से मानवता के भाग्य को कोसने तक ही अपने को सीमित रखा होता। मैंने उन खतरों को बताने का प्रयत्न किया है, जो समानता के सिद्धान्त के कारण मनुष्य की स्वाधीनता के लिए हो सकते हैं, क्योंकि मेरा दृढ़ विश्वास है कि ये खतरे, भविष्य के सभी खतरों में सबसे अधिक भयानक हैं और कम से कम दिखायी पड़ने वाले हैं, किन्तु मेरे विचार से वे अजेय नहीं हैं।

प्रजातान्त्रिक युग में, जिसमें हम प्रवेश कर रहे हैं, रहने वाले मनुष्यों में स्वतंत्रता की एक सहज रुचि होती है। वे स्वाभाविक रूप से नियमों के प्रति अधीर रहते हैं, यहाँ तक कि उस परिस्थिति के स्थायित्व से भी, जिसको उन्होंने स्वयं अभिमान्य किया है, ऊब उठते हैं। वे शक्ति को पसन्द करते हैं, किन्तु उस शक्ति का उपयोग करने वालों से घृणा करते हैं और अपनी स्वयं की चंचलता और नगण्यता से उसके चंगुल से सरलता से बच निकलते हैं।

ये प्रवृत्तियाँ सर्वदा स्वयं प्रकट होती रहेंगी, क्योंकि वे समाज की उस पृष्ठभूमि से उत्पन्न होती हैं, जिसमें कोई परिवर्तन नहीं होगा। दीर्घकाल तक वे किसी भी निरंकुशता की स्थापना को रोके रहेंगी और वे मानवता की स्वाधीनता के पक्ष में संघर्ष करने के लिए प्रत्येक पीढ़ी को नये अस्त्र प्रदान करेंगी। इसलिए हमें भविष्य की ओर उस लाभप्रद भय की दृष्टि से देखना चाहिए, जो मनुष्यों को स्वतंत्रता का प्रहरी बनाता है—उस अस्पष्ट और निष्क्रिय आतंक के साथ नहीं, जो हृदय को खिन्न और दुर्बल बनाता है।

५७. विषय का सामान्य सर्वेक्षण

जिस विषय पर मैंने अभी चर्चा की है, उसे पूर्णतः समाप्त करने के पूर्व आधुनिक समाज के विभिन्न लक्षणों का उपसंहार के रूप में सर्वेक्षण करने और मानवता के भाग्य पर समानता के सिद्धान्त के सामान्य प्रभाव का अंतिम मूल्यांकन करने में मुझे प्रसन्नता का अनुभव होगा; परन्तु इस महान कार्य की असाध्यता से और इतने गहन विषय की उपस्थिति में न तो मेरी दृष्टि काम देती है, न मेरा तर्क ही।

आधुनिक विश्व का समाज, जिसकी रूपरेखा मैंने खींची है और जिसके विषय में मुझे निर्णय करना है, अभी-अभी अस्तित्व में आया है। समय ने उसे अभी परिपूर्ण स्वरूप प्रदान नहीं किया है, उसका निर्माण करने वाली राज्यक्रान्तियाँ अभी तक समाप्त नहीं हुई हैं और हमारे युग की घटनाओं के बीच यह ज्ञात करना प्रायः असम्भव है कि राज्यक्रान्ति के समाप्त होने के साथ किन बातों की समाप्ति हो जायगी और उसका अंत होने पर कौन सी बातें जीवित रहेंगी। वह विश्व, जो अस्तित्व में आ रहा है, अभी तक उस जगत के अवरोधों के बोझों से, जिनका ह्रास हो रहा है, पूर्ण रूप से मुक्त नहीं हुआ है और वर्तमान मानवीय कार्यों की व्यापक उलझन में कोई यह नहीं कह सकता कि प्राचीन संस्थाओं और पूर्व के आचरणों में कितना शेष रह जायगा और कितना पूर्णतः नष्ट हो जायगा।

यद्यपि जो क्रान्ति सामाजिक परिस्थितियों, कानूनों, मतों और लोगों की भावनाओं में हो रही है, उसकी समाप्ति के लक्षण अभी दिखायी नहीं देते, तथापि उसके जो परिणाम निकल चुके हैं, उनकी तुलना विश्व की किसी वस्तु से नहीं की जा सकती। मैं प्रत्येक युग का, एक के बाद एक, विचार करता हुआ अत्यन्त प्राचीन काल तक पहुँच जाता हूँ, परन्तु मेरी आंखों के सामने जो कुछ घटित हो रहा है, उसके समानान्तर मुझे कोई वस्तु दृष्टिगोचर नहीं होती। जब से भूत ने भविष्य पर प्रकाश डालना छोड़ दिया है, मानव मस्तिष्क भ्रमित अवस्था में डोलता रहता है।

फिर भी, इतनी व्यापक, इतनी विलक्षण और इतनी जटिल सम्भावना के बीच कतिपय प्रमुख विशिष्टताओं को पहले ही देखा और समझा जा सकता है। जगत में जीवन की अच्छाइयाँ और बुराइयाँ दोनों ही समान रूप से

बँटी हुई हैं; विशाल सम्पत्तियाँ लुप्त होती जाती हैं और लघु सम्पत्तियों में वृद्धि होती है; इच्छाएँ और उपभोग बढ़ते जा रहे हैं, परन्तु असाधारण समृद्धि और असाध्य दरिद्रता समान रूप से अज्ञात हैं। महत्वाकांक्षा की भावना सर्वव्यापक होती है; पर उसका विस्तार शायद ही कभी व्यापक होता है। प्रत्येक व्यक्ति एकान्त दुर्बलता के कारण विलग खड़ा रहता है, परन्तु स्वतंत्र समाज क्रियाशील, दूरदर्शी और शक्तिशाली होता है, निजी व्यक्तियों के कार्यों का विशेष महत्त्व नहीं होता, परन्तु राज्य के कार्यों की महत्ता बहुत अधिक होती है।

चरित्र की शक्ति कम रहती है, परन्तु आचरण कोमल और कानून मानवोचित रहते हैं। यदि गौरवपूर्ण शौर्य के या उच्चतम, उज्ज्वलतम और पवित्रतम स्वभाव के कतिपय उदाहरण मिलते हैं, तो साथ ही साथ मानव की आदतें संयमित होती हैं, हिंसा शायद ही होती है और क्रूरता प्रायः अज्ञात सी रहती है। मानव का अस्तित्व दीर्घकाय हो जाता है और सम्पत्ति अधिक सुरक्षित। जीवन को चमकीले पारितोषिकों के उपकरणों से नहीं सजाया जाता, परन्तु वह नितान्त सरल और शांत रहता है। कुछ ही आनन्द या तो अत्यन्त परिमार्जित या अत्यन्त भद्दे होते हैं। अत्यन्त सभ्य आचरण रुचियों की भीषण क्रूरता की भांति असाधारण होते हैं। न तो महान विद्वान मिलते हैं और न नितान्त अज्ञानी समाज। प्रतिभाशाली व्यक्ति और भी कम दिखायी पड़ते हैं, पर साधारण ज्ञान अधिक विस्तृत होता है। मानव-मस्तिष्क समस्त मानवता के लघु प्रयत्नों से प्रोत्साहित होता है, न कि कतिपय लोगों की उत्साहवर्धक क्रिया से। कलाओं के सभी उत्पादनों में परिपूर्णता कम किन्तु मधुरता अधिक रहती है। जाति, पद और देश के बन्धन शिथिल हो जाते हैं, परन्तु मानवता के महान बन्धन अधिक दृढ़ हो जाते हैं।

यदि इन विभिन्न लक्षणों में अत्यन्त सामान्य और अत्यन्त विशिष्ट लक्षण को ढूँढ़ निकालने का मैं प्रयत्न करता हूँ तो मुझे ज्ञात होता है कि मनुष्यों के भाग्य में जो कुछ क्रिया होती है, वही स्वयं अन्य हजारों स्वरूपों में प्रकट होती है। प्रायः सभी उग्रताएँ या तो मृदु हो जाती हैं या कुंठित। जो कभी सबसे प्रमुख माना जाता था, उसका स्थान कोई मध्य भाव ले लेता है, जो, एक ही साथ पहले से ही विश्व में जो कुछ विद्यमान था, उसकी तुलना में कम उन्नत और कम निम्न, कम तेजोमय और कम अस्पष्ट होता है।

जब मैं, एक-दूसरे से मिलते-जुलते लोगों के अपार जनसमूह का सर्वेक्षण करता हूँ तो मालूम पड़ता है कि उनमें कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है जिसने अधिक

उन्नति की हो या जिसने अधिक अवनति की हो। इस प्रकार की सर्वव्यापी समरूपता देखकर मेरा मन उदास और निराश हो जाता है और मुझे समाज की उस स्थिति के प्रति, जो अब बदल चुकी है, खेद अभिव्यक्त करना पड़ता है। जब विश्व महान और अत्यन्त तुच्छ पुरुषों से, विशाल सम्पत्ति और नितान्त दरिद्रता से, महान विद्वत्ता और नितान्त अज्ञान से परिपूर्ण था, मैं अपने ध्यान को दूसरी बातों की अपेक्षा प्रथम बातों की ओर प्रवृत्त करता हूँ, जिनसे मेरी सहानुभूति की तृप्ति हुई थी; परन्तु मैं यह स्वीकार करता हूँ कि इस प्रकार की तृप्ति मेरी अपनी दुर्बलता की उत्पत्ति थी। इसका कारण यह है कि मैं उन सब को, जो मेरे चारों ओर हैं, एक साथ देखने में असमर्थ हूँ। इसलिए मुझे इतनी अधिक वस्तुओं में से अपने पूर्वानुराग की चीजों को चुनना और विलग करना पड़ता है। यह स्थिति परम पिता परमात्मा के लिए लागू नहीं होती, जिसकी दृष्टि के सामने सारे चराचर रहते हैं और जो मानवता और मानव का स्पष्टतः सर्वेक्षण एक साथ ही कर लेता है।

हम स्वाभाविक रूप से विश्वास कर सकते हैं कि मनुष्यों के स्रष्टा और पालनकर्ता को कतिपय लोगों की असाधारण समृद्धि के स्थान पर समस्त लोगों का कल्याण अधिक प्रिय है। मेरी दृष्टि में जो मनुष्य की अवनति प्रतीत होती है, वही उसकी दृष्टि में प्रगति है; जो बात मुझे चुभती है, वह उसे स्वीकार्य है। समानता की स्थिति सम्भवतः कम उन्नत है, परन्तु अधिक न्यायसंगत है और उसकी न्यायपरता उसकी महानता और उसकी सुन्दरता का निर्माण करती है। इसलिए मैं दैविक कल्पना के इस दृष्टिकोण को अपनाने का प्रयत्न करूँगा और उसके बाद ही मनुष्यों के कार्यों के प्रति दृष्टिकोण और राय कायम करूँगा।

इस पृथ्वी पर कोई भी मनुष्य सर्वथा और सामान्य रूप से अभी तक यह प्रमाणित नहीं कर सकता कि विश्व की नयी स्थिति अपने पूर्वकाल की स्थिति से श्रेष्ठ है, परन्तु यह देखना पहले ही से आसान है कि यह स्थिति भिन्न है। कुलीनतान्त्रिक राष्ट्र के संविधान में कुछ दुर्गुण और कुछ गुण इतने अन्तर्निहित हैं और आधुनिक युग के लोगों के चरित्र से इतने विपरीत हैं कि उनका उनमें कभी प्रवेश नहीं किया जा सकता। कुछ अच्छी प्रवृत्तियाँ और कुछ बुरी प्रवृत्तियाँ जो पूर्व के लोगों को अज्ञात थीं, वे आधुनिक लोगों के लिए स्वाभाविक हैं। कुछ विचार स्वतः किसी एक की कल्पना में उभर कर सामने आ जाते हैं, परन्तु वे दूसरे के मस्तिष्क के लिए सर्वथा प्रतिकूल होते हैं। वे मानव की दो विभिन्न पद्धतियों की तरह हैं, जिनमें से प्रत्येक के अपने गुण और दोष अपने स्वयं के

लाभ और अपनी स्वयं की बुराइयाँ होती हैं। इसलिए इस बात की सतर्कता रखी जानी चाहिए कि समाज की स्थिति का, जो अस्तित्व में आ रही है, निर्णय उन धारणाओं से न किया जाय, जो उस समाज की स्थिति से ली गयी हैं, जिसका अस्तित्व अब नहीं रहा। कारण यह है कि चूँकि समाज की ये स्थितियाँ अपने स्वरूप में सर्वथा भिन्न हैं, इसलिए उनकी न्यायसंगत और उचित तुलना नहीं की जा सकती। इसलिए हमारे समकालीन लोगों के लिए उन विशिष्ट गुणों को प्राप्त करना, जो उनके पूर्वजों की सामाजिक स्थिति में पैदा हुए थे, शायद ही उचित होगा, क्योंकि अब वह सामाजिक स्थिति स्वयं ही बदल चुकी है और अपनी अच्छाइयों और बुराइयों की एक मिश्रित अवशेष मात्र रह गयी है।

फिर भी इन तथ्यों को पूर्णतः नहीं समझा जाता। मैं देखता हूँ कि मेरे अधिकांश समकालीन उन संस्थाओं से, जिनका जन्म समाज के कुलीनतांत्रिक संविधान में हुआ था, मतों और विचारों का चुनाव करते हैं। फिर भी वे इन तत्वों के कुछ भाग को स्वेच्छापूर्वक छोड़ कर शेष को अपनी नयी दुनिया में स्थापित करेंगे। मुझे भय है कि इस प्रकार के मनुष्य निर्दोष परन्तु अल्पाभसारी प्रयत्नों में अपनी शक्ति और समय का अपव्यय करते हैं। इसका उद्देश्य उन विशिष्ट लाभों को कायम रखना नहीं हैं, जिन्हें परिस्थितियों की असमानता मानव-जाति को प्रदान करती है, बल्कि उन नये लाभों को प्राप्त करना है, जो समानता द्वारा प्राप्त हो सकते हैं। इसलिए हमें अपने को पूर्वजों की तरह नहीं बनाना है, बल्कि हमारा उद्देश्य उस प्रकार की महानता और सुख के लिए प्रयास करना है, जो हमारे अपने हैं।

जब मैं अपने कार्य की इस चरम सीमा से पीछे मुड़ कर दूर से निरीक्षण करता हुआ आगे बढ़ता हूँ और मेरा ध्यान विभिन्न पदार्थों की ओर आकर्षित होता है तो मैं शंकाओं और आशाओं से भर जाता हूँ। मैं ऐसे भयानक खतरों को, जिन्हें दूर किया जा सकता है, मैं ऐसी प्रचण्ड बुराइयों को, जिनसे बचा जा सकता है अथवा जिन्हें कम किया जा सकता है, देखता हूं। मेरा यह अत्यन्त दृढ़ विश्वास है कि प्रजातांत्रिक राष्ट्रों को गुणसंपन्न और समृद्धिशाली बनाने के लिए आत्मनिष्ठा की आवश्यकता है।

मैं इस बात से अवगत हूँ कि मेरे अनेक समकालीन इस विचार के हैं कि राष्ट्र कभी भी स्वयं अपने स्वामी नहीं होते और आवश्यक रूप से उन्हें किसी अजेय और अगम्य शक्ति की आज्ञा का पालन करना पड़ता है। यह शक्ति उन राष्ट्रों की आन्तरिक घटनाओं, उनकी जाति या

उनके देश की मिट्टी और जलवायु से उत्पन्न होती है। इस प्रकार के सिद्धान्त झूठे और भीरुतापूर्ण हैं। इस प्रकार के सिद्धान्त केवल दुर्बल व्यक्तियों और कायर राष्ट्रों को ही जन्म देते हैं। ईश्वर ने मानव-जाति को पूर्णतः स्वतंत्र उत्पन्न नहीं किया है। यह बात सही है कि प्रत्येक मनुष्य के चारों ओर एक घातक रेखा खींची हुई है जिसको वह पार कर बाहर नहीं जा सकता, परन्तु उस रेखा की विस्तृत परिधि में वह शक्तिशाली और स्वतंत्र है। जो स्थिति मनुष्य की है, वही समुदाय की भी है। हमारे युग के राष्ट्र मनुष्यों की परिस्थितियों को समान होने से नहीं रोक सकते; परन्तु समानता का सिद्धान्त उन्हें किस ओर प्रवृत्त करता है—दासता या स्वतंत्रता की ओर, ज्ञान या असभ्यता की ओर, समृद्धि या दरिद्रता की ओर—यह बात स्वयं उन पर ही निर्भर करती है।



